स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

उत्तर प्रदेश सरकार का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय

।। सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ।।

CSSGO-02

भारत का भूगोल

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013
www.uprtou.ac.in
टोल फ्री नम्बर- 1800-120-111-333

कुलपति

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

उत्तर प्रदेश सरकार का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय

संदेश

प्रयागराज की पवित्र भूमि पर भारत रत्न राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन के नाम पर वर्ष 1999 में स्थापित उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज उ0प्र0 का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय है। यह विश्वविद्यालय उ0प्र0 जैसे विशाल जनसंख्या वाले राज्य में उच्च शिक्षा के प्रत्येक आकांक्षी तक गुणात्मक तथा रोजगारपरक उच्च शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने में निरन्तर अग्रसर एवं प्रयत्नशील है। तत्कालीन देश की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों में एक वैकल्पिक व नवाचारी शिक्षा व्यवस्था के रूप में भारत में मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली का पदार्पण हुआ था, परन्तु वर्तमान परिस्थितियों तथा तकनीकी का सार्थक प्रयोग करते हुये मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा आज की सर्वोत्तम पूरक शिक्षा व्यवस्था के रूप में स्थापित हो चुकी है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली के सामने व्याप्त पाँच मुख्य चुनौतियों - (i) पहुँच (Access), (ii) समानता (Equity), (iii) गुणवत्ता (Quality), (iv) वहनीयता (Affordability) तथा (v) जवाबदेही (Accountability) को केन्द्र में रखकर घोषित देश की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP-2020) के प्रस्तावों को क्रियान्वित करने में उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय कृत संकल्पित है। उ0प्र0 की माननीय राज्यपाल एवं कुलाधिपति की सद्इच्छाओं के अनुरूप उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, शैक्षिक दायित्वों के साथ-साथ सामाजिक दायित्वों के निर्वहन में भी लगातार नवप्रयास कर रहा है। चाहे वह गाँवों को गोद लेकर उनके समग्र विकास का प्रयास हो या ग्रामीण महिलाओं, ट्रान्सजेन्डर व सजायाफ्ता कैदियों को शुल्क में छूट प्रदान कर उनमें आत्मविश्वास जागृति व उच्च शिक्षा के प्रति अलख जगाने का प्रयास हो।

राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए शिक्षा एक मूलभूत जरूरत है। ज्ञान-विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्रों में हो रहे तीव्र परिवर्तनों व वैश्विक स्तर पर रोजगार की परिस्थितियों में आ रहे परिवर्तनों के कारण भारतीय युवाओं को विभिन्न क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा। इसीलिए विभिन्न क्षेत्रों में सफलता हेतु शिक्षा को सर्वसुलभ, समावेशी तथा गुणवत्तापरक बनाना समसामयिक अपरिहार्य आवश्यकता है। वर्तमान परिस्थितियों ने परम्परागत शिक्षा को और भी सीमित कर दिया है जिसके कारण मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था ही एकमात्र पूरक एवं प्रभावी शिक्षा व्यवस्था के रूप में सार्थक सिद्ध हो चुकी है। ऐसी स्थिति में विश्वविद्यालय का दायित्व और भी बढ़ जाता है। इस दायित्व को एक चुनौती स्वीकार करते हुए विश्वविद्यालय ने प्राचीन तथा सनातन भारतीय ज्ञान, परम्परा तथा सांस्कृतिक दर्शन व मूल्यों की समृद्ध विरासत के आलोक में सभी के लिए समावेशी व समान गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने तथा जीवन पर्यन्त शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए अपने शैक्षिक कार्यक्रमों में जागरूकता में प्रमाणपत्र, डिप्लोमा, परास्नातक डिप्लोमा, स्नातक, परास्नातक तथा शोध उपाधि के समसामयिक शैक्षिक कार्यक्रमों की संख्या तथा गुणात्मकता में वृद्धि की है।

शैक्षिक कार्यक्रमों में संख्यात्मक वृद्धि, गुणात्मक वृद्धि तथा रोजगारपरक बनाने के साथ-साथ प्रत्येक उच्च शिक्षा आकांक्षी तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए अध्ययन केन्द्रों व क्षेत्रीय केन्द्रों के विस्तार के साथ-साथ प्रवेश परीक्षा, प्रशासन तथा परामर्श (शिक्षण) में आनलाइन व्यवस्थाओं को सुनिश्चित किया गया है। विश्वविद्यालय कार्यप्रणाली में पारदर्शिता तथा जवाबदेही सुनिश्चियन की दृष्टि से तकनीकी के प्रयोग को बढ़ाया गया है। 'चुनौती मूल्यांकन' की व्यवस्था सुनिश्चित करने का कार्य किया गया है, तो शिक्षार्थी सहायता सेवाओं में भी वृद्धि की जा रही है। शिक्षार्थियों की समस्याओं के त्वरित निस्तारण हेतु शिकायत निवारण प्रकोष्ठ को सुदृढ़ करने के साथ-साथ पुरातन छात्र परिषद को गतिशील किया गया है।

"गुरुकुल से छात्रकुल" के सूक्त वाक्य को आत्मसात करते हुए विश्वविद्यालय ने शिक्षार्थियों को विश्वविद्यालय द्वारा तैयार किये गये गुणवत्तापूर्ण स्वअध्ययन सामग्री उपलब्ध कराने के साथ-साथ विश्वविद्यालय की वेबसाइट पर भी उपलब्ध कराया गया है। छात्रहित को ध्यान में रखते हुए शिक्षकों द्वारा तैयार व्याख्यान को भी ऑनलाईन उपलब्ध कराया गया है।

शोध और नवाचार के क्षेत्र में अग्रसर होते हुए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) नई दिल्ली तथा माननीय राज्यपाल एवं कुलाधिपति, उ0प्र0 की अनुमति से विश्वविद्यालय में शोध कार्यक्रम पुनः प्रारम्भ किया गया है तथा वर्ष पर्यन्त समसामयिक विषयों पर व्याख्यान, सेमिनार, वेबिनार तथा आनलाइन संगोष्ठियों आदि की श्रृंखला भी प्रारम्भ की गयी है। विभिन्न क्षेत्रों में रिसर्च प्रोजेक्ट सम्पादन पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया है। पुस्तकालय को अत्याधुनिक तथा सुदृढ़ बनाने हेतु कदम उठाये गये हैं। शिक्षकों व कर्मचारियों के स्वास्थ्य तथा कल्याण की योजनायें क्रियान्वित की गयी हैं।

प्रो0 सत्यकाम
कुलपति

CSSGO-02

भारत का भूगोल

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

CSSGO-02 भारत का भूगोल

इकाई–1	नामकरण, स्थिति एवं विस्तार, भारत का भू राजनीतिक महत्व	3–20
इकाई–2	विश्व एवं एशिया के सन्दर्भ में आधुनिक भारत	21–28
इकाई–3	राज्य पुनर्गठन, भौगोलिक व्यक्तित्व	29–51
इकाई–4	उच्चावच एवं भौतिक प्रदेश, अपवाह तंत्र एवं अपवाह प्रणाली,	52–70
इकाई–5	मिट्टियों का वर्गीकरण एवं वितरण, जलवायु एवं जलवायु प्रदेश,	71–95
इकाई–6	वानस्पतिक प्रदेश, भारत में कृषि एवं प्रमुख फसलें– गेहूँ, चावल, गन्ना,	96–110
इकाई–7	कपास, चाय एवं दलहन का उत्पादन एवं वितरण भारत में हरित क्रान्ति,	111–127
इकाई–8	लौह अयस्क – उत्पादन एवं वितरण, अभ्रक – उत्पादन एवं वितरण,	128–135
इकाई–9	बाक्साइट–उत्पादन एवं वितरण, मैग्नीज– उत्पादन एवं वितरण	136–142
इकाई–10	पेट्रोलियम, कोयला, जल विद्युत, आण्विक ऊर्जा	143–158
इकाई–11	भारत में जनसंख्या वृद्धि एवं जनसंख्या विस्फोट, जनसंख्या वितरण तथा उनको प्रभावित करने वाले कारक, नगरीकरण	159–166
इकाई–12	भारत में जनसंख्या की आयु वर्ग संरचना, नगरीकरण।	167–177
इकाई–13	प्रमुख उद्योग–लौह–इस्पात उद्योग, वस्त्र उद्योग, चीनी उद्योग, कागज उद्योग,	178–196
इकाई–14	औद्योगिक प्रदेश, भारत में परिवहन– रेल परिवहन, सड़क परिवहन, जल परिवहन,	197–222
इकाई–15	अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की प्रवृत्तियॉ एवं प्रतिरूप	223–235

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परामर्श समिति

पो0 सीमा सिंह	कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
विनय कुमार	कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति; (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार	आचार्य, इतिहास, निदेशक, समाजविज्ञान, विद्याशाखा, उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 संजय कुमार सिंह	आचार्य, भूगोलसमाजविज्ञानविद्याशाखा उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्तविश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 अभिषेक सिंह	सहा0 आचार्य समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 एन.के राना	आचार्य, भूगोलविभाग बी0एच0यू0, वाराणसी
प्रो0 ए0 आर0 सिद्दीकी	आचार्य, भूगोल विभाग इलाहाबाद विश्वविालय प्रयागराज
प्रो0 अरूणकुमार सिंह	आचार्य, भूगोल विभाग बी0एच0यू0, वाराणसी

लेखक

डॉ0 अभिषेक सिंह	सहायक आचार्य, भूगोल उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 राजेश कुमार पाल	सहा0.आचार्य, भूगोल माँ भवानी पी0जी0 कालेज सोगाई, चन्दौली
डॉ0 पारूली सिंह	सहा0.आचार्य भूगोल राष्ट्रीय पी0जी0 कालेज जमुहई जौनपुर
डॉ0 अजय कुमार सिंह	सहा0.आचार्य भूगोल राष्ट्रीय पी0जी0 कालेज जमुहई जौनपुर
डॉ0 बृजेश यादव	सहा0.आचार्य भूगोल राष्ट्रीय पी0जी0 कालेज जमुहई जौनपुर

सम्पादन

प्रो0 संजय कुमार सिंह
आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

प्रो0 संजय कुमार सिंह
आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सह -समन्वयक

डॉ0 अभिषेक सिंह
सहायक आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रितवर्ष– 2024

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. –978-81-19530-66-3

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ प्र राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नही।है।

नोट : पाठय साम्रगी में मुद्रित साम्रगी के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नही।हैं।

प्रकाशन विनय कुमार, कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2024।

मुद्रकः चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा0लि0, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज– 211002

इकाई–1 नामकरण स्थिति तथा विस्तार, भारत का भू– राजनीतिक महत्व

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 नामकरण

1.4 स्थिति तथा विस्तार

1.5 भारत की भू–तत्वीय संरचना

1.6 भारत का भू राजनीतिक महत्व

1.7 सारांश

1.8 स्वमूल्यांकन एवं आदर्श उत्तर

1.9 उपयोगी प्रश्न एवं संदर्भ

1.10 अभ्यास प्रश्न सत्रांत परीक्षा की तैयारी

1.1 प्रस्तावना

भारत का भूगोल या भारत का भौगोलिक स्वरूप से आशय भारत में भौगोलिक तत्वों के वितरण और इसके प्रतिरूप से है जो लगभग हर दृष्टि से काफी विविधतापूर्ण है। दक्षिण एशिया के तीन प्रायद्वीपों में से मध्यवर्ती प्रायद्वीप पर स्थित यह देश अपने 32,87,263 वर्ग किमी क्षेत्रफल के साथ विश्व का सातवाँ सबसे बड़ा देश है। साथ ही लगभग 1.4 अरब जनसंख्या के साथ यह पूरे विश्व में प्रथम स्थान पर सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश भी है। भारत दुनिया के सबसे बड़े महाद्वीप के दक्षिणी भाग में है।

1.2 उद्देश्य

भारत की भौगोलिक संरचना में लगभग सभी प्रकार के स्थलरूप पाए जाते हैं। एक ओर इसके उत्तर में विशाल हिमालय की पर्वतमालायें हैं तो दूसरी ओर और दक्षिण में विस्तृत हिंद महासागर, एक ओर ऊँचा–नीचा और कटा–फटा दक्कन का पठार है तो वहीं विशाल और समतल सिन्धु–गंगा–ब्रह्मपुत्र का मैदान भी, थार के विस्तृत मरुस्थल में जहाँ विविध मरुस्थलीय स्थलरुप पाए जाते हैं तो दूसरी ओर समुद्र तटीय भाग भी हैं। कर्क रेखा इसके लगभग बीच से गुजरती है और यहाँ लगभग हर प्रकार की जलवायु भी पायी जाती है। मिट्टी, वनस्पति और प्राकृतिक संसाधनो की दृष्टि से भी भारत में काफी भौगोलिक विविधता है।

प्राकृतिक विविधता ने यहाँ की नृजातीय विविधता और जनसंख्या के असमान वितरण के साथ मिलकर इसे आर्थिक, सामजिक और सांस्कृतिक विविधता प्रदान की है। इन सबके बावजूद यहाँ की ऐतिहासिक–सांस्कृतिक एकता इसे एक राष्ट्र के रूप में परिभाषित करती है। हिमालय द्वारा उत्तर में सुरक्षित और लगभग ७ हजार किलोमीटर लम्बी समुद्री सीमा के साथ हिन्द महासागर के उत्तरी शीर्ष पर स्थित भारत का भू–राजनैतिक महत्त्व भी बहुत बढ़ जाता है और इसे एक प्रमुख क्षेत्रीय शक्ति के रूप में स्थापित करता है।

भारत शेष एशिया से अलग दिखता है जिसकी विशेषता पर्वत और समुद्र ने तय की है और ये इसे विशिष्ट भौगोलिक पहचान देते हैं। उत्तर में बृहत् पर्वत श्रृंखला हिमालय से घिरा यह कर्क रेखा से आगे संकरा होता जाता है। पूर्व में बंगाल की खाड़ी, पश्चिम में अरब सागर तथा दक्षिण में हिन्द महासागर इसकी सीमा निर्धारित करते हैं।

1.3 भारत का नामकरण

भारतवर्ष का नामकरण के विषय में ऐसा कहा जाता है कि दुष्यन्त के पुत्र भरत के नाम पर इस देश का नाम भारत पड़ा है। कुछ विद्वानों का मत है कि ऋषभदेव के ज्येष्ठ पुत्र का नाम भरत था, और उन्हीं के नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा है। ईरानियों ने इस देश को हिन्दुस्तान कहकर सम्बोधित किया है और यूनानियों ने इसे इण्डिया कहा है। प्राचीन साहित्य में भारतवर्ष को 'भारतभूमि' की संज्ञा दी गई है। इसे जम्बूद्वीप का एक भाग

माना गया है। भारत को 'चतुरू संस्थान संस्थितम' कहा गया है। हिन्दू शब्द भी महान् सिन्धु नदी से निकला है। सिन्धु प्रदेश प्राचीनतम सभ्यता का विकास स्थल रह चुका है।

भारत विश्व के प्राचीनतम देशों में से एक है। इसकी सभ्यता एवं संस्कृति 5000 वर्ष से अधिक पुरानी है। इसका 'आर्यावर्त' नामकरण उत्तर भारत में बसने वाले आर्यों के नाम पर किया गया। कालान्तर में आर्यों की भरत नामक शाखा के नाम पर यह 'भारतवर्ष' कहलाया। वैदिक आर्यों का निवास सिन्धु घाटी में था, जिसे ईरानियों ने 'हिन्दू' नदी तथा इस देश को हिन्दुस्तान कहा। यूनानियों ने सिन्धु को 'इण्ड्स' तथा इस देश को 'इण्डिया' कहा। प्राचीन परम्परा के अनुरूप अब भारत नाम ही विश्वविख्यात है।

भारत का नामकरण भारत शब्द से भारतीय उपमहाद्वीप, भारत गणतन्त्र, या वृहत्तर भारत आदि का आशय लिया जाता है। पुराणों के अनुसार नाभिराज के पुत्र भगवान ऋषभदेव के पुत्र भरत चक्रवर्ती सम्राट के नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा। वास्तव में 'भारत' शब्द का सबसे पहला उल्लेख पुराणों में ही मिलता है। प्राचीन काल से आधुनिक काल तक भारत को कई नामों से जाना जाता रहा है। जैसे– भारतखण्ड, जम्बूद्वीप, आर्यावर्त, हिन्द, हिन्दुस्तान आदि। प्राचीन समय में भारत के इस विशाल उपमहाद्वीप को 'भारतवर्ष' के नाम से जाना जाता था। ऐसा माना जाता है कि यह नामकरण 'ऋग्वैदिक काल के प्रमुख जन 'भरत' के नाम से किया गया। भारत जम्मू दीप का दक्षिण भाग था। आर्यों का निवास स्थल होने के कारण इसका नामकरण 'आर्यावर्त के रूप में हुआ। वायु पुराण के एक अन्य संदर्भ में दुष्यन्त और शकुन्तला के पुत्र 'भरत' का उल्लेख मिलता है। जिसके नाम पर इसका नाम भारत पड़ा।

1.4 स्थिति तथा विस्तार

उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित एशिया महादेश का एक विशाल देश है। इसका अक्षांशीय विस्तार 8°4' उत्तरी अक्षांश से 37°6' उत्तर अक्षांश तक तथा देशान्तरीय विस्तार 68°7' पूर्वी देशांतर से 97°25' पूर्वी देशांतर तक है। इस प्रकार इसका अक्षाशीय तथा देशांतरीय विस्तार लगभग 30° है। भारत की मुख्य भूमि का दक्षिणतम अक्षांश 8°4 है जबकि भारत का सबसे दक्षिणतम बिन्दु इंदिरा प्वाइंट का अक्षांश 6°4' है। भारत की उत्तर से दक्षिण लम्बाई 3214 किमी और पूर्व से पश्चिम चौड़ाई 2933 किमी है। इसकी स्थलीय सीमा की लम्बाई 15200 किमी तथा समुद्र तट की लम्बाई 7517 किमी है। कुल क्षेत्रफल 32,87,263 वर्ग किमी है।

भारत की स्थलीय सीमा उत्तर–पश्चिमी में पाकिस्तान और अफगानिस्तान से लगती है, उत्तर में तिब्बत (अब चीन का हिस्सा) और चीन तथा नेपाल और भूटान से लगी हुई है और पूर्व मे बांग्लादेश तथा म्यांमार से। बंगाल की खाड़ी में स्थित अंडमान व निकोबार द्वीपसमूह और अरब सागर में स्थित लक्षद्वीप, भारत के द्वीपीय हिस्से हैं। इस प्रकार भारत की समुद्री सीमा दक्षिण–पश्चिम में मालदीव दक्षिण में श्री लंका और सुदूर दक्षिण–पूर्व में थाइलैंड और इंडोनेशिया से लगती है। पाकिस्तान, बांग्लादेश और म्यांमार के साथ भारत की स्थलीय सीमा और समुद्री सीमा दोनों जुड़ी हैं। कर्क रेखा भारत के बीचो–बीच 8 राज्यों से होकर गुजरती है। ये राज्य निम्न है– गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा एवं मिजोरम।

82°30' पूर्वी देशांतर को भारत का मानक याम्योत्तर या मीन टाइम लाइन माना गया है। यह उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद के निकट मिर्जापुर के नैनी से गुजरती है। इसी के कारण इलाहाबाद को शून्य मील केन्द्र कहा जाता है। किसी भी देश के मानक याम्योत्तर का चुनाव 7°30' देशांतर के गुणक के साथ साथ देश के मध्य से गुजरने की शर्तों पर किया जाता है। इसी आधार पर 82°30' याम्योत्तर को भारत का मानक याम्योत्तर चुना गया है। यह ग्रीनविच (लंदन) मीन टाइम लाइन से 5 : 30 मिनट आगे है।

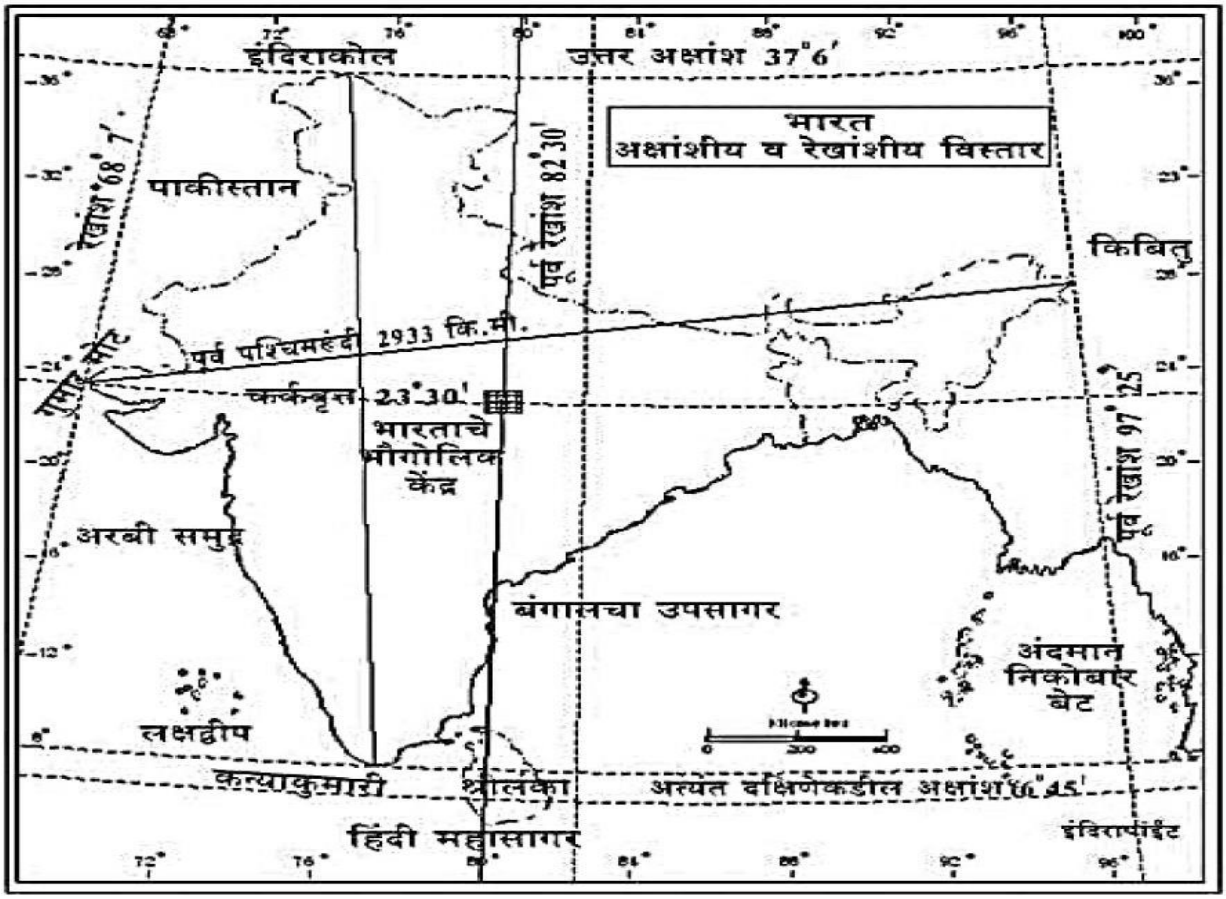

चित्र 1.1 भारत अक्षांशीय तथा देशांतरीय विस्तार

भारत के दक्षिणतम बिंदु कन्याकुमारी के निकट बंगाल की खाड़ी, अरब सागर और हिन्द महासागर का संगम है। भारत के पास विश्व के कुल क्षेत्रफल का 2.4% भाग है. पठारी प्रदेश प्रायद्वीपीय भारत कहलाता है। अरुणाचल प्रदेश तथा गुजरात के बीच सूर्योदय में 2 घंटे का अंतर होता है। स्वेज नहर के बनने के बाद भारत और यूरोप के बीच लगभग 7,000 किमी. दूरी कम हो गई. भारत की सीमा 7 पड़ोसी देशों पकिस्तान, अफगानिस्तान, नेपाल, चीन, भूटान, म्यान्मार और बांग्लादेश को छूती है। लक्षद्वीप अरब सागर में तथा अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह बंगाल की खाड़ी में स्थित है। श्रीलंका मन्नार की खाड़ी और पाक जलसन्धि से भारत से अलग होता है।

भारत और पाकिस्तान के बीच रेडक्लिफ और भारत और चीन के बीच मैकमोहन रेखा स्थित हैं। भारत का पूर्व–पश्चिम सर्वाधिक विस्तार 22° उत्तरी अक्षांश पर मिलता है। देश के दक्षिणी भाग की आकृति लगभग त्रिभुजाकार है। भारत के अक्षांशीय और देशान्तरीय विस्तार का प्रभाव समय, तापमान, मौसम आदि पर पड़ता है। केरल और तमिलनाडु जैसे राज्यों में विषुवतरेखा के निकट होने के चलते हमेशा तापमान अधिक रहता है। विषुवतीय रेखा से दूर और अधिक ऊँचाई पर स्थिति होने के कारण जम्मू–कश्मीर का तापमान बहुत कम होता है।

देश का उत्तरी भाग शीतोष्ण क्षेत्र में पड़ता है। अक्षांशीय दूरी बढ़ने से दिन–रात की अवधि में अंतर आता है। केरल और तमिलनाडु में सबसे छोटे और सबसे बड़े दिन में 45 मिनिट का अंतर होता है जबकि लेह में यह 5

घंटे का होता है। 82°30' पूर्व देशांतर रेखा को भारत की मानक याम्योत्तर माना जाता है। भारत तथा अन्य पड़ोसी देशों ने मिलकर 8 दिसम्बर 1985 को दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन का निर्माण किया है। भारत पूर्ण रूप से विषुवतरेखा से उत्तर में स्थित है। भारत और श्रीलंका के बीच स्थित द्वीपीय श्रृंखला को एडम ब्रिज कहा जाता है।

1.5 भारत की भू–तत्वीय संरचना

किसी भी देश के भौगोलिक अध्ययन में उसकी भूवैज्ञानिक संरचना का ज्ञान आधारभूत है। शैलों की संरचना का प्रभाव देश की मिट्टियों तथा खनिज संसाधनों पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। इसीलिये देश की कृषि, औद्योगिक विकास एवं आर्थिक प्रगति भी परोक्ष रूप से शैलों की भूवैज्ञानिक संरचना पर निर्भर करती है। अवसादी शैलों द्वारा निर्मित जलोढ़ मिट्टियाँ कृषि के लिये अधिक उपयोगी होती हैं, किन्तु प्राचीन व कठोर आग्नेय शैलों तथा कायान्तरित शैलों से निर्मित मिट्टियों में जीवांश (ह्यूमस) तथा उर्वरता की कमी होती है। दूसरी ओर, अवसादी शैलें (पेट्रोलियम के अपवाद सहित) खनिजों की दृष्टि से निर्धन होती हैं, जबकि आग्नेय तथा कायान्तरित शैलों में उपयोगी व मूल्यवान खनिज उपलब्ध होते हैं। उदाहरणार्थ, प्राचीन आर्कियन शैलों में लोहा तथा सोना प्रचुरता से पाये जाते हैं। कार्बोनीफेरस युगीन शैंलों में कोयला प्राप्त होता है। सागरों में निक्षेपित जीवाश्मयुक्त शैलों में खनिज तेल (पेट्रोलियम) की प्राप्ति की सम्भावना अधिक होती है। अतएव भूवैज्ञानिक संरचना का अध्ययन अभीष्ट है।

भूवैज्ञानिक संरचना–

भूवैज्ञानिक संरचना के इतिहास का अध्ययन मानव इतिहास के समान विभिन्न कालों में किया जाता है। पृथ्वी की उत्पत्ति के पश्चात् धरातल की भूवैज्ञानिक रचना विभिन्न चरणों तथा अवस्थाओं में हुई। इसका इतिहास करोडों वर्ष पुराना है, जिसे कल्पों , युगों आदि में बांटा जाता है। भूवैज्ञानिक इतिहास के विभिन्न कालों में विभिन्न भूवैज्ञानिक राशियाँ, समूह , समुदाय आदि विकसित हुए।

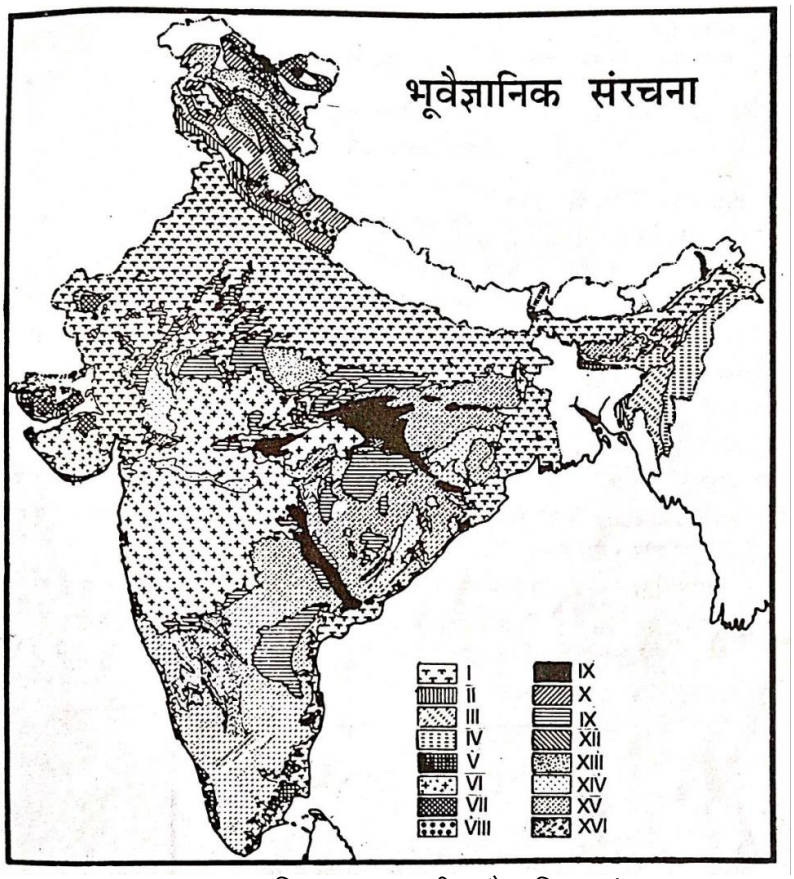

चित्र भारत की भूवैज्ञानिक संरचना

(1) क्वार्टरनरी, (2) शिवालिक एवं तिपम समूह, (3) शिवालिक एवं मध्य मायोसीन, (4) पैल्योसीन एवं इयोसिन, (5) तटवर्ती टर्शियरी, (6) दक्कन ट्रैप, (7) सीनोजोइक, (8) मेसोजोइक एवं पैल्योजोइक, (9) गोंडवाना एवं अपर पैल्योजोइक, (10) गोंडवाना एवं लोवर पैल्योजोइक, (11) विन्ध्यन एवं कुडप्पा, (12) मालानी ज्वालामुखी, (13) ग्रेनाइट, (14) धारवाड, (15) अवर्गीकृत रवेदार, (16) चार्नोकाइट।

भारत का भूवैज्ञानिक इतिहास कुल भू–पटल के भूवैज्ञानिक इतिहास के समान प्राचीन हैं। यहाँ पुराकैम्ब्रियन युग की प्राचीनतम शैलों से लेकर क्वार्टरनरी युग की नवीनतम शैलें पायी जाती हैं। भूवैज्ञानिक विशेषताओं के आधार पर भारत को तीन स्पष्ट बृहत् भागों में बाँटा जा सकता है। (1) प्रायद्वीपीय भारत जो प्राचीनतम शैलों से निर्मित गोंडवानालैण्ड का अंग है, (2) हिमालय तथा नवीन वलित पर्वत श्रेणियाँ जो सागरों में निक्षेपित नवीन अवसादी शैलों से निर्मित हैं, तथा (3) उपरोक्त दोनों भूखण्डों के निर्माण के पश्चात् दोनों के मध्य गंगा–सिन्धु–ब्रह्मपुत्र का मैदान नवीन जलोढ़ के निक्षेपों से उत्पन्न हुआ। उपरोक्त तीनों विभाग भूवैज्ञानिक संरचना की दृष्टि से परस्पर सर्वथा भिन्न हैं। प्रायद्वीपीय पठार प्राचीनतम शैलों से निर्मित है, हिमालय नवीन वलित अवसादी शैलों का बना है तथा गंगा–ब्रह्मपुत्र–सिन्धु का मैदान उपरोक्त दोनों विभागों के अपरदन से प्राप्त पदार्थों के निक्षेपण से उत्पन्न एक अतिनवीन, नीरस भूवैज्ञानिक संरचना का उदाहरण है।

भारत की भूवैज्ञानिक संरचना के इतिहास को निम्न युगों में बाँटा जा सकता है।

(1) अति प्राचीन या पुरा कैम्ब्रियन युग (आर्कियन तथा धारवाड़ क्रम)

(2) पुराण युग (कुडप्पा एवं विन्ध्यन क्रम)

(3) द्रविड़ युग

(4) आर्य युग (गोंडवाना, दक्कन ट्रैप, टर्शियरी, क्वार्टरनरी समूह की शैलें)

1. पुरा कैम्ब्रियन शैलें–

आर्कियन समूह की शैलें–

इस समूह के अन्तर्गत धारवाड़ क्रम तथा ग्रेनाइट नीस व शिस्ट शैलें सम्मिलित हैं। ये प्राचीनतम शैलें प्रायद्वीपीय पठार के लगभग 2/3 भाग पर विस्तृत हैं। इनका विस्तार कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, बिहार के छोटा नागपुर पठार तथा दक्षिणी पूर्वी राजस्थान के लगभग 1.87 लाख वर्ग किमी क्षेत्र पर है। महान हिमालय के गर्भ में भी ये शैलें पायी जाती हैं बहुत अधिक कायान्तरण के कारण ये शैलें मौलिक रूप खो चुकी हैं तथा रवेदार कायान्तरित रूप में पायी जाती हैं। इसीलिये इनमें जीवाश्मों का अभाव है। ये केवल आधारभूत शैलों के रूप में स्थित हैं। इनके क्षरण से ही कालान्तर में धारवाड़ तथा बाद के शैल क्रम विकसित हुए। इस समूह में निम्न तीन मुख्य हैं–

1. बंगाल नीस– इसका विस्तार पश्चिमी बंगाल, बिहार, उड़ीसा व कर्नाटक में है।
2. बुन्देलखण्ड नीस –यह प्रायद्वीप के उत्तरी सिरे पर बुन्देलखण्ड में विस्तृत है।
3. नीलगिरि नीस–यह नीलगिरि, पलनी तथा शिवराय पहाड़ियों में विस्तृत है तथा चरनोकाइट सीरीज नाम से विख्यात है।

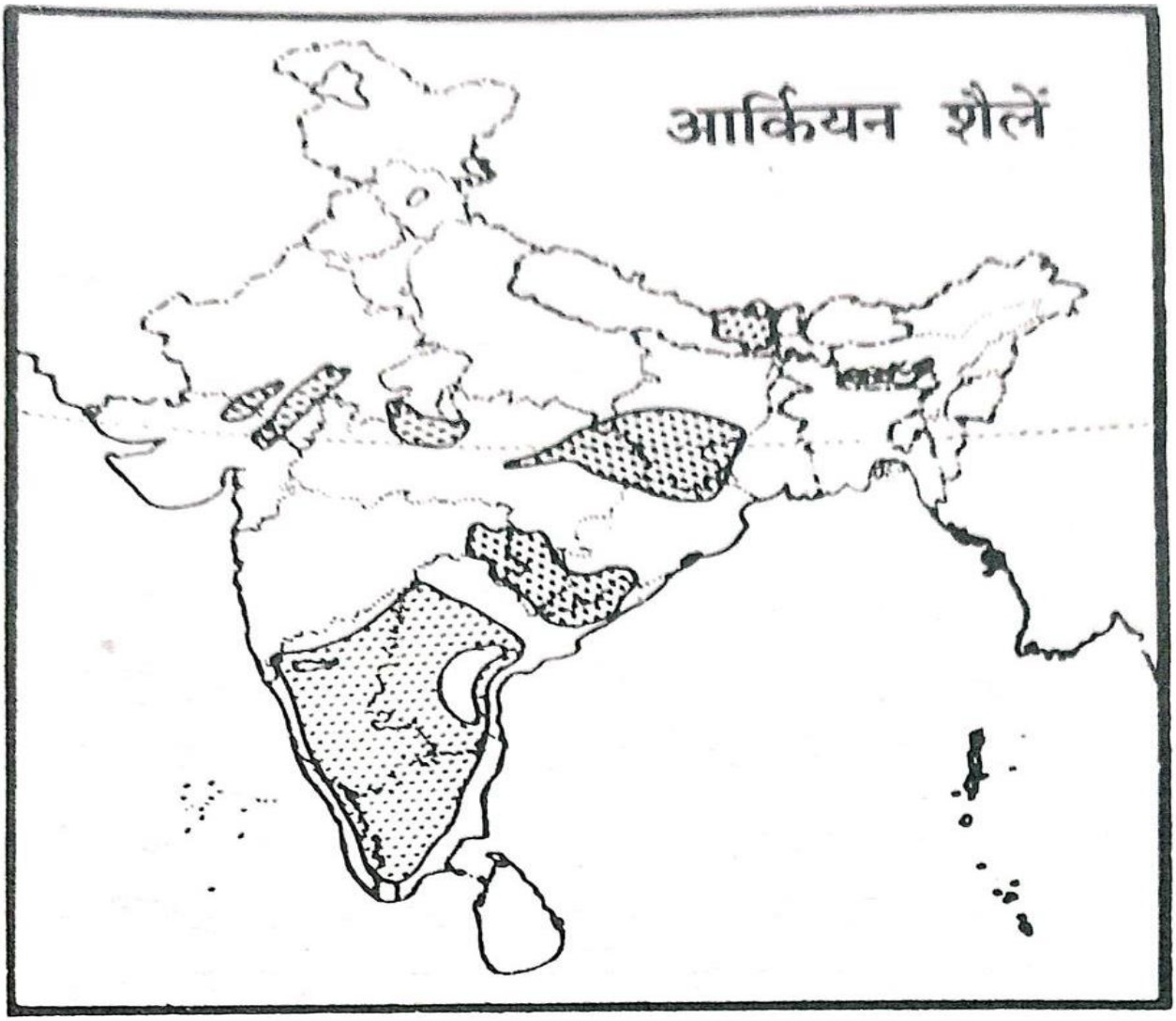

चित्र 1.2 आर्कीयन शैल का वितरण

धारवाड़ क्रम की शैलें

उत्पत्ति – विद्वानों के मत में आर्कियन युग में भूपटल के सिकुड़ने के साथ ही आरम्भिक पर्वतों का निर्माण हुआ था। इसी समय नीस व शिस्ट जैसी रवेदार कायान्तरित शैलें उत्पन्न हुई थीं। कालान्तर में अनाच्छादनकारी शक्तियों के कारण ये शैलें अपरदित हुई तथा उस पदार्थ के निक्षेपण से प्राचीनतम अवसादी शैलें उत्पन्न हुई जो धारवाड़ क्रम की शैलें कहलाती हैं। इनमें अत्यधिक कायान्तरण के कारण जीवाश्मों का अभाव पाया जाता है। यह भी सम्भव है कि इन शैलों के जन्म के समय तक पृथ्वी पर जीवन विकसित नहीं हुआ था। इस प्रकार धारवाड़ क्रम में आग्नेय तथा अवसादी दोनों ही प्रकार की शैलें सम्मिलित हैं। हार्नब्लेड, क्लोराइट तथा मेनुलाइट प्रमुख आग्नेय शैलें हैं। माइकाशिस्ट, टैल्क शिस्ट, क्लोराइड शिस्ट, क्वार्टजाइट, आदि शैलें अवसादी उत्पत्ति की शैलें हैं। निचली धारवाड़ शैलें प्रधानतः आग्नेय उत्पत्ति की हैं, मध्य धारवाड़ शैलों में अभ्रकीय क्वार्टजाइट, स्लेट, शिस्ट व लाइमस्टोन के रूप में अवसादी शैलें पायी जाती हैं। ऊपरी धारवाड़ शैलों में कॉंग्लोमरेट, क्वार्टजाइट, स्लेट, आदि विशुद्ध अवसादी शैलें पायी जाती हैं। इन शैलों में लोह अयस्क, मैंगनीज, तांबा, जस्ता व सोना आदि धातुएँ बहुत मिलती हैं।

चित्र 1.3 धारवाड़ शैल का वितरण

वितरण– धारवाड़ क्रम की शैलें प्रधानतः कर्नाटक के धारवाड, बिल्लारी व शिमोगा जिलों में विस्तृत हैं। वैसे इन शैलों का वितरण प्रायद्वीप के अतिरिक्त प्रायद्वीप के बाहर भी मिलता है। प्रायद्वीप में ये निम्नलिखित क्षेत्रों में पायी जाती हैं– (1) दक्षिणी दक्कन में कर्नाटक की धारवाड़–बिल्लारी–मैसूर पेटी में, (2) मध्यवर्ती तथा पूर्वी दक्कन में नागपुर व जबलपुर में सासेस् श्रेणी, बालाघाट व भटिंडा में चिपली श्रेणीय रीवां व हजारी बाग में गोंडाइट श्रेणी तथा विशाखापट्टनम के कूदोराइट श्रेणी, के रूप में, (2) अरावली श्रेणी में दिल्ली तक एवं गुजरात में चम्पानेर श्रेणी के रूप में। प्रायद्वीप के बाहर धारवाड़ शैलें निम्नलिखित क्षेत्रों में विस्तृत हैं (1) पश्चिमी हिमालय के लद्दाख, जास्कर, गढ़वाल तथा कुमायूँ की निचली घाटियों में, (2) हिमाचल प्रदेश की स्पीति घाटी के निकट वैक्रता श्रेणी के रूप में, (3) कश्मीर में सेलखाला श्रेणी तथा (4) असम हिमालय में शिलॉग श्रेणी के रूप में।

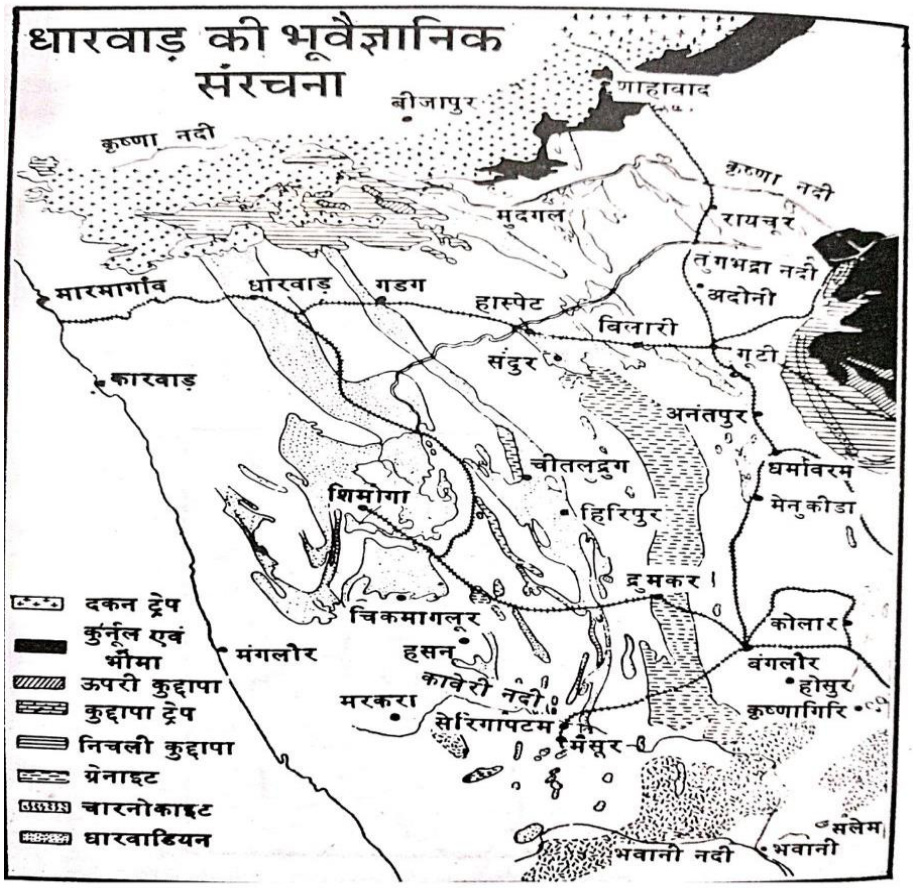

चित्र 1.4 धारवाड़ की भू वैज्ञानिक संरचना

आर्थिक महत्व– आर्थिक दृष्टि से धारवाड़ शैलें बहुत महत्वपूर्ण हैं। देश की कुल प्रमुख धातुएँ (लोहा, सोना, मैंगनीज, तांबा, टंग्सटन, क्रोमियम जस्ता) तथा महत्वपूर्ण खनिज (फ्लूराइट, इल्मेनाइट, सीसा, सुरमा, वुलफ्राम, अभ्रक, गारनेट, संगमरमर, कोरण्डम, आदि) इन्हीं शैलों में हैं। धारवाड़ युग में ही अरावली श्रेणी का निर्माण प्राचीनतम वलित पर्वतों के रूप में हुआ था। बाद में अनाच्छादन के कारण ये समतल हो गयीं। कैम्ब्रियन तथा परमो–कार्बोनीफेरस काल के पूर्व इनका उत्थान हुआ।

2. पुराण समूह की शैलें–

धारवाड़ क्रम की शैलों के निर्माण के काफी समय बाद विभिन्न विवर्त्निक हलचलों के फलस्वरूप पुराण समूह की शैलें उत्पन्न हुई। इनमें सबसे नीचे कुडप्पा क्रम तथा ऊपर विन्ध्यन क्रम की शैलें विस्तृत हैं।

कुडप्पा क्रम की शैलें–

उत्पत्ति– इस क्रम की शैलें धारवाड़ तथा आर्कियन नीस व शिस्ट शैलों के ऊपर असम्बद्ध रूप में विभिन्न मोटाई की अनेक समानांतर प्राचीन अवसादी परतों के रूप में स्थित हैं। इनका नामकरण आन्ध्र प्रदेश के कुइप्पा जिले के नाम पर हुआ है जहाँ ये एक विस्तृत अर्द्ध चन्द्राकार क्षेत्र में विस्तृत हैं। इनका निर्माण धारवाड़ शैलों के जलीय अपरदन के पश्चात् अवसादों के निक्षेपण से हुआ। इनमें शेल, क्वार्टजाइट, स्लेट व चूना पत्थर की प्रधानता है। इन शैलों का कायान्तरण भी हुआ है। ये जीवाश्म रहित हैं, यद्यपि इनकी उत्पत्ति के समय पृथ्वी पर जीवन का आविर्भाव हो चुका था। इस क्रम की शैलों को दो वर्गों में रखा जाता है। (1) निचली कुडप्पा शैलें प्राचीन धारवाड़ शैलों के ऊपर असम्बद्ध रूप में मिलती हैं। इनमें पापाघनी व चेयार श्रेणी उल्लेखनीय हैं। (2) ऊपरी कुडप्पा शैलों में कृष्ण व नल्लामलाई श्रेणी उल्लेखनीय हैं।

चित्र 1.5 कुडप्पा शैल का विकास

वितरण– कुडप्पा शैलों का विस्तार लगभग 22,000 वर्ग किमी क्षेत्र पर प्रायद्वीप एवं हिमालय में है। प्रायद्वीपीय भारत में ये निम्नलिखित क्षेत्रों में मिलती हैं (1) कृष्णा घाटी में कृष्णा श्रेणी, (2) नल्लामलाई पहाड़ियों में नल्लामलाई श्रेणी, (3) चेयर घाटी में चेयार श्रेणी, (4) पापाघनी घाटी में पापाघनी श्रेणी, (5) राजस्थान में दिल्ली श्रेणी, तथा उत्तरी व पश्चिमी मध्य प्रदेश में बिजावर श्रेणी तथा छत्तीसगढ़ में, (6) उत्तरी कर्नाटक में कालडगी श्रेणी। हिमालय में ये शैलें कश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं नेपाल में विस्तृत हैं। आर्थिक महत्व कुडप्पा शैलों का आर्थिक महत्व धारवाड़ शैलों की अपेक्षा कम है। इनमें लोहा व मैंगनीज प्राप्त होते हैं। कुडप्पा व कुर्नूल जिलों में एसबेस्टस व टैल्क तथा पूर्वी राजस्थान में तांबा, कोबाल्ट व रांगा प्राप्त होते हैं।

विन्ध्यन क्रम की शैलें–

उत्पत्ति– ये शैलें कुडप्पा क्रम के बाद निर्मित हुईं। विन्ध्याचल क्षेत्र में अधिक विस्तृत होने कारण ये 'विन्ध्यन क्रम' के नाम से विख्यात हुईं। बिहार में सासाराम से पश्चिम में अरावली के सिरे पर चित्तौड़ गढ़ तक लगभग 1 लाख वर्ग किमी क्षेत्र में इनका विस्तार है। इनमें बालू पत्थर, शेल व चूना पत्थर की प्रधानता है जिसकी परतें 4000 मीटर तक मोटी हैं। अनेक स्थानों पर ये शैलें दक्कन ट्रैप की शैलों से ढक गयी हैं।

वितरण– विन्ध्यन क्रम की शैलों को दो खण्डों में विभाजित किया जाता है।

1. निम्न विन्ध्यन क्रम – इन शैलों में क्वार्ट्जाइट शैल व चूने के मोटे निक्षेप मिलते हैं। 2. ऊपरी विन्ध्यन क्रम– ये शैलें पाँच क्षेत्रों में मुख्यतः विस्तृत हैं (1) सोन घाटी में सेमरी श्रेणी, (2) दक्षिणी पश्चिमी आन्ध्र प्रदेश में कुर्नूल श्रेणी, (3) भीमा घाटी में भीमा श्रेणी, (4) राजस्थान में पलनी श्रेणी तथा (5) ऊपरी गोदावरी घाटी तथा नर्मदा घाटी के

उत्तर में मालवा तथा बुन्देलखण्ड में।

2. ऊपरी विन्ध्यन क्रम– ये शैलें नदी घाटियों में बालू पत्थर, शैल, कॉग्लोमरेट आदि के निक्षेपों से निर्मित हैं। ये प्रायद्वीप के अतिरिक्त हिमालय में भी मिलती हैं। इनके पाँच प्रमुख क्षेत्र हैं– (1) नर्मदा के उत्तर में भाण्डेर, रीवां कैमूर श्रेणी, (2) कटनी–इलाहाबाद रेलमार्ग के सहारे, (3) मुगलसराय से सोन नदी पर देहरी आन–सोन रेलमार्ग के सहारे, (4) अरावली तथा निकटवर्ती भागों में, एवं (5) पीरपंजाल, धौलाधार श्रेणियाँ, शिमला व स्पीती घाटी क्षेत्रों में स्थित स्लेट।

आर्थिक महत्व– विन्ध्यन क्रम की शैलों से चूना पत्थर, बालू पत्थर, चीनी मिट्टी, अग्नि सह मिट्टी, वर्ण मिट्टी आदि प्राप्त होते हैं। लाल बालू पत्थर भवन निर्माण के लिये विशेष महत्वपूर्ण है। चूना पत्थर, सीमेन्ट उद्योग का आधार है। इन्हीं शैलों से पन्ना व हीरे भी प्राप्त होते हैं। विन्ध्यन क्रम की शैलों का विशेष अध्ययन ओल्डहम, मेडलीकॉट, मेलट, किंग, हेरों, ऑडेन, आदि अनेक विद्वानों ने किया है।

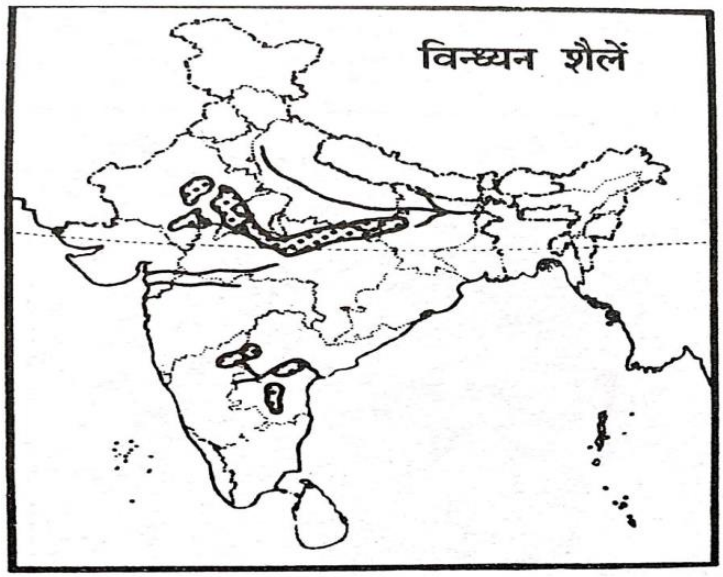

चित्र 1.6 विंध्यन शैलों का वितरण

3. द्रविडियन समूह की शैलें– इस समूह की शैलों का उत्पत्ति काल कैम्ब्रियन से लेकर मध्य कार्बोनीफेरस काल तक माना जाता है। ये शैलें जीवावशेष युक्त हैं तथा मुख्यतः प्रायद्वीप के बाहर पायी जाती हैं।

4. आर्यन समूह की शैलें– ऊपरी कार्बोनीफेरस युग से प्लीस्टोसीन युग तक के मध्य निम्न प्रकार की शैलें विकसित हुई –

गोंडवाना क्रम की शैलें–

उत्पत्ति–भूवैज्ञानिकों के मत में इन शैलों का निर्माण ऊपरी कार्बोनीफेरस से जुरैसिक युग के मध्य हुआ। विन्ध्यन क्रम की शैलों के निर्माण के पश्चात् प्रायद्वीपीय भारत में लम्बे अरसे तक विवर्तनिक हलचलें शान्त रहीं। ऊपरी कार्बोनीफेरस युग में विश्वव्यापी हर्सीनियन हलचल के कारण जल स्थल के वितरण में भारी परिवर्तन हुए। टेथिस सागर के उत्तर में स्थित अंगारालैंड में कराकोरम, क्युनलुन तथा मध्य एशिया की अनेक पर्वत श्रेणियाँ उत्पन्न हुई। इसी समय हिम युग का आविर्भाव हुआ। हिमनदीय एवं नदीय अपरदन के द्वारा नदी घाटियों तथा झील बेसिनों में अवसादों का निक्षेपण हुआ। दलदली घाटियों में वन उगे जो कालान्तर में दलदल में दब गये। बहुत समय के पश्चात् वनस्पति का रूपान्तरण होने पर कोयले की उत्पत्ति हुई। वनस्पति के अलावा इन शैलों में मछलियों तथा

रेंगने वाले जीवों के भी अवशेष मिलते हैं।

1.7 गोंडवाना शैलों का वितरण

वितरण– प्रायद्वीपीय भारत में गोंडवाना शैलें चार मुख्य क्षेत्रों में फैली हैं– (1) दामोदर घाटी, (2) महानदी घाटी, (3) गोदावरी–वैनगंगा एवं वर्धा घाटियों में, (4) कच्छ–काठियावाड़, पश्चिमी राजस्थान, मद्रास, गुन्तूर, राजमहेन्द्री, विजयवाड़ा, तिरुचिरापल्ली, रामनाथपुरम आदि छुट–पुट क्षेत्रों में। हिमालय क्षेत्र में गोंडवाना शैलों का वितरण स्पष्ट नहीं है। कश्मीर, दार्जिलिंग, सिक्किम व असम में ये पायी जाती हैं किन्तु अत्यधिक कायान्तरण के कारण इन्हें पहचानना कठिन ही है।

आर्थिक महत्व – गोंडवाना शैलों का महत्व कोयले के कारण है। इन शैलों में देश का 98% कोयला प्राप्त होता है। बालू पत्थर, चीका मिट्टी तथा लिग्नाइट भी मिलता है। सीमेंट तथा रासायनिक उर्वरक उद्योगों के लिये इनका बहुत महत्व है।

दक्कन ट्रैप

उत्पत्ति – क्रिटेशियस युग के अन्त में प्रायद्वीपीय भारत के पश्चिमी भाग पर दरारी उद्‌गार के रूप में व्यापक रूप से ज्वालामुखी क्रिया हुई जिससे दक्कन के मुख्य पठार की रूपाकृति निर्मित हुई। लावा निक्षेप की अनुप्रस्थ परतें प्रायः एक दो मीटर से 35 मीटर या अधिक गहरी हैं। पश्चिम की ओर से 2500 मीटर से अधिक मोटी हैं। बेसाल्ट लावा के प्रवाह से सीढ़ी जैसी भू–आकृति का निर्माण हुआ है। दक्कन ट्रैप में मुख्यतः बेसाल्ट व डोलोराइट लावा मिलता है। इसके क्षरण से उर्वर काली मिट्टी का निर्माण हुआ है जिसे कपास की मिट्टी या रेगुर भी कहते हैं। इसी ट्रैप से लेटराइट मिट्टी भी बनी है जिसमें एल्युमिना, लोहा व मैंगनीज का अंश पाया जाता है।

विस्तार– दक्कन ट्रैप का विस्तार लगभग 5 लाख वर्ग किमी क्षेत्र पर महाराष्ट्र के अधिकांश भाग, गुजरात व दक्षिणी पश्चिमी मध्य प्रदेश में है। बिहार व तमिलनाडु के छुट–पुट क्षेत्रों में भी दक्कन ट्रैप शैलें मिलती हैं।

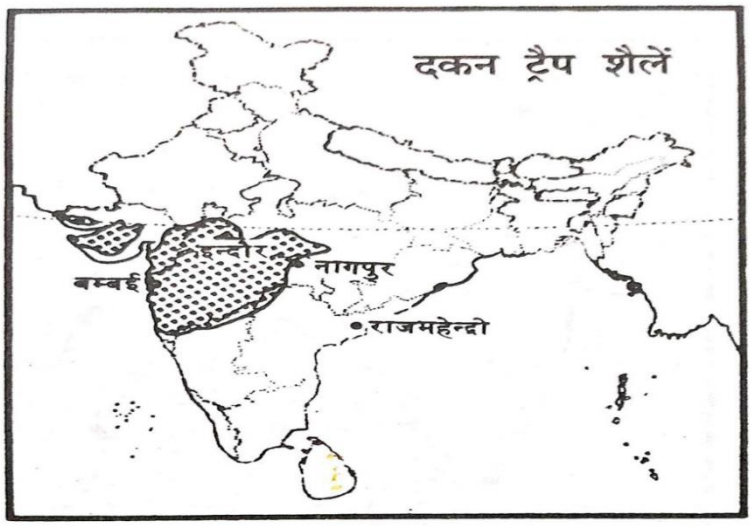

चित्र 1.8 दक्कन ट्रैप शैलों का वितरण

आर्थिक महत्व- दक्कन ट्रैप की शैलों का महत्व भवन व सड़क निर्माण के लिय मुख्यतः है। माणिक्य , अगेट व घटिया रत्न भी प्राप्त होते हैं। बॉक्साइट के निपेक्ष पेट्रोलियम शोधन तथा ऐलुमिनियम अयस्क के लिये उपयोगी हैं।

टर्शियरी क्रम की शैलें–

उत्पत्ति-इयोसीन युग से लेकर प्लायोसीन युग तक टर्शियरी क्रम की शैलें निर्मित हुई। यह अवधि तृतीय महाकल्प कहलाती है। गोंडवाना भूखण्ड के विखण्डन के बाद भारत का वर्तमान रूप इसी अवधि में सुनिश्चित हुआ। हिमालय की उत्पत्ति भी इसी अवधि में हुई। टयेरी कल्प के दौरान ही प्रायद्वीपीय पठार एवं हिमालय के परस्पर भिन्न भौतिक खण्डों के पृथक् अस्तित्व प्रकाश में आये। इस अवधि में शैलों तथा वनस्पतियों में व्यापक परिवर्तन हुए।

हिमालय का उत्थान चार या पाँच चरणों में विभिन्न कालों में हुआ। प्रथम उत्थान ऊपरी क्रिटेशियस में हुआ। द्वितीय उत्थान ऊपरी इयोसीन में हुआ, इसी दौरान नारी, मुर्री तथा गज समुदाय में निष्पक्ष हुए। हिमालय का तृतीय उत्थान मध्य मायोसीन में हुआ। इस समय तक टेथिस सागर पूर्णतः लुप्त हो चुका था तथा हिमालय के दक्षिण में एक छोटी खाड़ी उत्पन्न हो गयी थी जिसमें नदियों के निक्षेपण होते रहे। प्लायोसीन के अन्त में इन निक्षेपों में वलन तथा उत्थान के कारण शिवालिक पहाड़ियाँ निर्मित हुई, इसे हिमालय का चौथा उत्थान कहा जाता है। अन्तिम या पांचवाँ उत्थान प्लीस्टोसीन काल में हुआ जिससे पीर–पंजाल श्रेणी एवं कश्मीर घाटी उत्पन्न हुई।

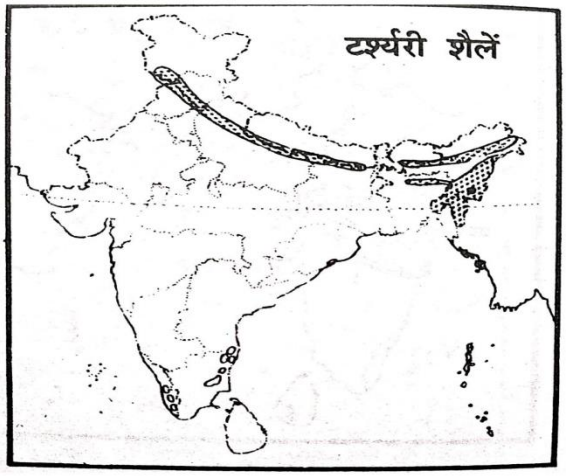

चित्र 1.9 टर्शियरी शैलों का वितरण

वितरण – टर्शियरी शैलें हिमालय क्षेत्र में मुख्यतः पायी जाती हैं। ये बलूचिस्तान (पाकिस्तान) के मकरान तट से लेकर सुलेमान–किरथर श्रेणी, हिमालय श्रेणी होती हुई बर्मा के अराकान–योमा श्रेणी तक विस्तृत हैं। प्रायद्वीपीय भारत में ये केवल तटीय क्षेत्रों में सीमित हैं। टर्शियरी युगीन शैलों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है–

1. इयोसीन क्रम –ये शैलें निम्न, मध्य व उत्तरी खण्डों में विभाजित की जाती हैं तथा सिन्ध (पाकिस्तान) में क्रमशः रानीकोट, लाकी व किरथर श्रेणियों के रूप में स्थित है। भारत में ये शैलें जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, असम, राजस्थान व गुजरात में मिलती हैं। रियासी व जम्मू में पायराइट व कार्बनयुक्त शैल तथा नुमुलिटिक चूना पत्थर के ऊपर लेटराइट निक्षेप पाये जाते हैं। शैल परतों में कुछ कोयला व ग्रेफाइट भी मिलता है। ऊपरी असम में ये शैलें हफलोंरादिसाँग भ्रंश के दोनों ओर बरैल श्रेणी के रूप में मिलती हैं। जिसके ऊपरी भाग में कोयले की परतें स्थित हैं। जैन्तिया श्रेणी में (लाकी व किरथर श्रेणी के समकक्ष) नुमुलिटिक चूना पत्थर व शैल पाये जाते हैं। राजस्थान में नुमुलाइट शैलें, कच्छ तथा गुजरात में सूरत व भड़ौंच में भी इयोसीन शेलें विस्तृत हैं। पाण्डिचेरी में भी इयोसीन शैलें पाई जाती हैं।

2. ओलिगोसीन व मायोसीन क्रम – भारत में ओलिगोसीन क्रम अधिक विकसित नहीं है। केवल असम में बरैल श्रेणी इस क्रम का प्रतिनिधित्व करती है, यह भी मायोसीन क्रम की शैलों से ढकी हैं। इयोसीन के अन्त में टेथिस सागर का तल ऊपर उठा व उसमें मोड़ पड़े थे। ओलिगोसीन युग में भी टेथिस सागर के निक्षेप होते रहे, जो उथली जलीय उत्पत्ति के सूचक हैं। पाकिस्तान में नारी, गज व मुर्री क्रम की शैलें इसी समय निर्मित हुई। शिमला में डगशाई व कसौली श्रेणी, तथा असम में सूरमा श्रेणी इसी काल की हैं। कच्छ, सौराष्ट्र व गुजरात में भी नारी व गज श्रेणी के स्तर मिलते हैं। छुट–पुट रूप में मयूरभंज (उड़ीसा) में वारिपदा श्रेणी, पश्चिमी बंगाल में दुर्गापुर श्रेणी, केरल में क्विलोन स्तर निम्न मायोसीन क्रम की शैलें हैं।

3. मायोसीन–प्लायोसीन क्रम – इस अवधि में हिमालय का तृतीय उत्थान हुआ जिससे शिवालिक पहाड़ियों की उत्पत्ति हुई। असम में दिहिंग क्रम की शैलें इसी समय बनीं। इनमें पाये जाने वाले मोटे कण व रेत की अधिकता नदियों द्वारा छिछले जल में निक्षेपों की सूचक है। इनमें कहीं–कहीं जीवावशेष भी मिलते हैं। कुद्धलौर व राजमहेन्द्री की बालू पत्थर शैलें भी इसी क्रम की हैं, इनमें मोलस्क–जीवावशेष पाये जाते हैं। केरल में कोल्लम के निकट समुद्र तट पर भी इस क्रम की शैलें उपस्थित हैं। क्वार्टरनरी समूह की शैलें – इसके अन्तर्गत प्लीस्टोसीन तथा वर्तमान (होलीसीन) युगीन शैलें सम्मिलित हैं।

1. प्लीस्टोसीन क्रम की शैलें – क्वार्टरनरी युग का आरम्भ व्यापक हिमावरण के साथ हुआ। हिमालय में विशेष रूप से हिमनदन के प्रमाण (गोलाश्म, हिमोढ़ तथा हिम अपरदित धरातल) मिलते हैं। कश्मीर घाटी का निर्माण इसी अवधि में हुआ। करेवां नामक विस्तृत सरोवर में निक्षेपित अवसादों से करेवां राशि उत्पन्न हुई। झेलम घाटी तथा पीरपंजाल श्रेणी के किनारे चपटे चबूतरे करेवां राशि से निर्मित हैं। यह राशि लगभग 7500 वर्ग किमी में फैली है तथा 1600 मीटर तक मोटी है। इनमें लिग्नाइट के भण्डार पाये जाते हैं। कश्मीर घाटी के दक्षिण में पीरपंजाल श्रेणी स्थित है जिसमें करेवां राशि की शैलें उपस्थित हैं। करेवां शैलें नदीय एवं सरोवरीय प्रकार की हैं। इनमें सीप, मछलियों व स्तनपायी जीवों के अवशेष मिलते हैं।

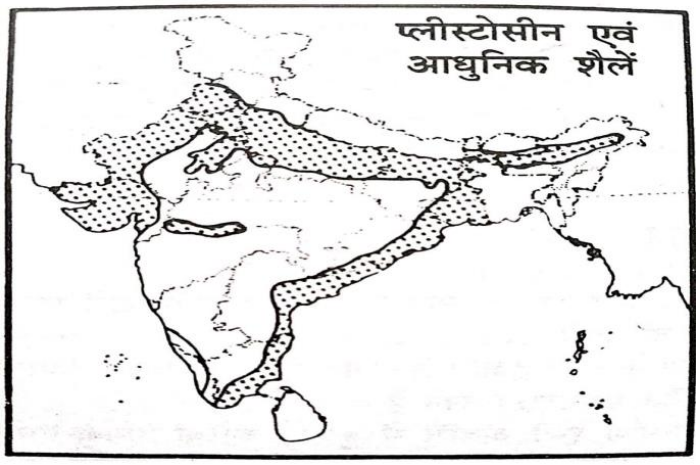

चित्र 1.10 प्लीस्टोसीन तथा आधुनिक शैल

(1) पुरातन काँप – गंगा, ब्रह्मपुत्र, सतलज, नर्मदा व ताप्ती, गोदावरी तथा कृष्णा नदियों की ऊपरी घाटियों में प्लीस्टोसीन कालीन पुरातन काँप मिलती है। इनमें स्तनपायी जीवों के अवशेष भी मिलते हैं। गोदावरी तथा कृष्णा नदियों की ऊपरी घाटियों में कंकड़, बालू व चीकायुक्त प्लीस्टोसीन काल के अवसाद मिलते हैं। ऊपरी गंगा घाटी में पुरातन काँप सबसे अधिक व्यापक है। यहाँ इसे 'बांगर' कहते हैं। यह कंकड़ युक्त तथा काले रंग की है।

(2) नवीन काँप – नदियों की निचली घाटियों में नवीन अवसादों से निर्मित कांप का विस्तार मिलता है। बालू व कंकड़ से युक्त हल्के रंग की यह काँप 'खादर' कहलाती है। यह प्लीस्टोसीन के उत्तरार्द्ध तथा आधुनिक अवसादों से निर्मित है। प्रायद्वीप के तटीय भागों में भी प्लीस्टोसीन कालीन निक्षेप मिलते हैं। उड़ीसा, तमिलनाडु व गुजरात में ये निक्षेप स्थित हैं। गुजरात में कच्छ का रन आधुनिक अवसादों से निर्मित है, यह प्लीस्टोसीन युग में समुद्र का भाग था। पश्चिमी राजस्थान में थार के मरुस्थल में प्लीस्टोसीन कालीन निक्षेप मिलते हैं।

2. आधुनिक क्रम की शैलें – इन शैलों की निर्माण प्रक्रिया आज भी जारी है। गंगा व सतलज नदियों के अतिरिक्त प्रायद्वीपीय (नर्मदा, ताप्ती, महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, पेरियार, आदि) नदियों के मुहानों पर कांप के नवीनतम निक्षेप पाये जाते हैं। बंगाल की खाड़ी के तटीय भागों में बालुका स्तूपों के भी विस्तृत निक्षेप मिलते हैं। वस्तुतः प्रायद्वीपीय भारत में प्राचीनतम से लेकर नवीनतम युग की शैलों के निक्षेप मौजूद हैं। भारत के उच्चावच मानचित्र पर दृष्टिपात करने पर धरातलीय विविधताएँ स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं। कहीं गगनचुम्बी पर्वतशिखर स्थित हैं तो कहीं विशाल समतल मैदान। कहीं वनस्पति विहीन उजाड़ मरुस्थल हैं तो कहीं सघन वनाच्छादित पर्वतीय ढाल। औसत रूप से देश के कुल क्षेत्रफल का 29.3% भाग पर्वतीय, 27.7% भाग पठारी तथा 43% भाग समतल मैदानी है।पृथ्वी की ऊपरी सतह अर्थात् धरातल की भौतिक आकृति को उच्चावच कहते हैं। इसमें पृथ्वी सतह पर विद्यमान ऊंचाई तथा गहराई वाले भाग–जैसे पर्वत, घाटी, मैदान, पठार, आदि सम्मिलित हैं। इनके वर्गीकरण का आधार औसत समुद्र तल से ऊंचाई अथवा गहराई है। उच्चावचीय लक्षणों में विविधता के आधार पर भारत के चार मुख्य भौतिक या भू–आकृतिक प्रदेश है।भारत के उत्तरी भाग में ऊपर उठी हुई हिमालय पर्वत श्रृंखलाएं हैं जो लहरनुमा और जटिल उच्चावच वाली हैं। इसके दक्षिण में सिन्धु–गंगा तथा ब्रह्मपुत्र का विशाल मैदान है। इस मैदान के दक्षिण में वृद्धावस्था तथा आन्तरिक हलचलों से लगभग अप्रभावित प्रायद्वीपीय पठारी भाग है। प्रायद्वीपीय पठार के उच्चावच को मुख्य विशेषताओं का स्रोत पुरानी चट्टानों से निर्मित दृढ़ या कठोर स्थलखण्ड है जो सामान्यतः वलन और अंशन से मुक्त रहा है। हिमालय के उच्चावच में युवापन पाया जाता है। यहां की नदियां अपनी घाटियों तथा गहरे गाजों में अपनी विशाल अपरदनकारी शक्ति का प्रदर्शन करती हैं। उत्तर का विशाल मैदान समतल उच्चावच से युक्त है। इस मैदान के उच्चावच में भी कई विविधताएं देखने को मिलती है। उदाहरण के लिए, नदियों द्वारा अपने किनारों पर बनाए गए तटबन्ध तथा बांगर एवं खादर प्रदेश। हिमालय और विशाल मैदान के बीच उच्चावच का अन्तर स्पष्टतः देखने को मिलता है, लेकिन विशाल मैदान और प्रायद्वीपीय पठार के उच्चावच का अन्तर इतना स्पष्ट नहीं है। भू–आकृतिक प्रदेशों की विविधताओं को ध्यान में रखकर भारत की उच्चावचीय विविधता को निम्नलिखित वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है 300 मीटर से कम ऊंचे भू–भाग–भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 43% भाग 300 मीटर से भी कम ऊंचा है। सिन्धु–गंगा के विशाल मैदान का पश्चिमी भाग समुद्र तल से 150 मीटर ऊंचा है, जबकि इस मैदान का पूर्वी भाग एवं पूर्वी तथा पश्चिमी समुद्रतटीय मैदान 50 से 150 मीटर ऊंचा है। लेकिन गुजरात के कच्छ के रन–क्षेत्र में कई स्थानों पर मैदानी भाग की ऊंचाई 50 मीटर से भी कम है। 300 मीटर से 1,200 मीटर तक ऊंचे भू–भाग–भारत का लगभग 27.7 % भू–भाग इस ऊंचाई वाला है। भारत का सम्पूर्ण प्रायद्वीपीय भाग इसके अन्तर्गत आता है। प्रायद्वीपीय भारत का उत्तरी भाग और मध्यवर्ती भाग 300 से 600 मीटर ऊंचा तथा दक्षिणी भाग 600 से 1,200 मीटर ऊंचा है। सम्पूर्ण पठारी भाग के बीच–बीच में 300 से 600 मीटर की ऊंचाई वाला निम्न पहाड़ी क्षेत्र तथा 600 से 1,200 मीटर ऊंचाई वाला उच्च पहाड़ी क्षेत्र भी विद्यमान है जिसे पश्चिम में पश्चिमी घाट और पूर्व में पूर्वी घाट के नाम से जाना जाता है। 1,200 मीटर से अधिक ऊंचे भू–भाग–भारत का लगभग 29.3 प्रतिशत भू–भाग 1,200 मीटर से अधिक ऊंचा है। भारत के उत्तरी भाग का अधिकांश उच्चावच इसी वर्ग में सम्मिलित है। इस भाग में ऊंची–ऊंची पर्वत श्रेणियां पाई जाती हैं जिनका निर्माण तृतीयक युग की पर्वत निर्माणकारी हलचलों से हुआ है।

1.6 भारत में भू राजनीतिक महत्व

भारत ने भूदृराजनीति के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक प्रमुख भागीदार के रूप में अपनी पहचान स्थापित की है। भारत ने यह पहचान अपनी गतिशील और अनुकूलनशील विदेश नीति के बल पर प्राप्त की है। बदलती

सरकारों और बदलते वैश्विक भू–राजनीतिक परिदृश्य के मद्देनजर समय – समय पर भारत की विदेश नीति में भी परिवर्तन किए जाते रहे हैं।भारत के बदलते हुए राजनीतिक मानचित्र में देश के भौगोलिक, आर्थिक व सामाजिक स्वरूप के अनेक परिवर्तन परिलक्षित होते हैं। 15 अगस्त, 1947 को स्वतन्त्रता के साथ ही पाकिस्तान की स्थापना के कारण अविभाजित देश का क्षेत्रफल 42,147,51 वर्ग किमी से घटकर 31,87,782 वर्ग किमी रह गया। मुस्लिम लीग की माँग के अनुरूप मुस्लिम जनसंख्या की बहुलता वाले उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रान्त, पश्चिमी पंजाब, सिन्ध व पूर्वी बंगाल पाकिस्तान को हस्तान्तरित किये गये। (पूर्वी एवं पश्चिमी पाकिस्तान में गहरा सांस्कृतिक व राजनीतिक मतभेद होने के कारण 1971 में पूर्वी पाकिस्तान के स्थान पर बंग्ला देश का जन्म हुआ।) 26 जनवरी, 1950 को भारत के लोकतन्त्रीय गणराज्य की स्थापना के साथ ही देश में नवीन संविधान लागू हुआ तथा भारत को राज्यों का संघ माना गया।

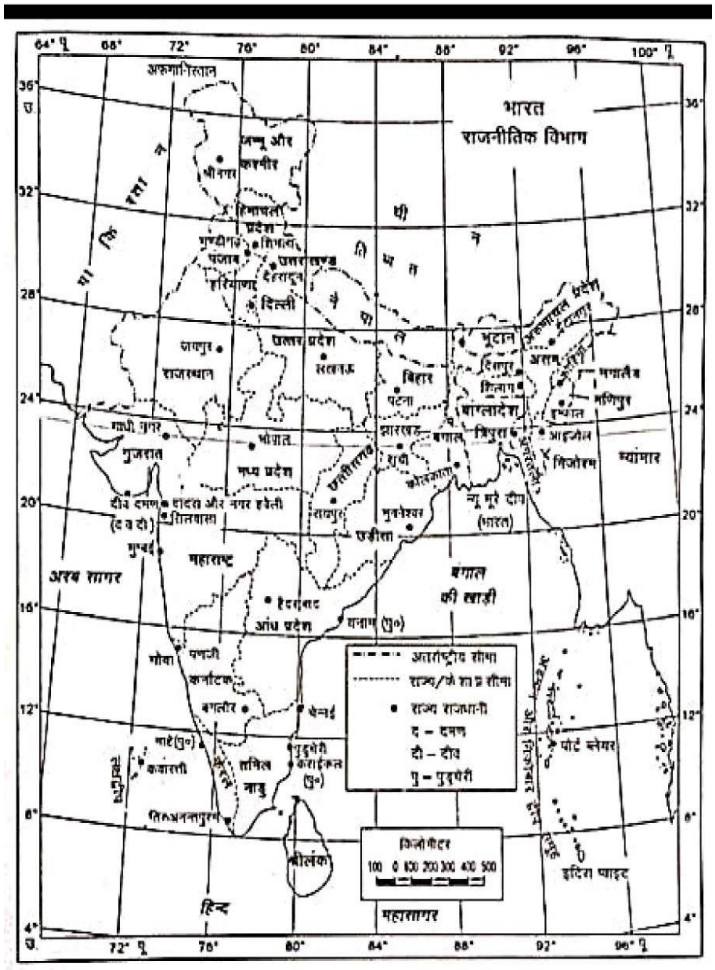

चित्र 1.11 भारत राजनीतिक

विभाजन के समय देश में 552 विभिन्न आकार के स्वतन्त्र देशी राज्य विद्यमान थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् लौहपुरुष सरदार पटेल के प्रयासों से देश का पुनर्गठन किया गया। 216 राज्यों का विलय करके विभिन्न प्रान्त बनाये गये, 61 राज्यों को मिलाकर 7 केन्द्र शासित राज्य बने तथा 275 छोटे राज्यों को राजस्थान, मध्य प्रदेश, केरल आदि राज्यों में मिलाया गया। इस प्रकार स्वतन्त्र भारत के पुनर्गठन के प्रथम चरण में देश में चार वर्गों के राज्य थे–

(1) वर्ग के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल, असम, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, मद्रास (वर्तमान तमिलनाडु) तथा बम्बई (वर्तमान महाराष्ट्र)–राज्यपाल द्वारा शासित 9 राज्य थे

(2) वर्ग के अन्तर्गत पेप्सू, मध्य भारत (वर्तमान मध्य प्रदेश), मैसूर (वर्तमान कर्नाटक), सौराष्ट्र, राजस्थान, हैदराबाद तथा ट्रावनकोर–कोचीन राज्यों पर राज्य प्रमुखों का शासन था।

(3) वर्ग के अन्तर्गत अजमेर, कच्छ, कुर्ग, दिल्ली, बिलासपुर, भोपाल, त्रिपुरा, हिमाचल प्रदेश, मणिपुर एवं विन्ध्य प्रदेश राज्यों का शासन लेफ्टिनेन्ट गवर्नर द्वारा संचालित होता था।

(4) वर्ग के अन्तर्गत अण्डमान व निकोबार द्वीपों का शासन केन्द्रीय सरकार द्वारा होता था। राज्यों का उपरोक्त वर्गीकरण देश की संगठित एकता को व्यक्त नहीं करता था। भाषा, संस्कृति एवं भौगोलिक तथ्यों के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन आवश्यक समझा गया।

दिसम्बर, 1953 में राज्य के पुनर्गठन आयोग की स्थापना की गयी, जिसने भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की सिफारिश की। लगभग 2 वर्ष बाद सरकार ने आयोग के सुझाव पर देश में 15 राज्य एवं 7 केन्द्र शासित राज्य बनाने का निर्णय लिया। 1 नवम्बर, 1956 को देश में केवल 2 वर्ग के राज्य बनाने का निर्णय लिया गया। फ्रांसिसियों द्वारा अधिकृत पाण्डिचेरी, कराईकल, माही व दमन राज्य भारत को सौंप दिये गये। 1 मई, 1960 को द्वि–भाषी बम्बई राज्य को विभाजित करके गुजरात व महाराष्ट्र का निर्माण किया गया। असम में नागा लोगों की माँग पर 1 दिसम्बर, 1963 को नागालैण्ड राज्य की स्थापना की गयी।

18 दिसम्बर, 1961 को पुर्तगालियों की निरंकुशता एवं अनुशासनहीनता के विरोध में गोआ दमन व दीव राज्यों पर भारत सरकार ने अधिकार कर इन्हें केन्द्र शासित राज्य घोषित किया अकालियों की मांग पर 1 नवम्बर, 1966 को द्वि–भाषी पंजाब का विभाजन करके पंजाबी भाषी पंजाब एवं हिन्दी भाषी हरियाणा राज्यों का गठन किया गया। पंजाब के पहाड़ी जिले हिमाचल प्रदेश को सौंप दिये गये। 29 जनवरी, 1970 को एक विशिष्ट निर्णय के अन्तर्गत केन्द्र शासित चण्डीगढ़ पंजाब को देने एवं उसके बदले में फाजिल्का तहसील, अबोहर नगर, फिरोजपुर जिले के 114 ग्राम तथा हरियाणा से फाजिल्का को मिलाते हुये राजस्थान के कुछ क्षेत्र हरियाणा को देने का घोषणा की गयी। 2 अप्रैल, 1970 को असम राज्य से गारो, खासी, जयन्तिया पहाड़ी क्षेत्रों को पृथक मेघालय राज्य की स्थापना की गयी। 20 जनवरी, 1972 को उत्तर–पूर्वी भारत के राज्यों पुनर्गठन के अन्तर्गत मेघालय, त्रिपुरा, मणिपुर एवं नागालैण्ड राज्यों को पूर्ण राज्य स्तर प्रदान कि गया। अरुणाचल एवं मिजोरम केन्द्र शासित राज्यों की श्रेणी में रखे गये। 26 अप्रैल, 1975 भारत का संरक्षण प्राप्त सिक्किम राज्य भारत के 22वें राज्य के रूप में देश अभिन्न अंग घोषित किया गया।

1.7 सारांश

भारत की भौगोलिक अवस्थिति के कई लाभ हैं। इससे विविध प्रकार की जलवायु दशाओं का उद्‌भव होता है जो विभिन्न प्रकार की वनस्पति एवं जीव जन्तुओं के विकास में उत्तरदायी रही हैं। इसी के कारण देश में उष्ण, उपोष्ण और शीतोष्ण कटिबंधों की फसलें आसानी से उगाई जाती रही हैं। पूरे वर्ष शस्योत्पादन संभव है एवं देश का मुश्किल से कोई भाग है जो पूर्ण रूप बंजर है। हिन्दमहासागर के शीर्ष पर सामरिक अवस्थिति के कारण इसे पूरब एवं पश्चिम को जोड़ने वाले जल और वायु मार्गों पर नियंत्रण का स्वतः लाभ प्राप्त हो जाता है। स्वेज नहर एवं मलक्का जलसंधि विश्व के व्यस्ततम जल मार्ग हैं जिनसे प्रतिवर्ष लगभग 20,000 जहाजें गुजरती हैं। यूरोप एवं मध्य पूर्व से चीन, जापान, इण्डोनेशिया, आस्ट्रेलिया एवं न्यूजीलैण्ड जाने वाले वायुयान बहुधा ईंधन और यात्री हेतु दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता अथवा चेन्नई के अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डों का उपयोग करते हैं। एशिया और अफ्रीका के विकासशील देशों के बीच इसकी केन्द्रीय अवस्थिति से इसे तृतीय विश्व के देशों के व्यापार, प्रौद्योगिक विकास तथा आर्थिक रूपान्तरण में प्रमुख भूमिका निभाने की विशिष्ट सुविधा प्राप्त हो जाती है।

भारत प्राचीन विश्व के सुसंस्कृत समाज से भलीभांति सम्पर्क में था। भारतीय व्यापारी मसालों, कीमती पत्थरों, सोना, रेशमी एवं सूती वस्त्रों की खेप के साथ पूरब में सुमात्रा, जावा, बाली, कम्बोडिया, थाईलैण्ड एवं चीन तथा पश्चिम में ईरान, अरब, मिस्र, यूनान एवं रोम तक के दूर–दराज भागों तक आते–जाते थे। चोल, पाण्ड्य एवं पल्लव राजवंशों के कुछ शासकों ने तो दक्षिण–पूर्वी एशिया में अपने उपनिवेश भी स्थापित किये जहाँ भारतीय संस्कृति के अनुचिह्न अभी भी उपलब्ध हैं। प्राचीन विश्व में अपनी केन्द्रीय अवस्थिति के कारण भारत को कुछ ऐसे भूसामरिक लाभ प्राप्त हैं जो इस क्षेत्र के अन्य देशों को उपलब्ध नहीं हैं। इन्हीं सुविधाओं के बदौलत ब्रिटेन को एशिया, अफ्रीका एवं ओसेनिया के देशों में एक विशाल औपनिवेशिक साम्राज्य को खड़ा करने में आसानी हुई। भारत का हाथ से निकल जाना ब्रिटिश साम्राज्य के पतन की शुरुआत थी। भारत एक मात्र अनूठा देश है जिसके नाम पर एक महासागर, अर्थात् हिन्द महासागर, का नामकरण किया गया है जिसके पुलिनों पर विश्व के 46 देश (आस्ट्रेलिया सहित 27 तटवर्ती, 7 द्वीपीय एवं 12 स्थलावृत) अवस्थित हैं (सिंह 1994, पृ० 2)। यदि यूरोपीय आर्थिक

समुदाय अथवा एशिया–प्रशान्त क्षेत्र की भांति सुसंगठित किया जाय तो भविष्य में इस अफ्रीकी–एशियाई हिन्द महासागरीय क्षेत्र का भूराजनीतिक और भू–आर्थिक महत्व बढ़ सकता है। भारत को इस दिशा में नेतृत्व सँभालकर ब्रिटेन के विनिवर्तन से रिक्त स्थान को भरते हुए पहल करने की आवश्यकता है जिससे इस क्षेत्र की शान्ति और स्थिरता को कायम रखते हुए समृद्धि का मार्ग प्रशस्त किया जा सके।

1.8 स्वमूल्यांकन एवं आदर्श उत्तर

प्रश्न 1. भारत एवं चीन के मध्य सीमा बनाती है–

(अ) रेडक्लिफ रेखा

(ब) कर्क रेखा

(स) मैकमोहन रेखा

(द) इनमें से कोई नहीं

प्रश्न 2. भारत के मध्य से गुजरती है–

(अ) मकर रेखा

(ब) विषुवत रेखा

(स) अन्तर्राष्ट्रीय तिथि

(द) कर्क रेखा

प्रश्न 3. रेडक्लिफ रेखा द्वारा किन देशों के मध्य सीमा निर्धारित–

(अ) भारत–चीन

(ब) भारत–पाकिस्तान

(स) भारत–बांग्लादेश

(द) भारत–म्यांमार

प्रश्न 4. भारत की मानक देशान्तर है–

(अ) 82°30' पूर्व (ब) 85°30' पूर्व

(स) 87°30' पूर्व (द) 97°30' पूर्व

प्रश्न 5. भारत का दक्षिणी अन्तिम बिन्दु है–

(अ) कन्याकुमारी (ब) इन्दिरा पाइन्ट

(स) पाइन्ट कालीमीर (द) रामेश्वरम

उत्तरमाला 1. (स) 2. (द) 3. (ब) 4. (अ) 5. (ब)

1.9 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

1. प्रो. आर.सी. तिवारी, भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन।
2. डॉ. अलका गौतम, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन प्रयागराज।
3. प्रोफेसर माजिद हुसैन भारत का भूगोल, मैग्रा हिल।
4. Jagdish Singh, IndiaA ComprehensiveAnd systematic Geography. Gyanodaya

Publication Grokhpur.

5. Singh R.L. – IndiaA Regional Geography, N.G.S.I. Grokhpur
6. Nag, P.And Sengupta, S Geography , New Delhi.
7. Ford Foundation (1959) Report on Indian's Food crisisAnd step to meet It New Delhi : Ministry of foodAndAgricultureAnd Ministry of community Developement.

1.10 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी)

प्रश्न 1. भारत की भौगोलिक स्थिति तथा विस्तार का विस्तृत वर्णन कीजिए ?

प्रश्न 2. भारत का नामकरण कैसे हुआ विश्लेषण कीजिए ?

प्रश्न 3. भारत के भू राजनीतिक महत्व की व्याख्या कीजिए ?

इकाई–2 विश्व एवं एशिया के संदर्भ में आधुनिक भारत

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 विश्व में आधुनिक भारत का महत्व

2.4 भारत का विश्व में व्यवसायिक एवं आर्थिक महत्व

2.5 एशिया के संदर्भ में आधुनिक भारत

2.6 भारत का एशिया के संदर्भ में व्यावसायिक एवं आर्थिक संरचना

2.7 सारांश

2.8 स्वमूल्यांकन एवं आदर्श उत्तर

2.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.10 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी)

2.1 प्रस्तावना

भारत विश्व एवं एशिया के सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस विशेष भूमिका को समझने के लिए हमें भारत की इतिहास, भौगोलिक स्थिति, आर्थिक स्थिति, राजनीतिक दृष्टि, और सांस्कृतिक विरासत को विश्लेषण करना होगा।

इतिहास–भारत का इतिहास बहुत प्राचीन है और यह एक समृद्ध और विविधतापूर्ण इतिहास धारण करता है। भारत की प्राचीन सभ्यताएं, उनका संघर्ष और उनका उत्थान विश्व के इतिहास में अद्वितीय हैं। भारतीय इतिहास में मौर्य, गुप्त, मुगल, और ब्रिटिश साम्राज्य की अवधारणा विशेष महत्व रखती है।

भौगोलिक स्थिति–भारत का भौगोलिक स्थान उसे रणनीतिक और आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण बनाता है। यह विभिन्न शक्तियों के बीच एक महत्वपूर्ण सेतु के रूप में काम करता है और विभिन्न धर्मों, भाषाओं, और संस्कृ तियों का घर बनाता है।

आर्थिक स्थिति–भारत एक बड़ा और अभिवृद्धि कर रहा अर्थव्यवस्था धारण करता है और एक महत्वपूर्ण अर्थात्मक क्षेत्र के रूप में विश्व में उभरता है। यह एक बड़ी बाजार, निवेशों, और वित्तीय सेंटर के रूप में महत्वपूर्ण है। राजनीतिक दृष्टि से भारत एक महत्वपूर्ण राजनीतिक खिलाड़ी है और इसकी भूमिका अपने क्षेत्र में विश्व स्तर पर महत्वपूर्ण है। यह विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संगठनों, सम्मेलनों, और संघर्षों में सक्रिय रूप से भाग लेता है।

भारत की सांस्कृतिक विरासत विश्व को प्रभावित करती है और इसकी समृद्धता और विविधता उसे एक अद्वितीय स्थान प्रदान करती है। इसकी विविधता, भाषाएँ, और कला विश्वभर में प्रशंसित हैं। इस प्रस्तावना के माध्यम से, हम देखते हैं कि भारत विश्व और एशिया के सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण राष्ट्र है, जिसका महत्व उसके इतिहास, भौगोलिक स्थिति, आर्थिक स्थिति, राजनीतिक दृष्टि, और सांस्कृतिक विरासत के कारण होता है।

2.2 उद्देश्य

भारत एक अद्वितीय देश है जो अपने विविधता, ऐतिहासिक धरोहर, और सांस्कृतिक धरोहर के लिए प्रसिद्ध है। यह विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है और एक बड़ी अर्थव्यवस्था, विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्षेत्र में विकासशील रहा है। भारत एक ऐतिहासिक भूमि है जो महान धार्मिक, दार्शनिक, और साहित्यिक योगदान के लिए जाना जाता है। यहाँ कई भाषाएं, धर्म, और संस्कृतियां हैं जो इसे एक समृद्ध और विविध समाज बनाती हैं। भारत एशिया का एक महत्वपूर्ण सदस्य है और विश्व के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसकी राजनीतिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक प्रभावशीलता ने इसे एक विश्व शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया है।

भारत, विश्व के लिए एक महत्वपूर्ण देश है जिसका ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और आर्थिक महत्त्व है। यह एक

विशाल देश है जिसमें विविधता का अद्वितीय संगम है। भारतीय सभ्यता का इतिहास अत्यंत प्राचीन है और इसने विश्व धरोहर में अपनी अलग पहचान बनाई है।

भारत एक महत्वपूर्ण भूमि है, जहां सूर्य की पहली किरणें झिलमिलाती हैं और धरती के प्रति प्रेम और समर्पण का प्रतीक है। इसके सभ्यता ने विज्ञान, गणित, चिकित्सा, दर्शन, कला, साहित्य, और धर्म के क्षेत्र में अत्यधिक योगदान दिया है। भारत का भौगोलिक रूप समृद्ध और विविध है। यहां हिमालय की ऊँचाइयों से लेकर ठंडी लवण खारा वायु, सब्जीयों भरे मैदानों और गर्म तटों तक सभी प्रकार का भौगोलिक संरचना है। इसके पास अनूठे जीव जंतुओं, पक्षियों, और वनस्पतियों का विशाल संग्रह है।

भारत का इतिहास उसकी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को दर्शाता है। यहाँ पर बुद्ध, महावीर, अशोक, चाणक्य, अकबर, शाहजहाँ, गांधी, नेहरू जैसे महान व्यक्तित्वों ने अपने योगदान के जरिए भारतीय समाज को प्रभावित किया। इसका इतिहास महान सम्राटों, साहसी स्वतंत्रता सेनानियों, और विश्वविख्यात वैज्ञानिकों द्वारा सजीव किया गया है।

भारत की सांस्कृतिक धरोहर विविधता का प्रतीक है। यहाँ पर विभिन्न धर्म, भाषा, और संस्कृतियाँ हैं, जिन्होंने समृद्धता को बढ़ावा दिया है। हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध जैसे विभिन्न धर्मों के अलावा, यहाँ अनेक जातियाँ, भाषाएँ, और लोककलाएँ हैं जो भारतीय समाज की रिच विरासत को दर्शाती हैं।

भारत की अर्थव्यवस्था तेजी से विकास कर रही है और विश्व के आर्थिक मंच पर अपनी उपस्थिति मजबूत कर रही है। यह एक विवेकपूर्ण, बदलावप्रिय और विज्ञान और प्रौद्योगिकी में नवाचार की दिशा में अग्रणी रहा है। भारतीय कंपनियाँ और उद्यमियों का उदय वे भारत को विश्व एवं एशिया के सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण देश माना जाता है। इसका ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास भूमिका निभाता है। भारत का ऐतिहासिक विकास संघर्षों और समृद्धि के संघर्षों का परिणाम है, जो विविधता और समृद्धि का स्रोत बना है। यहाँ का समृद्ध धर्म, भाषा, और साहित्य विश्व में प्रसिद्ध है। भारत की आर्थिक उदारता और उत्कृष्टता के कारण यह एक महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र बन गया है। इसकी अर्थव्यवस्था वैश्विक उदारीकरण में भूमिका निभाती है और यह एक बड़ी विदेशी निवेश स्रोत है।

भारत विज्ञान, प्रौद्योगिकी, और अभियांत्रिकी क्षेत्र में भी एक महत्वपूर्ण देश है। यहाँ की वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी उन्नति ने विश्व भर में प्रतिष्ठा कमाई है। भारतीय राजनीति व्यवस्था एक बड़ा और जटिल राजनीतिक लंबगिनी है, जो समझौतों, संघर्षों, और समझौतों का केंद्र रही है। यह एक बड़ा लोकतंत्र है जो लोकतंत्र और सामाजिक न्याय के मूल्यों पर आधारित है। भारत का सांस्कृतिक विरासत बहुत विविधता और समृद्धि का स्रोत है। यहाँ की कला, संगीत, और वास्तुकला विश्व के लिए प्रेरणास्त्रोत हैं।

भारतीय समाज में विविधता और अनुपात भी महत्वपूर्ण हैं। यहाँ अनेक भाषाएँ, धर्म, और संस्कृतियाँ एक साथ अस्तित्व में हैं और इसने एक सांस्कृतिक मेल का निर्माण किया है। समस्याओं और चुनौतियों के बावजूद, भारत एक उदार, विश्वासपात, और प्रगतिशील देश के रूप में अपनी पहचान बना रहा है। इसका अग्रणी रोल भविष्य के निर्माण में महत्वपूर्ण होगा।

2.3 विश्व में आधुनिक भारत का महत्व

आधुनिक भारतीय इतिहास शब्द का तात्पर्य अठारहवीं शताब्दी के मध्य से लेकर वर्तमान समय तक के भारत के इतिहास से है। इस अवधि में, सबसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाएं हैं। मुगल साम्राज्य का पतन, भारत पर ब्रिटिश विजय, 1857 के सामाजिक सुधार आंदोलन का विद्रोह, दो विश्व युद्ध और उनके सामाजिक आर्थिक प्रभाव, अकाल, राष्ट्रवाद का उदय, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन, विभाजन, वामपंथी राजनीति का उदय, भारत की संसदीय लोकतांत्रिक व्यवस्था, चुनाव, गुटनिरपेक्ष आंदोलन, नेहरू की भूमिका, वैश्वीकरण के प्रभाव और आर्थिक नीति में बदलाव आदि।

आधुनिक भारतीय इतिहास – आधुनिक भारतीय इतिहास का प्रारम्भ अठारहवीं शताब्दी के मध्य में होता है। इस काल की सबसे महत्वपूर्ण घटनाएँ मुगल साम्राज्य का पतन और भारत में यूरोपीय प्रवेश हैं। भारत में आने वाले पहले यूरोपीय व्यापारी पुर्तगाली थे और उन्होंने गोवा में अपनी पहली कॉलोनी बनानी शुरू की।

हालाँकि मुगल सम्राट जहाँगीर ने उनसे निपटा और उन्हें आर्थिक रूप से नष्ट कर दिया, मुगल सम्राटों के

पतन के साथ, कई अन्य यूरोपीय व्यापारियों ने भारतीय बाजार पर कब्जा करना शुरू कर दिया। लेकिन बाद में मुगल बादशाह फरुखशियर के फरमान से ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी को मुगल साम्राज्य के अंदर स्वतंत्र रूप से व्यापार करने का अधिकार प्राप्त हो गया। समय के साथ, ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने सत्ता प्राप्त कर ली और 1757 में प्लासी की लड़ाई और 1764 में बुक्सा की लड़ाई में अपनी जीत के बाद, ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत का उपनिवेश बना लिया।

उपनिवेशीकरण के बाद, यूरोपीय लोगों ने यूरोपीय शिक्षा का विस्तार करने के लिए स्कूलों और कॉलेजों की स्थापना की। पश्चिमी शिक्षा के उदय ने भारत में एक सामाजिक सुधार आंदोलन को जन्म दिया, जो महिलाओं के अधिकारों, जाति–आधारित भेदभाव के उन्मूलन, तर्कसंगत और वैज्ञानिक ज्ञान के प्रसार आदि को प्राथमिकता देता है। ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत का एक गवर्नर जनरल नियुक्त किया जो था कॉलोनी में कानून व्यवस्था बनाए रखने का काम सौंपा गया। भारत के ये सभी गवर्नर जनरल भारतीय संसाधनों के शोषण और अपनी दमनकारी नीतियों के लिए कुख्यात थे।

उनमें से सबसे कुख्यात लॉर्ड डलहौजी था, जिसकी ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार की नीति से देशी राजघरानों में बहुत गुस्सा था। साथ ही, उनकी शोषणकारी नीतियों ने कई देशी राज्यों को लगभग आर्थिक रूप से बर्बाद कर दिया, जिससे कई लोग मुश्किल से जीवित रह सके। इस सारे दमन और शोषण के कारण 1857 का विद्रोह हुआ। यह एक सशस्त्र विद्रोह था जिसे अक्सर स्वतंत्रता का पहला युद्ध माना जाता है। हालाँकि इस विद्रोह को बेरहमी से दबा दिया गया, इसके कई नेताओं को मार डाला गया और अंतिम मुगल सम्राट, बहादुर शाह जफर को रंगून में निर्वासित कर दिया गया। इस विद्रोह के बाद अंग्रेजी साम्राज्ञी रानी विक्टोरिया को भारत की साम्राज्ञी और शासक घोषित किया गया। लेकिन 1857 के विद्रोह का प्रभाव लम्बे समय तक रहा। इसने 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना में मदद की, जिसे भारत का पहला औपचारिक राजनीतिक एकीकरण माना जाता है और भारतीयों और ब्रिटिश ताज के बीच मध्यस्थ के रूप में काम किया। इस प्रकार, भारत में सबसे पहले राजनीतिक आंदोलनों में से कुछ थे दो ब्रिटिश अधिकारियों की हत्या कर दी गई जब उन्होंने प्लेग उन्मूलन के नाम पर आम लोगों पर अत्याचारों की एक श्रृंखला शुरू की।

यह पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में पहली राजनीतिक हत्या थी। कांग्रेस की राजनीतिक गतिविधियों के पहले युग में नरमपंथियों का वर्चस्व था जो ब्रिटिश उदारता में विश्वास करते थे और ब्रिटिश ताज के अधीन रहते हुए स्व–शासन की मांग करते थे। उनकी उदारवादी राजनीति ने बहुत से लोगों को निराश किया और इससे अधिक उग्रवादी और कट्टरपंथी राजनीति का जन्म हुआ। विशेष रूप से, बंगाल में, 1905 में बंगाल विभाजन के चरण के दौरान, कई क्रांतिकारी संगठनों का जन्म हुआ जो सशस्त्र संघर्ष और पूर्ण स्वतंत्रता में विश्वास करते थे। भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी का उदय इस समय की सबसे उल्लेखनीय घटनाओं में से एक है। उन्होंने पहली बार खिलाफत आंदोलन में भाग लिया, जब प्रथम विश्व युद्ध के बाद, ओटोमन साम्राज्य अंग्रेजों के हाथों हार गया था।

यह आंदोलन चंपारण सत्याग्रह और खेड़ा सत्याग्रह से पहले हुआ था। वर्ष 1919 को रोलेट एक्ट नामक एक अत्याचारी दमनकारी अधिनियम की शुरूआत के रूप में चिह्नित किया गया था, जिसने ब्रिटिश पुलिस को केवल संदेह के आधार पर किसी को भी हिरासत में लेने का अधिकार दिया था। जब लोग शांतिपूर्वक विरोध प्रदर्शन कर रहे थे और जलियांवाला बाग नामक पार्क में एकत्र हुए थे, तो ब्रिटिश पुलिस ने उन पर गोलियां चला दीं, जिसमें हजारों प्रदर्शनकारी मारे गए। इसने भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन को बढ़ावा दिया और भारत में भगत सिंह और ऐसे कई अन्य

क्रांतिकारियों का उदय हुआ। असहयोग आंदोलन के बाद सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू हुआ, जिसने अखिल भारतीय आंदोलन गति पकड़ी। इस समय भारत में साम्प्रदायिक राजनीति का उदय भी देखा गया। इस बार डॉ. बीआर अंबेडकर ने राजनीति में बड़ी भूमिका निभाई. केंद्रीय और प्रांतीय विधानमंडलों में चुनाव हुआ। 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन ने द्वितीय विश्व युद्ध के फैलने के बाद भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को बढ़ावा दिया।

भारतीय राजनीति के इस युग को एक अखिल भारतीय नेता के रूप में सुभाष चंद्र बोस के उदय से चिह्नित किया गया था। उन्होंने आईएनए की स्थापना की, विदेशी सहायता ली और सशस्त्र संघर्ष के माध्यम से भारत को आजाद कराने का प्रयास किया। हालाँकि उनके प्रयास असफल रहे, लेकिन उन्होंने लंबे समय तक प्रभाव छोड़ा और भारत के नौसैनिक विद्रोह को प्रभावित किया। लेकिन सांप्रदायिक और दक्षिणपंथी राजनीति के बढ़ने के कारण आजादी से पहले ही देश दो हिस्सों में बंट गया। भारतीय इतिहास के उत्तरार्ध को संसदीय राजनीति के विकास,

गुटनिरपेक्ष आंदोलन में भारत की भागीदारी, आर्थिक संकट, पाकिस्तान के साथ युद्ध, बांग्लादेश का जन्म, वैश्वीकरण और आर्थिक नीतियों में बदलाव और आखिरी में चिह्नित किया गया था। कम से कम, महामारी के प्रभाव।

आधुनिक भारत विश्व में एक महत्वपूर्ण रूप से उभरता हुआ राष्ट्र है, जिसका महत्व विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्ध है। इसका महत्व आधुनिक युग में तकनीकी उन्नति, वैज्ञानिक अनुसंधान, आर्थिक विकास, सांस्कृतिक धरोहर, और राजनीतिक प्रभाव के क्षेत्र में दिखाई देता है। भारतीय वैज्ञानिकों और तकनीकी विशेषज्ञों का योगदान वैश्विक स्तर पर महत्वपूर्ण है। भारत अंतरिक्ष अनुसंधान, नैनो तकनीक, इंजीनियरिंग, जीनेटिक्स, और अन्य क्षेत्रों में अपनी प्रगति के लिए प्रसिद्ध है। इसके साथ ही, आईटी सेक्टर में भी भारत ने अपनी अद्भुतता दिखाई है, और विश्वभर में अपना प्रभाव बढ़ाया है।

भारत की अर्थव्यवस्था भी वैश्विक मानकों में बड़ी मात्रा में योगदान करती है। दुनिया की तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में भारत का स्थान आज बेहद महत्वपूर्ण है। बाजार, निवेश, वाणिज्यिक गतिविधियों में भी भारत का योगदान महत्वपूर्ण है। सांस्कृतिक दृष्टि से भी, भारत अपनी अनूठी परंपरा, भाषा, धर्म, और कला के लिए प्रसिद्ध है। इसका विरासत और भाषा की भौगोलिक विविधता विश्व को प्रभावित करती है। राजनीतिक दृष्टि से, भारत विश्व में एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी के रूप में उभरा है। इसकी भूमिका विश्व स्तर पर अधिक सहयोग की दिशा में भी महत्वपूर्ण है, जैसे कि विश्व स्वास्थ्य, पर्यावरण, और विकास में।

सम्पूर्णतः, भारत आधुनिक विश्व में अपनी विविधता, प्रगति, और सांस्कृतिक धरोहर के साथ अपनी अलग पहचान बनाए रखता है। इसका महत्व विभिन्न क्षेत्रों में व्यापक और गहरा है, जो भारत को एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी बनाता है और उसे विश्व में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करता।

2.4 भारत का विश्व में व्यावसायिक एवं आर्थिक संरचना

भारत एक महत्वपूर्ण देश है जो विश्व में अपनी व्यावसायिक और आर्थिक संरचना के लिए प्रसिद्ध है। इसकी अर्थव्यवस्था विविधता, विकास और नवाचार में अपनी अनूठी पहचान बनाने के लिए जानी जाती है। भारत की व्यावसायिक और आर्थिक संरचना के बारे में एक व्यापक चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं।

कृषिः कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य स्रोत है। लगभग 50% भारतीय जनसंख्या कृषि से जुड़ी हुई है। भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा खेती उत्पादक है और खाद्य सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गेहूं, चावल, मक्का, कपास, और गन्ना की मुख्य खेती होती है। कृषि में प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जा रहा है जिससे उत्पादन और उत्पादकता में सुधार हो रहा है।

उद्योगः भारत का उद्योग भी अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। खनिज, सामग्री प्रसंस्करण, सूचना प्रौद्योगिकी, ऑटोमोबाइल, फार्मा, स्टील, और टेक्नोलॉजी उद्योग विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। उद्योगों के विकास से नौकरियों की संभावनाएं बढ़ती हैं और अर्थव्यवस्था में वृद्धि होती है। भारत में महिलाओं की साझेदारी को बढ़ावा देने के लिए सरकारी नीतियों के माध्यम से उद्योगों में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाया जा रहा है।

सेवाएंः सेवा क्षेत्र भी अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण हैं। वित्तीय सेवाएं, स्वास्थ्य सेवाएं, शिक्षा, पर्यटन, और आईटी सेवाएं इसका अहम हिस्सा हैं। इन सेवाओं का विकास अर्थव्यवस्था में वृद्धि को बढ़ावा देता है और लोगों को अधिक रोजगार के अवसर प्रदान करता है।

निवेशः निवेश भी अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण हैं। सरकारी नीतियां निवेश को बढ़ावा देने और उत्पादकता को बढ़ाने की दिशा में काम कर रही हैं। विदेशी निवेश भी अर्थव्यवस्था में नए अवसर प्रदान करते हैं और ग्लोबल भारत विश्व में एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक और आर्थिक दृष्टि का देश है, जिसका महत्व विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति, विकास, और समृद्धि के लिए माना जाता है।

1. आर्थिक वृद्धि–

- ❖ भारत विश्व की तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है।
- ❖ दर्जनों उद्योगों और क्षेत्रों में भारत एक महत्वपूर्ण बाजार है, जिसमें सॉफ्टवेयर, बाह्य संचार, ऑटोमोबाइल, फार्मास्यूटिकल्स, और तकनीकी सेवाएँ शामिल हैं।

- ❖ भारतीय अर्थव्यवस्था में विदेशी निवेश, विदेशी व्यापार, और उद्योग के प्रति आकर्षण की बढ़ती गति दिखाई देती है।

2. व्यावसायिक उत्पादन–

- ❖ भारत विश्व का एक बड़ा व्यावसायिक उत्पादक देश है, जिसमें उत्पादन के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत उद्योग हैं।
- ❖ वस्त्र, खाद्य पदार्थ, ऑटोमोटिव, और जीवन संबल की उत्पादन भारतीय उद्योगों की मुख्य धारा हैं।
- ❖ भारत अनुवाद, सॉफ्टवेयर डेवलपमेंट, और बाह्य संचार जैसे उद्योगों में भी व्यापक रूप से उभरा है।

3. अंतरराष्ट्रीय संबंध–

- ❖ भारत विश्व के अन्य देशों के साथ व्यापार, वित्तीय संबंध, और विज्ञान और प्रौद्योगिकी में सहयोग के लिए एक महत्वपूर्ण साथी है।
- ❖ भारत एक महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय वित्तीय केंद्र है और आर्थिक संबंधों में गैर–राजनीतिक संगठनों का एक अग्रणी सदस्य है।

इस प्रकार, भारत का व्यावसायिक और आर्थिक महत्व विश्व भर में मान्यता प्राप्त कर रहा है, और यह उत्पादन, वित्तीय संबंध, और अंतरराष्ट्रीय सहयोग के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

2.5 एशिया के संदर्भ में आधुनिक भारत

एशिया विश्व का सबसे विशाल महाद्वीप है। विश्व के लगभग एक–तिहाई भूक्षेत्र पर एशिया का विस्तार है। इसी प्रकार विश्व की लगभग 61 प्रतिशत जनसंख्या इसी महाद्वीप में निवास करती है। अत्यधिक विशाल महाद्वीप होने के कारण यहां विषमताओं का मिलना स्वाभाविक है। इस महाद्वीप में धरातलीय बनावट (उच्चावच), संरचना, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पतियों, आर्थिक संसाधनों की उपलब्धि तथा आर्थिक विकास के स्तर और सांस्कृतिक लक्षणों में अधिक विषमता पायी जाती है। अनेक तथ्यों से संबंधित पराकाष्ठाएं इस महाद्वीप में ही विद्यमान हैं। यही कारण है कि एशिया को पराकाष्ठाओं का महाद्वीप भी कहा जाता है।

आधुनिक भारत को समझने में कुछ सहायता प्रदान करेंगी, इसकी विविधता ,संस्कृति की गहराई अल्पसंख्यकों की भूमि इसका भविष्य दो दुनियाओं के बीच बातचीत पर निर्भर करता है।

शहरों और ग्रामीण भारत में, गरीबी, आध्यात्मिकता और आधुनिकता मिश्रित और सह–अस्तित्व में हैं पश्चिमी दुनिया में बहुत से लोग भारत को लोगों और गरीबी का एक निष्क्रिय और दूरस्थ समूह, विदेशी और दुखद का एक संयोजन मानते हैं। वर्षों की मीडिया रूढ़िवादिता के माध्यम से लोकप्रिय हुई यह गलत धारणा वास्तविकता को छुपाती है।

वास्तव में, भारत एक जीवंत समाज है जिसकी आंतरिक गतिशीलता बढ़ती जा रही है और दुनिया में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से इसका प्रभाव बढ़ता जा रहा है। इसका महत्व न केवल इसके आकार में निहित है – लगभग 930 मिलियन भारतीय ग्रह की आबादी का 15 प्रतिशत हैं – बल्कि घरेलू और विदेश नीति में भारत द्वारा चुने गए रास्ते पर उठाए गए सवालों में भी है। यह देश सबसे बड़ा कामकाजी लोकतंत्र है, जहां नियमित और स्वतंत्र रूप से चुनाव होते हैं। इस प्रकार, यह इस बात का परीक्षण है कि क्या लोकतंत्र बड़ी संख्या में अपेक्षाकृत गरीब लोगों के लिए सरकार की एक उपयुक्त प्रणाली है – ऐसी दुनिया में जहां लोकतंत्र, जैसा कि हम इसे समझते हैं, एक बहुत ही लुप्तप्राय राजनीतिक प्रजाति है, खासकर तीसरी दुनिया के देशों में।

आधुनिक भारत भी दो मध्यमार्गी दर्शनों की कसौटी है। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में गुटनिरपेक्षता के शुरुआती प्रस्तावक के रूप में, भारत ने पश्चिमी और कम्युनिस्ट, उन्मुख राज्यों के बीच एक मध्यम, स्थिति स्थापित करने का प्रयास किया है। इन वर्षों में, तीसरी दुनिया की स्थिति बनाने में इसके नेतृत्व ने प्रदर्शित किया कि उन देशों के लिए एक व्यवहार्य मार्ग है जो शीत युद्ध की राजनीति में पक्ष नहीं लेना चाहते थे, एक दृष्टिकोण जो एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और कई अन्य देशों में था। मध्य पूर्व ने इसका अनुसरण किया है और उम्मीद है कि यह कायम रहेगा।

भारत की आर्थिक नीतियों ने भी नई जमीन तोड़ी है। वे आधुनिक मिश्रित अर्थव्यवस्था का पहला बड़े पैमाने पर परीक्षण थे। आर्थिक उद्यमों के निजी और सार्वजनिक स्वामित्व दोनों के संयोजन के साथ केंद्र सरकार की योजना। परिणामों का मूल्यांकन करना शायद अभी भी जल्दबाजी होगी। एक ओर, गरीबी बनी हुई है और बेरोजगारी अधिक है। दूसरी ओर, भारतीय कृषि ने सोवियत या चीनी कृषि की तुलना में बहुत बेहतर प्रदर्शन किया है। (भारत अब अपनी आबादी का पेट भरता है और पिछले चार वर्षों में उसने शायद ही कोई अनाज आयात किया है।) इसके अलावा, भारत अब दुनिया की नौवीं सबसे बड़ी औद्योगिक अर्थव्यवस्था के रूप में शुमार है। आज भारत का एक और महत्व दक्षिण एशिया की भू–राजनीति से पता चलता है। हिंद महासागर की सीमा से लगा हुआ, जिसमें फारस की खाड़ी बहती है, यह तेल रसद के युग में एक महत्वपूर्ण स्थान है। रूस, अफगानिस्तान, पाकिस्तान और चीन की निकटता को जोड़ें, तो भारत की स्थिति वर्तमान वैश्विक राजनीति के तनाव और बातचीत के लिए महत्वपूर्ण हो जाती है। केवल इसी दृष्टिकोण से, अनेक मानवीय, सांस्कृतिक और अन्य कारणों के अलावा, दुनिया भर के विचारशील लोगों का दायित्व है कि वे इस विशाल और महत्वपूर्ण राष्ट्र को समझने का प्रयास करें।

भारत के बारे में लगभग कुछ भी कहना और उसे उस उपमहाद्वीप के कुछ हिस्से पर लागू करना संभव है। भारत गरीबी, और कुछ मायनों में बहुतायत की भूमि है। यह एक ऐसा राष्ट्र है जो शक्तिशाली और कमजोर, प्राचीन और आधुनिक, जलवायु की दृष्टि से नाटकीय विरोधाभासों वाला देश है। "भारत" शब्द का तात्पर्य एक ऐसी एकता से है जो मानवीय और सामाजिक–सांस्कृतिक वास्तविकता की तुलना में एक अस्थायी राजनीतिक रूप के रूप में अधिक मौजूद है। समकालीन समाज के साथ इसके जटिल इतिहास के अंतर्संबंध से, पांच महत्वपूर्ण विशेषताएं सामने आ सकती हैं जो शायद हमें आधुनिक भारत को समझने में कुछ सहायता प्रदान करेंगी।

भारत के बारे में सोचते समय याद रखने वाली पहली विशेषता इसकी विविधता है। यह एक ऐसा देश है जिसमें 15 आधिकारिक भाषाएँ, 300 से अधिक छोटी भाषाएँ और लगभग 3,000 बोलियाँ हैं। चौबीस भाषाओं में से प्रत्येक में दस लाख से अधिक वक्ता हैं। सबसे बड़ी बोली जाने वाली भाषा हिंदी है, लेकिन यह लगभग 40 प्रतिशत आबादी की मातृभाषा है। अक्सर भारतीय एक–दूसरे को समझ नहीं पाते हैं और अक्सर लिंक या प्रशासनिक भाषा के रूप में अंग्रेजी का उपयोग करते हैं। लेकिन भाषा ही एकमात्र विविधता नहीं है। चार प्रमुख सामाजिक समूह हैं, जिन्हें हम कभी–कभी जातियाँ भी कहते हैं, और जातियों की कई हजार उप–श्रेणियाँ हैं। हालाँकि मुख्य रूप से हिंदू, विश्व के सभी प्रमुख धर्मों का प्रतिनिधित्व भारत में होता है। जातीय मतभेद भी प्रचुर मात्रा में, हैं। यह मोजेक सांस्कृतिक रूप से असाधारण है। यह उस राष्ट्र में विभाजन का एक स्रोत है जहां विशेष वफादारी का आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों रूप से गहरा अर्थ है। इस विविधता को देखते हुए, यह उल्लेखनीय है कि भारत एक राष्ट्र के रूप में बना हुआ है, विकसित हुआ है और लगातार बढ़ रहा है।

दूसरी विशेषता संस्कृति की गहराई है, जो राष्ट्र के वर्तमान स्वरूप के नयेपन के विपरीत है। प्रारंभिक आर्य सभ्यता से लेकर भारत में 4,000 वर्षों से अधिक दार्शनिक और सांस्कृतिक विकास हुआ है। तब से, हिंदू, बौद्ध, ईसाई, इस्लामी, सिख और अन्य प्रभावों ने समाज पर गहरी छाप छोड़ी है। प्रत्येक भारतीय, यहां तक कि सबसे गरीब अशिक्षित भी, मिथक और इतिहास की कहानियां सुना सकता है, एक महान सभ्यतागत विरासत की चेतना जो असामान्य रूप से व्यापक है। फिर भी, 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति तक वैसा भारत नहीं था जैसा हम जानते हैं। उससे पहले विभिन्न खंडित (कुछ बहुत बड़े) क्षेत्र थे। इनमें से कई को ब्रिटिश भारतीय साम्राज्य में समाहित कर लिया गया, जिसमें पारंपरिक राजकुमारों और स्थानीय राजाओं या महाराजाओं द्वारा शासित कई क्षेत्रों की निगरानी के साथ प्रत्यक्ष ब्रिटिश शासन का मिश्रण हो गया। भारत का आधुनिक राज्य केवल 34 वर्ष पुराना है और इसके विकास को पुराने सांस्कृतिक पैटर्न पर एक राष्ट्रीय ढाँचा थोपने की कोशिश के संदर्भ में समझा जाना चाहिए। महान अतीत की चेतना और वर्तमान की नवीनता कभी–कभी तीखी प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है।

तीसरी विशेषता यह है कि भारत में अनेक का वर्ग है। यहां की लगभग 80 फीसदी आबादी हिंदू है. लेकिन हिंदू धर्म बहुलवादी मान्यताओं और रूपों का एक मिश्रण है, जिसमें अक्सर परस्पर विरोधी तत्व शामिल होते हैं। अतिरिक्त 12 प्रतिशत मुसलमान हैं, जो अपने इस्लामी विश्वास के बारे में गहराई से जानते हैं। हिंदू, उर्दू, बंगाली, मराठी, तमिल, तेलुगु, पंजाबी और अन्य भाषाएँ अपने आप में अल्पसंख्यक पैदा करती हैं। जनजातीय और नव–आदिवासी लोगों की संख्या लगभग 40 मिलियन है। राजनीतिक पद के लिए कोई भी प्रतियोगी इन निर्वाचन क्षेत्रों के बारे में जागरूकता के बिना सफल नहीं हो सकता। और यह, बदले में, घरेलू और विदेश नीति दोनों को प्रभावित करता है।

आधुनिक भारत की चौथी विशेषता यह है कि, मोटे तौर पर, इसका भविष्य दो दुनियाओं के बीच बातचीत पर निर्भर करता है। भारत के शहर, जहां 30 प्रतिशत आबादी रहती है, और ग्रामीण भारत, जहां लगभग 600,000 गांवों में बाकी आबादी रहती है। शहरी भारत आधुनिक उद्योग, राष्ट्रीय राजनीति और विदेश नीति, सरकारी योजना, राष्ट्रीय मीडिया, प्रमुख विश्वविद्यालयों, व्यापार, सशस्त्र बलों, विज्ञान और प्रौद्योगिकी का भारत है। इसके सर्वोत्तम उत्पाद अक्सर दुनिया के सर्वोत्तम उत्पादों जितने ही अच्छे होते हैं, इसका रुझान विश्वव्यापी है। ग्रामीण भारत सदियों पुराने पैटर्न का भारत है जहां परंपरा समाज की प्रमुख गतिशीलता है, जहां बाहरी लोग आते हैं और चले जाते हैं लेकिन जीवन चलता रहता है, अक्सर बिना ज्यादा बदलाव के। जब दोनों भारत प्रभावी ढंग से जुड़ते हैं, तो भारत सफल होता है, जैसे कि शिक्षा का विस्तार, निरक्षरता में कमी, औसत जीवन काल का विस्तार, कुछ बुनियादी स्वास्थ्य देखभाल की शुरूआत, एक लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रणाली का निर्वाह। जब वे प्रभावी ढंग से नहीं जुड़ते हैं, तो भारत जनसंख्या नियंत्रण और बेरोजगारी की तरह संकट में है। राष्ट्र को अपनी पर्याप्त क्षमता का एहसास कराने के लिए, इन दोनों भारतों के बीच संबंधों को विस्तारित और मजबूत करना होगा।

पांचवीं और अंतिम विशेषता जो हमें याद रखनी चाहिए वह यह है कि भारत में गरीबी, आध्यात्मिकता और आधुनिकता मिश्रित और सह–अस्तित्व में हैं, बिना किसी विरोधाभासी निहितार्थ के, जैसा कि पश्चिमी परिप्रेक्ष्य सुझाता है। यह भारतीय आध्यात्मिकता का सार है जो सबसे वंचित लोगों को भी गरीबी सहने में सक्षम बनाता है और यह आधुनिकता है जो सुधार की संभावना प्रदान करती है।

2.6 भारत का एशिया के संदर्भ में व्यावसायिक एवं आर्थिक संरचना

भारत एक महत्वपूर्ण देश है जो एशिया में स्थित है। इसकी व्यावसायिक और आर्थिक संरचना बहुत ही विविधतापूर्ण है। इसका व्यावसायिक संरचना मुख्य रूप से कृषि, उद्योग, और सेवाओं पर आधारित है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य स्रोत है, जिसमें लगभग 50% लोगों का रोजगार है। गेहूं, चावल, और कपास जैसी मुख्य फसलें हैं, जो देश की खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करती हैं।

उद्योग क्षेत्र भी भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण है। यहां उद्योगों में खासकर खनिज, सामग्री प्रसंस्करण, सूचना प्रौद्योगिकी, ऑटोमोबाइल, फार्मा, और स्टील शामिल हैं। उद्योगों के विकास ने अनेक लोगों को रोजगार की संभावनाओं को बढ़ाया है। सेवा क्षेत्र भी अहम भूमिका निभाता है, जैसे की वित्तीय सेवाएं, स्वास्थ्य सेवाएं, शिक्षा, पर्यटन, और आईटी। भारतीय आर्थिक संरचना में भूमि, जनसंख्या, और सामाजिक उद्यमिता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

भारत की आर्थिक संरचना में निवेशों, कर, और विपणन नियमों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। नई सरकारी योजनाओं, बाजार के परिवर्तनों, और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के प्रभाव भी इसे प्रभावित करते हैं। अधिकृत भाषा में आपको समाप्त कर दिया जाता है, लेकिन अगर और जानकारी चाहिए तो बताएं।

2.7 सारांश

आधुनिक भारत विश्व में एक महत्वपूर्ण रूप से उभरता हुआ राष्ट्र है, जिसका महत्व विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्ध है। इसका महत्व आधुनिक युग में तकनीकी उन्नति, वैज्ञानिक अनुसंधान, आर्थिक विकास, सांस्कृतिक धरोहर, और राजनीतिक प्रभाव के क्षेत्र में दिखाई देता है। भारतीय वैज्ञानिकों और तकनीकी विशेषज्ञों का योगदान वैश्विक स्तर पर महत्वपूर्ण है। भारत अंतरिक्ष अनुसंधान, नैनो तकनीक, इंजीनियरिंग, जीनेटिक्स, और अन्य क्षेत्रों में अपनी प्रगति के लिए प्रसिद्ध है। इसके साथ ही, आईटी सेक्टर में भी भारत ने अपनी अद्‌भुतता दिखाई है, और विश्वभर में अपना प्रभाव बढ़ाया है।

भारत की अर्थव्यवस्था भी वैश्विक मानकों में बड़ी मात्रा में योगदान करती है। दुनिया की तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में भारत का स्थान आज बेहद महत्वपूर्ण है। बाजार, निवेश, वाणिज्यिक गतिविधियों में भी भारत का योगदान महत्वपूर्ण है। सांस्कृतिक दृष्टि से भी, भारत अपनी अनूठी परंपरा, भाषा, धर्म, और कला के लिए प्रसिद्ध है। इसका विरासत और भाषा की भौगोलिक विविधता विश्व को प्रभावित करती है।

राजनीतिक दृष्टि से, भारत विश्व में एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी के रूप में उभरा है। इसकी भूमिका विश्व स्तर पर अधिक सहयोग की दिशा में भी महत्वपूर्ण है, जैसे कि विश्व स्वास्थ्य, पर्यावरण, और विकास में।

सम्पूर्णतः, भारत आधुनिक विश्व में अपनी विविधता, प्रगति, और सांस्कृतिक धरोहर के साथ अपनी अलग पहचान बनाए रखता है। इसका महत्व विभिन्न क्षेत्रों में व्यापक और गहरा है, जो भारत को एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी बनाता है और उसे विश्व में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करता है।

2.8 मूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

प्रश्न 1. एशिया का सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश–

(अ) चीन (ब) भारत

(स) जापान (द) पाकिस्तान

प्रश्न 2. विश्व के कुल क्षेत्रफल का कितना प्रतिशत क्षेत्र भारत है–

(अ) 3.5 (ब) 2.4 (स) 6.4 (द) 5.3

प्रश्न 3. विश्व में भारत की कितनी % प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है–

(अ) 16.1% (ब) 17.7% (स) 15.3% (द) 11.6%

प्रश्न 4. भारत की अर्थव्यवस्था विश्व में कौन सा स्थान रखती है–

(अ) तीसरा (ब) पांचवा (स) सातवां (द) छठवां

उत्तरमाला 1. (ब) 2. (ब) 3. (ब) 4. (ब)

2.9 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

1. प्रो.आर.सी. तिवारी, भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन।
2. डॉ. अलका गौतम, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन प्रयागराज।
3. प्रोफेसर माजिद हुसैन भारत का भूगोल, मैग्रा हिल।
4. Jagdish Singh, IndiaA ComprehensiveAnd systematic Geography. Gyanodaya Publication Grokhpur.
5. Singh R.L. – IndiaA Regional Geography, N.G.S.I. Grokhpur
6. Nag, P.And Sengupta, S Geography , New Delhi.
7. Ford Foundation (1959) Report on Indian's Food crisisAnd step to meet It New Delhi : Ministry of foodAndAgricultureAnd Ministry of community Developement.

2.10 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी)

प्रश्न 1. विश्व में आधुनिक भारत के महत्व की विवेचना कीजिए ?

प्रश्न 2. विश्व के संदर्भ में भारत की आर्थिक संरचना का वर्णन कीजिए ?

प्रश्न 3. एशिया में आधुनिक भारत का वर्णन कीजिए ?

प्रश्न 4. "सबसे बड़े महाद्वीप एशिया में भारत" इस कथन की पुष्टि कीजिए ?

इकाई–3 राज्य पुनर्गठन भौगोलिक व्यक्तित्व

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 राज्य पुनर्गठन

3.4 भारत की राजनीतिक इकाइयां एवं जनसंख्या

3.5 भारत का भौगोलिक व्यक्तित्व

- 3.5.1 भारत के व्यक्तित्व का भौतिक पक्ष
- 3.5.2 भारत भूमि के व्यक्तित्व की विविधता
- 3.5.3 भारत के व्यक्तित्व का मानवीय पक्ष
- 3.5.4 भारत के व्यक्तित्व का ऐतिहासिक पक्ष
- 3.5.5 भारत भूमि का उद्‌भव
- 3.5.6 भारत भूमि पर मानव का अभ्युदय
- 3.5.7 पूर्व ऐतिहासिक कालीन भारत
- 3.5.8 मध्यकालीन भारत
- 3.5.9 आधुनिक कालीन भारत

3.6 सारांश

3.7 स्वमूल्यांकन एवं आदर्श उत्तर

3.8 संदर्भ–ग्रंथ–सूची

3.9 अभ्यास प्रश्न (शत्रांत परीक्षा की तैयारी)

3.1 प्रस्तावना

भारत राज्य का पुनर्गठन एक महत्वपूर्ण और विवादास्पद मुद्दा है, जिसपर विभिन्न समूह और राजनीतिक दलों के बीच अनेक तरह की धारणाएं और विचाराधीनताएं हैं। इसके परिणामस्वरूप, इसे विभिन्न स्तरों पर चर्चा का विषय बनाया गया है, जिसमें भौगोलिक व्यक्तित्व एक महत्वपूर्ण पहलू है। भारत में राज्यों का पुनर्गठन के संबंध में विचार किए जाने की मुख्य वजह हैं।

कुछ राज्य अधिकारों की साझा मांग करते हैं, जबकि कुछ दूसरे नए राज्यों की व्यवस्था को समझाते हैं। प्रशासनिक और विकासीय चुनौतियों का सामना विकास और प्रशासन में समानता की मांग की जाती है, ताकि सभी क्षेत्रों को समान विकास का लाभ मिल सके। कुछ लोग स्वतंत्र राज्यों की शक्ति की चुनौती देते हैं, जबकि दूसरे समूह सांस्कृतिक सामंजस्य को ध्यान में रखते हैं।

भौगोलिक व्यक्तित्व

जनसंख्या के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन विचार किया जा सकता है, ताकि प्रभावशाली और अप्रभावशाली क्षेत्रों के साथ संवेदनशीलता बना रहे। भौगोलिक स्थिति में कुछ क्षेत्रों की अत्यधिक आवश्यकताएं और भौगोलिक स्थिति के कारण उन्हें अलग किया जा सकता है। राजनीतिक और ऐतिहासिक प्रासंगिकता के आधार पर भी राज्यों को गठित किया जा सकता है। आर्थिक और विकासीय मापदंडों के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन किया जा सकता है, ताकि समृद्धि का लाभ सभी क्षेत्रों तक पहुंचे। भारतीय राज्यों का पुनर्गठन एक विशाल और गंभीर

मुद्दा है, जिसमें भौगोलिक व्यक्तित्व केवल एक हिस्सा है। इसमें समृद्धि, सामाजिक सामंजस्य, और विकास के साथ–साथ संवेदनशीलता को भी नजर रखना आवश्यक है।

3.2 उद्देश्य

भारत राज्य का पुनर्गठन और भारत के भौगोलिक व्यक्तित्व के अध्ययन का उद्देश्य देश के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, और सांस्कृतिक विकास को समर्थन करना है। इसका लक्ष्य भारत की भौगोलिक विशेषताओं को समझना, सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए योजनाएं बनाना, और राज्यों के पुनर्गठन के माध्यम से प्रशासनिक और शासन क्षमता को बढ़ाना है। इससे देश के विकास में समानता, सामर्थ्य, और समरसता की दिशा में कदम बढ़ाने का प्रयास होता है।

भारत राज्य का पुनर्गठन और भारत के भौगोलिक व्यक्तित्व के अध्ययन का उद्देश्य एक महत्वपूर्ण और व्यापक विषय है, जो देश के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, और सांस्कृतिक विकास को समर्थन करने के लिए महत्वपूर्ण है। इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य भारत के विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों के मध्य न्याय, सामंजस्य, और समरसता को संवारना है, ताकि विकास की प्रक्रिया में समानता और समरसता सुनिश्चित की जा सके।

भारत एक विविधतापूर्ण देश है, जिसमें विभिन्न भौगोलिक, सांस्कृतिक, और ऐतिहासिक परिस्थितियां हैं। इसके राज्यों और क्षेत्रों में विभिन्नता का अनुभव किया जा सकता है, जो उनके विकास के प्रोत्साहक हो सकते हैं, लेकिन वे समस्याओं का भी कारण बन सकते हैं। इसलिए, भारत के राज्यों के पुनर्गठन का मुख्य उद्देश्य विकास के समर्थन में सहायक बनना है, साथ ही राज्यों के अन्यायपूर्ण या असमान आर्थिक और सामाजिक स्थितियों को सुधारना है।

पुनर्गठन के माध्यम से, भारत के राज्यों को विकास के निर्देशांकों के अनुसार व्यवस्थित किया जा सकता है, जिससे वे अपने संगठन और प्रशासन को सुदृढ़ कर सकते हैं। इससे विभिन्न राज्यों के बीच सामंजस्य बढ़ता है और सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक संरचनाओं में सुधार होता है। इसके अलावा, राज्यों के पुनर्गठन से उन्हें संघीय संरचना के साथ अधिक संगत बनाया जा सकता है, जिससे सामूहिक नेतृत्व और साझेदारी में सुधार हो सकता है।

भारत के भौगोलिक व्यक्तित्व का अध्ययन भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह देश की विशेषताओं को समझने में मदद करता है। भारत का भौगोलिक व्यक्तित्व विशालता, विविधता, और ऐतिहासिक महत्व के साथ युगों से जुड़ा हुआ है। इसमें विभिन्न प्राकृतिक और मानव भौगोलिक परिस्थितियां शामिल हैं, जैसे कि हिमालय सीमाएं, थल क्षेत्र, समुद्री तट, नदियाँ, और अरब सागर का उपसागर। इन सभी क्षेत्रों का अध्ययन हमें इस अध्यायन में करना है।

3.3 भारत राज्य का पुनर्गठन

भारत राज्य का पुनर्गठन एक व्यापक और महत्वपूर्ण विषय है। यह राज्यों के संरचनात्मक, प्रशासनिक, और राजनीतिक संबंधों को पुनः विचार करने का प्रयास है। इसका मुख्य उद्देश्य सुशासन और विकास को प्रोत्साहित करना है। यह स्थानीय स्तर से सुशासन की अधिक दक्षता, संबंधों की सुधार, और समाज में समानता को बढ़ावा देने का लक्ष्य रखता है। इसमें संविधानीय परिवर्तन, राज्यों के सीमांतर विकास को बढ़ावा देने, और प्रशासनिक रिक्तियों को कम करने की तरह कई पहलुओं को शामिल किया जा सकता है।

भारत राज्य का पुनर्गठन भारतीय राजनीति का एक महत्वपूर्ण मुद्दा है जो लंबे समय से चर्चा में है। पुनर्गठन का मतलब है राज्यों की सीमाओं और विभाजन को पुनः समीक्षा करना, ताकि वे नए प्रमुख या सीमांत राज्यों में विभाजित किए जा सकें और प्रशासनिक व्यवस्था को सुधारा जा सके।

भारत का राज्य पुनर्गठन मुख्य रूप से उन राज्यों को शामिल करता है जो अपने आकार, जनसंख्या, और प्रशासनिक क्षमता के आधार पर छोटे हैं, और उन्हें बड़े और ताकतवर राज्यों में विलीन किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य राज्यों के प्रशासनिक और आर्थिक स्वायत्तता को बढ़ावा देना है और विकास की प्रक्रिया को गति देना

है।

भारत में पिछले कुछ वर्षों में कई राज्यों का पुनर्गठन हुआ है, जैसे कि जम्मू और कश्मीर का विभाजन, तेलंगाना का गठन, और असम का कार्वाइड संरचना। यह प्रक्रिया राज्यों के विकास और प्रशासनिक प्रभावकारिता को मजबूत करने के लिए समय–समय पर आवश्यक होती है। पुनर्गठन का प्रक्रिया मुख्य रूप से राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक प्रभावों को ध्यान में रखते हुए की जाती है। इसमें सरकारी नीतियों, कानूनों, और प्रक्रियाओं का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। भारतीय संविधान ध्यान में रखते हुए राज्यों का पुनर्गठन अवश्यक है, लेकिन इसे सावधानीपूर्वक और समझदारी से किया जाना चाहिए ताकि किसी भी समाज या क्षेत्र को नुकसान न हो।

3.4 भारत की राजनीतिक इकाइयाँ एवं जनसंख्या

भारत की जनसंख्या 1 अरब 20 करोड़ से अधिक हो चुकी है, जिसके कारण यह विश्व का दूसरा बड़ा देश बन गया है। विगत पचास वर्षों में इसकी जनसंख्या दोगुने से अधिक बढ़ी है जो अब तक का कीर्तिमान है। इसे जनवृद्धि न कहकर जनसंख्या का विस्फोट कहा जाता है। भारत की जनसंख्या औसतन 1.93 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से बढ़ रही है, जो सारे प्रयासों के बावजूद अपनी तीव्र गति बनाये हुए हैं। भारत के लिए यह चिन्ता का विषय है, क्योंकि बढ़ती जनसंख्या के अनुरूप साधन जुटाना कठिन लग रहा है। यहाँ बसने वाली 30 से 35 प्रतिशत जनसंख्या दो जून का भोजन जुटाने में असमर्थ है। स्वतन्त्र भारत में सारे विकास कार्यों के बावजूद पिछड़ेपन पर काबू पाना कठिन प्रमाणित हुआ है। भारत के नगरों को समृद्धि और विकास का प्रतीक माना जाता है, लेकिन वहाँ भी विशाल जनसंख्या गरीबी में जीवनयापन कर रही है। गाँवों के प्रवासी समुचित रोजगार के अभाव में नगरों की गन्दी बस्तियों में नारकीय जीवन भोग रहे हैं। अब भी हमारे देश की एक–चौथाई से कुछ अधिक जनसंख्या ही इन नगरों में निवास करती है लेकिन भारत के नगर जनाधिक्य से आक्रान्त हैं जो एक विचित्र विडम्बना कही जा सकती है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत के आधुनिकीकरण और संतुलित विकास के लिए ब्रिटिश कालीन प्रान्तों और रियासतों को मिलाकर राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों की पुनर्रचना की गयी ताकि प्रशासनिक पकड़ को मजबूत बनाकर विकास को गति दिया जा सके। भाषा पर आधारित राज्यों का निर्माण स्वतन्त्र भारत की सबसे बड़ी भूल प्रमाणित हो रही है। राज्यों का आकार–विस्तार इतना असंतुलित है कि अपेक्षित लाभ प्राप्त करना कठिन है। जहाँ एक ओर उत्तर प्रदेश और बिहार जैसे जनसंख्या बहुल और मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र जैसे विशाल क्षेत्रफल वाले राज्य हैं वहीं केरल, पंजाब, हरियाणा, नागालैण्ड, गोवा जैसे अति लघु राज्य भी बनाये गये हैं। भाषा पर आधारित राज्यों का बंटवारा अनेक कठिनाइयों को जन्म दे रहा है।

भारत का राजनीतिक पुनर्संगठन एक विषम राजनीतिक परिस्थितियों की देन है। स्वतन्त्रता के बाद भारत में ब्रिटिश शासित क्षेत्रों के अतिरिक्त पुर्तगाली, फ्रान्सीसी और डंचों के आधिपत्य क्षेत्र के अलावा लगभग 600 छोटी–बड़ी देशी रियासतें थी जिनको पुनर्संगठित करना एक दुरुह कार्य था। 1956 में राज्य पुनर्गठन आयोग के प्रतिवेदन के आधार पर राज्यों का निर्माण हुआ जो अब अनेक समस्याओं को प्रकट करने लगा है। यह एक विडम्बना है कि उसी आयोग ने कहीं एकभाषी और कहीं द्विभाषी राज्यों का निर्माण किया जिसके फलस्वरूप द्विभाषी राज्य टूटने लगे। तमिलनाडु और आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात, पंजाब और हरियाणा इसके प्रतिफल हैं। इस कलह का प्रभाव बढ़ता ही जा रहा है। हाल में इसी कलह के कारण उत्तर प्रदेश के विभाजन के बाद उत्तराखण्ड, बिहार के विभाजन के बाद झारखण्ड और मध्य प्रदेश के विभाजन के बाद छत्तीसगढ़ नये राज्य अस्तित्व में आये हैं भाषायी बिलगाव ने अब धार्मिक बिलगाव को प्रश्रय देना शुरू कर दिया है। अब विकास की समस्या से अधिक जटिल समस्या भारत की अखण्डता की रक्षा है। इस प्रवृत्ति ने विकास की गति को मन्द कर दिया है। सम्प्रति भारत में 28 राज्य और 7 केन्द्र शासित राज्य है, जिनका विस्तृत विवरण तालिका में दिया गया है।

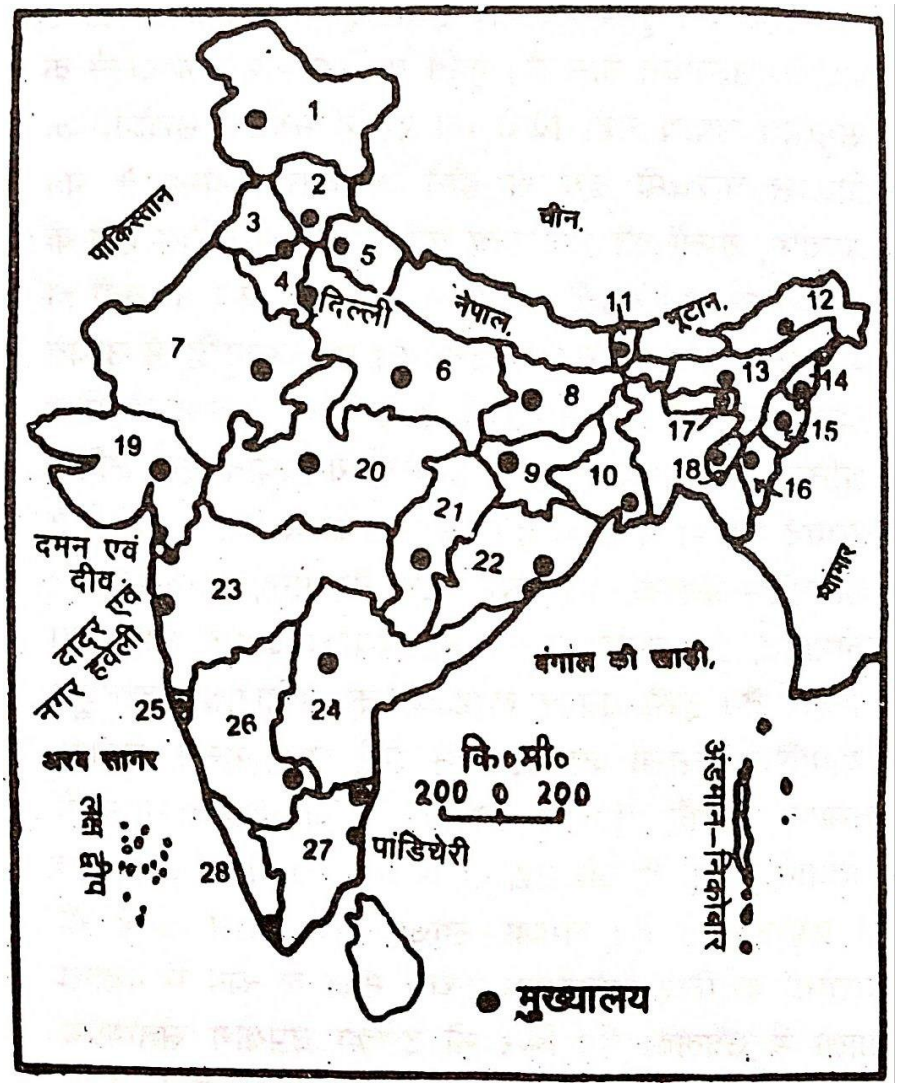

चित्र 3.1 भारत की राजनीतिक इकाइयां

1. तेलगांना, 2. हिमाचल प्रदेश, 3. पंजाब, 4. हरियाणा, 5. उत्तराखण्ड, 6. उत्तर प्रदेश, 7. राजस्थान, 8. बिहार, 9. झारखण्ड, 10. पश्चिम बंगाल, 11. सिक्किम, 12. अरुणांचल प्रदेश, 13. असम, 14. नागालैण्ड, 15. मणिपुर, 16. मिजोरम, 17. मेघालय, 18. त्रिपुरा, 19. गुजरात, 20. मध्य प्रदेश, 21. छत्तीसगढ़, 22. उड़ीसा, 23. महाराष्ट्र, 24. आन्ध्र प्रदेश, 25. गोवा, 26. कर्नाटक, 27. तमिलनाडु, 28. केरल।

भारत अपनी पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से आर्थिक–सामाजिक उत्थान में जुटा हुआ है। इसकी औद्योगिक प्रगति निःसन्देह सराहनीय है, क्योंकि अब यह एशिया में जापान और चीन के बाद तीसरे स्थान पर आ गया है। भारत में आधारभूत उद्योगों का विकास जैसे लोहा एवं इस्पात, मशीन, इलेक्ट्रानिक्स, ऊर्जा आदि प्राथमिकता के आधार पर शुरू किये गये, जिसका अच्छा प्रतिफल देखने को मिला है। अब कच्चे माल के स्थान पर भारत पर्याप्त मात्रा में तैयार माल निर्यात करने लगा है। कृषि में पूर्ण आत्मनिर्भरता इसकी सबसे बड़ी प्रगति है।

फिर भी वितरण की अव्यवस्था और जनसंख्या की बढ़ती आकांक्षा, दो कारणों से आर्थिक विपन्नता से उबर पाना कठिन हो गया है। स्वतन्त्रता के साठ वर्ष एक राष्ट्र के लिए कम नहीं होते हैं, लेकिन भारत की प्रगति का आधार एकांगी होने के कारण क्षेत्रीय असंतुलन घटने के स्थान पर बढ़ता जा रहा है। भारत गाँवों का देश है लेकिन विकास नगर आधारित है। इस प्रवृत्ति ने भारत का सबसे अधिक नुकसान किया है, क्योंकि हजारों वर्षों की जीवन पद्धति लुंज–पुंज होती जा रही है। भारत के गांवों की उपेक्षा न केवल नगरीय समाज की ओर से होती रही है अपितु ग्रामीण समाज ने अपने दायित्व का निर्वाह नहीं किया है। धनाभाव में भी सुखी जीवन व्यतीत करने वाला ग्रामीण समाज अब नगरीय चमक–दमक में अधिक विश्वास करने लगा है।

सहकारिता, सद्भावना और भाई–चारा से ओत–प्रोत ग्रामीण समाज अब इतिहास की विषय–वस्तु बनता जा रहा है। वास्तव में पश्चिमी प्रभाव ने हमारे चेतना को इस प्रकार सम्मोहित कर रखा है कि हम अपनी तुलना उनके बताये आधारों पर करने लगे हैं। यह एक बड़ी साजिश है जो भारत को बेचैन करती जा रही है। हमें बार–बार पिछड़ा देश कहकर हममें हीन भावना पैदा की जा रही है, और प्रगति के लिये नए सूत्र बताकर हमारे ऊपर नयी निर्मित वस्तुओं और तकनीकों को लादा जा रहा है। हमारे प्रतिरक्षा व्यय को इसी आधार पर प्रतिवर्ष बढ़ाया जा रहा है। परन्तु अब भारत को अपनी पहचान बनाने की आवश्यकता उत्पन्न हो गई है, अन्यथा यह न पूरब का प्रतीक रहेगा और न पश्चिम का। भारत के कर्णधारों का जो झुकाव पश्चिमी तकनीकों की ओर है उसका गहरा प्रभाव हमारी अर्थव्यवस्था और सामाजिक विघटन पर उभड़ने लगा है।

भारत की अपार श्रमशक्ति का उपयोग न कर स्वचालित यन्त्रों का विस्तृत उपयोग इसका सबसे खतरनाक पहलू है। हमारे सामने केवल उत्पादन बढ़ाने का लक्ष्य न होकर श्रमशक्ति के उपयोग का भी होना चाहिए। बढ़ती बेरोजगारी, अशिक्षा, कुपोषण और असंतोष भारत के स्वास्थ्य के लिये संकट पैदा कर सकते हैं। अतः भारत के व्यक्तित्व के मानवीय पक्ष के ऑकलन के लिये यह आवश्यक है कि इसको स्वदेशी नजरों से देखा जाय। विशाल जनसंख्या के लिये साधन जुटाने के स्थान पर इसे स्वयं अपनी आवश्यकता की व्यवस्था के लिये उत्प्रेरित और प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। हमारी शिक्षा व्यवस्था ने इस दिशा में सबसे घटिया पक्ष प्रस्तुत किया है। विगत साठ वर्षों में शिक्षा के रूप में कोई अन्तर नहीं आया है। फलतः पढ़े–लिखे बेरोजगारों की जमात बढ़ती जा रही है। मानव संसाधन का सबसे बड़ा अपव्यय यहाँ है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में इन शिक्षित बेरोजगारों के लिये कोई उपयोग की योजना नहीं है। एक प्रकार से भारत के गाँव उजड़ रहे हैं क्योंकि गाँव का युवक नौकरी की तलाश में नगर की ओर पलायन करता जा रहा है। यह स्थिति तभी रुक सकती है जब गाँवों में रोजगार के उचित अवसर विकसित किये जाय। भारत सरकार अब इस दिशा में उन्मुख हो रही है।

भारत को एक सुदृढ़ राष्ट्र बनाने के लिये इसके भौगोलिक पक्ष को समझने की आवश्यकता है। प्रकृति ने हमें जिन संसाधनों को दिया है और हमारे पूर्वजों ने जो प्रयोग हजारों सालों से किया है हमें उसी सूत्र को पकड़ना पड़ेगा। भारत की जनशक्ति के उपयोग करने का ढंग ढूंढ़ना इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि हम जनसंख्या अतिरेक के जाल में उलझते जा रहे हैं। इसे उत्पादन बढ़ाकर और जनसंख्या को नियंत्रित कर ही कम किया जा सकता है। इसलिये जनसहयोग आवश्यक है। भारत की ग्रामीण जनसंख्या के लिये यदि आवागमन के समुचित साधन, स्वास्थ्य, शिक्षा और ऊर्जा के स्रोत जुटा दिये जाय तो बहुत सारी समस्याओं का समाधान स्वयं यहाँ की जनसंख्या ढूढ़ लेगी। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इन कार्यों को जिम्मेदारी और पूर्ण नैतिकता के साथ किया जाय। भारत में प्रजातन्त्र का जो रूप सामने आ रहा है उसे रोकना होगा, क्योंकि इससे बहुत सारे मानवीय गुण विनष्ट हो रहे हैं, जिसे किसी विकसित देश से आयात नहीं किया जा सकता है।

स्पष्ट है कि भारत की प्रगति का मार्ग भारत की भौगोलिक विरासत में ढूढ़ने की आवश्यकता है। भारत में उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग कर सभी आधारभूत आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है। यदि आधारभूत आवश्यकताओं की अनदेखी करके आधुनिकता के चकाचौंध में समय गंवाया गया तो भारत आगे बढ़ने के स्थान पर खण्डित हो जायेगा। आज पीने के लिये पानी का प्रबन्ध नहीं हो पा रहा है लेकिन आमोद–प्रमोद पर गाढ़ी कमाई खर्च की जा रही है। स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार और मूल्य नियन्त्रण की अनदेखी भारतीय समाज को आन्दोलित करती जा रही है जो कष्टमय भविष्य की सूचक है। अतः भारत के मानवीय पक्ष का सही मूल्यांकन और तदनुसार कार्य योजना का निर्माण आज की सामयिक आवश्यकता है। इसके लिये हमें अपने अतीत के अनुभवों से लाभ उठाना चाहिए।

3.5 भारत का भौगोलिक व्यक्तित्व

किसी देश के व्यक्तित्व निर्माण में उसकी भौगोलिक स्थिति, आन्तरिक और समीपवर्ती भौम्याकृतिक स्वरूप, जलवायविक विशेषताएं, प्राकृतिक वनस्पति और जीव–जन्तु, खनिज सम्पदा, मानव समाज की ऐतिहासिक विरासत, सांस्कृतिक चिंतन का आधार, पड़ोसी देशों के साथ साहचर्य, उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग की क्षमता और अपने विरासत के प्रति आस्था आधारी पक्ष माने गये हैं।

जिन देशों में उपरोक्त पक्ष कमजोर रहे हैं उनके व्यक्तित्व निर्माण में अधिक उतार–चढ़ाव देखने को मिलता है। ऐसी अनेक घटनाएं प्रमाणित करती हैं कि उत्कर्ष और अपकर्ष झेल कर अनेक देशों की सभ्यताएं हमेशा के लिये समाप्त हो गई, जबकि भारत एक ऐसा देश है जो अनेक उतार–चढ़ाव को झेलते हुए अपने भौगोलिक व्यक्तित्व को विगत छः हजार वर्षों से सतत् बनाए हुए है। भारत के समान विश्व के बहुत कम देश ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करने में सफल रहे हैं।

3.5.1 भारत के व्यक्तित्व का भौतिक पक्ष–

भारत की भौगोलिक स्थिति – भारत की भौगोलिक स्थिति अपने आप में अनूठी है। हिमालय पर्वत श्रृंखला के निर्माण के बाद अस्तित्व में आये इस प्रखण्ड की भौतिक–सांस्कृतिक विविधता के कारण इसे भारतीय उपमहाद्वीप नाम दिया गया है। ब्रितानी काल में जब पाकिस्तान, बंग्लादेश, म्यांमार और श्रीलंका इसके अंग थे तो निश्चित ही इसकी विशालता में विविधता और एकता उपमहाद्वीप होने का बोध कराते थे। इसी पक्ष से प्रेरित होकर इस प्रखण्ड के समीपवर्ती समुद्र को हिन्द महासागर नाम दिया गया। ब्रितानी शासन काल के पराभव के बाद वर्तमान परिदृश्य अस्तित्व में आया जब एक के बाद एक देश स्वतंत्र हुए और भारत का विभाजन हो गया।

भारत का आकार और विस्तार अपने पड़ोसी देशों की तुलना में अब भी सर्वोच्चता का प्रतीक है। इसका भौतिक विस्तार 8°4' से 37°6' उत्तरी अक्षांश तथा 68°7' से 97°25' पूर्वी देशान्तर के मध्य है। इस प्रकार उत्तर से दक्षिण इसकी लम्बाई 3,214 किमी० और पूरब से पश्चिम चौड़ाई 2,933 किमी० है। इस विशाल देश का क्षेत्रीय फैलाव लगभग 32,87,263 वर्ग किमी० है, जो ब्रिटेन के क्षेत्रफल की तुलना में तेरह गुना बड़ा है। क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से भारत विश्व का सातवाँ बड़ा देश है। एशिया के संदर्भ में यह चीन के बाद दूसरा बड़ा देश है। इस प्रकार भारत पृथ्वी तल के लगभग 2.28 भूभाग को घेरे हुए है। विभाजन के पूर्व इसकी आकृति अपेक्षाकृत अधिक सुडौल थी।

पड़ोसी देशों के संदर्भ में भारत की भौगोलिक स्थिति केन्द्रीय है। पश्चिम में पाकिस्तान सहित अरब देश और पूर्वी अफ्रीका, उत्तर में चीन अधिकृत तिब्बत सहित नेपाल और भूटान, पूरब में म्यांमार सहित दक्षिणी–पूर्वी एशिया के देश और दक्षिण में बंग्लादेश और हिन्द महासागर सहित इसके दक्षिणी छोर पर आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड और अंटार्कटिका महाद्वीप का विस्तार है। स्पष्ट है कि अपनी अनूठी भूराजनीतिक स्थिति के कारण भारत नियंत्रक स्थिति बनाये भारत अपनी 6100 किमी० समुद्री सीमा और बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागर की उपस्थिति के कारण एक विशाल जलराशि पर प्रभुत्व बनाये हुए है।

भारत का धुर दक्षिणी बिन्दु जिसे पहले पिग्मैलियन प्वाइन्ट कहा जाता था और अब इन्दिरा प्वाइन्ट कहलाता है, $6^{o}.45$ उ० अक्षांश पर ग्रेट निकोबार द्वीप के दक्षिणी छोर पर स्थित है। सदियों पूर्व से भारत स्थल और जलमार्गों से अपने पड़ोसी देशों से कई प्रकार के रिश्ते बनाने में सफल रहा है। अनेक धर्मों के उद्‌गम स्थल होने के कारण भारत के पड़ोसी देश आज भी भारतीय संस्कृति के प्रभाव में हैं।

इस प्रकार का प्रभावी रिश्ता सबसे अधिक बौद्ध धर्म के कारण है, जिसका लाभ भारत को विविध रूपों में आज भी मिल रहा है। स्पष्ट है कि लम्बी अवधि से भारत अपनी भू:राजनीतिक स्थिति के कारण अपने पड़ोसी देशों का हमसफर बना हुआ है। भारत की इस अनूठी भूराजनीतिक स्थिति की गुणवत्ता के कारण यूरोप के लोगों, विशेषकर अंग्रेजों द्वारा, भारत सहित पड़ोसी देशों को उपनिवेश बनाने में सफलता प्राप्त हुई। ब्रितानी चिंतक मैकिन्डर ने इसी संदर्भ में कहा था कि हिन्द महासागर पर जो अधिकार रखेगा वह पूरी दुनियाँ पर शासन कर सकता है। स्पष्ट है कि अटलांटिक महासागर और प्रशान्त महासागर की तुलना में हिन्द महासागर की भूराजनीतिक महत्ता अधिक है। भारत की स्थिति इस संदर्भ में अधिक प्रभावशाली है।

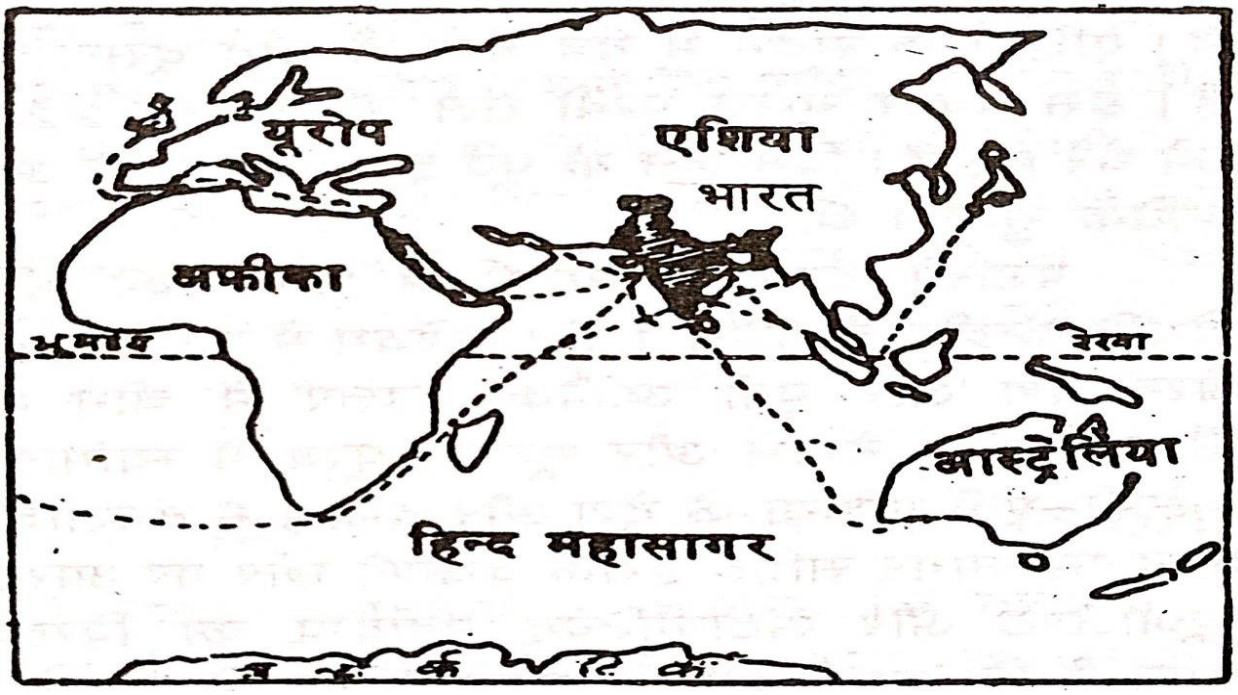

चित्र 3.2 भारत की भौगोलिक स्थिति

विश्व के संदर्भ में भारत की भौगोलिक स्थिति भी प्रभावकारी है। विश्व का सर्वाधिक विस्तृत भूखण्ड यूरेशिया भारत की पहुँच में है, जिसके कारण एशिया और यूरोप के लोग भारत के प्रति सदियों से आकर्षित रहे हैं। इसका लाभ और हानि भारत अब भी संजोये है। सिकन्दर और मध्य एशिया के कबायली सरदारों का आक्रमण जहाँ एक ओर तबाही का कारण रहा है, वहीं धार्मिक–सांस्कृतिक मेल–मिलाप के कारण भारत लाभान्वित भी होता रहा है। नई दुनियाँ के संदर्भ में भी भारत की स्थिति अनुकूल है, क्योंकि हिन्द महासागर के माध्यम से यह पूरब में प्रशान्त महासागर और पश्चिम में अन्ध महासागर से सम्बद्ध है। स्पष्ट है कि भारत अपनी भूराजनीतिक स्थिति का लाभ सदियों से उठाता रहा है और आगे भी बिना अवरोध उठाता रहेगा।

3.5.2 भारत भूमि के व्यक्तित्व की विविधता–

भारत एक ऐसा देश है जहाँ भौतिक और मानवीय विविधता किसी भी देश की तुलना में सर्वाधिक देखने को मिलती है। इन विविधताओं ने भारत के व्यक्तित्व को अनूठापन प्रदान किया है। यह भी उल्लेखनीय है कि भारत की इन विविधताओं के क्रोड़ में एक अनूठी एकता का दर्शन भी होता है। भारत की विविधता को समझने के लिये इसके निम्न पक्षों का ज्ञान आवश्यक है।

भौतिक परिवेश की विविधता कहा जाता है कि भौतिक परिवेश की जितनी विविधता भारत में देखने को मिलती है, वैसी शायद ही किसी अन्य देश में देखने को मिले। भारत की विविधता में एकता का अनुभव इसके व्यक्तित्व को विलक्षण बनाये हुए है। भारत के स्थलरूप, भौम्याकृतिक संरचना, जलवायविक विशेषताएं, वनस्पति एवं जीव–जन्तुओं की विविधता, संसाधनों की विविधता और इन पर युगों से निर्भर मानव समाज की विविधता का जो रूप भारत में देखने को मिलता है वैसा अन्यत्र शायद ही देखने को मिले। भारत के उत्तरी छोर पर उतुंग हिमालय की दीवार भारत के व्यक्तित्व निर्माण में एक आधारी पक्ष है। यदि हिमालय नहीं होता तो भारत में इतनी अधिक परिवेश की विविधता देखने को नहीं मिलती। हिमालय की बर्फीली चोटियों से निकलने वाली सदानीरा नदियों द्वारा रचित विस्तृत जलोढ़ मैदान और दक्षिणी भाग में स्थित प्राचीन चट्टानों से निर्मित पठारी भाग के विविध रूप अनूठी भौतिक दृश्यावली उपस्थित करते हैं। यह भाग विविध खनिजों का भण्डार है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत में सभी युगों की भूगर्भिक संरचना के अवशेष पाये जाते हैं जो इसकी भौमिकीय संरचना की विविधता के प्रमाण हैं।

भारत भूमि के व्यक्तित्व निर्माण में इसकी मानसूनी जलवायु का योगदान भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।

जलवायविक विविधता इतनी अधिक मुखर है कि यहाँ विश्व में पाई जाने वाली जलवायु के अधिकांश रूप देखने को मिलते हैं। तापमान और वर्षा की विविधता के कारण भारत को अनेक जलवायविक प्रखण्डों में बाँटा गया है। यहाँ ध्रुवीय जलवायु का दर्शन हिमालय के उच्च भागों में देखने को मिलता है तो वहीं पूर्वोत्तर एवं पश्चिमी घाट में भूमध्य रेखीय जलवायु का सादृश्य तथा थार मरुस्थल में शुष्कता देखने को मिलती है। इस प्रकार ऊष्ण, उपोष्ण, शीत और शुष्क जलवायु के प्रखण्डों के कारण भारत की जलवायु ने इसे सर्वाधिक विविधता प्रदान किया है। भारत की जलवायु का मौसमी परिवर्तन इसे अनूठापन प्रदान करता है, जिसके कारण यहाँ की जलवायु वर्ष भर मोहक बनी रहती है।

स्थलाकृतिक स्वरूप, स्थितिजन्य विशेषताएँ एवं जलवायविक विविधता के कारण यहाँ प्राकृतिक वनस्पतियाँ भी विविध प्रकार की पाई जाती हैं। विश्व में पाई जाने वाली वनस्पतियों की अधिकांश प्रजातियों के पौधे भारत में पाये जाते हैं। उपलब्ध सूचनाओं के अनुसार भारत में 50 हजार किस्म के पौधे एवं 80 हजार किस्म के जीव–जन्तु पाये जाते हैं, जिसमें 20 हजार किस्म के पुष्पी पौधे, 67 हजार किस्म के कीड़े–मकोड़े, एक हजार किस्म के मोलस्क, एक हजार किस्म की मछलियाँ, बारह सौ किस्म की चिड़िया और 340 किस्म के स्तनधारी जानवर यहाँ मौजूद हैं। स्पष्ट है कि भारत की जैव विविधता विश्व में सर्वश्रेष्ठ हैं।

किसी देश के मानव समाज की विरासत उसके व्यक्तित्व निर्माण का सर्वाधिक शसक्त पक्ष होता है। इस दृष्टिकोण से भारत गिने–चुने देशों में है, जहाँ मानव समाज की विरासत पाँच से छः हजार वर्ष पुरानी है। इस लम्बी अवधि में विश्व के विविध भागों के लोग भारत में आकर बसते रहे हैं। यही कारण है कि यहाँ का मानव समाज मिश्रित हो गया है। बी०एस० गुहा के अनुसार यहाँ के मानव समाज में छः प्रमुख प्रजातियाँ नीग्रीटो, प्रोटो–आस्ट्रेलाइड, मंगोलाइड, मेडिटेरेनियन, अल्पानाइड– डिनामिक और नार्डिक के मिश्रण से 20 प्रजाति वर्ग बन गये हैं, जिसमें आर्य समूह की प्रधानता है। भारत की जनजातियाँ भी अनेक वर्गों एवं समूहों में बंटी है। भारत में सांस्कृतिक विकास के विविध चरण प्रस्तर युग से लेकर आधुनिक काल तक सतत बना रहा है। भारतीय सांस्कृतिक विकास का आधार प्रकृति आधारी चिंतन रहा है, जिसके कारण विविध धर्मों, जाति समूहों और बाहरी आक्रमणों के बावजूद भारतीय जनमानस की एकता सदैव बनी रही है। भारत की इसी सांस्कृतिक एकता के कारण विविधता में एकता की संज्ञा दी गई है। भारतीय ज्ञान–विज्ञान पर आधारित यहाँ जन्मे धर्मों ने न केवल विश्व बन्धुत्व को चरितार्थ किया, अपितु ज्ञान–विज्ञान आधारित जीवन पद्धति के माध्यम से सामाजिक सहिष्णुता आधारित एकता को सतत बनाये रखा। लगभग आठ सौ साल के इस्लामिक साम्राज्य और तीन सौ साल के ब्रितानी आधिपत्य के बावजूद भारत की सांस्कृतिक एकता अक्षुण्य बनी रही। भारत में जो आया यहाँ का होकर भारतीय संस्कृति का अंग बन गया। स्पष्ट है कि अपने में आत्मसात करने की अद्‌भुत क्षमता भारतीय संस्कृति की आधारभूत विशेषता है। भारत में आज भी आठ करोड़ से अधिक आदिवासी निवास करते हैं, जिनकी सर्वाधिक संख्या छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, झारखण्ड, उड़ीसा, गुजरात, राजस्थान, असम, आन्ध्र प्रदेश, त्रिपुरा, नागालैण्ड, मिजोरम, मणिपुर और अण्डमान में निवसित हैं। भारत एक बहुभाषी देश है जहाँ 22 अधिकृत भाषाएं और अनेक बोलियाँ बोली जाती हैं। हिन्दी राष्ट्र भाषा है, लेकिन केवल 40 प्रतिशत लोगों की यह मातृ भाषा है।

3.5.3 भारत के व्यक्तित्व का मानवीय पक्ष–

भारत की अनेकता में एकता के संदर्भ में भारत विश्व का एक ऐसा देश है जो अपनी पाँच से छः हजार वर्ष की जीवन्त संस्कृति और सभ्यता के सातत्य के कारण विश्व में अपनी पहचान बनाये हुए हैं। इसकी समकालीन यूनानी, रोमन, नीलघाटी, ह्वगहो घाटी और मेसोपोटामिया की सभ्यताएं इतिहास बन चुकी हैं, जबकि अपनी आत्मसात करने की गुणवत्ता के कारण उतार–चढ़ाव को झेलते हुए इसका सातत्य बना हुआ है। भारत की संस्कृति वसुधैव कुटुम्बकम पर आधारित होने के कारण विविधताओं में एकता का सूत्र तलाशती रही है। मानवीय विविधता के बावजूद इसकी समन्वयवादी एकता सभी युगों में बल प्रदान करती रही है। श्रीराम की दक्षिण की भारत यात्रा को विविधता में एकता का सूत्रपात कहा जाता है। भारतीय संस्कृति ने न केवल भारत को एक सूत्र में बांधे रहने का प्रयास किया, अपितु पड़ोसी देशों को भी साथ चलने के लिये उत्साहित किया।

भारत की विविधता में एकता की भावना देखने वालों की बढ़ती निराशा कष्टदायी होती जा रही है। क्षेत्रीयता की आंधी तेज होती जा रही है जो इसके व्यक्तित्व विकास के लिए घातक है। भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में जहाँ 1 अरब 2 करोड़ से अधिक लोग राष्ट्रीय जीवन के आधार हों, ऐसी आंधी भयावह प्रमाणित हो सकती है। नगर आधारित भारत की दिनों–दिन बढ़ती आर्थिक सुविधायें मानव मूल्य को जिस गति से

नीचे ढकेल रही हैं, उससे उज्ज्वल भविष्य की कल्पना कठिन लग रही है। संसाधनों का दुरुपयोग ऐसी ही स्थिति में सबसे अधिक होता है, क्योंकि बड़े समाज में साधनों का वितरण सबसे कठिन काम होता है। भारत की बहुधर्मी, बहुजातीय और बहुवंशीय जनसंख्या भारतीय संस्कृति में ऐसी रची बसी रही है कि उसे युगों तक सहिष्णुता का प्रतीक माना जाता रहा है।

अनेक धर्मों, जातियों, देशों और सम्प्रदायों के लोग भारत में आये और यहीं के हो गये। हिन्दुओं से कम राष्ट्रीयता की भावना पारसी या मुस्लिम समाज में नहीं है। लेकिन तुच्छ राजनीतिक लाभ की भावना ने भारत के व्यक्तित्व को अशांत करने का मार्ग खोल दिया है। अब भी अभावों से ग्रसित विशाल ग्रामीण जनसंख्या सुविधा सम्पन्न नगरीय जनसंख्या से कई दृष्टिकोणों से सुखी और संतुष्ट हैं। भारत ने अपनी लम्बी जीवन यात्रा में जन–मानस का एक ऐसा ढांचा बना दिया है, जो सहयोग और सहिष्णुता से जीवन–यापन करने में समर्थ है। प्राकृतिक आपदाओं से जूझने की अपार शक्ति भारतीय जनसमुदाय में है। लेकिन नगर आधारित आधुनिकता की भौतिकवादी चकाचौंध ने भारतीय जन–मानस में हीन भावना को सृजित कर अपार नुकसान पहुँचाया है। मानव संसाधन के साथ प्राकृतिक संसाधनों में धनी यह देश आज गरीबी, अशिक्षा और पिछड़ेपन का प्रतीक माना जाने लगा है।

पश्चिमी देशों की साजिश का शिकार भारत अपनी शक्ति को पहचानने से कतराने लगा है। यही कारण है कि भारत को निर्धन निवासियों का एक धनी राष्ट्र कहा जाता है। कुछ हद तक इस कथन में सत्यता अवश्य है लेकिन देखने का नजरिया पश्चिमी है। भारत की उर्वरा भूमि न केवल भारत के लिए अपितु अन्य देशों के लिए भी फसलोत्पादन में सक्षम है, लेकिन साधन की अनुपलब्धता, अव्यवस्था तथा अवैज्ञानिकता के कारण इसकी भूमि का उचित मात्रा में उपयोग नहीं किया जा रहा है। फलतः यहाँ की कृषि आधारित जनसंख्या विदेशी औद्योगिक जनसंख्या की तुलना में पिछड़ी अर्थव्यवस्था से ग्रसित है। कृषि पर भार इसलिए भी अधिक लगता है क्योंकि उत्पादन कम है। कृषि पर जनभार कम करने के समुचित उपाय नहीं किये जा रहे हैं क्योंकि उद्योगों का विकास पश्चिमी ढंग से होने के कारण श्रमशक्ति का उपयोग, यन्त्रों की अधिकता एवं उनके स्वचालित रूप के कारण कम है।

बढ़ती जनसंख्या पर नियन्त्रण भी नहीं हो पा रहा है, जिसके कारण उत्पादन एवं जनवृद्धि में उचित ताल–मेल नहीं है। भारत में उद्योगों के विकास के लिए खनिजों का भण्डार, कृषि उत्पाद, वनोत्पाद एवं जैविक उत्पाद पर्याप्त मात्रा में हैं। यहाँ 13 अरब टन उच्च कोटि का लौह–अयस्क, 10 करोड़ टन मैंगनीज, 2 करोड़ टन क्रोमाइट, 25 करोड़ टन तांबा, पर्याप्त अभ्रक आदि का भण्डार है। इसी प्रकार खाद्यान्नों के अतिरिक्त महत्त्वपूर्ण व्यापारिक फसलों का उत्पादन जैसे चाय, गन्ना, कपास, तम्बाकू, काफी, पटसन, तिलहन आदि पर्याप्त मात्रा में उत्पादित होते हैं, जो उद्योगों के लिए कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होते हैं। चमड़ा, लाख, बांस, घासें आदि भी उद्योगों के लिए आवश्यक कच्चा माल के रूप में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। फिर भी इनका उपयोग संतोषप्रद ढंग से नहीं हो पा रहा है।

भारत का जल संसाधन इतना विशाल है कि इसके उपयोग से मानव जीवन के उत्थान के लिए कारगर उपाय किये जा सकते हैं, लेकिन अब भी इसका उपयोग सीमित है। इस विशाल सम्पदा के कारण ही भारत को भविष्य का देश कहा जाता है क्योंकि तकनीकी विकास के बाद यह अपनी अपार भौतिक सम्पदा का उपयोग कर विश्व का महान देश बनने की स्थिति में है।

गाँवों की आधारभूत आवश्यकताएं शहरों के नजरिये से देखी जा रही हैं। कुछ सीमा तक कहा जा सकता है कि गाँवों की कीमत पर नगरों को विकसित किया जा रहा है। गाँवों की उपेक्षा–जन्य कठिनाइयां असहनीय हो रही हैं, जिसके कारण बड़ी मात्रा में ग्रामीणों का प्रवास नगरों की ओर हो रहा है, जिससे दोनों को नुकसान उठाना पड़ रहा है। गाँवों के पढ़े लिखे और कुशल लोग शहरों में बसते जा रहे हैं और नगरों की बढ़ती जनसंख्या मलिन बस्तियों का विस्तार कर रही हैं। हमारे बड़े नगर तेजी से बढ़ रहे हैं, जबकि छोटे नगर उपेक्षित पड़े हुए हैं। भारत की जीवन–पद्धति पर नगरीय संस्कृति का प्रभाव खुजली का काम कर रही है। विलासिता हमारे जीवन का लक्ष्य बनती जा रही है जिसके कारण बढ़ता असन्तोष अनेक कठिनाइयों को जन्म देने लगा है। भारत का जीवन–दर्शन अपने गुणों को खोकर नकलची बनता जा रहा है जो अनेक दुखों का कारण है। भारत की विविधता में एकता की भावना भी कमजोर पड़ने लगी हैं, जिसका प्रमाण उभरता क्षेत्रीयवाद और नक्सलवाद है। भारतीय सभ्यता और संस्कृति इसीलिये बहुमुखी है जो वाह्य सामग्री को आत्मसात करने में सदा सक्षम रही है।

3.5.4 भारत के भू–

ऐतिहासिक विरासत को भौगोलिक दृष्टिकोण से विवेचित करने के लिए छः प्रधान काल खण्डों में विभक्त किया जा सकता है

1. भारत भूमि का उद्‌भव।
2. भारत भूमि पर मानव का अभ्युदय।
3. पूर्व ऐतिहासिक कालीन भारत।
4. प्राचीन ऐतिहासिक कालीन भारत।
5. मध्य कालीन भारत।
6. आधुनिक कालीन भारत।

3.5.5 भारत भूमि का उद्‌भव

भारत के भौगोलिक स्वरूप का निर्माण तृतीय कल्प की विवर्तनिक घटनाओं से जुड़ा है। ज्ञात मान्यता के अनुसार उत्तर स्थित अंगारा लैण्ड और दक्षिण स्थित गोण्डवाना लैण्ड के मध्य उथला टेथीज सागर, जो एक सकरी भूसन्नति थी, का अवसाद इस युग में गतिमान दोनों भूखण्डों से दबकर मुड़ने लगा और अंततः हिमालय के रूप में विशाल प्राकृतिक दीवार का निर्माण हुआ। स्पष्ट है कि आज से लगभग 10 करोड़ वर्ष पूर्व भारत का अस्तित्व नहीं था। उसके बाद लगभग 10 करोड़ वर्ष की अवधि तक हिमालय के उत्थान की प्रक्रिया चलती रही जब यह उतुंग पर्वत का रूप धारण किया।

हिमालय ने गोण्डवाना लैण्ड के एक अवशिष्ट भाग को अपने अंक में लेकर एक अनूठे भूखण्ड को जन्म दिया जो भारतीय उपमहाद्वीप कहलाया। हिमालय के निर्माण के बाद आज से लगभग एक करोड़ वर्ष पूर्व प्लायोसीन युग में भारत का यह रूप हिमालय के पूर्ण उत्थान और शिवालिक के दक्षिण अवशेष भूसन्नति के उथले भाग में हिमालयी और पठारी भाग की नदियों के अवसाद निक्षेप से निर्मित मैदान के बाद बन सका। गोण्डवाना भूखण्ड का जो भाग विवर्तनिक क्रिया में टूटकर अलग हुआ वह प्रायद्वीप का रूप ग्रहण किया जिसे उत्तरी मैदान ने जोड़कर भारत का वर्तमान रूप निर्मित किया। स्पष्ट है कि लगभग 14 लाख वर्ष पूर्व भारत भूमि का वर्तमान रूप अस्तित्व में आया। इसी के बाद वृहद हिम युग का आगमन हुआ। इस प्रकार प्रकृति ने उत्तुंग हिमालय की ओट में एक ऐसे भौगोलिक भूखण्ड की रचना की जो विश्व में अपने प्रकार का अकेला प्रमाणित हुआ। इस अनूठे भूखण्ड की उपोष्ण जलवायु, उपजाऊ जलोढ़ मैदान और विभिन्न स्थल रूपों के कारण यह पौधों और पशुओं के अभ्युदय और विकास के लिये अनुकूलतम प्रखण्ड प्रमाणित हुआ। मैदान सहित इससे लगा पठार और उत्तरी पर्वतीय भाग भी वनाच्छादित हो गये। स्वभावतः नव–निर्मित भारतीय उप–महाद्वीप का प्रखण्ड प्राकृतिक आवास्य के दृष्टि से आदर्श प्रखण्ड बन गया जहाँ मानव सदृश्य जीवों का प्रथम आविर्भाव हुआ।

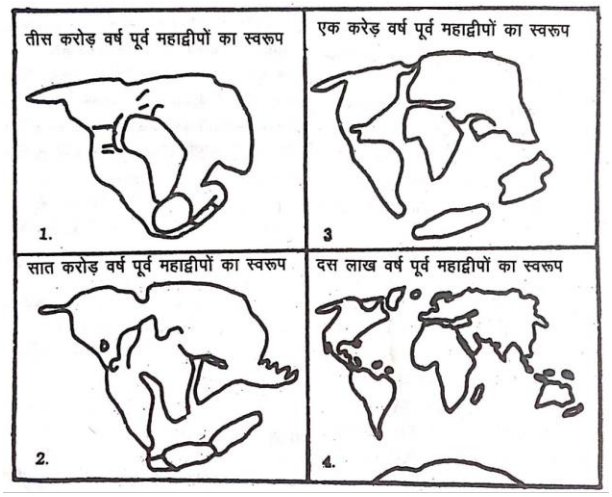

चित्र 3.3 भारत भूमि का उद्‌भव

3.5.6 भारत भूमि पर मानव का उद्‌भव–

शिवालिक क्षेत्र एवं पठारी भागों से प्राप्त जीवावशेष यह प्रमाणित करते हैं कि मानव सदृश्य जीवों का अभ्युदय आज से 10 लाख वर्ष पूर्व भारत–भूमि पर हो गया था। इस प्रकार यह अवधारणा अधिक तर्क संगत है कि पृथ्वी तल पर जहाँ कहीं अनुकूल भौतिक परिवेश उपलब्ध थे, वहाँ प्रथम मानव का अभ्युदय हुआ। इस संदर्भ में दो प्रकार के सिद्धान्त सामने आये हैं। प्रथमतः पश्चिमी विद्वानों की मान्यता के अनुसार सर्वप्रथम मानव का अभ्युदय मध्य एशिया में हुआ। कालान्तर में वहाँ की जलवायु शुष्क होती गई जिसके कारण कई चरणों में मध्य एशिया से मानव का स्थानान्तरण भोजन की खोज में विश्व के अन्य क्षेत्रों में हुआ। इसी क्रम में सर्वप्रथम भारत की तरफ निग्रीटों प्रजाति के लोग आये तथा यहीं बस गये जो कालान्तर में द्रविड़ कहलाए। इसके बाद कई अन्य प्रजातियों के लोग आए और सबसे अंत में नार्डिक प्रजाति के लोग उत्तरी–पश्चिमी पर्वतीय श्रृंखला लांघ कर भारत आए जो कालान्तर में आर्य प्रजाति के नाम से जाने गये। इसे एकल नाभिकीय परिकल्पना के नाम से जाना जाता है।

भारतीय और अनेक अन्य देशों के विद्वान इसे नकारने लगे हैं तथा इसके स्थान पर बहुनाभिकीय परिकल्पना पर जोर देने लगे हैं, क्योंकि अब तक आदि मानव के विश्वव्यापी प्रव्रजन के ठोस प्रमाण नहीं मिले हैं। दूसरी ओर विश्व के अनेक क्षेत्रों में मिलने वाले जीवावशेषों की खोज के द्वारा इस परिकल्पना को बल मिल रहा है कि आदि मानव का अभ्युदय किसी एक स्थान विशेष पर न होकर विश्व के कई अन्य क्रोड़ों में हुआ, जहाँ उपयुक्त प्राकृतिक आवास्य विकसित हुआ होगा।

यहाँ उल्लेख करना समीचीन है कि यह तथ्य सर्वमान्य है कि आज से लगभग 10 लाख वर्ष पूर्व पृथ्वी के एक वृहद भूखण्ड की जलवायु शीत प्रधान हो गई थी जिसे वृहद् हिमयुग के नाम से जाना जाता है। यह अवस्था लगभग 90 हजार वर्ष तक बनी रही। इस अवधि में चार बार हिम प्रभाव घटा और बढ़ा। भारत में हिमयुग का सर्वाधिक प्रभाव हिमालय सहित उत्तरी मैदान पर रहा होगा जहाँ निवसित मानव सदृश्य जीवों का महाविनाश हुआ। भारतीय पौराणिक अवधारणा के अनुसार मात्र 'मनु' इस महाविनाश से बच सके थे, जिन्हें आदि पुरुष कहा गया है। कालान्तर में 'मनु' का सम्पर्क 'श्रद्धा' और 'ईसा' से होने के बाद मानव की वंश परम्परा का पुनरुद्धार हुआ। अतः भारतवासी 'मनु' की संतान हैं। इस अवधारणा को भौगोलिक तथ्य सहयोग प्रदान करते हैं। हिम युगीन महासंहार से बचने वालों की संख्या निश्चित ही नगण्य रही होगी।

भारत की इस पौराणिक अवधारणा के सम्बन्ध में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विचार करने पर यह तथ्य प्रकट होता है कि जब हिमयुग का घातक प्रभाव भारत के उत्तरी भाग में शुरू हुआ तो यह स्वाभाविक है कि ठंड के महाविनाश से बचकर कुछ मानव समूहों का पलायन उत्तरी भाग से दक्षिण के पठारी भाग की ओर हुआ होगा जहाँ विषुवत रेखीय प्रभाव के कारण जलवायु अपेक्षाकृत गर्म थी, हालांकि धरातलीय विषमता के कारण पहले यह क्षेत्र उतना आकर्षक नहीं था। स्थानान्तरित हुए इन आदि मानव समूहों को हजारों वर्ष तक नये भौतिक परिवेष में रहना पड़ा जिसके कारण इनके शारीरिक लक्षणों और वंशानुगत गुणों में भौतिक–जैविक कारणों से परिवर्तन आता गया। निवास्य क्षेत्र की गुणवत्ता के अनुसार यह परिवर्तन असमान हुआ होगा। जो समुदाय पठारी भाग के मध्यवर्ती क्षेत्र में निवसित था, जहाँ तापमान लगभग सम था, वहां परिवर्तन मन्द गति से हुआ होगा जबकि दक्षिण में निवसित समुदायों में काफी बदलाव आया होगा, जहाँ तापमान ऊँचा था। रूप–रंग का यह परिवर्तन नैसर्गिक नियमों के अनुसार हुआ। ऊष्ण परिवेश के कारण शरीर का रंग काला, भूरा तथा शरीर के अन्य अंगों में भी बदलाव आया होगा। इसके विपरीत मध्यवर्ती सम तापमान में निवसित समाज का रंग गोरा या गेहुंआ और नाक–नक्श तीखे बने रहे होंगे। जब हिम युग का अवसान हुआ तो फिर क्षेत्रीय जलवायु में परिवर्तन आने लगा। उत्तरी मैदान में तापमान के अनुकूल होते ही पुनः सघन वनस्पतियों का विकास होने लगा होगा। परिणाम स्वरूप एक बार फिर यह क्षेत्र अनुकूल प्राकृतिक आवास्य में बदल गया। फलतः समीपवर्ती पठारी भाग के मानव समुदाय का ध्यान इस ओर सबसे पहले गया होगा, जिसके फलस्वरूप पठारी बाधाओं से निजात पाने के लिए मैदानी भाग की ओर इनका उत्तरवर्ती स्थानान्तरण हुआ होगा। चूँकि पठारी भाग में रहने के कारण उन्हें विविध प्रकार के पत्थरों के हथियार बनाने का ज्ञान हो चुका था, इसलिये ये पत्थरों के औजार बनाकर मैदानी भाग में कृषि और पशु पालन को विकसित करने में सफल हुए होंगे। इस अवस्था को पत्थर युग कहा जाता है। उत्तर भारत के कई क्षेत्रों में मिट्टी के नीचे दबे क्वार्ट्जाइट शैल के औजार पाये गये हैं, जो इस अवधारणा को पुष्ट करते हैं। उल्लेखनीय है कि पत्थर युग का

प्रादुर्भाव पठारी भाग में पहले हुआ जबकि उत्तर भारत के मैदानी भाग में इसका आगमन बाद में हुआ। प्रस्तर के औजारों के प्रयोग से उत्तर भारत की मुलायम एवं उपजाऊ मृदा में वर्षा आधारित कृषि और पशुपालन प्रगति करता गया।

जब लोहा, ताँबा आदि खनिजों का ज्ञान पठारी भाग के लोगों को हुआ तो वे उनके शोधन के बाद औजार निर्मित करने लगे। इन धातु के हथियारों का प्रयोग विविध रूपों में प्रचलित हुआ। इसे धातु युग के नाम से जाना जाता है। ईसा से 10,000 से 12,000 वर्ष पूर्व धातु युग का प्रारम्भ हो गया था, लेकिन धातु के औजारों का विकास और प्रयोग उत्तरी मैदानी भाग के मानव समुदाय में बाद में शुरू हुआ। धातु युग में प्रवेश करते ही उत्तरी मैदानी भाग के जन–समुदाय ने तीव्र गति से अपनी पहचान बनानी शुरू कर दी। उत्तर भारत के पश्चिमी भाग विशेषकर पंचनद क्षेत्र से लेकर समुद्र तट तक का समाज सांस्कृतिक प्रगति में तेजी से आगे बढ़ता गया क्योंकि उपजाऊ भूमि, अनुकूल जलवायु और अनेक सततवाहिनी नदियों का सहयोग प्राप्त था।

प्रगति की दौड़ में ऐसा न कर पाने वाला मानव समुदाय पिछड़ा रह गया। इस प्रकार उत्तर भारत के मैदानी भाग में निवसित विकसित समाज को प्रतिष्ठा सूचक शब्द लगाकर 'आर्य' कहने की परम्परा शुरू हुई, जबकि पिछड़े वर्ग को 'अनार्य' या द्रविड़ कहा जाने लगा। अतः आर्य भारत के मूल निवासी हैं न कि मध्य एशिया से आये लोग, जैसा कि पश्चिमी देशों के विद्वान मानते हैं। पश्चिमी देशों के विद्वानों की यह अवधारणा कि सिन्धु घाटी में पाये गये खण्डहर द्रविड़ प्रजाति के लोगों के अधिवास थे जिन्हें बाहर से आये आर्य प्रजाति के लोगों ने उजाड़ दिया और युद्ध में परास्त कर मैदानी भाग से पठारी भाग की ओर भगा दिया मालिक अवधारणा है। इसका कोई तार्किक प्रमाण नहीं है। वास्तविकता यह है कि प्राकृतिक उदारता से सम्पन्न उत्तरी मैदानी भाग, सिन्धुघाटी से गंगा घाटी तक विकसित वर्ग के लोगों द्वारा आबाद था जिन्हें आदर से आप कहा जाता था और इस प्रखण्ड को आर्यावर्त नाम दिया गया। इस उपजाऊ मैदानी भाग के लोग कृषि, पशुपालन, व्यापार और गृह उद्योग में निपुण हो गये थे और श्रेष्ठता के कारण आर्य कहलाये। इसके विपरीत विषम भौतिक परिवेशों में निर्वासित समाज पिछड़ जाने के कारण अनार्थ कहलाया न कि प्रजाति के विभेद के कारण। भारत की सैन्धव लिपि का विकास मानव समुदाय के दक्षिणवर्ती अवास्था में हुआ। जब उत्तरवर्ती प्रवास हुआ तो विकसित समाज ने सैन्धव लिपि में सुधार कर ब्राह्मी लिपि का सृजन किया। इसी से भारत की अन्य लिपियों का क्रमशः विकास होता गया। जैसे–जैसे आर्य वर्ग या विकसित वर्ग का प्रभाव वनवासियों या पिछड़े वर्ग पर बढ़ता गया वैसे–वैसे आर्यावर्त की सीमा बढ़ती गई।

इस विकसित समाज ने ईसा से पाँच से छ हजार वर्ष पूर्व अपने सामाजिक संगठन और आर्थिक विकास के कारण अपनी पहचान बना लिया था। इस युग को वैदिक काल के नाम से जाना जाता है। इसी समाज ने वेदों की रचना की थी। आर्यों की ख्याति सभी समीपवर्ती देशों में भी पहुँची, फलतः पश्चिमी एशिया विशेष कर दजला–फरात की घाटी में निवसित मानव समाज से इनका सीधा सम्पर्क हो गया, क्योंकि स्थल मार्ग सुलभ था। परिणाम स्वरूप वहाँ भी विकास की गति तीव्र हो गई। यह सिलसिला नील नदी की घाटी और हवांगहो की घाटी में निवसित समाज तक बन गया। समूचे भारतीय प्रखण्ड में प्रकृति पूजकों की प्रधानता थी। आर्यों के आदि आराध्य सूर्य देव थे, जबकि वनवासी द्रविड़ों के आराध्य पशुपतिनाथ अर्थात शिव थे। इस प्रकार भारत मानव अभ्युदय का आदि प्रखण्ड है और आर्य तथा अनार्य यहाँ के मूल निवासी हैं। क्षेत्रीय विविधता के कारण उनके रूप–रंग, सामाजिक व्यवस्था, रीति–रिवाज, अर्थतन्त्र कला तथा बोल–चाल में अन्तर आता गया।

लेकिन सांस्कृतिक विकास के मूल में वैदिक युगीन नैसर्गिक चिन्तन सतत् बना रहा। प्रकृति के उदारतापूर्ण परिवेश में विकसित आर्य संस्कृति विश्व चिन्तन आधारित हो गई जो वसुधैव कुटुम्बकम के रूप में प्रकट हुई, जबकि पश्चिमी और मध्य एशिया की विषम भौगोलिक परिवेश में जन्मी संस्कृति अतिवादी क्रिया–कलापों से ग्रसित थी। यही कारण है कि भारत की ख्याति से प्रभावित होकर सिकन्दर से लेकर पश्चिम (यूरोपीय समाज) और मध्य एशिया के लोग लगातार लूटते–सोटते रहे। जबरन राजसत्ता स्थापित करने वाले मुसलमान शासकों में कुछ ही लोगों को इसके नैसर्गिक चिन्तन का एहसास हो सका। सूफी संत और अकबर इसके अच्छे उदाहरण हैं।

3.5.7 पूर्व ऐतिहासिक कालीन भारत–

भारत के पूर्व ऐतिहासिक काल को दो काल खण्डों में विभक्त किया जा सकता है – (क) वैदिक काल और (ख) पौराणिक या महाकाव्य काल। इन दोनों युगों में भारतीय सभ्यता और संस्कृति के मूलभूत स्वरूप एवं क्षेत्रीय विस्तार में वैभिन्य का दर्शन होता है। वैदिक संस्कृति प्रकृति आधारित जनवादी संस्कृति के रूप में उदित हुई जबकि पौराणिक काल तक राजतंत्र का महत्त्व बढ़ गया था। फलतः वैदिक युग में स्वछन्द प्राकृतिक परिवेश में मानवोचित गुणों पर आधारित परम्पराओं का विकास हुआ। आधारी क्रिया–कलापों से जीवन–यापन करने वाला समाज बिना सामूहिक दायित्व के प्रगति नहीं कर पाता है। वैदिक काल में कुछ ऐसी ही स्थिति रही होगी। वेदों की रचना भी सामूहिक चिन्तन पर आधारित बतायी जाती है। यही कारण है कि इनकी परिधि में सम्पूर्ण समाज सन्निहित रहा होगा लेकिन चिन्तन और प्रयोग की स्वतन्त्रता रही होगी जिसके कारण वैदिक युग की देन आज भी प्रासंगिक मानी जाती है। इसके विपरीत पौराणिक कालीन राजतंत्रीय व्यवस्था में राजा और प्रजा की अवधारणा से सामाजिक संगठन और चिन्तन पद्धति में अन्तर आया होगा। यदि राजा प्रतापी, न्यायी, प्रजापालक और सद्‌गुणों से परिपूर्ण हुआ तो समाज तेजी से अग्रसर हुआ और न होने पर अधोमुखी भी हुआ।

वैदिक कालीन भारत–

वैदिक काल का प्रारम्भ आज से लगभग छः हजार वर्ष पूर्व माना जाता है जब पश्चिमोत्तर मैदान का भौतिक परिवेश सर्वाधिक अनुकूल था। जलवायु, मृदा और नदियों की उपस्थिति के कारण इस सम्भाग के लोग अधिक प्रगतिशील हो गये। फलतः अर्थतंत्र के साथ सामाजिक संगठन, साहित्य, कला आदि में अधिक निपुणता प्राप्त हुई। यहाँ ज्ञान–विज्ञान का भी समुचित विकास हुआ। इन्हीं विकसित लोगों के द्वारा वेदों की रचना की गई, जिसकी ख्याति न केवल आर्यावर्त में फैली, अपितु एशिया के अन्य विकसित समाज के लिए भी यह आकर्षण का कारण बन गया। इसके परिणाम स्वरूप जीवन पद्धति और इनके द्वारा विकसित तकनीकों का विस्तार आर्यावर्त की सीमा लाँघ कर देश के अन्य क्षेत्रों के साथ एशिया के पश्चिमी भाग में भी हुआ जिससे मेसोपोटामिया का समाज भी अपनी विकास प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में सफल हुआ। यह अज्ञात है कि वैदिक काल के पूर्व भारत को किस नाम से जाना जाता था परन्तु वैदिक ग्रंथों के अनुसार सप्त सिन्धु (वर्तमान सिन्धु नदी का मैदान) नामक प्रदेश पर आर्यों का आधिपत्य था जिसे आर्यावर्त कहा जाता था। बाद में पंचनद प्रदेश, जो बाद में पंचाम्बु कहलाने लगा और अब इसे पंजाब के नाम से जाना जाता है। आर्यों के अधिकार में क्षेत्र में जब गंगा–यमुना का मैदान आया तो इसे महर्षि देश का नाम दिया गया। कालान्तर में आर्यावर्त का विस्तार होता गया। भारतवर्ष नामकरण के लिए दो प्रसंग प्रस्तुत किये जाते हैं। एक विचारधारा के अनुसार आर्यों की एक शाखा जिसके मुखिया भरत थे उन्होंने आर्यों और अनार्यों को एक झण्डे के तले एकत्र किया, जिसके आधार पर शासित प्रदेश भारत कहलाया। दूसरी जनश्रुति के अनुसार आर्य योद्धा दुष्यन्त एवं शकुन्तला के चक्रवर्ती पुत्र सम्राट भरत के नाम पर यह देश भारतवर्ष कहा जाने लग। अस्तु हिमालय से दक्षिण समुद्र तक सम्पूर्ण क्षेत्र को 'भारत' की संज्ञा से विभूषित किया जाने लगा। विष्णु पुराण के अनुसार – उत्तरंयत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चौव दक्षिणम्। वर्ष तत् भारत नाम, भारती यत्र सन्ततिः।। हिमालय से लेकर समुद्र तक का वर्ष (भाग) भारत वर्ष है तथा यहाँ के निवासी भारतीय हैं।

हिन्दुस्तान नामकरण के लिये अरब के लोगों को उत्तरदायी बताया जाता है जो सिन्धु की घाटी में बसने वाले आर्यों के सम्पर्क में आये। उच्चारण में उनके द्वारा 'स' के स्थान पर 'ह' कहने के कारण सिन्धु 'हिन्दु' और फिर हिन्दुस्तान शब्द भारतवर्ष के लिये प्रयोग किया जाने लगा। बाद में यूनानियों द्वारा सिन्धु को इन्डस कहने के कारण भारतवर्ष इण्डिया कहा जाने लगा। इस प्रकार भारत अपनी प्राचीनता और नवीनता को समेटे विश्व का एक विलक्षण देश है, जिसकी विशेषतायें अन्यत्र मिलना कठिन है।

भारत में प्राचीन सभ्यता के केन्द्रों के अवलोकन से स्पष्ट है कि सिन्धु घाटी से दक्षिण में समुद्र तट तक तथा मध्य गंगा के मैदान तक इन आर्य कहे जाने वाले लोगों का प्रसार हो गया था। लेकिन श्रेष्ठता में सिन्धु घाटी का समाज अग्रणी था क्योंकि भौतिक परिवेश की अनुकूलता के कारण वहाँ विकास कार्य आसान था। सामाजिक व्यवस्था में सुदृढ़ता के लिए श्रम आधारित वर्ण व्यवस्था का अभ्युदय वैदिक काल में हुआ।

बढ़ती जनसंख्या, जलवायु में परिवर्तन विशेषकर सूखा तथा बाढ़ के कारण, सिन्धु घाटी के लोगों का स्थानान्तरण गंगा की घाटी की ओर होने लगा। इसी क्रम में वर्ण व्यवस्था दृढ़ होती गई क्योंकि नये क्षेत्र को विकसित करने के लिये इसकी अधिक आवश्यकता थी। फलतः श्रम आधारित वर्ण व्यवस्था का प्राधान्य आर्य संस्कृति का आधार बन गया। रक्षा, ज्ञान, अर्थ और सेवा सामाजिक व्यवस्था के आधारी पक्ष बन गये। रक्षा कार्य में संलग्न के ज्ञात केंद्र समुदाय को क्षत्रिय, ज्ञान–विज्ञान के अध्येयताओं को ब्राह्मण, कृषि और व्यापार में संलग्न समाज को वैश्य और सेवारत लोगों को सेवक (शूद्र) कहा गया। इसी प्रकार ब्राह्मण अपने परिवारजनों को पण्डित बनाने और वैश्य निपुण अर्थतन्त्री बनाने में जुट गये। जो उपरोक्त कार्यों में निपुण न बन सके वे सेवक बनकर जीवन–यापन करने लगे। इस प्रकार चारों वर्गों या वर्गों के लोगों की सामाजिक व्यवस्था यहाँ की संस्कृति की आधार बन गई।

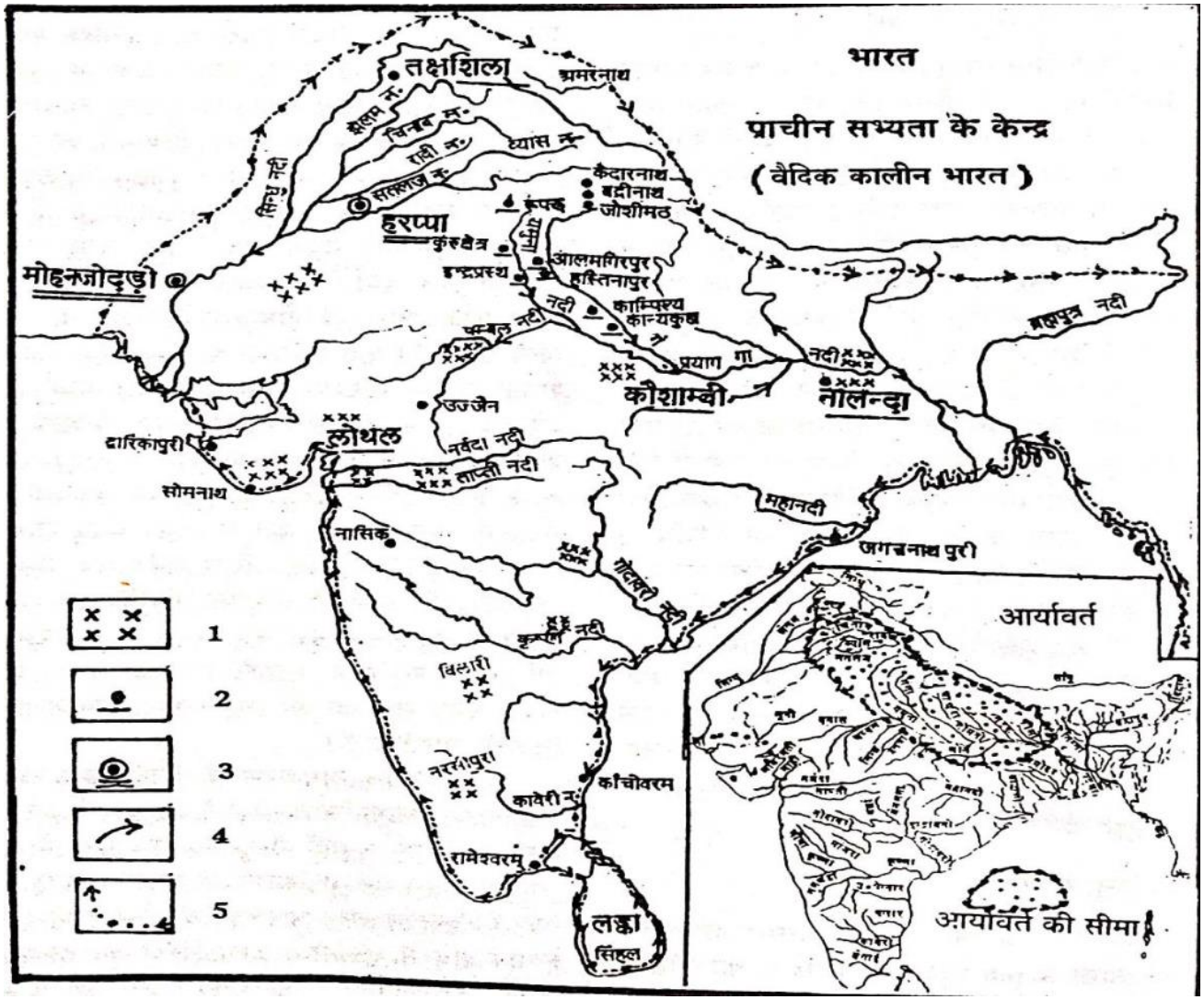

चित्र 3.4 भारत में प्राचीन सभ्यता

क्षत्रिय वर्ग के लोग अपनी शूर–वीरता के बल पर रक्षक और प्रशासक बन गये और अपने प्रभुत्व को बनाये रखने के लिये राजधानी अधिवासों और सुरक्षा केन्द्रों की स्थापना करने लगे। हड़प्पा, मोहन जोदड़ों, लोथल कालीबंगा आदि ऐसे ही अधिवास रहे होंगे जो इंगित करते हैं कि वैदिक युग में नगर रचना की कला और तकनीक आर्य संस्कृति की देन है (चित्र 1.4)। पश्चिम के विद्वान भी इससे सहमत हैं कि नगर रचना का प्रारम्भ भारत से हुआ। ऐसे अधिवासों की रचना पश्चिमोत्तर मैदानी प्रखण्ड में अधिक विकसित हुई जहाँ कला और संस्कृति में निपुण जनसंख्या का बाहुल्य था। लेकिन गंगा मैदान में भी ऐसे अधिवास अस्तित्व में आ चुके थे। इस युग में कृषि, पशुपालन, कुटीर उद्योग और व्यापार की उन्नति के लिए भारत की ख्याति दूर–दूर तक पहुँचने लगी थी।

उल्लेखनीय है कि अनेकानेक कारणों से वैदिक संस्कृति के सम्बन्ध में पश्चिमी देशों के विद्वानों ने हर स्तर पर भ्रम पैदा करने का जाने–अनजाने प्रयास किया, ऐसी विचारधारा का अधिक प्रचार ब्रितानी युग में अधिक हुआ। शासक होने के कारण उनका प्रयास भारत के अतीत को यथासम्भव धुंधला प्रमाणित कर अपनी श्रेष्ठता को बनाये रखना था।

पौराणिक या महाकाव्य काल–

इसे उत्तर वैदिक काल भी कहा जाता है। यह युग भारत के पूर्व ऐतिहासक काल का शिखर बिन्दु कहा जाता है जब आर्यों और अनार्यों के मध्य निकटता का सम्बन्ध शुरू हुआ। सूर्य उपासक क्षत्रिय वर्ग के उत्कर्ष के साथ आर्यावर्त के प्रभुत्व का केन्द्र सूर्यवंशी राजाओं की राजधानी समुदाय को क्षत्रिय, ज्ञान–विज्ञान के अध्येयताओं को ब्राह्मण, कृषि और व्यापार में संलग्न समाज को वैश्य और सेवारत लोगों को सेवक (शूद्र) कहा गया। यह कार्य आधारित सामाजिक संगठन वैदिक युग में शुरू हुआ और अन्तिम वैदिक काल तक यह जन्म आधारित बन गया क्योंकि क्षत्रिय परिवारों में जन्में व्यक्ति को शूर–वीर बनने की शिक्षा घर–परिवार से शुरू हो गई थी। इसी प्रकार ब्राह्मण अपने परिवारजनों को पण्डित बनाने और वैश्य निपुण अर्थतन्त्री बनाने में जुट गये। जो उपरोक्त कार्यों में निपुण न बन सके वे सेवक बनकर जीवन–यापन करने लगे। इस प्रकार चारों वर्गों या वर्गों के लोगों की सामाजिक व्यवस्था यहाँ की संस्कृति की आधार बन गई।

क्षत्रिय वर्ग के लोग अपनी शूर–वीरता के बल पर रक्षक और प्रशासक बन गये और अपने प्रभुत्व को बनाये रखने के लिये राजधानी अधिवासों और सुरक्षा केन्द्रों की स्थापना करने लगे। हडप्पा, मोहनजोदड़ों, लोथल कालीवंगा आदि ऐसे ही अधिवास रहे होंगे जो इंगित करते हैं कि वैदिक युग में नगर रचना की कला और तकनीक आर्य संस्कृति की देन है। पश्चिम के विद्वान भी इससे सहमत हैं कि नगर रचना का प्रारम्भ भारत से हुआ। ऐसे अधिवासों की रचना पश्चिमोत्तर मैदानी प्रखण्ड में अधिक विकसित हुई जहाँ कला और संस्कृति में निपुण जनसंख्या का बाहुल्य था। लेकिन गंगा मैदान में भी ऐसे अधिवास अस्तित्व में आ चुके थे। इस युग में कृषि, पशुपालन, कुटीर उद्योग और व्यापार की उन्नति के लिए भारत की ख्याति दूर–दूर तक पहुँचने लगी थी। उल्लेखनीय है कि अनेकानेक कारणों से वैदिक संस्कृति के सम्बन्ध में पश्चिमी देशों के विद्वानों ने हर स्तर पर भ्रम पैदा करने का जाने–अन्जाने प्रयास किया, ऐसी विचारधारा का अधिक प्रचार ब्रितानी युग में अधिक हुआ। शासक होने के कारण उनका प्रयास भारत के अतीत को यथासम्भव धुंधला प्रमाणित कर अपनी श्रेष्ठता को बनाये रखना था।

इसे उत्तर वैदिक काल भी कहा जाता है। यह युग भारत के पूर्व ऐतिहासक काल का शिखर बिन्दु कहा जाता है जब आर्यों और अनार्यों के मध्य निकटता का सम्बन्ध शुरू हुआ। सूर्य उपासक क्षत्रिय वर्ग के उत्कर्ष के साथ आर्यावर्त के प्रभुत्व का केन्द्र सूर्यवंशी राजाओं की राजधानी अयोध्या नगर बना जो नगर रचना और प्रशासनतंत्र में अद्वितीय था। सूर्यवंशी राजाओं की कार्य कुशलता और सामाजिक संगठन के कारण आर्यावर्त भारत के रूप में उदित हुआ हालांकि इस युग में भारत का अधिकांश भाग 'नगर राज्यों', की अवस्था में पहुंच गया था।

इस प्रकार यूनान से हजारों वर्ष पूर्व भारत में 'नगर राज्य' की अवधारणा साकार हो चुकी थी। इस काल खण्ड में भारत अनेक नगर राज्यों में बटा हुआ था जिसमें अयोध्या, कौशल, विदेह, प्राध्य, बंग, मगध, अंग, पंचाल, वत्स, मत्स्य, चेदि, परिपथ, ऋक्ष, कुरु, ब्रम्हवर्त, सप्तसिंधव, कैकैय, आवर्त, दण्डक, विदर्भ दक्षिणापथ, महेन्द्र, किष्किन्धा और सुक्तिमान विशेष उल्लेखनीय हैं। उत्तर भारत में आय के अतिरिक्त अनार्यों के नगर राज्य भी अस्तित्व में आ चुके थे, विशेषकर पूर्वी और दक्षिणी भाग में। प्रायद्वीपीय भाग में अनार्यों की प्रधानता थी। यह भी उल्लेखनीय है कि पठारी भाग के दुरुह भौतिक परिवेश के कारण ऐसे नगर राज्यों की संख्या कम थी।

सूर्यवंशी राजाओं के पराभव के बाद गंगा की ऊपरी घाटी में चन्द्रवंशी क्षत्रिय राजाओं का प्रभुत्व बढ़ गया और सत्ता का केन्द्र अयोध्या से खिसक कर हस्तिनापुर और इन्द्रप्रस्थ में स्थापित हो गया। कालान्तर में यदुवंशियों के उत्कर्ष के साथ मथुरा की शक्ति द्वारिका में स्थानान्तरित हो गई क्योंकि मगध नरेश जरासंध का भय निरन्तर बना हुआ था। कौरव, पाण्डव और यदुवंशियों के त्रिकोण में महाभारत युद्ध ने इतना संहार कराया कि भारत का उत्तरी भाग लगभग एक हजार वर्ष तक छिन्न–भिन्न हो गया क्रोड़ क्षेत्र वह क्षेत्र होता है जिसके क्रम में राज्य का विस्तार होता है और उसका आकर्षण सतत् बना रहता है। सभ्यता के शुरूआत में इस मैदानी भाग का जो आकर्षण शुरू हुआ वह सतत बना रहा। यही कारण है कि महाभारत युद्ध के बाद जो अव्यवस्था शुरू हुई उसका भयावह रूप गौतम बुद्ध और महावीर को देखने को मिला। इन दोनों का सारा जीवन इस कोड़ को संतुलित करने में बीत गया। भारत का इतिहास इस मैदान के इर्द–गिर्द हमेशा केन्द्रित रहा है।

चित्र 3.5 महाकाव्य कालीन भारत

एकजुट होने का सबक सिखा दिया, जिसके फलस्वरूप चन्द्रगुप्त ने राष्ट्रीयता का जो अभियान शुरू किया उसे सम्राट अशोक ने साकार किया। अशोक ने न केवल सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में पिरोया अपितु अफगानिस्तान को भी भारत का अंग बना दिया। यह भी उल्लेखनीय है कि बौद्ध धर्म की शिक्षाओं के आधार पर सम्राट अशोक ने एक जनवादी राष्ट्र बनाने का प्रयास किया। यहाँ तक आते–आते भारत की आर्य संस्कृति के श्रेष्ठ गुणों का विस्तार दक्षिणी छोर तक हुआ। अब भारतीय संस्कृति मानव मूल्यों पर आधारित हो गई जिसके कारण अगड़ा और पिछड़ा का भेद सिमटने लगा क्योंकि दया, करुणा, स्नेह, सहकार, त्याग, निग्रह आदि जीवन के आधारी पक्ष बन गये। भारतीय संस्कृति इस काल खण्ड (273–232 ई० पू०) में विश्व की श्रेष्ठतम संस्कृति बन गई।

भारत के विद्यापीठ ज्ञान–विज्ञान के पुरोधा बन गये जहाँ अन्य देशों के लोग विद्या अध्ययन के लिए आने लगे। सारे देश में अशोक ने शिलालेखों के माध्यम से बौद्ध धर्म की शिक्षाओं का जन–जन में प्रचार–प्रसार किया। वे इतना मानवतावादी हुए कि अपने पुत्र–पुत्री को भी भारतीय संस्कृति और धर्म के प्रचार के लिये समीपवर्ती देशों में भेजा। सम्राट अशोक भारत के एक मात्र ऐसे शासक हैं जिन्होंने भारत के भौगोलिक व्यक्तित्व को शिखर बिन्दु तक पहुँचाया। फलतः अशोक को प्रियदर्शी सम्राट के रूप में याद किया जाने लगे। विविधतापूर्ण भारत को एक सूत्रता का आभास इसी युग में हुआ। बौद्ध धर्म के विस्तार के साथ भारत, एशिया, अफ्रीका एवं यूरोप में श्रेष्ठतम ज्ञान, विज्ञान, वाणिज्य, कृषि, गृह उद्योग, कला और साहित्य का अगुआ बन गया। इसी युग में भारत खगोलशास्त्र, स्वास्थ्य विज्ञान एवं चिकित्सा विज्ञान में इतना निपुण हुआ कि इसके नालन्दा, तक्षशिला आदि विद्यापीठ विश्व विख्यात हो गये। इस प्रकार मौर्य कालीन भारत की सत्ता पाटलिपुत्र में केन्द्रित थी लेकिन देश भर में राजनीतिक, शैक्षिक और प्रशासनिक केन्द्रों की श्रृंखला विकसित की गई जिससे भारत अपनी पहचान बनाने में सफल हुआ। राष्ट्रीय सीमाओं को लांघ कर विश्व बन्धुत्व को चरितार्थ करने के लिए उसने समीपवर्ती देशों को अपनी संस्कृति के माध्यम से सहयोगी बनाया न कि उपनिवेश बनाकर। यही कारण है कि उस काल खण्ड में पूर्वी, दक्षिणी–पूर्वी, पश्चिमी और मध्यवर्ती एशिया भारतीय वांग्मय के अंग बन गये और उस युग का प्रभाव आज भी वहाँ बना हुआ है जबकि भारत से बौद्ध धर्म और करूणा आधारित मानव मूल्य लगभग समाप्त सा हो गया है। मौर्य वंश की घटती प्रभुता और सम्राट अशोक की मृत्यु के बाद भारत की अर्जित ख्याति अधोमुख होने लगी। फलतः 185 ई० पूर्व मौर्य वंश पूर्णतः समाप्त हो गया और उसके सेनापति पुष्पमित्र ने अन्तिम मौर्य राजा वृहद्रथ को मार कर शुंग शासन की स्थापना की। भारत फिर शुंग– वंशीय, कण्ववंशीय और सातवाहन वंशीय प्रखण्डों में विखरकर शक्तिहीन हो गया। अशोक की राजनीतिक पटुता के कारण यूनान, फारस, तुर्की आदि देश मित्र बन गये थे और वहाँ से वाणिज्य और सांस्कृतिक आदान–प्रदान की व्यवस्था स्थापित हो गई थी, लेकिन कालान्तर में वे भी शत्रुवत व्यवहार करने लगे। फलतः, वाह्य जातियों का आक्रमण और लूट–पाट लगातार बढ़ने लगा।

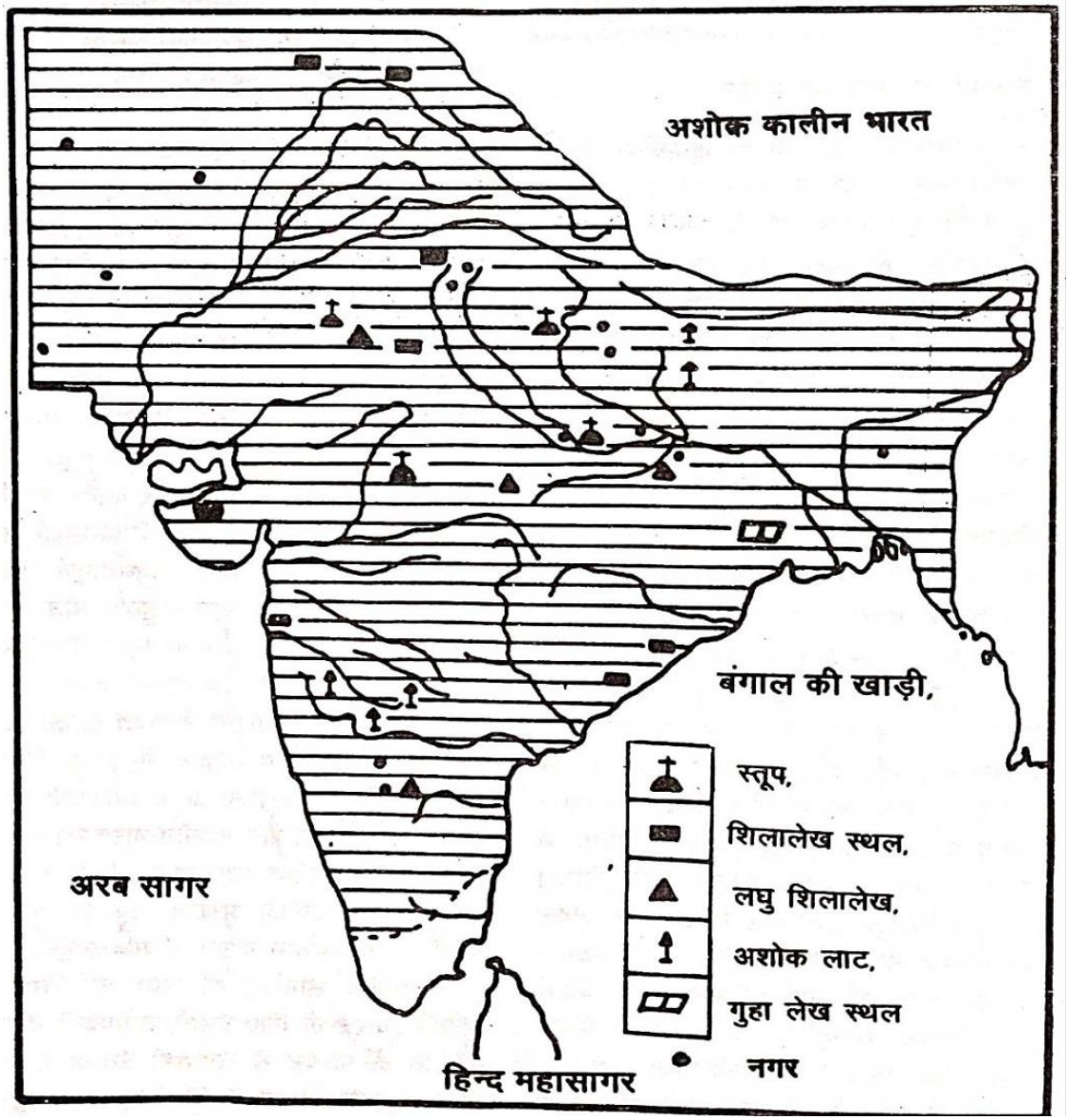

चित्र 3.6 अशोक कालीन भारत

भारत पर 305 ई० पू० यवन आक्रमण की अगुआई सिकन्दर की मृत्यु के बाद उसका सेनापति सेल्युकस ने किया और बाद में शक, क्षत्रप, हूंण आदि लगातार आक्रमण करने लगे। चीन की यूहची जाति कुषाण के नाम से भारत में प्रथम शताब्दी में प्रवेश की और इसका प्रतापी शासक कनिष्क (78–123 ई०पू०) विशाल भू–भाग को हथियाने में सफल हुआ। उसने पेशावर को अपनी राजधानी बनाया लेकिन बौद्ध धर्म का अनुयायी बनकर वह भारत का अभिन्न अंग बन गया। उसके राज्य में पश्चिमोत्तर भारत सहित मध्य गंगा घाटी भी आ गई थी। लेकिन तीसरी शताब्दी तक कुषाण साम्राज्य के अवसान से फिर भारत टुकड़ों में बँट गया और स्वतंत्र राजवंश आपस में टकराने लगे। अनेक शताब्दियों तक आर्य और द्रविड़ संस्कृति के मेल–मिलाप के कारण भारत के चिन्तन का आधार शौर्य, पराक्रम और प्राकृतिक संसाधन दोहन थे। दक्षिण भारत के पल्लव, पाण्ड्य, चोल और चेर आदि राजवंशों की श्रेष्ठता उत्तर भारतीय गणराज्यों से कम न थी। भारत पर बढ़ते वाह्य आक्रमणों को रोकने के लिए एक शक्तिशाली राष्ट्र की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा था जो छोटे राज्यों की शक्ति को महाशक्ति बना सके। ऐसी दशा में गुप्त वंश की अगुआई प्रारम्भ हुई। चन्द्रगुप्त प्रथम (319–335 ई०) उत्तर भारत के गणराज्यों को एकाकार किया और उसके पुत्र समुद्र गुप्त ने दक्षिण भारत को भी एक सूत्र में ला दिया। इस राजवंश का प्रतापी शासक विक्रमादित्य (375–413 ई०) भारत का एक ऐसा शासक बना जिसने भारत की गरिमा को नई ऊँचाई तक पहुँचाया।

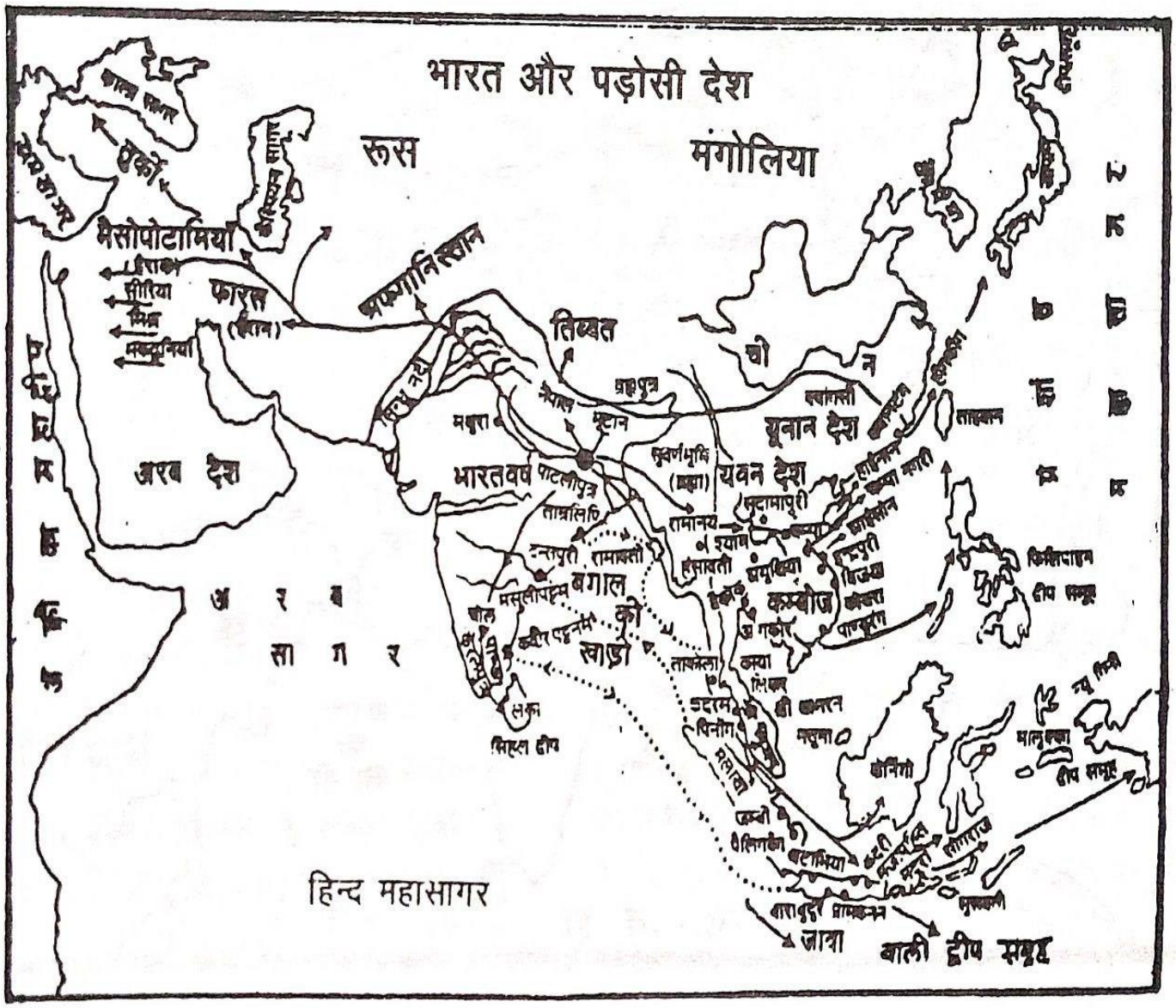

चित्र 3.7 भारत का पड़ोसी देशों पर प्रभाव

भारत एक बार फिर गौरवमय राष्ट्र बन गया। विक्रमादित्य के शासन काल में चीनी यात्री फाह्यान आया था जिसने भारत की उन्नति की चर्चा को अपने संस्मरण में उद्धृत किया है। गुप्त काल में मध्य एशिया के कबायली हूण इतने शक्तिशाली हुए कि उन्होंने पश्चिमी एशिया सहित भारत को भी शिकार बनाया और आक्रमण का यह क्रम 540 ई० तक चलता रहा। एक के बाद एक हूण सरदार आये और गये लेकिन कोई भारत में व्यवस्थित न हो सका। इसी काल खण्ड में वर्धन वंश का पराक्रम बढ़ गया जो 606 ई० में थानेश्वर में राजधानी स्थापित कर वाह्य आक्रमणों को रोकने में जुट गया। उस समय उत्तर भारत कई टुकड़ों में बिखर चुका था। प्रतापी राजा हर्षवर्धन ने फिर एक बार भारत को एकसूत्र में बाँधने का प्रयास किया और सातवीं शताब्दी में नेपाल से नर्मदा तक तथा पंजाब से बंगाल तक का भाग उसके शासन के अधीन हो गया। लेकिन नर्मदा के दक्षिण चालुक्य, महाकौशल और पल्लव केवल उसकी अधीनता स्वीकार कर स्वतंत्र राज्य बने रहे। चीनी यात्री ह्वेनसांग, हर्षवर्धन के शासन काल में भारत आया था। उसने हर्ष के शासन काल की उपलब्धियों की प्रशंसा अपने संस्मरण में किया है। सन् 647 ई० में हर्ष की मृत्यु के बाद भारत में फिर राजनीतिक अराजकता फैल गई जिसका लाभ उठाकर मध्य एशिया के कबायली सरदार भारत पर आक्रमण करने लगे। मध्य एशिया में इसी काल खण्ड में एक ऐसी घटना हुई जिसने समूचे विश्व को प्रभावित किया

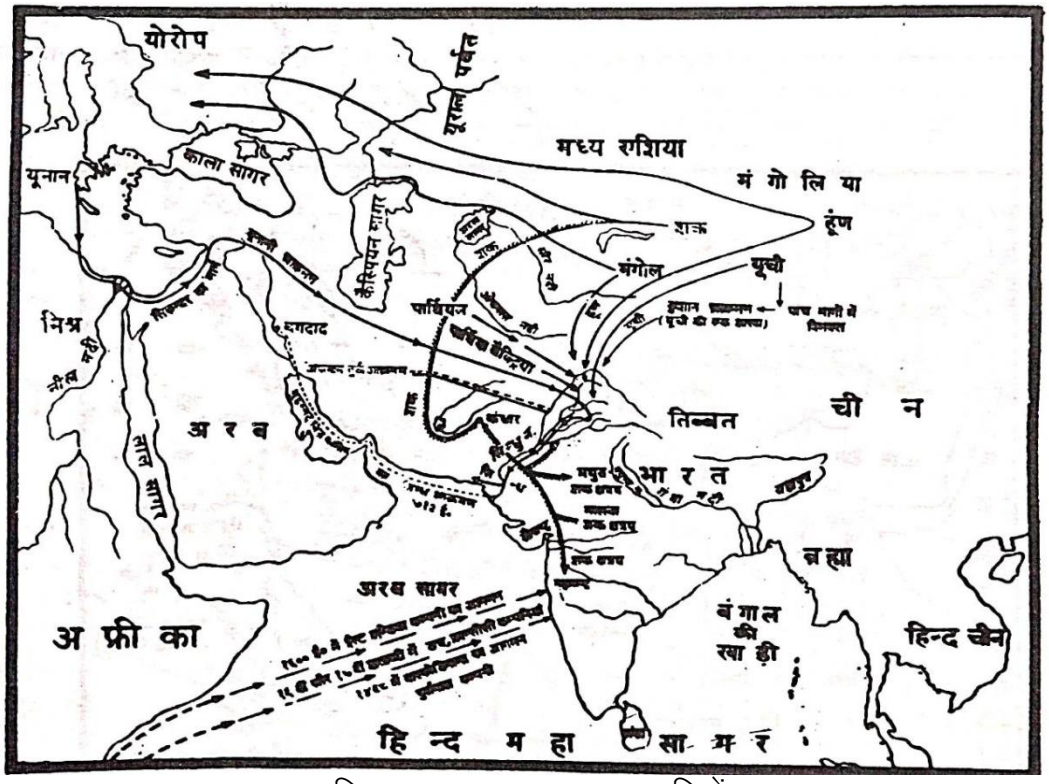

चित्र 3.8 भारत पर बाह्य जातियों का आक्रमण

और उसका प्रभाव आज तक बना हुआ है। भारत भी इससे प्रभावित हुआ। 610 ई० में हजरत मोहम्मद द्वारा इस्लाम धर्म की नींव डालने के साथ पश्चिमी एशिया में बलात धर्म परिवर्तन शुरू हुआ, जिसके फलस्वरूप अफगानिस्तान से लेकर यूरोप तक तथा अफ्रीका से लेकर भारत तक इस्लाम धर्म व्याप्त हो गया, जिसने बिखरे कबीलों को एक सूत्र में बाँध दिया। इन्हीं इस्लामी कबायली सरदारों के आक्रमणों और भारत में उनके शासन की स्थापना के साथ भारत की गुलामी का दौर शुरू हुआ। इस प्रकार 10वीं शताब्दी से लेकर 17वीं शताब्दी तक मुसलमानों और उसके बाद यूरोपीय आधिपत्य में रहने के कारण भारत में एक मिश्रित संस्कृति ने अपना स्थान बना लिया।

3.5.8 मध्यकालीन भारत–

भारत पर महमूद गजनवी, बलबन, खिलजी, तैमूरलंग, लोदी और बाबर के आक्रमण और लूटपाट से उत्तर भारत के सबसे अधिक प्रभावित हुआ। भारत की रियासतें धीरे–धीरे कमजोर होती गई और उत्तर भारत पर मुहम्मद गोरी के आक्रमण के बाद उसका दास कुतुबुद्दीन ऐबक ने उत्तर भारत को अपने अधिकार में लेकर गुलाम वंश की नींव डाली। इस वंशावली में इल्तुतमिस और रजिया ने अपने राज्य का विस्तार किया। इस युग में भारत हिन्दुस्तान कहलाने लगा क्योंकि मुसलमान शासक भारतीयों को इसी नाम से पुकारते थे।

बलबन (1226–1286 ई०) अलाउद्दीन खिलजी (1526–30 ई०) और शेरशाह सूरी (1540–45 ई०) ऐसे मुसलमान शासक थे जिनका भारत भूमि से गहरा सम्बन्ध था। शेरशाह सूरी इनमें सबसे अच्छा शासक प्रमाणित हुआ क्योंकि उसकी गुलामी का अन्दाज विकास आधारित था। जब 1526 में बाबर का आक्रमण हुआ उस समय भारत अनेक टुकड़ों में विभक्त था। उत्तर भारत पर लोदी वंश का अधिकार था। पानीपत के युद्ध के बाद उसका मन्सूबा बढ़ा और 1530 तक उसने उत्तर भारत सहित दक्षिण के विस्तृत भूखण्ड को अपने अधिकार में कर मुगल वंश की स्थापना करने में सफल हुआ।

इस वंश परम्परा में अकबर एक ऐसा शासक प्रमाणित हुआ जिसने अपने को भारत से जोड़ने का हर सम्भव प्रयास किया। कम आयु में गद्दी संभालने के बावजूद अपने गुणों के कारण जहाँ एक ओर उसने अपने रण–कौशल के कारण भारतीय रियासतों को मिलाकर भारत का नया स्वरूप निर्मित किया। वहीं हिन्दू–मुसलमान के भेद को मिटाने और प्रजा के हित में विकास कार्य बढ़ाने का प्रयास किया। इस प्रकार 16वीं से लेकर 17वीं सदी तक फिर

एक बार भारत अपना राष्ट्रीय रूप बनाने में सफल हुआ। इस समय अफगानिस्तान भी भारत का अंग बन गया था।

3.5.9 आधुनिक कालीन भारत–

भारत की आधुनिक भू–ऐतिहासिक परिघटनाएँ विसंगतियों से परिपूर्ण रही हैं। मध्य युगीन परतन्त्रता ने भारतीय संस्कृति को इतना सहनशील बना दिया कि आधुनिक काल में कायरतापूर्ण निर्णयों के कारण भारत अधोमुखी होता चला गया। भारत की सम्पदा इसकी सबसे बड़ी शत्रु बन गई। मुसलमानी आधिपत्य से अभी छुटकारा नहीं मिला था, और देशी रियासतों का कोई चतुर राजनेता अभी अगुआई के लिए अपनी पहचान नहीं बना पाया था, कि यूरोपीय सौदागरों की आवाजाही शुरू हो गई। भारत में अन्तिम मुगल शासक बहादुर शाह अपना प्रभुत्व खो चुके थे। वास्तव में औरगजेब की अतिवादी नीति के कारण हिन्दू और मुसलमानों के बीच की सहिष्णुता संदिग्ध होने के कारण भारत की शक्ति तेजी से नष्ट होने लगी थी। फलतः मुगल कालीन हिन्दुस्तान टुकड़ों में विभक्त होकर यूरोपीय सौदागरों के लिए अनुकूल परिस्थिति का निर्माण कर दिया। 1740 ई० तक पंजाब, अफगानिस्तान, मराठवाड़ा, निजामशाही और मैसूर की रियासतें हिन्दुस्तान के आधे भाग पर आबाद थी। शिवाजी के नेतृत्व ने मराठा राज्य को विस्तृत जरूर किया गया लेकिन मुगल शासक जहाँगीर के समय से सक्रिय ब्रितानी व्यापारियों के कारखाने 1619 ई० तक सूरत, आगरा, अहमदाबाद और भड़ौच में स्थापित हो चुके थे और 1640 में मद्रास (चेन्नई) में एक किला का निर्माण भी किया गया। यह सारा क्रिया–कलाप 1600 में स्थापित ईस्ट कम्पनी के निर्देशन में हो रहा था।

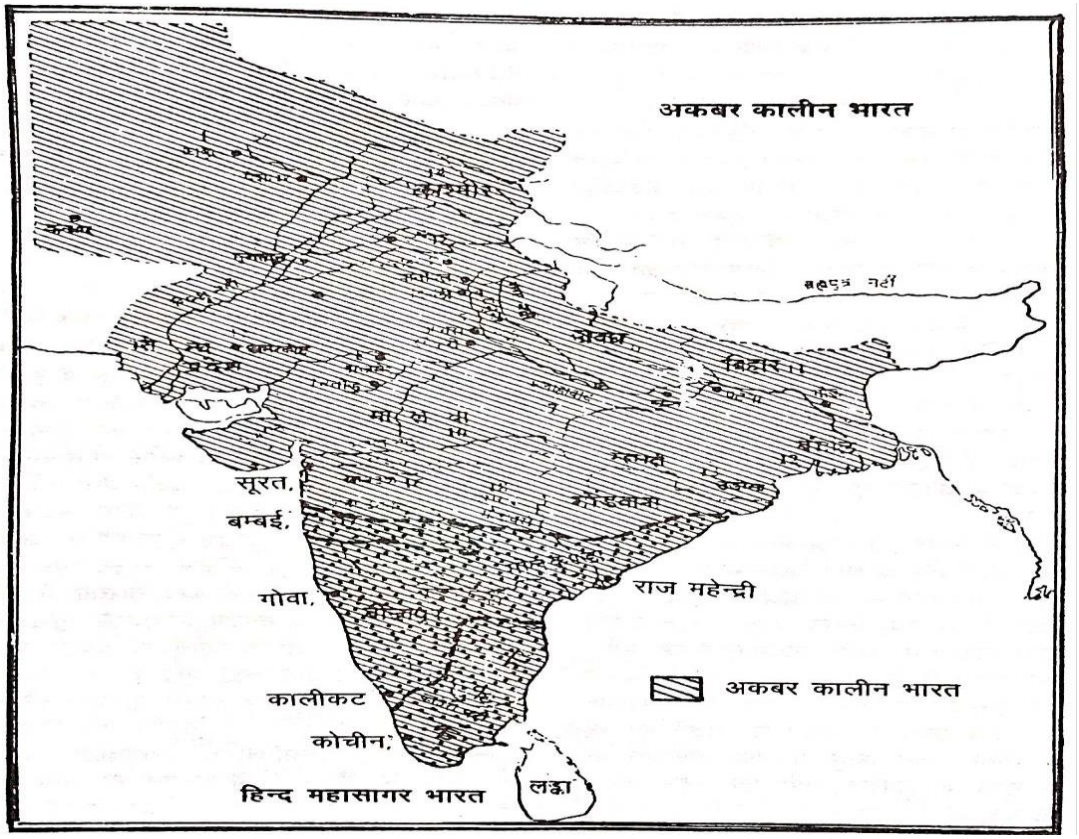

चित्र 3.9 अकबर कालीन भारत

अंग्रेजों के अतिरिक्त फ्रान्सीसी, डच, स्पेनी और पुर्तगाली व्यापारी भी भारत से व्यापार करने लगे थे। आपसी स्पर्द्धा में अंग्रेज श्रेष्ठ प्रमाणित हुए। इस क्रम में उनकी कुटिल राजनीतिक महत्वाकांक्षा उपनिवेशवाद की ओर मुड़ गई। फलतः व्यापार के लिए मांगी गई बंगाल और अन्य क्षेत्रों की भूमि उनकी जागीर बनी और फिर उनके कुचक्र का क्रम शुरू हुआ। बंगाल पर कब्जा करने के बाद इनका मनोबल बढ़ता गया और 1760 ई० तक पूरा बंगाल, बिहार तथा दक्षिण के राज्यों सहित श्रीलंका पर इनका आधिपत्य हो गया।

मराठा साम्राज्य की मदद से मुगल शासक कुछ समय तक अंग्रेजों को रोकने में सफल हुए लेकिन

फिरंगियों की चाल में भारतीय ऐसे उलझे कि उन्नीसवीं सदी के मध्य तक सम्पूर्ण भारत अंग्रेजों का उपनिवेश बन गया और सारी संप्रभुता ब्रितानी शासकों के नियंत्रण में चली गयी। डलहौजी अंग्रेजी राज्य के विस्तार में अधिक चतुर प्रमाणित हुआ, क्योंकि देशी रियासतों को अधीन करने के बाद बर्मा भी भारत का अंग बन गया। इस प्रकार अंग्रेजों की राजनीतिक कुटिलता और औपनिवेशिक विस्तार के कारण भारत भूमि का वृहतम रूप साकार हुआ जिसे ब्रितानी भारत कहा गया। लेकिन जोर जबरदस्ती से बना यह चित्र धीरे–धीरे बिखरने लगा। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बढ़ती स्वतंत्रता की लहर के सामने ब्रितानी शक्ति कमजोर पड़ने लगी। स्वतंत्रता की माँग इतनी प्रबल हुई कि ब्रितानी अपनी कुटिलता के बावजूद भारत को 1947 में स्वतंत्र तो कर दिये, लेकिन देश विभाजन कर ऐसा रोग उत्पन्न कर दिये। जिसका निदान अब भी नहीं हो पाया है। 1948 में बर्मा (म्यांमार) और श्रीलंका की स्वतंत्रता तथा पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान के निर्माण के साथ भारतीय उपमहाद्वीप फिर विखण्डित हो गया। 1971 में पूर्वी पाकिस्तान बंग्लादेश बन गया लेकिन भारत के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं आया। इस प्रकार भारत एक नये तनावपूर्ण परिस्थिति में उलझ गया। लम्बे अरसे की गुलामी ने भारतीय जनमानस को इस कदर पथभ्रष्ट किया है कि भारत की अस्मिता विवादास्पद हो गई है। आजं भारत अपनी राष्ट्रीयता की पहचान बनाने में भटक रहा है। इसके एक पैर को ऐतिहासिक विरासत ने जकड़ रखा है तो दूसरा पैर राजनीतिक दलदल में फंसता जा रहा है। इसकी बढ़ती आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक समस्याएं इसको पंगु बनाने लगी हैं। विशाल भौतिक संसाधनों के बावजूद इसकी बढ़ती जनसंख्या नासूर बनने लगी है। परिस्थिति का सही ऑकलन न होने के कारण इसके ऐतिहासिक विरासत और वर्तमान की खाई बढ़ती जा रही है। भारत के ऐतिहासिक घटना क्रमों के उपरोक्त अवलोकन से स्पष्ट है कि भारत अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति, अनुकूल भौतिक परिवेश, सतत् मानव बसाव, धन–धान्य की उन्नति, वाह्य संस्कृतियों के साथ समायोजन और बहुजातीय सामाजिक व्यवस्था के बावजूद एकात्मकता की भावना के कारण नदी के डेल्टा के समान है। अतः भारत का व्यक्तित्व बहुआयामी होते हुए वसुधैव कुटुम्बकम में अन्तर्निहित है। यह भी उल्लेखनीय है कि भारत का उत्तरी भाग सभी युगों में देश का क्रोड़ रहा है, जिसके कारण सर्वाधिक उलझनें इसी क्षेत्र को झेलनी पड़ी हैं। स्वतंत्र भारत की राजनीतिक विरासत आधुनिक भारत के 1947 में जन्म के साथ अनेक भूराजनीतिक समस्याएं विरासत में मिलीं, जिनका समाधान अब तक नहीं मिल पाया है। ब्रितानी कुटिलता के कारण सदियों से एक साथ रहने वाले मुसलमान बहककर देश के बंटवारे के साथ एक ऐसी राजनीतिक मानवीय समस्या उत्पन्न कर दिये हैं, जिसका समाधान होता नजर नहीं आ रहा है। मुसलमान बहुल पश्चिमी भाग और पूर्वी बंगाल क्रमशः पश्चिमी पाकिस्तान और पूर्वी पाकिस्तान के रूप में अस्तित्व में आये, जिसके कारण हजारों लोग मारे गये और लाखों विस्थापित हुए। पाकिस्तान में जितने मुसलमान नागरिक बने उससे कहीं अधिक मुसलमान भारत में रह गये। इस प्रकार बंटवारे से जो लाभ सोचा गया था वह पूरा नहीं हुआ। कटुता पर आधारित देश का बंटवारा आज नासूर बन गया है। भारत की प्रारम्भिक गलत राजनीतिक निर्णय के कारण कश्मीर पर पाकिस्तान का कब्जा आज तक दोनों देशों की जनता के लिये पीड़ा का कारण बना हुआ है। अनेक बार युद्ध और सुरक्षा के नाम पर अपार धन का अपव्यय भारत और पाकिस्तान के लिये प्रतिष्ठा का प्रश्न बना गया है। कश्मीर पर पाकिस्तानी आक्रमण के दौरान अधिग्रहण की गई भूमि, तिब्बत पर चीनी आधिपत्य के बाद अधिग्रहण की गई कश्मीर की भूमि, पूरब में अरुणांचल प्रदेश की उत्तरी सीमा पर मैकमोहन रेखा को अमान्य करने की चीन की नीति और बंग्लादेश की अनियंत्रित सीमा विरासत में मिली समस्याएं हैं जिनका समाधान भारत अब भी नहीं कर पाया है। इन पर अलग से चर्चा की गई है।

3.6 सारांश

भारत राज्य का पुनर्गठन एक महत्वपूर्ण राजनीतिक प्रक्रिया है जिसमें राज्यों की सीमाओं और विभाजन को पुनः समीक्षा किया जाता है। इस प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य राज्यों के प्रशासनिक और आर्थिक स्वायत्तता को सुधारना होता है और विकास को गति देना होता है। भारत में पिछले कुछ दशकों में कई राज्यों का पुनर्गठन हुआ है।

इस प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है जम्मू और कश्मीर का विभाजन और तेलंगाना का गठन। जम्मू और कश्मीर का विभाजन 2019 में लागू हुआ जब जम्मू और कश्मीर को दो अलग–अलग केंद्र शासित प्रदेशों में विभाजित किया गया। तेलंगाना का गठन 2014 में हुआ जब आंध्र प्रदेश से तेलंगाना को अलग राज्य के रूप में अलग किया गया। यह प्रक्रिया राज्यों के सीमाओं, जनसंख्या, और प्रशासनिक व्यवस्था की समीक्षा करती है ताकि वे नए प्रमुख या सीमांत राज्यों में विभाजित किए जा सकें और सुधारी जा सके। इसके साथ ही, यह प्रक्रिया समाज, आर्थिक, और सांस्कृतिक प्रभावों को भी ध्यान में रखती है। राज्यों के पुनर्गठन का प्रक्रिया सरकारी नीतियों, कानूनों,

और प्रक्रियाओं के माध्यम से होता है। इसमें सरकारों की सहयोग, सहमति, और सार्थक संवाद की आवश्यकता होती है।

पुनर्गठन का प्रक्रिया आमतौर पर राज्य सरकार, केंद्र सरकार, और संघ की संयुक्त प्रयासों के माध्यम से होता है। इसमें संविधान के मानकों, कानूनों, और संबंधित विधि विधानों का पालन किया जाता है। भारतीय संविधान के अनुसार, राज्यों का पुनर्गठन उनके स्वतंत्रता और स्वायत्तता को बढ़ावा देने का एक महत्वपूर्ण उपाय है। यह स्थानीय सरकारों को और प्रभावकारी बनाता है और उन्हें विकास की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार बनाता है। भारत का भौगोलिक व्यक्तित्व विविधता, महत्वपूर्ण नदियों, पर्वतमालाओं, जलमार्गों, और उच्च प्राकृतिक संसाधनों के साथ एक अद्वितीय रूप से प्रमुख है। इसका भौगोलिक व्यक्तित्व भारत को एक विशेष जगह बनाता है जिसमें भौतिक, सांस्कृतिक, और आर्थिक मानव क्रियाओं का एक अद्वितीय मिश्रण होता है।

भारत का भौगोलिक व्यक्तित्व अत्यधिक विविधता से भरा हुआ है। यह विभिन्न भौगोलिक इकाइयों, जैसे कि पर्वतीय क्षेत्र, समुद्री किनारे, उपजाऊ घाटियाँ, और बारिश संधि क्षेत्रों के साथ भारत को एक अद्वितीय व्यक्तित्व प्रदान करता है। भारत के पश्चिमी और उत्तरी भाग में पर्वतमालाएं, जैसे कि हिमालय, अपनी ऊँचाई, श्रेणीवाचक संरचना, और गहरे घाटियों के लिए प्रसिद्ध हैं। यहाँ पर विश्व की सबसे ऊँची पर्वत शिखर, माउंट एवरेस्ट, स्थित है। हिमालयी क्षेत्र भारतीय संबंधीय देशों के साथ सीमित होता है और प्राकृतिक आकर्षणों के लिए यात्रियों का केंद्र बना हुआ है। भारत का उत्तरी भाग थल, समुद्री, और उपजाऊ घाटियों से भरा हुआ है। यहाँ पर भारत की सबसे लंबी नदी, ब्रह्मपुत्र, और गंगा का उद्गम स्थल है। इन नदियों के किनारों पर कई प्राचीन शहर और धार्मिक स्थल स्थित हैं जो भारतीय सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा हैं। भारत का मध्य भाग मुख्य रूप से मैदानी क्षेत्र है, जिसमें विभिन्न प्रकार के भूमियों को शामिल किया जाता है। यहाँ पर कृषि, उद्योग, और वाणिज्य का केंद्र है। इस क्षेत्र में भारत की राजधानी नई दिल्ली और कई महत्वपूर्ण शहर स्थित हैं। भारत का दक्षिणी भाग उपजाऊ घाटियों, समुद्री किनारों, और घने वनों से भरा हुआ है। यहाँ पर भारत के सबसे लंबे तटीय किनारे हैं और कई प्रमुख पर्वतमालाएं भी हैं। इस क्षेत्र में केरल, तमिलनाडु, और कर्नाटक जैसे राज्य स्थित हैं जो अपनी समृद्ध संस्कृति और प्राकृतिक सौंदर्य के लिए प्रसिद्ध हैं।

3.7 स्वमूल्यांकन एवं आदर्श उत्तर

प्रश्न 1. ध्रुवीय जलवायु भारत के किन भागों में मिलती है ?

(अ) पश्चिमी भागों में (ब) हिमालय के उच्च भागों में
(स) तटीय भागों में (द) दक्षिणी पठारी भागों में

प्रश्न 2. भारत में मानव समाज की विरासत–

(अ) 5000 वर्ष पुरानी (ब) 7000 वर्ष पुरानी
(स) 6000 वर्ष पुरानी (द) 4000 वर्ष पुरानी

प्रश्न 3. भारत में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा कौन सी है ?

(अ) मराठी (ब) तेलुगू
(स) मलयालम (द) हिंदी

प्रश्न 4. भारत में सबसे अधिक आदिवासी जनसंख्या कहां निवास करती है ?

(अ) मध्य प्रदेश (ब) छत्तीसगढ़
(स) मणिपुर (द) उड़ीसा

प्रश्न 5. भारत में सर्वाधिक जनसंख्या किस व्यवसाय पर निर्भर है ?

(अ) उद्योग (ब) वितरण
(स) कृषि (द) सेवा व्यवसाय

प्रश्न 6. भारत में प्राचीन ऐतिहासिक काल की वर्ष अवधि?

(अ) 400 वर्ष पूर्व (ब) 700 वर्ष पूर्व

(स) 600 वर्ष पूर्व (द) 500 वर्ष पूर्व

उत्तरमाला – 1. (ब) 2. (स) 3. (द) 4. (अ) 5. (द) 6. (द)

3.8 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

1. प्रो.आर.सी. तिवारी, भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन।
2. डॉ. अलका गौतम, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन प्रयागराज।
3. प्रोफेसर माजिद हुसैन भारत का भूगोल, मैग्रा हिल।
4. Jagdish Singh, IndiaA ComprehensiveAnd systematic Geography. Gyanodaya Publication Grokhpur.
5. Singh R.L. – IndiaA Regional Geography, N.G.S.I. Grokhpur
6. Nag, P.And Sengupta, S Geography , New Delhi.
7. Ford Foundation (1959) Report on Indian's Food crisisAnd step to meet It New Delhi : Ministry of foodAndAgricultureAnd Ministry of community Developement.

3.9 अभ्यास प्रश्न (शत्रांत परीक्षा की तैयारी)

प्रश्न 1. भारत के राज्य पुनर्गठन की ऐतिहासिक व्याख्या कीजिए ?

प्रश्न 2. "भारत की राजनीतिक इकाइयां एवं जनसंख्या" की व्याख्या कीजिए ?

प्रश्न 3. भारत के व्यक्तित्व के भौतिक पक्ष की विवेचना कीजिए ?

प्रश्न 4. भारत के व्यक्तित्व के मानवीय पक्ष की विवेचना कीजिए ?

प्रश्न 5. भारत के व्यक्तित्व के ऐतिहासिक पक्ष का विस्तृत वर्णन कीजिए ?

इकाई 4. उच्चावच एवं भौतिक प्रदेश, अपवाह तन्त्र एवं अपवाह प्रणाली

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 भौमिकीय संरचना

4.4 उच्चावच एवं भौतिक प्रदेश

4.5 अपवाह तन्त्र एवं अपवाह प्रणाली

4.6 सारांश

4.7 शब्द सूची

4.8 परीक्षोपयोगी प्रश्न

4.9 उपयोगी पुस्तकें व संदर्भ

4.10 अभ्यास प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई में भौमिकीय संरचना के विकास के विभिन्न चरणों प्रीकैम्ब्रियम युग की शैलों, पुराण समूह की शैलों, द्रविड़ियन युग की शैलों एवं आर्यन युग की शैलों, भौतिक प्रदेश में हिमालय पर्वत समूह के विभिन्न प्रकार, बृहद मैदान में भाबर, तराई का मैदान, बागड मैदान, खादर मैदान, डेल्टा मैदान, प्रायद्वीपीय भाग में राजस्थान का आरावली, मालव पठार, बुन्देलखण्ड का उच्च भूमि, बघेलखण्ड पठार, विन्ध्याचल पठार, छोटा नागपुर का पठार, मेघालय–मिकिर उच्च भूमि, कर्नाटक या मैसूर का पठार, दक्कन का पठार, पूर्वी घाट एवं पश्चिमी घाट, तटीय मैदान एवं द्वीप समूह तथा अपवाह तन्त्र में हिमालयी नदी तन्त्र, प्रायद्वीपीय नदी तन्त्र तथा नदियों के बारे में अध्ययन करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई में भारत भूगोल का अध्ययन करने के उपरान्त आप–

- भारत का भौमिकीय संरचना को समझ सकेगें,
- भारत के भौमिकीय संरचना के विकास के विभिन्न चरणों को समझ सकेंगे,
- भारत के भौतिक प्रदेश का स्वरूप समझ सकेगें,
- प्रादेशिक विशेषता के आधार पर गंगा मैदान का विभाजन समझ सकेगें,
- भारत का अपवाह तन्त्र में हिमालयी अपवाह तन्त्र तथा प्रायद्वीपीय अपवाह तन्त्र समझ सकेगें।

4.3 भौमिकीय संरचना

भारत गोडवानालैण्ड का भाग है यहां अवशिष्ट पर्वत से लेकर नवीन पर्वत तक पाये जाते हैं जिसमें मोड़दार पर्वतों की उत्पत्ति चार अवस्थाओं में हुई है। प्रथम चरण में प्री. कैम्ब्रियम युग है जिसमें अरावली पर्वत उत्पत्ति हुई है, द्वितीय चरण में केलीडोनियन पर्वत है जिसके अन्तर्गत कुडप्पा भू–अभिनति से पूर्वी घाट की उत्पत्ति हुई, तीसरे

चरण में हर्सीनियन युग के पर्वत की हुई है जिसमें विंध्यन भू–अभिनति से विंध्याचल तथा सतपूड़ा पर्वत की उत्पत्ति हुई तथा चतुर्थ चरण में अल्पाइन युग की पर्वत की उत्पत्ति हुई जिसमें महान हिमालय की उत्पत्ति हुई। भारतीय प्रायद्वीप की भौमिकीय विकास काफी प्राचीन है यहां पर प्री कैम्ब्रियम युग से लेकर चतुर्थ युग तक की शैलें पायी जाती हैं। भू वैज्ञानिक लोगों ने भारत की भूमि को भूवैज्ञानिक संरचना की दृष्टि से तीन भागों में बांटा है। प्रथम– प्रायद्वीपीय पठार जो प्राचीन भूखण्ड है। द्वितीय– हिमालय पर्वत है। तृतीय– नवीन जलोढ़ पदार्थ से उत्तर भारत का मैदान है। भारत की भौमिकीय संरचना के विकास को निम्न समय चरण में बांटा गया है।

1. प्री. कैम्ब्रियम युग की शैल
2. पुराण समूह की शैल
3. द्रविड़ियन युग की शैल
4. आर्यन युग की शैल

1. प्री कैम्ब्रियन युग की शैल

इस युग के अन्तर्गत दो शैल समूहों को शामिल किया जाता है। प्रथम– आर्कियन युग समूह की शैल तथा द्वितीय– धारवाड़ क्रम की शैलें।

I. आर्कियन समूह की शैल

इस शैल समूह को आद्य कल्प शैल समूह भी कहते हैं। यह पृथ्वी की प्राचीनतम शैलों का सूचक है। इस शैल समूह में जीवन के साक्ष्य नहीं पाये जाते हैं। इन्हें जीवहीन भी कहते हैं। अरावली, धारवाड़, कुडप्पा, विंध्यन, मेघालय का पठार और मिकिर की पहाड़ियां इस समूह के अन्तर्गत आते हैं जो प्राययद्वीपीय भारत के कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, तेलंगाना, ओडिशा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, मेघालय, छोटा नागपुर का पठार तथा दक्षिण–पूर्व राजस्थान में पायी जाती है। ये शैलें रवेदार कायान्तरित रूप में मिलती हैं जिसके कारण जीवाश्म का अभाव पाया जाता है।

इस शैल के समूह के अन्तर्गत प्रायद्वीपीय नाइस (बंगाल नाइस), बुन्देलखण्ड नाइस तथा नीलगिरी नाइस शामिल है। प्रायद्वीपीय नाइस को बंगाल नाइस भी कहते हैं। जिसका वितरण मुख्यतः पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, ओडिशा एवं कर्नाटक में पाया जाता है। बुन्देलखण्ड नाइस जो ग्रेनाइट सदृश्य दिखलाई पड़ती है। इसका वितरण बुन्देलखण्ड, महाराष्ट्र, राजस्थान, आन्ध्रप्रदेश एवं तमिलनाडु राज्यों में है। नीलगिरी नाइस को चर्नोकाइट नाइस भी कहते हैं। जिसका वितरण तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, केरल, बिहार, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, एवं राजस्थान में है।

II. धारवाड़ समूह की शैल

धारवाड शब्द कर्नाटक के इसी नाम के जनपद से लिया गया है जहां इन शैलों को प्रथम बार खोजा गया था जिसका निर्माण आर्कियन नाइस एवं शिष्ट शैलों के अनाच्छादन से प्राप्त अवसादों से हुआ है। इस समुह में अन्तर्भेदी नाइस चट्टानें कुछ स्थानों पर पायी जाती है। यह मुख्यतः कायान्तरिक अवसादो से बनी है। वलन भ्रंशन क्रिया द्वारा इनके स्वरुप में काफी परिवर्तन हुआ है और इसमे सेदार तथा शिष्ट सम्बन्धित विशेषताएं उत्पन्न हो गयी है। इसमें खण्डमय अवसाद, रासायनिक तौर पर अवक्षेपित चट्टान, ज्वालामुखी एवं पातालीय शैल शामिल है जिसका अत्यन्त कायान्तरण हुआ है। इसमे शिष्ट, फाइलाइट एवं स्लेट प्रमुख चट्टान है इसमे परत का अभाव पाया जाता है।

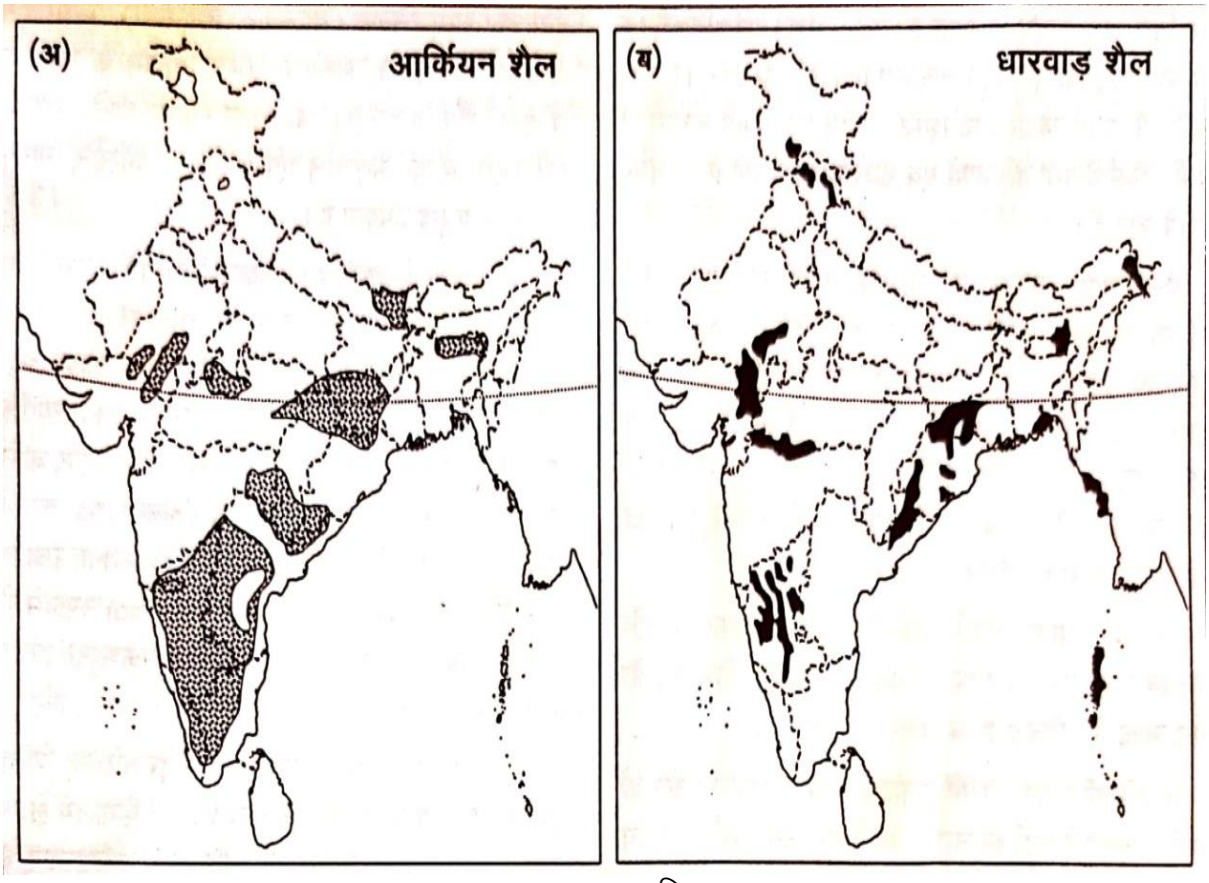

चित्र–1

धारवाड़ चट्टानें बिखरे रूप में दक्षिणी दक्कन, प्रायद्वीप के मध्यवर्ती एवं पूर्वी भागों, उत्तरी–पश्चिमी क्षेत्र और हिमालय क्षेत्र में पायी जाती है। दक्षिणी दक्कन में 15540वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है जिसका विस्तार कर्नाटक के धारवाड़ और बेल्लारी जनपदों से लेकर नीलगिरि, मदुरै और श्रीलंका तक फैला हैं यहां स्फटिक, स्लेट, कांग्लोमरेट, हार्नब्लेड–शिस्ट, टैल्क–शिस्ट, चर्ट, लौह पत्थर, संगमरमर आदि पाये जाते हैं कुछ क्षेत्रों में सोना भी पाया जाता है। मध्य एंव पूर्वी प्रायद्वीपीय क्षेत्र में मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, झारखण्ड, उड़ीसा एवं पश्चिम बंगाल में फैला हुआ है। इनमें चिल्पी, सासर, सकोली, खोडलाइट, लौह अयस्क कोल्हण गांगपुर एवं डाल्माट्रैप प्रमुख उपक्रम हैं। उत्तरी–पश्चिमी क्षेत्र में अरावली पहाड़ी सहित राजस्थान एवं गुजरात राज्य में फैला हुआ है। प्रायद्वीपेतर क्षेत्र में मेघालय पठार एवं हिमालय क्षेत्र शामिल हैं। धारवाड़ शैले जीवाश्म रहित तथा अत्यधिक धात्विक हैं।

2. पुराण समूह की शैल

इस समूह की शैले आद्यजीवी समय की है इस समूह की शैलें 2500से 570मिलियन वर्ष पूर्व माना गया है। इस समूह में निम्नलिखित शैल क्रमों को शामिल किया जाता है–

I. कुडप्पा क्रम

इस क्रम की शैलों का नामकरण आन्ध्र प्रदेश के जिले के नाम पर किया गया है। भू–वैज्ञानिकों के अनुसार ये शैलें धारवाड़ क्रम की शैलों के जलीय अपरदन के कारण जमा अवसादों से बनी हैं। कुडप्पा चट्टानों में शेल, स्लेट, क्वार्टजाइट एवं चूना पत्थर प्रमुख हैं। इन चट्टानों का अत्यधिक रूपान्तरण हुआ है एवं इसमें जीवाश्म का अभाव पाया जाता हैं इस क्रम की शैल निर्माण की दृष्टि से (क)–निचले कुडप्पा (ख)–ऊपरी दो वर्गों में बांटा गया है। पापाघनी एवं चेमार श्रेणी तथा कृष्णा एवं नल्लामलाई श्रेणी क्रमशः निचली कुडप्पा तथा ऊपरी कुडप्पा शैल की श्रेणी है। कुडप्पा क्रम की शैलें कृष्णा घाटी, नल्लामलाई पापाधनी, चेमार, दिल्ली श्रेणी, बिजावर श्रेणी, कालडगी श्रेणी तथा लेसर हिमालय में पायी जाती हैं। इस क्रम की शैल में सैंडस्टोन शैल, चूना पत्थर, क्वार्टजाइट, स्लेट,

निम्न गुणवत्ता वाला लौह अयस्क, मैग्नीज अयस्क, एस्बेस्टास, ताँबा, निकिल, कोबाल्ट तथा संगमरमर पाया जाता हैं।

II. विन्ध्य क्रम

इसका नामकरण विन्ध्य पहाड़ियों के नाम पर किया गया हैं इसका अधिकांश भाग विंध्याचल क्षेत्र में पाया जाता है। इसी कारण इसे विंध्ययन क्रम नाम से जाना जाता हैं इसका विस्तार पश्चिम में चित्तौड़गढ़ से लेकर पूरब में सासाराम के बीच 103600 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर फैला है। महान सीमा भ्रंश विंध्यन क्रम को अरावली से पृथक करता है। ये 4 किलोमीटर तक की मोटाई में मिलती हैं। इस क्रम की प्रमुख शैलों में स्थूल बलुआ पत्थर, शेल एवं चूना पत्थर शामिल है। विन्ध्य क्रम के प्रमुख उपक्रमों में निचला विन्ध्य क्रम जिसमें नर्मदा घाटी के उत्तर विन्ध्य पहाड़ियों के रूप में पाया जाता है।

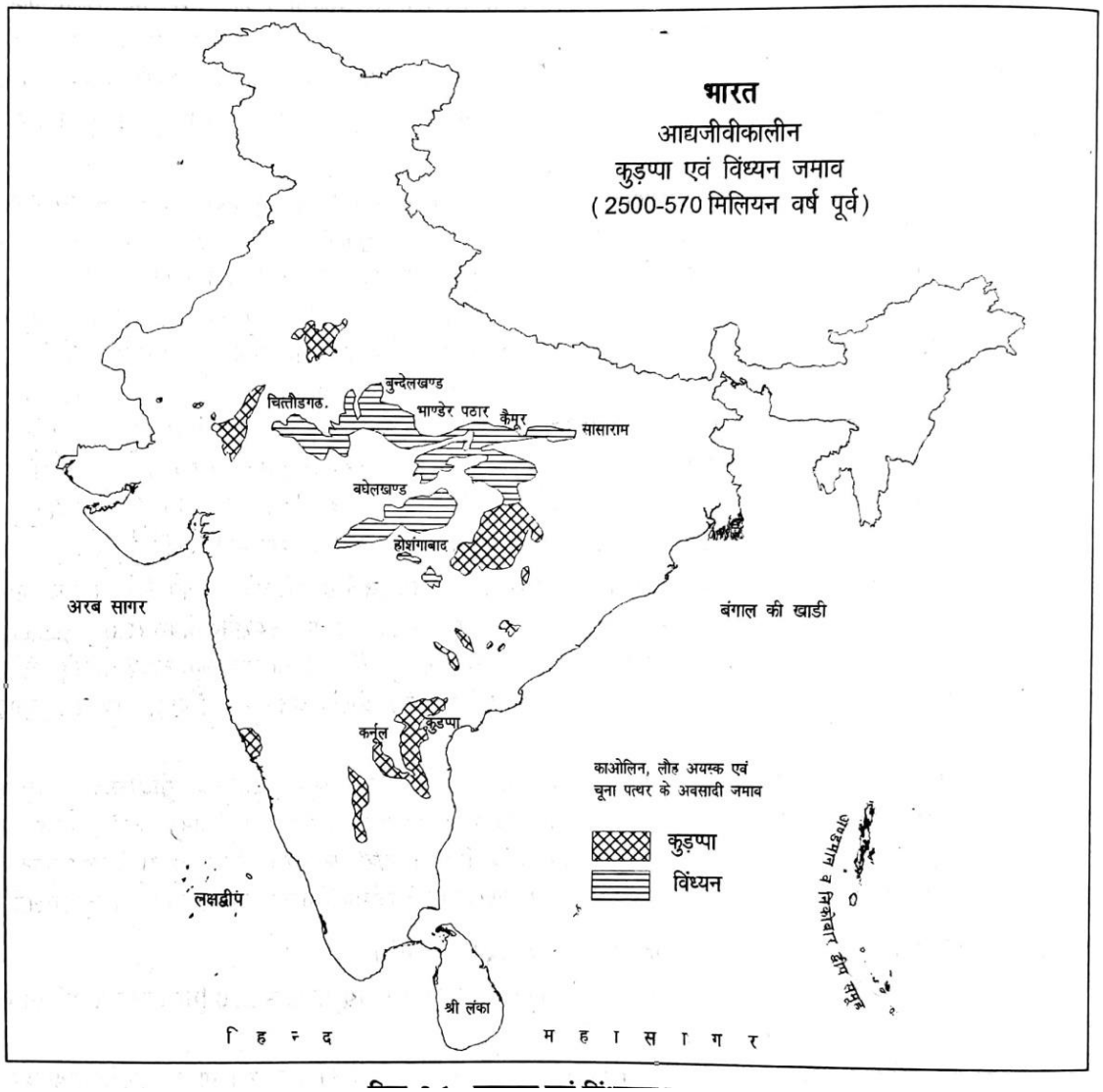

चित्र–2

इसे सेमरी, कुर्नूल, भीमा, मलानी उपक्रमों के स्थानीय नामों से जाना जाता है। ऊपरी विन्ध्य क्रम में कैमूर, रीवा एवं भाण्डेर में विभाजित किया जाता है। इस शैल में बहुमूल्य पत्थर, सजावटी पत्थर, हीरा, गृह निर्माण पदार्थ तथा सीमेण्ट, चूना, शीशा एवं रसायन उद्योग हेतु कच्चा माल प्राप्त किया जाता है। इसमें लोहा एवं मैग्नीज भी पाया जाता है।

3. द्राविडियन युग की शैलें

इसका प्रारम्भ कैम्ब्रियन काल (600 मिलियन वर्ष पूर्व) से होकर मध्य कार्बनी (300मिलियन वर्ष पूर्व) काल तक फैला है। इसमें जीवाश्म पाया जाता है। अध्ययन की सुविधा हेतु इस कल्प की शिलाओं को कैम्ब्रियन, आर्डोविशन, सिलूरी, डिवोनी, तथा निचले एवं मध्यवर्ती कार्बनी क्रमों में बांटा जाता है। इसका वितरण कश्मीर के बारामुला एवं अनंतनाग जनपदों एवं पीरपंजाल, हिमांचल प्रदेश का स्पीति जनपद, पाक का साल्टरेंज और म्यांमार का शान प्रान्त, कश्मीर की लिद्दार घाटी एवं हण्डवारा घाटी उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमायूं क्षेत्रों में द्रविड़ महाकल्प की शैलों का विस्तार मिलता है।

4. आर्यन युग की शैलें

भारतीय भूविज्ञान के आर्य कल्प का प्रारम्भ ऊपरी कार्बनीकाल में मानी जाती है। इसमें अग्रलिखित शैलों को शामिल किया गया है–

I. गोंडवाना क्रम

गोंडवाना क्रम की शैल का निर्माण कार्बोनिफेरस युग से लेकर नवजीवी के प्रारम्भ तक माना जाता है। इस क्रम के शैल के निर्माण के बाद प्रायद्वीपीय भाग में किसी प्रकार का हलचल नहीं हुई। इस क्रम को मध्य प्रदेश के प्राचीन गोड राज्य के आधार पर गोंडवाना नाम दिया गया। इसका वितरण छोटानागपुर का दामोदर घाटी क्षेत्र, महानदी घाटी क्षेत्र, गोदावरी, वेलगंगा एवं वर्धा घाटियां, कच्छ, काठियावाड़, पश्चिमी राजस्थान, कश्मीर एवं सिक्किम के क्षेत्र हैं। गोंडवाना क्रम को लम्बवत एवं क्षैतिज दो तरह से वर्गीकरण किया जा सकता है। क्षैतिज तौर पर गोंडवाना क्रम को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम– प्रायद्वीपीय गोंडवाना, जिसमें दामोदर घाटी, महानदी घाटी एवं गोदावरी घाटी क्षेत्र शामिल हैं एवं द्वितीय– प्रायद्वीपेतर गोंडवाना भाग है। लम्बवत् वर्गीकरण के आधार पर गोंडवाना क्रम को ऊपरी गोंडवाना एवं निचला गोंडवाना में बांटा जा सकता है। निचला गोंडवाना क्रम के तालचेर (उड़ीसा) दामुदा उपक्रम– रानीगंज, बंजर संस्तर एवं बराकर करहरबारी तथा पंचेत उपक्रम (नवीनतम) के हैं। तथा ऊपरी गोंडवाना क्रम के महादेव उपक्रम में पंचमढ़ी एवं मलेरी, राजमहल उपक्रम में राजमहल, जबलपुर उपक्रम में जबलपुर, कोटा तथा उमिया उपक्रम में उमिया अवस्था शामिल है। गोंडवाना क्रम कोरोमण्डल तट के क्षेत्रों में, साल्टरेंज, शेख बुदिन पहाड़ी, हजारा, अफगानिस्तान, कश्मीर, नेपाल, सिक्किम, भूटान, असम एवं अबोर के दूर–दराज के अंचलों में भी पाया जाता है। भारत का 95 प्रतिशत से अधिक कोयला का भण्डार इसी में पाया जाता है।

II. दक्कन ट्रैप

क्रिटेशिस काल के अन्तिम चरण में ज्वालामुखी के उद्भेदन प्रायद्विपीय भाग में हुआ। दरारी उद्भेदन से सोपानिक स्थल का निर्माण हुआ, इसी कारण इसे दक्कन ट्रैप (स्वेडिश भाषा) कहते हैं। दक्कन ट्रैप का विस्तार गुजरात (कच्छ, सौराष्ट्र), महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश (मालवा पठार) एवं उत्तरी कर्नाटक में लगभग 5लाख वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। इसका विस्तार राजमुन्द्री (आन्ध्र प्रदेश), दक्षिणी बिहार एवं सिन्ध (पाकिस्तान) के क्षेत्रों तक देखा गया है। इसका सर्वाधिक मोटाई (3000 मीटर) मुम्बइ तट के सहारे पाई जाती है। पृथक लावा प्रवाह की औसतन मोटाई 5मीटर पायी जाती है। कच्छ के पास यह मोटाई 800मीटर, अमरकंटक के पास 150मीटर तथा बेलगाम के पास 60मीटर पायी जाती है। कुल लावा में पीठिता की अधिकता थी जिसके कारण तेजी से स्फटिकीकरण एवं बेसाल्ट, कांच की विरलता पाई जाती है। बेसाल्ट के अपघटन से काली, गहरी या लाल

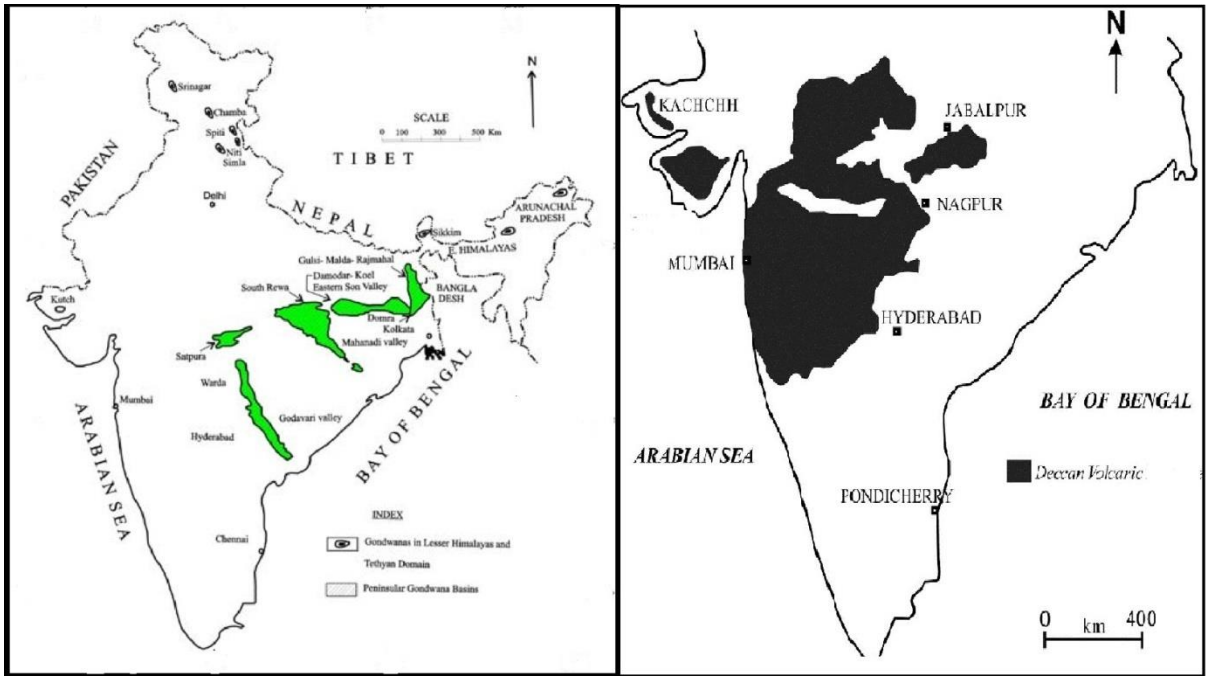

चित्र–3

रंग की रेगुड़ मिट्टी का निर्माण हुआ है। लेटेराइट मृदा भी इसी जमाव से बनी है जिसमें एल्यूमिना, लोहा तथा मैग्नीज तत्व मिलते हैं। बॉक्साइट के निक्षेप भी मिलते हैं।

III. तृतीयक क्रम

भारत में इस युग का सर्वप्रथम स्थान है क्योंकि इसी युग के दौरान देश को वर्तमान स्वरूप मिला। इस युग के अन्तर्गत दो भौमिकीय घटनायें महत्वपूर्ण रही है, प्रथम– गोंडवानालैण्ड का अन्तिम रूप से विखण्डन एवं इसके बड़े भाग का समुद्र में निमज्जन, तथा द्वितीय–टेथीज के भू अभिनतिक अवसादों के उत्थापन से हिमालय की उंची श्रृंखलाओं का निर्माण। टेथीज के नितल में परमियन काल से संग्रहित अवसादों से हिमालय का निर्माण हुआ है। हिमालय का प्रथम बार उत्थान लगभग 6 मिलियन वर्ष पूर्व इयोसीन युग में हुआ जो मध्य ओलिगोसीन तक चला, जिसमें महान हिमालय का उत्थान हुआ, द्वितीय उत्थान 4 मिलियन वर्ष पूर्व मध्य मायोसीन में हुआ, जिससे लघु हिमालय का उत्थान हुआ, तृतीय उत्थान लगभग 1.5 मिलियन वर्ष पूर्व उत्तर प्लायोसीन काल में हुआ, जिससे शिवालिक में वलन हुआ अर्थात बाहरी हिमालय का निर्माण हुआ। अन्तिम उत्थान के रूप में प्लीस्टोसीन काल में पीरपंजाल श्रेणी एवं कश्मीर घाटी अस्तित्व में आये। इस प्रकार अधिकांश टर्शियरी युगीन की शैले हिमालय के क्षेत्रों में पायी जाती हैं।

IV. चतुर्थक क्रम

इसके अन्तर्गत प्लीस्टोसीन एवं होलोसीन युग की शैलों को शामिल किया जाता है। प्लीस्टोसीन युग में बड़े पैमाने पर हिमानीकरण हुआ था हिमालय के क्षेत्रों में हिमोढ़, गोलाश्म तथा हिम से निर्मित तथा अपरदित धरातल के प्रमाण पाये जाते हैं। कश्मीर घाटी

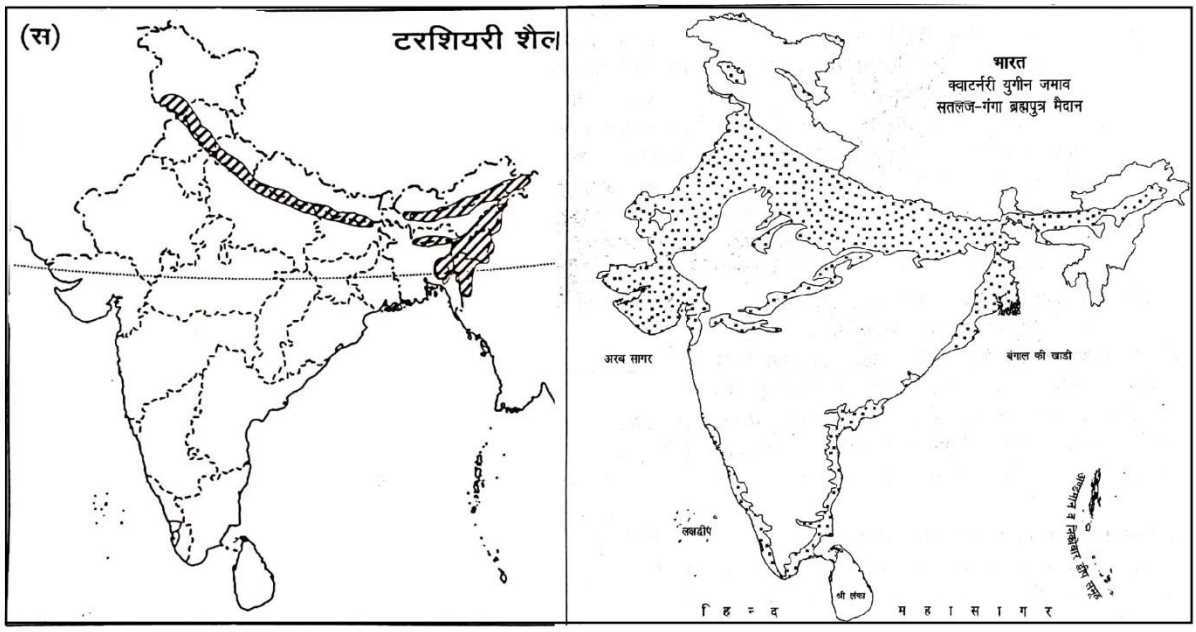

चित्र–4

प्लीस्टोसीन में अस्तित्व में आया। यहां बड़ी मात्रा में हिमोढ़ एवं करेवा मिलते हैं। करेवा का निक्षेप झेलम में अधिक पाया जाता है। यहां करेवा का 7500वर्ग किलोमीटर में विस्तार पाया जाता है। करेवा एक झीलकृत निक्षेप है जिसमें कुछ स्तनपायी जीवों का अवशेष है। यह करेवा केसर, बादाम, अखरोट खूबानी के कृषि के लिए प्रसिद्ध है। गंगा, ब्रह्मपुत्र, सतलज, नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, कृष्णा आदि नदियों में जमा पुरातन कॉप बांगर तथा नवीन काप खादर प्लीस्टोसीन काल की है। कच्छ रन (गुजरात) तथा थार का मरुस्थल (राजस्थान) भी इसी काल के हैं।

4.4 उच्चावच एवं भौतिक प्रदेश

भारत के उच्चावच एवं भौतिक स्वरूप में पर्याप्त विषमता मिलती है। इसके उत्तरी भाग में हिमाच्छादित शिखरों, विस्तृत घाटी हिमानियों, गहरे खड्ड, जल प्रपात एवं सांस्कृतिक विविधता से सम्पन्न क्षेत्र स्थित हैं। दक्षिणी भाग में नदी द्वारा निक्षेपित विशाल समतल एवं स्थलाकृति विहीन मैदान फैला हुआ है। पश्चिम में स्थित राजस्थान मैदान वनस्पति विहीन बालुका स्तूपों से परिपूर्ण मरुस्थल क्षेत्र हैं। दक्षिण की तरफ विशाल मैदान का संपर्क पठारी भाग से होता है जिसकी सतह काफी अनाच्छादित है एवं कहीं सीढ़ी के भांति तो कहीं कगार के रूप में है। प्रायद्वीय दक्षिण की तरफ पतला होता जाता है एवं सागर से पश्चिम एवं पूर्व में घिरा हुआ है। इसके पूर्वी तट पर चिल्का, पुलिकट एवं कोलेरू झील पाये जाते हैं। तट से दूर अरब सागार एवं बंगाल की खाड़ी में कई द्वीप पाये जाते हैं। एक अनुमान के अनुसार देश के सम्पूर्ण क्षेत्रफल का 10.6% भाग पर्वतों, 18.5% पहाड़ियों, 27.7% पठारों एवं शेष 43.2% मैदानों के रूप में पाया जाता है। इन विविध उच्चावच लक्षणों के आधार पर भारत को निम्नलिखित चार भौतिक विभागों में विभाजित किया गया है–

1. **हिमालय पर्वत समूह**
2. **बृहद मैदान**
3. **प्रायद्वीपीय उच्च भूमि**
4. **तटीय मैदान एवं द्वीप समूह**

1. हिमालय पर्वत समूह

भारत के उत्तरी भाग में अवस्थित यह महान पर्वत पश्चिम में पाकिस्तान की पूर्वी सीमा से लेकर पूर्व में म्यांमार की सीमा तक 2500 किमी. के लम्बाई में फैला है तथा 240 से 320 किमी. की चौड़ाइ एवं 5लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में फैला हुआ है। यह तीन समानान्तर पर्वत श्रेणी से मिलकर बना है– (अ) हिमाद्री (अ)

हिमांचल (स) शिवालिक।

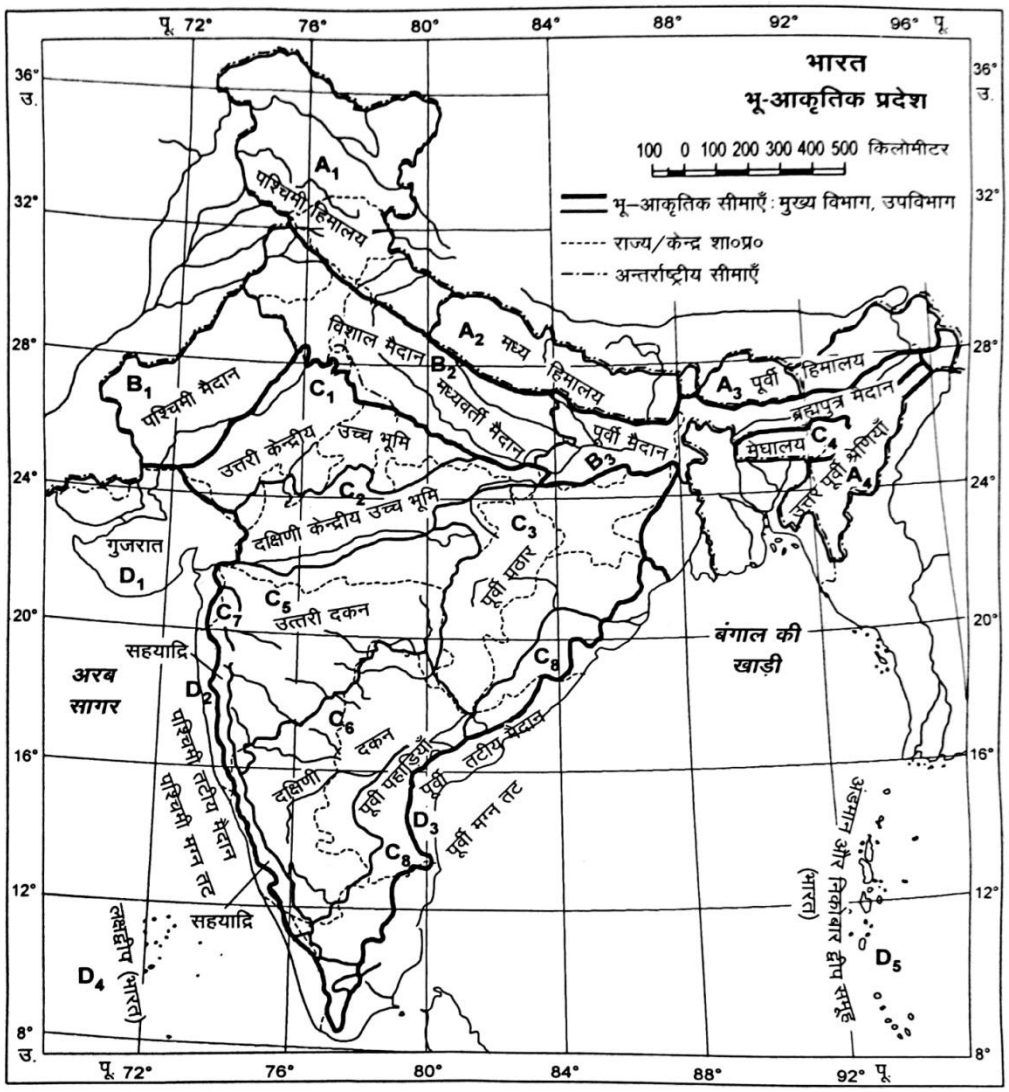

चित्र–5

हिमालय का विभाजन

अनुदैर्ध्य रूप में हिमालय दक्षिण से उत्तर तीन समानान्तर श्रेणियों एवं एक हिमालय–पार क्षेत्र में निर्मित हैं।

(अ) उप हिमालय या शिवालिक हिमालय

इसको बाह्य हिमालय भी कहते हैं। यह हिमालय पर्वत का दक्षिण में बाहरी विस्तार है जो सन्धु के महाखण्ड से ब्रम्हपुत्र के महाखण्ड तक लगभग 2400 किमी. में विस्तृत है। शिवालिक हिमालय उत्तर के मैदान से हिमालय अग्र भ्रंश द्वारा अलग होता है। इस श्रंखला की औसत ऊंचाई 1300मीटर है लेकिन अधिकांशतः इसकी उंचाई 650 मीटर के आसपास ही है। यह 8 से 45 किमी. चौड़ी है यह सतत रूप में नहीं पाया जाता है। इसके कई भाग है जिनको अलग–अलग नामों से जाना जाता है जिसमें जम्मू पहाड़ियां (जम्मू), डफला, मिरी, अबोर तथा मिश्मी पहाड़ियां (अरुणांचल प्रदेश) है। इसी प्रकार नेपाल में धांग व डण्डवा श्रेणी इसी क्रम की हैं। यह बलुआ पत्थर, सेंड रॉक, मृत्तिका, कांग्लोमरेट एवं चूना–पत्थर से बना है जो मुख्यतः ऊपरी टर्शियरी काल की हैं। इस क्षेत्र में कुछ विस्तृत समतल घाटियां भी पायी जाती हैं जिनको पूर्व में द्वार एवं पश्चिम में दून कहते हैं। देहरादून, कोठरीदून व पाटलीदून ऐसी ही घाटियां हैं।

(ब) लघु हिमालय या हिमांचल

इसको मध्य हिमालय या हिमांचल भी कहते हैं। यह शिवालिक हिमालय के उत्तर में फैला है। यह मुख्य सीमान्त क्षेप के (MBT) द्वारा पृथक की जाती है। इसकी उंचाई 1000से 4500 मीटर के मध्य तथा चौड़ाई 60 से 80 किमी के मध्य फैला है। लघु हिमालय की कश्मीर में फैला पीर पंजाल एवं हिमाचल में धौलाधर श्रेणियां, नागटिब्बा, मसूरी श्रेणी (कुमाऊ), महाभारत श्रेणी (नेपाल) प्रसिद्ध है। यहां की शैलों में जीवाश्म का अभाव एवं अवसादी तथा कायान्तरित चट्टानें पायी जाती हैं। इस श्रेणी में स्लेट, चूना पत्थर व क्वार्टज की प्रधानता है। इसके ढालों पर कश्मीर में घास को मर्ग तथा उत्तराखण्ड में बुग्याल एवं पयार कहते हैं।

(स) बृहद हिमालय

इसे आन्तरिक या हिमाद्री भी कहते हैं। यह हिमालय की सबसे ऊंची एवं उत्तरी पर्वत श्रेणी है। वृहद हिमालय को लघु हिमालय से मुख्य केन्द्रीय भ्रंश पृथक करता है। इसका विस्तार पूर्व (ब्रम्हपुत्र) से पश्चिम (सिन्धु) में एक चाप के रूप में है। इसकी औसत चौड़ाई 24किमी तथा औसत उंचाई 600 मीटर है। इसमें माउण्ट एवरेस्ट (8848 मीटर), कंचनजंगा (8598 मीटर), मकालू (8481 मीटर), धोलागिरी (8172मीटर), मनसालू, चोआयु, नंगा पर्वत (8126 मीटर) तथा अन्नपूर्णा (8078 मीटर) प्रमुख चोटियां हैं। इसमें बुर्जिल, जोजिला (कश्मीर), बारालप्चा (हिमांचल प्रदेश), थांगला, नीति, लिपूलेख (उत्तराखण्ड) एवं नाथुला, जेलेपला (सिक्किम) का उल्लेख किया जा सकता है। रूपशू एवं देवसाई उच्च मैदान भी यहीं स्थित हैं। इस हिमालय से गंगा, यमुना व उनकी सहायक नदियों का उद्गम होता है। मिलाम, जेमू व गंगोत्री आदि हिमनद महत्वपूर्ण हैं।

(द) ट्रांस हिमालय

ट्रांस हिमालय में काराकोरम व लद्दाख श्रेणियों को शामिल करते हैं। काराकोरम को कृष्णगिरी भी कहते हैं। जो सिन्धु नदी के उत्तर में स्थित है। इसकी औसत उंचाई 3100 मीटर से 3700मीटर के मध्य पायी जाती है। इसकी सबसे महत्वपूर्ण श्रेणी काराकोरम है जिसे उच्च एशिया का मेरुदण्ड कहा जाता है। इसमें K_2(8611 मीटर), हिडेन चोटी(8068 मीटर), ब्राड चोटी(8047 मीटर), एवं गशेर ब्रम(8035 मीटर) शिखर तथा नुब्राघाटी का सियाचिन 72 किमी. शिगार घाटी के ब्याफो और बाल्टोरो 60किमी. और हुंजा घाटी के हिस्पर और बातुरा 57 किमी. बड़े हिमानी पाये जाते हैं।

पूर्वांचल की पहाड़ियां

इसका विस्तार भारत के उत्तर–पूर्वी भाग में है जिसे पूर्वांचल उच्च भूमि के नाम से जाना जाता है। इसमें मिश्मी एवं पटकोई बुम की पहाड़ियां प्रमुख है। नागा पहाड़ी नागालैंण्ड एवं म्यांमार के मध्य एक जलविभाजक है पूर्वांचल की पहाड़ियों का दक्षिणतम विस्तार मिसो पहाड़ियां है जिन्हें लुशाई की पहाड़ियां भी कहते हैं। डाफला, मिश्मी पहाड़ियां तथा नागा पहाड़ियों सबसे उंची चोटी है।

2. बृहद मैदान

यह मैदान हिमालय श्रेणी के दक्षिण तथा प्रायद्वीप पठार के उत्तर में अवस्थित है। इसका कुल क्षेत्रफल 7,77,000 वर्ग किमी. है जिसमें सिंधु का मैदान, पंजाब, हरियाणा का मैदान, राजस्थान का मरुस्थल, गंगा का मैदान तथा असम की ब्रह्मपुत्र घाटी शामिल है। इस मैदान का निर्माण उत्तर में हिमालय पर्वत एवं दक्षिण में प्रायद्वीपीय भारत से आने वाली नदियों द्वारा लाये गये जलोढ़क पदार्थों के जमाव करने से बना है। इसकी औसत गहराई 1300से 1400 मीटर के मध्य है। उत्तर भारत के विशाल मैदान को स्थलाकृतिक भिन्नता के आधार पर निम्न पांच उपभागों में बांटा जा सकता है।

I. भाबर मैदान

यह शिवालिक का जलोढ़ पंख है। भाभर का मैदान शिवालिक के तलहटी से सिन्धु से तिस्ता नदी तक लगभग 8 से 16 किमी. की चौड़ाई में फैला है व उंचाई 200से 300 मीटर है। यह एक प्रकार का पर्वतपदीय मैदान है जो नदियों द्वारा लाये गये कंकड़, पत्थर, रेत, बजरी आदि के जमा होने से बना है। यह जमाव काफी पारगम्य है जिसमें छोटी सरितायें भूमिगत हो जाती हैं।

II. तराई मैदान

भाबर के दक्षिण 15 से 30किमी चौड़ा दलदली क्षेत्र फैला हुआ है जिसे तराई क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। यहां लुप्त नदियां पुनः सतह पर प्रकट हो जाती हैं। ढाल के मंद और अपवाह के अभाव के कारण जल धरातल पर फैल जाता है जिससे यह क्षेत्र दलदल में बदल जाता है। इस क्षेत्र में अधिक नमी, घने वन, वन्य जीवन, मलेरिया बीमारी की प्रधानता पायी जाती है।

III. बांगड़ या भागड़ मैदान

यह नदी के बाढ़ सीमा से ऊपर पुरानी जलोढ़क से निर्मित उच्च भूमि है जिसमें संग्रयनों एवं अशुद्ध कैल्शियम कार्बोनेट या कंकड़ की बहुलता पायी जाती है। शुष्क क्षेत्र लवणीय एवं क्षारीय के कारण रेह कहा जाता है। बांगड़ मृदा में चिकनी मिट्टी की प्रधानता होती है जो कहीं कहीं दुमट एवं रेतीली दुमट में परिणत हो गई है।

IV. खादर मैदान

नवीन काप द्वारा निर्मित नदियों के बाढ़ मैदान को खादर या बेट (पंजाब) कहते हैं। प्रतिवर्ष बाढ़ के दौरान नई जलोढ़ व रेत को लाया जाता है जो बहुत ही उर्वरक होते हैं। इसमें बालू, रेत, पंक एवं चिकनी मृदा के जमाव पाया जाता है। इस मृदा में जीवाश्म पाया जाता है। पश्चिमी बंगाल, बिहार एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश में खादर का विस्तार पाया जाता है।

V. डेल्टा मैदान

यह खादर मैदान का विस्तार ही है। इसका विस्तार निचली गंगा घाटी के लगभग 1.86 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। इसमें पुरानी जलोढ़ व रेत, नये जलोढ़ व रेत तथा दलदल शामिल होता है। गंगा का डेल्टा एक सक्रिय डेल्टा है जो बंगाल की खाड़ी की ओर सतत विस्तार कर रहा है।

प्रादेशिक विशेषताओं के आधार पर गंगा मैदान को निम्न चार मध्य स्तरी प्रदेशों में बांटा गया है–

1. सिन्धु का मैदान

इसका निर्माण सिन्धु नदी द्वारा लाये जलोढ़कों से हुआ है। इस मैदान के उत्तर में मरुस्थली धरातल पाया जाता है जबकि पश्चिम के क्षेत्र में जमाव बांगर से हुआ है जो पुरातन जमाव है। इस मैदान का कुल क्षेत्रफल 50 हजार वर्ग किमी है। इसके दक्षिण के क्षेत्रों में रेतीली मृदा मिलती है जहां अनेक छोटी–छोटी झीलें पायी जाती हैं। प्राचीन लम्बे संकरे गड्डा की आकृति के मार्ग को धोरोस कहते हैं। जब धोरोस सूख जाते हैं तो लवणीय झील को ढॉढ़ कहते हैं।

2. पंजाब हरियाणा का मैदान

इसका विस्तार पंजाब, हरियाणा, दिल्ली में है। पंजाब का नामकरण पाँच नदियों के प्रवाह के कारण पड़ा है। झेलम, चिनाब, रावी, व्यास व सतलज पंजाब की प्रमुख नदियां हैं। इस मैदान का विस्तार 640 किमी. है जिसका कुल क्षेत्रफल 1.75 लाख वर्ग किमी. है। पंजाब में प्रवाहित होने वाली नदियों के मध्य का भाग दोआब कहलाता है। पंजाब मैदान के क्षेत्रफल निम्नलिखित हैं–

1. सतजल और व्यास के मध्य– बिस्त जलंधर दोआब।
2. व्यास और रावी के मध्य– बारी दोआब।
3. रावी और चिनाब के मध्य– रचना दोआब।
4. चिनाब और झेलम के मध्य– चाज दोआब।
5. चिनाब, झेलम और सिन्धु के मध्य– सिंधु सागर दोआब।

इन पांचों नदियों द्वारा लाकर बड़ी मात्रा में जलोढ़क जमा किये गये हैं, जिन्हें अब इन्हीं नदियों द्वारा काटकर अपना मार्ग बना लिए गये हैं।

3. गंगा का मैदान–

यह उत्तरी मैदान का मध्यवर्ती मैदानी भाग है इसका निर्माण गंगा, यमुना, रामगंगा, घाघरा, गोमती व गंडक तथा प्रायद्वीपीय भारत से चम्बल, बेतवा, केन, सोन नदियों द्वारा लाये गये जलोढ़कों के जमाव से हुआ है। इस मैदान में बिहार, उत्तर प्रदेश, झाखण्ड व पश्चिम बंगाल राज्य स्थित है। सम्पूर्ण मैदान उप–विभागों में गंगा, यमुना, दोआब, रूहेलखंड का मैदान, अवध का मैदान, बिहार का मैदान, उत्तरी बंगाल का मैदान और राढ का मैदान प्रमुख हैं। गंगा के मैदान के पश्चिमी भाग को रूहेलखण्ड का मैदान तथा पूर्वी भाग को अवध का मैदान कहते हैं। जिसमें गंगा, यमुना दोआब सबसे बड़ा है। इसका सामान्य ढाल उत्तर से दक्षिण तक है। यह ढाल बहुत ही कम है जिसमें बांगर एवं खादर स्पष्ट दृष्टिगत होते हैं। गंगा–यमुना दोआब में अनेक स्थानों पर बांगर खादर से उंचे होते हैं तो इन्हें खोले कहते हैं। यहां के दोआब में मिलने वाले विस्तृत वायुढ़ जमावों को भूड़ कहते हैं। इस दोआब के पूर्व में रूहेलखण्ड का मैदान स्थित है। यह उत्तर प्रदेश में 35 हजार वर्ग किमी. में फैला है।

4. ब्रह्मपुत्र का मैदान

इस मैदान का विस्तार असम में धुबरी से सदिया तक फैला हुआ है। इसकी असम में चौड़ाई केवल 90से 100किमी. ही है। ब्रह्मपुत्र नदी अपने साथ अत्यधिक मात्रा में मिट्टी बहाकर लाती है जो किसी अवरोधक के आते ही जमा हो जाती है। ब्रम्हपुत्र के मार्ग में अनेक छोटे बड़े द्वीप पाये जाते हैं, इसमें माजूली द्वीप सबसे बड़ा है। इसे यूनेस्को ने सन् 2000में विश्व विरासत स्थल घोषित किया है।

5. थार का रेगिस्तान

यह पंजाब के शुष्क मैदान का दक्षिणवर्ती विस्तार है जो आगे चलकर राजस्थान के शुष्क मैदान में मिल जाता है। यह मैदान 650 किलोमीटर लम्बा तथा लगभग 2 लाख वर्ग किमी. में विस्तृत है। यह मैदान एक उबड़–खाबड़ वाला है, जिसकी औसत उँचाई 325 मीटर है। इस क्षेत्र की प्रमुख नदी लूनी है। पश्चिमी भाग का रेतीला शुष्क मैदान तथा इसके एवं अरावली के मध्य समानान्तर रूप में स्थित भाग का राजस्थान बांगड़ प्रदेश कहते हैं।

3. प्रायद्वीपीय उच्च भूमि

यह भूमि उत्तरी मैदान के दक्षिण में त्रिभुजाकार रूप में फैला है। यह लगभग 16 लाख वर्ग किलोमीटर में है। इसका विस्तार दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान, मध्य प्रदेश, तेलंगाना, आन्ध्रप्रदेश, उड़ीसा, झारखण्ड, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पूर्वी केरल, छत्तीसगढ़ व तमिलनाडु राज्य में फैला है। इस पठार की औसत उंचाई 600 से 900मीटर है। इसका ढाल पूर्व एवं दक्षिण–पूर्व की ओर है। यह पठार काफी प्राचीन होने के कारण लम्बे समय से अपरदनकारी क्रियाओं से भ्रंश एवं विभंजन की क्रियाएं भी सतत रूप में होती रही हैं। सम्पूर्ण प्रदेश को भू–आकृतिक विविधता के कारण निम्नलिखित उपभागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. अरावली पर्वत श्रेणी

यह पठार के उत्तर–पश्चिम भाग में सबसे प्राचीन पर्वत है। इसका उद्‌गम प्रीकैम्ब्रियन काल में हुआ था। इसका विस्तार दिल्ली से लेकर दक्षिणी–पश्चिमी में गुजरात तक है। यह पर्वत काफी प्राचीन होने के कारण इस पर अपरदनकारी प्रक्रियाऐं काफी समय से सक्रिय हैं जिससे यह वर्तमान में एक अवशिष्ट पर्वत का रूप धारण कर लिया है। इसका सर्वोच्च ऊंची चोटी गुरू शिखर (1722 मीटर) है। अरावली पर्वत एक महान जलविभाजक के रूप में स्थित है।

2. मालवा का पठार

यह पठार उत्तर में अरावली, दक्षिण में विंध्याचल तथा पूरब में बुंदेलखंड से घिरा है। इस पठार में चम्बल और बेतवा नदियां प्रवाहित होती हैं। यहां लावा का जमाव पाया जाता है जिससे काली मृदा का निर्माण हुंआ है। इसका विस्तार दक्षिण–पूर्वी राजस्थान, मध्य प्रदेश तथा दक्षिणी–पश्चिमी उत्तर प्रदेश में है।

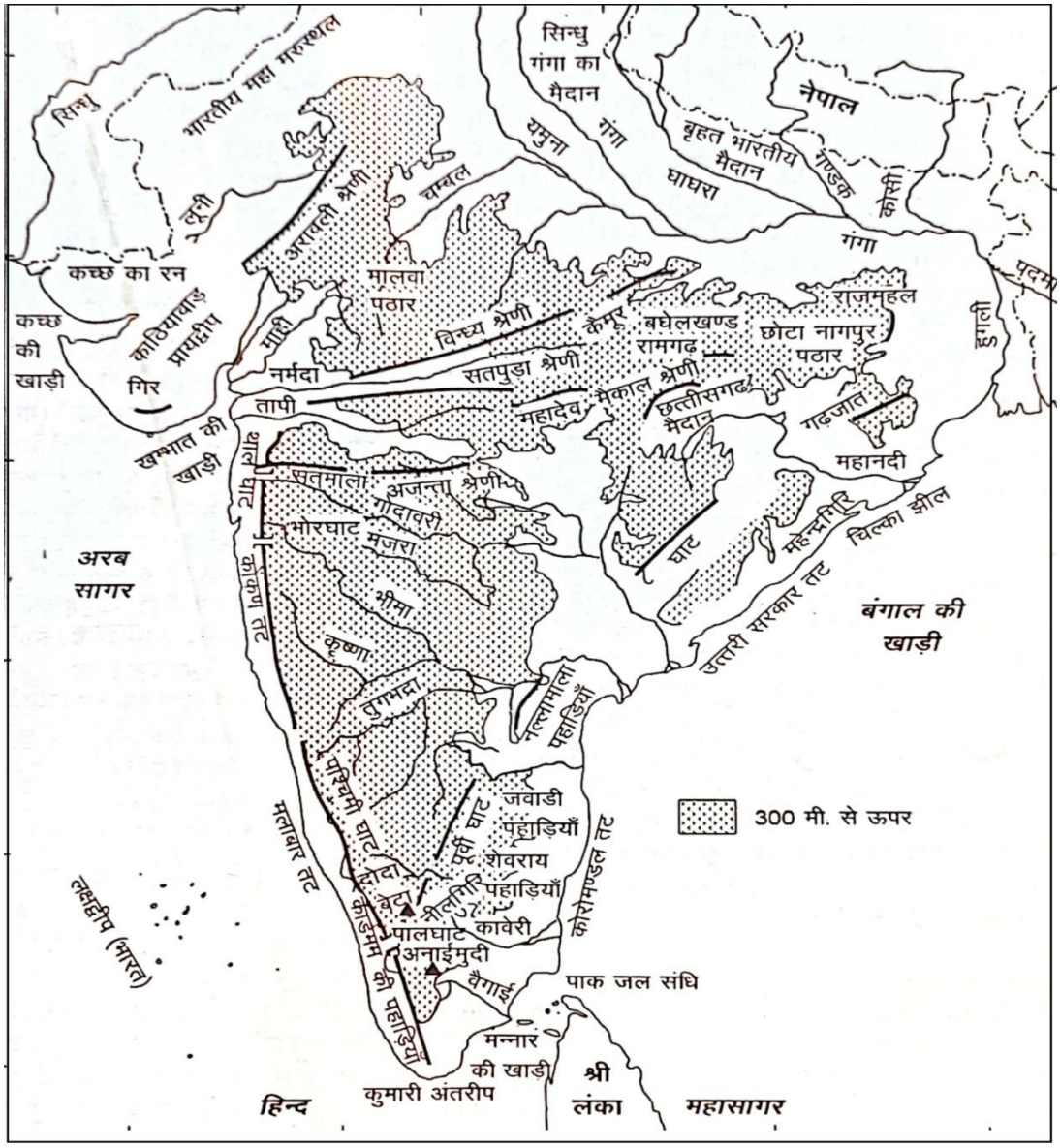

चित्र–6

3. बुन्देलखण्ड का पठार

इसमें उत्तर प्रदेश के 5 जनपदों (जालौन, झांसी, ललितपुर, हमीरपुर एवं बांदा) तथा मध्य प्रदेश के 4जनपदों (दतिया, टीकमगढ़, छतरपुर एवं पन्ना) का 54560वर्ग किलोमीटर क्षेत्र शामिल है। यह मुख्यतः रवेदार आग्नेय और कायान्तरित शिलाओं से निर्मित है। इसका प्रमुख विस्तार मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश में है। इसकी औसत उंचाई 100 से 300मीटर है जिसमें इधर–उधर मेसा एवं बूटी भी मिलती है।

4. बघेलखण्ड का पठार

यह मालवा के पूर्व में भाण्डेर के पठार व कैमूर की पहाड़ियों के बाद मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ की सीमा पर स्थित है। इस पठार के दक्षिण में मैकाल श्रेणी आ जाती है। इसका पूर्वी भाग ग्रेनाइट का व पश्चिमी भाग बलुआ पत्थर का बना हुआ है। इसके उत्तर से सोन नदी बहती है।

5. विंध्ययन उच्च भूमि

बुन्देलखण्ड के दक्षिण में तथा मालवा के पूर्वी में विंध्ययन उच्च भूमि एक कगार के रूप में पूर्व से पश्चिम में फैला है। इसकी संरचना समतल शिखर युक्त अभिनतियों के रूप में है। इस वर्ग की प्रमुख श्रेणियां कैमूर, रीवा व

भाण्डेर का पठार है। इस पठार की सामान्य उंचाई 300से 650मीटर है। प्राचीन युग की परतदार चट्टानों से निर्मित यह पर्वत पठार उत्तर भारत को दक्षिण भारत से अलग करता है।

6. छोटानागपुर का पठार

इसका विस्तार झारखण्ड में है। यह सोन नदी के पूर्व में स्थित है। यह पठार हजारीबाग में सर्वाधिक उंचा है जहां इसकी उंचाई 1070मीटर है। रांची भी इसी पठार का भाग है। रांची के उत्तर में हजारीबाग के अतिरिक्त कोडरमा का पठार है इसके पूर्व में नेतरहाट एवं जासपुर घाट मिलते हैं। ये पठार लेटेराइट के समतल टोपीनुमा आवरण रखता है जिन्हें पाट कहते हैं।

7. दक्कन का पठार

यह पठार क्रिटेशियस काल में हुए दरारी उद्‌गार से फैला लावा द्वारा बना हुआ है। इसकी औसत गहराई 600से 1500मीटर है। यह पठार प्रायद्वीपीय भारत के बड़े भाग पर फैला हुआ है। इसका विस्तार उत्तर में सतपुड़ा, मैकाल श्रेणी, नर्मदा एवं ताप्ती घाटियों के मध्य स्थित है। यह पश्चिम राजपिपला पहाड़ियों से पूर्व में महादेव पहाड़ी तक है। सतपुड़ा की धूपगढ़ (1350 मीटर) तथा महादेव की पंचमढ़ी (1117 मीटर) सबसे उंची चोटी है। सतपुड़ा के दक्षिण में लगभग सम्पूर्ण महाराष्ट्र में बेसाल्ट से निर्मित दक्कन का पठार स्थित है। इसके तीन ओर गोदावरी, भीमा एवं कृष्णा नदी घाटियां हैं। गोदावरी नदी तेलंगाना पठार को दो भागों में बांटता है। कृष्णा नदी के दक्षिण में रायलसीमा पठार है।

8. कर्नाटक या मैसूर का पठार

कर्नाटक पठार का विस्तार कर्नाटक राज्य एवं केरल के कन्नूर, कासरगौड़, कोझिकोड एवं वायनाड जनपदों में लगभग 183340 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला है। इसमें आर्कियन से लेकर नूतन युग तक शैले पायी जाती हैं। धारवाड़ क्रम के फाइलाइट शिष्ट एवं स्लेट के जमाव धारवाड़, गडग, बेल्लारी, शिमोगा, देवनगरी एवं चित्रदुर्ग जनपदों में पाया जाता है जिसमें लोहा, मैग्नीज, तांबा, सीसा एवं स्वर्ण (कोलार खान) के भण्डार निहित हैं। इस क्षेत्र की औसत उंचाई 600 से 900मीटर के बीच पाई जाती है। मूलनगिरी (1923 किमी.) सबसे उंची चोटी है। इसे तीन उप भागों में बांटा जा सकता है–**क–मलनाद, ख–उत्तरी उच्चभूमि, ग–दक्षिणी उच्च भूमि।**

9. पश्चिमी घाट

इसको सहयाद्रि भी कहते हैं इसका विस्तार पश्चिमी सागर तट के समानान्तर लगभग 1600किमी. कि लम्बाई में ताप्ती के मुहाने से कन्याकुमारी तक है। यह एक ब्लॉक पर्वत है जिसका निर्माण स्थल के एक खण्ड का अरब सागर में अवसंवलन के कारण हुआ है। इसका पश्चिमी ढाल तीव्र एवं खड़ा है जबकि पूर्वी भाग मन्द ढाल का है। पश्चिमी घाट प्रायद्वीप के वास्तविक जलविभाजक का निर्माण करते हैं। पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदियां सकरे घाटी से होकर तीव्र गति से अरब सागर की ओर बहती हैं एवं जल प्रवाह का भी निर्माण करते हैं। इसकी औसत उंचाई 1000–1300मी. पाई जाती है। इस पर्वत का निर्माण बेसाल्ट से हुआ है। गोदावरी, भीमा एवं कृष्णा नदियों का उद्‌गम इसी क्षेत्र में स्थित हैं। हरिश्चन्द्रगढ़ (1424 मीटर), महाबलेश्वर (1438 मीटर), कल्सुबाई (1646 मीटर) एवं सल्हर (1567 मीटर) इस क्षेत्र की प्रमुख चोटियां हैं। थालघाट एवं भोरघाट यहां के प्रमुख दर्रे हैं। नीलगिरी के समीप पश्चिमी घाट पूर्वी घाट से मिलकर एक पर्वत ग्रन्थ का निर्माण करते हैं जिसका सर्वोच्च शिखर दोदाबेट्टा (2637 मीटर) है। नीलगिरी से दक्षिण पालघाट दर्रा तमिलनाडु को केरल से जोड़ता है। कोडाइकलान नामक पर्यटन स्थल पालनी की पहाड़ी पर तथा उटी (उटकमंडलम) नामक पर्यटन स्थल नीलगिरी कि पहाड़ी पर स्थित है।

10. पूर्वी घाट

इसका विस्तार बंगाल की खाड़ी के समानान्तर लगभग 1300 मीटर में है। यह एक असतत क्रम है जो कटे–फटे रूप में है। इसकी औसत उंचाई 600मीटर है। इसका उत्तरी विस्तार छत्तीसगढ़ के दक्षिण में दण्डकारण्य सीमा पर ओडिशा के फुलवनी से आन्ध्र प्रदेश के ऐलेरू तक है तथा दक्षिणी भाग गोदावरी नदी के दक्षिण से नीलगिरी तक है। इसको महानदी, गोदावरी, कृष्णा व कावेरी ने काट दिया है। यहां सिंगुराजु (उड़ीसा) 1516मीटर

जबकि महेन्द्रगिरी 1501 मीटर इस क्षेत्र की दूसरी सबसे उंची चोटियां है। खोण्डमल, नल्लामलाई, बेलिकोंडा, पालकोंडा, पंचमलाई तथा शेवराय व जावदी आदि नामों से भी जाना जाता है। कुडप्पा एवं कुर्नुल तक ही पहाड़िया सतत रूप में पायी जाती हैं।

11. शिलांग का पठार

यह प्रायद्वीपीय पठार का भाग है जो मेघालय में स्थित है। यह पठार पूर्व में सतत रूप में था लेकिन अधोभ्रंसन के कारण यह पृथक हो गया है जिसे राजमहल गेप कहते हैं। इस भ्रंशन में गंगा–ब्रह्मपुत्र नदियों के द्वारा जलोढ़ पदार्थों से भर दिया गया है। इसकी लम्बाई 240 किमी. एवं 96किमी. चौड़ी है। इसका औसत उंचाई 1000–1300मीटर के मध्य है। इस पठार के उत्तर में मिकिर एवं रेगंमा की पहाड़ियां है। यहां की प्रमुख चोटियों में शिलांग (1823 मीटर) व गारो पहाड़ियों की सर्वोच्च चोटी नाकरेक है।

तटीय मैदान एवं द्वीप समूह

इसका विस्तार 7516.6किलोमीटर सागरीय तट रेखा के सहारे स्थित मैदान है इसमें 6100 किमी. मुख्य भूमि की तट रेखा तथा शेष द्वीप समूह की है। इसका विस्तार पश्चिम तथा पूर्व तटीय मैदान शामिल है।

1. पूर्वी तट मैदान

इसका विस्तार पश्चिम बंगाल में गंगा के मैदान से लेकर कन्याकुमारी तक है। यह तट उन्मज्जन प्रकार का है जहां अपतटीय रोधिकायें, सागरीय पुलिन, लैगून तथा रेतीले कटक मिलते हैं। यह तट केप कोमोरिन से कृष्णा एवं गोदावरी डेल्टा तक लगभग 1100किमी में 100से 130किमी. चौड़ा है। इसकी औसत चौड़ाई 80 से 150 किमी है। उड़ीसा (उत्कल), आन्ध्रप्रदेश तथा तमिलनाडु (कोरोमण्डल) में इसका विस्तार है। यह तट कम कटा–फटा होने के कारण यहां बन्दरगाहों की संख्या कम पाया जाता हैं।

2. पश्चिमी तटीय मैदान

यह प्रायद्वीपीय भारत के पश्चिमी तट के सहारे एवं अरब सागर के मध्य एक सकरी पट्टी के रूप में गुजरात से कन्याकुमारी तक विस्तृत है। इसकी औसत चौड़ाई 64किमी. तथा औसत उंचाई 150 मीटर है। यह 1600 किमी. लम्बा है। नर्मदा, ताप्ती, माही व साबरमती इस मैदान में पूर्व से पश्चिम में तीव्र ढाल के अनुरूप प्रवाहित होता है। यह सम्पूर्ण मैदान तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम– दमन एवं दीव का काठियावाड़ तट, दूसरा दमन एवं गोवा के मध्य कोंकण तट व तीसरा गोवा से कन्याकुमारी तक मालाबार तट है।

द्वीप समूह

भारत के सागरों में दो प्रमुख द्वीप समूह हैं। अरब सागर में लक्षद्वीप एवं अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह, इसके अतिरिक्त कुछ द्वीप बिखरे रूप में भी हैं। लक्षद्वीप समूह में 25 द्वीप हैं जो 29 वर्ग किमी. में फैला है। इसमें मिनिकाय लक्षद्वीप समूह का सबसे बड़ा एवं बत्रा सबसे छोटा द्वीप है। कवरती द्वीप लक्षद्वीप की राजधानी है। लक्षद्वीप समूह प्रवाल से बना है।

बंगाल की खाड़ी के द्वीपों में प्रमुख अण्डमान एवं निकोबार द्वीप अवस्थित हैं। 204 द्वीप लगभग 590 किमी. की लम्बाई में फैला है। अण्डमान का सबसे उंची चोटी सैण्डल चोटी है। इस द्वीप समूह का निर्माण टर्शियरी काल में हिमालय के साथ बना माना जाता है जबकि कुछ विद्वान ज्वालामुखी से बना मानते हैं। अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह का क्षेत्रफल 8326.83 वर्ग किमी है। अण्डमान द्वीप समूह में बैरन एवं नारकोण्डम सक्रिय ज्वालामुखी द्वीप हैं। कुछ अन्य द्वीप में गंगा के मुहाने पर न्यूमूर द्वीप, हुगली के सामने सागर द्वीप, महानदी व ब्राह्मणी के डेल्टा में शोर्ट द्वीप व व्हीलर द्वीप, चिल्का के उत्तर में भासरा माडरा द्वीप प्रमुख हैं क्रोकोडाइल, अण्डाकोटा, पम्बन द्वीप हैं।

4.5 अपवाह तन्त्र

भारत में प्रतिवर्ष 1869अरब घन मीटर धरातली जल राशि का आकलन किया गया है। सतही जल के मुख्य साधन में नदी, झील, तालाब तथा पोखरा आदि है। सतही जल का अधिकांश भाग नदी के माध्यम से बहता है। भारत में विशाल अपवाह तन्त्र व लम्बाई वाली विभिन्न नदियां हैं। अपवाह तन्त्र से अभिप्राय नदियों के उस तन्त्र से है जिससे धरातलीय जल प्रवाहित होती है।

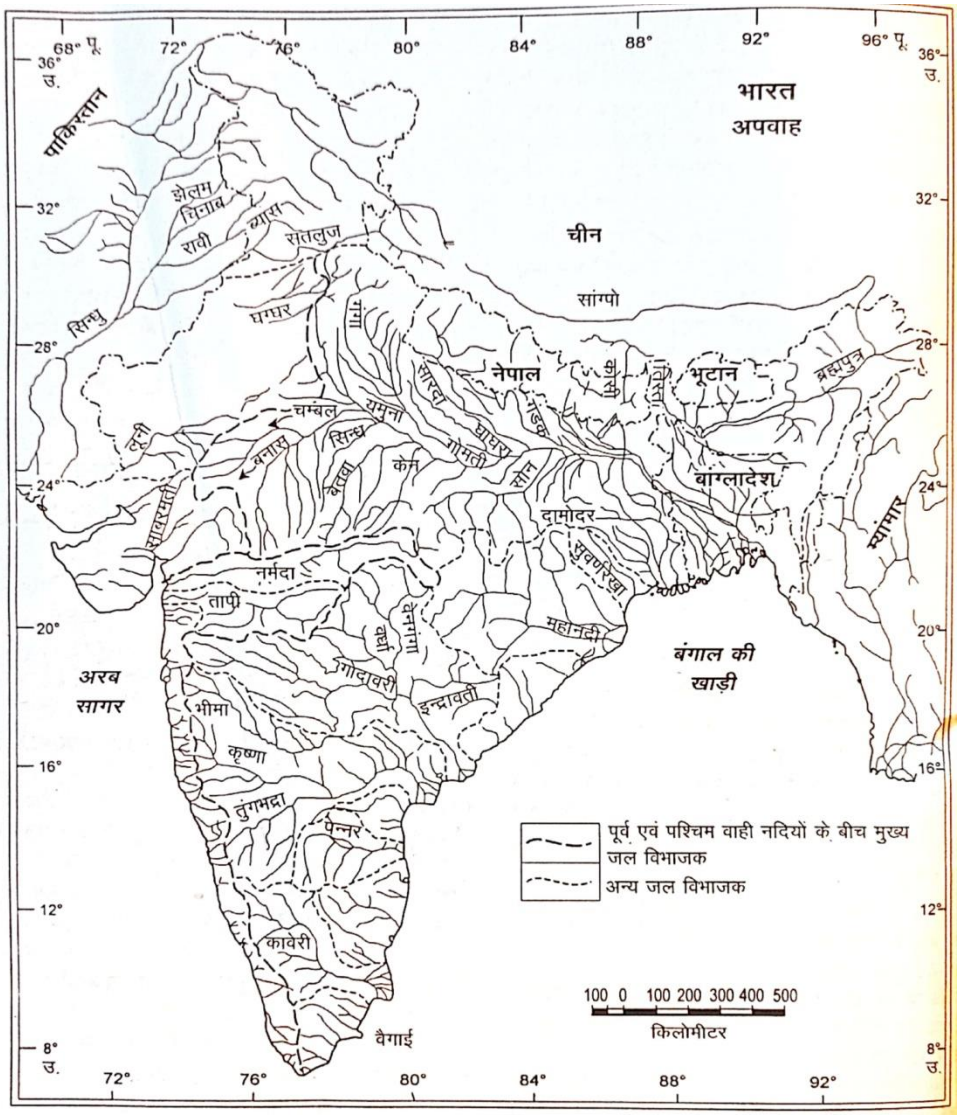

चित्र–7

भारत का अपवाह तन्त्र को दो प्रमुख तन्त्रों में विभाजित किया जा सकता है–

1. बंगाल की खाड़ी का अपवाह तन्त्र

2. अरब सागरीय अपवाह तन्त्र

इन्हें दिल्ली श्रेणी, अरावली, सहयाद्रि एवं अमरकंटक द्वारा एक–दूसरे से एक–दूसरे से अलग किया जाता है। देश की 77 प्रतिशत अपवाह तन्त्र बंगाल की खाड़ी तथा 23प्रतिशत अरब सागरीय अपवाह तन्त्र का है। इस प्रकार उत्पत्ति के आधार पर भारत की अपवाह को हिमालय अपवाह एवं प्रायद्वीपीय अपवाह में विभाजित किया जा सकता है।

भौमिकीय संरचना व शैल की विशेषता के आधार पर भारत की नदियां विभिन्न प्रकार के अपवाह प्रतिरुप का निर्माण किया है। सिन्धु, ब्रह्मपुत्र, सतलुज एवं अरुणा नदियों द्वारा पूर्ववर्ती, दामोदर, सुवर्णरेखा, चम्बल एवं बनास द्वारा अध्यारोपित, गंगा के मैदान एवं दक्षिण भारत की नदियों द्वारा द्रुमाकृतिक, कोसी और इसकी सहायक नदियों द्वारा आयताकार, सोन, महानदी एवं नर्मदा द्वारा अरीय, सिहंभूमि में जालीदार, बिजावर एवं पश्चिमी तटीय मैदान में समानान्तर, चम्बल, केन सिन्ध, बेतवा एवं सोन द्वारा परिवर्ती, नर्मदा, ताप्ती, पेरियार नदियों द्वारा अनुगामी अपवाह प्रतिरूप का निर्माण किया जाता हैं।

A. हिमालयी अपवाह

इस अपवाह में मुख्य रूप से सिन्धु, गंगा एवं ब्रम्हपुत्र घाटी क्षेत्र शामिल हैं। वहां की अधिकांश नदियां सतत वाही हैं। सिन्धु, ब्रम्हपुत्र, सतलुज, अलकनन्दा, करनाली, गंडक, कोसी आदि नदियां पूर्ववर्ती है जो हिमालय के उद्‌गम के पहले से ही प्रवाहित है। हिमालयी अपवाह में मुख्य तीन नदी तन्त्रों का सम्मिलित किया जाता है–

1. सिन्धु नदी तन्त्र

सिन्धु नदी का उद्‌गम कैलाश चोटी के पूरब में बोखर चू हिमानी के पास से है। यह लद्‌दाख श्रेणी को काटकर गिलगिट के पास एक गहरा गार्ज का निर्माण करता है। इसकी कुल लम्बाई 2880 किमी. तथा अपवाह क्षेत्र 11,65,000वर्ग किमी. है लेकिन भारत में 3,21,290वर्ग किमी. है। इसके बाएं एवं दाएं दोनों तरफ से कई हिमालयी नदियां आकर मिलती हैं। इसमें गरतंग, जास्कर, द्रास, श्योक, शिगार, नुब्र, गिलगिट और हुंजा प्रमुख है। मिठान कोट के उत्तर में इसमें पंचनद (सतलज, ब्यास, रावी, चिनाब एवं झेलम) का मिलाप होता है तथा अरब सागर में विलीन हो जाती हैं।

झेलम सिन्धु की प्रमुख सहायक नदी है जो शेषनाग से निकलकर जम्मू के पास चिनाब से मिल जाती है। इसका भारत में कुल अपवाह क्षेत्र 2,84,90वर्ग किमी. है।

चिनाब को आसकिनी या चन्द्रभागा भी कहते हैं। यह बारालाचा ला के पास से निकलकर पाकिस्तान में प्रविष्ट हो होती है। इसकी कुल लम्बाई 1180किमी. तथा अपवाह क्षेत्र 26755वर्ग किमी है।

रावी नदी को परुषणी या इरावती भी कहते हैं। इसका उद्‌गम हिमांचल प्रदेश के बंगाहल बेसिन से होता है। इसकी कुल लम्बाई 725किमी तथा अपवाह क्षेत्र 5957 वर्ग किमी है।

ब्यास (विपास या अर्गिकिया) का उद्‌गम ब्यासकुण्ड से है तथा हरिके पास सतलुज में मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 470किमी तथा अपवाह क्षेत्र 26900वर्ग किमी है।

सतलज का उद्‌गम राक्षस झील से होती है। तिब्बत में लांगचेन खम्वाब के नाम से जाना जाता है। यह मिठानकोट के पास सिन्धु से मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 1150किमी तथा अपवाह क्षेत्र 24087 वर्ग किमी. है।

2. गंगा नदी तंत्र

गंगा नदी तन्त्र का विस्तार देश के लगभग एक–चौथाई क्षेत्र पर पाया जाता है। इससे उपजाऊ मैदान का निर्माण होता है। गंगा नदी का उद्‌गम उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी जनपद के गोमुख के निकट गंगोत्री हिमनद से होती है। देवप्रयाग में भागीरथी अलकनन्दा के मिलने से संयुक्त धारा को गंगा के नाम से जाना जाता है। बांग्लादेश में इस नदी को पद्‌मा कहते हैं। यह भागीरथी–हुगली के रूप में पश्चिम बंगाल में प्रवेश करती है और बंगाल की खाड़ी में गिरती है। इसकी कुल लम्बाई 2525किमी. तथा कुल अपवाह क्षेत्र 951600वर्ग किमी. है। गंगा नदी के बाएं तट पर रामगंगा, गोमती, टोन्स, घाघरा, गण्डक, बाघमती और कोसी सहायक नदियां आकर मिलती हैं तथा दाये तट के सहारे यमुना, सोन, पुनपुन, दामोदर और रूपनाराण हैं। यमुना नदी की कुल लम्बाई 1384किमी तथा अपवाह क्षेत्र 366228 वर्ग किमी है। इसका उद्‌गम बन्दरपूंछ के पास यमुनोत्री हिमनद से हुआ है तथा गंगा के समानान्तर प्रवाहित होकर प्रयागराज में गंगा से मिल जाती है। इसकी प्रमुख सहायक नदी में टोंस, गिरि, चम्बल, सिन्ध, बेतवा, केन एवं हिंदन हैं।

चम्बल नदी मध्य प्रदेश के मालवा पठार के महू के निकट से निकलती है। काली सिन्ध, सिप्ता, पार्वती एवं बनास इसकी प्रमुख सहायक नदियां है। चम्बल ने अपरदन से उत्खात या बीहड़ बना रखा है।

रामगंगा नदी का उद्‌गम अल्मोडा जनपद के द्वाराघाट के पास से है तथा कन्नौज के पास गंगा से मिल जाती है।

घाघरा नदी की उत्पत्ति मापचा चुंगी हिमनद से होता है। छपरा के पास गंगा नदी से मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 1080किमी है।

गंडक नदी काली गंडक एवं त्रिशूल गंगा नदियों के मिलने से बनती है। हाजीपुर के समीप गंगा नदी में मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 425 किमी. तथा अपवाह क्षेत्र भारत में 9540वर्ग किमी है।

कोसी नदी गंगा की बड़ी सहायक नदी है। यह सात नदियों के मिलने से बनती हैं। कोसी अपना मार्ग परिवर्तन के कारण प्रसिद्ध है इसी लिए इसे बिहार का शोक कहते हैं। यह मनिहारी के पास गंगा से मिल जाती है। इसकी कुल लम्बाई 730किमी. तथा भारत में इसका अपवाह क्षेत्र 21500वर्ग किमी है।

सोन नदी गंगा नदी के दाहिने तट की प्रमुख सहायक नदी है। कुल लम्बाई 780किमी. तथा अपवाह क्षेत्र 71900वर्ग किमी. है। यह अमरकंटक से निकलकर मानेर के पश्चिम में गंगा से मिल जाती है।

दमोदर नदी को बंगाल का शोक कहा जाता है। इसका उद्‌गम छोटा नागपुर पठार से है। इसकी लम्बाई 541किमी तथा अपवाह क्षेत्र 22000वर्ग किमी. है।

3. ब्रह्मपुत्र नदी तंत्र

इसका कुल विस्तार 5,80,000वर्ग किमी. क्षेत्र पर है जिसमें से 2,58,008 वर्ग किमी क्षेत्र भारत में स्थित है। इसका स्रोत तिब्बत में मानसरोवर झील के निकट चेमायुंग डंग हिमानी में है। यह भारत में मध्य हिमालय को काटकर सियांग या दिहांग नाम से भारत में प्रवेश करती है इसके बाद इसे ब्रम्हपुत्र के नाम से जानते हैं। इसमें सुबनश्री, कामेंग, धनश्री, जैभोरली, मानस, संकोश एवं तिस्ता उत्तर से तथा बूढ़ी दीहांग दिसांग एवं कोपाली दाये से आकर मिलती हैं।

B. प्रायद्वीपीय अपवाह के नदी तन्त्र

इसके अन्तर्गत निम्न नदियों को शामिल किया गया है।

नर्मदा नदी इसका उद्‌गम अमरकंटक के पश्चिमी भाग से है। विन्ध्याचल एवं सतपुड़ा के मध्य भ्रंश घाटी से प्रवाहित होती है। अरब सागर में एश्चुअरी बनाती हुई गिरती है। इसकी कुल लम्बाई 1312किमी. तथा कुल क्षेत्र 9,87,95 किमी. है।

ताप्ती नदी भी भ्रंश से होकर प्रवाहित होती है और अरब सागर में अपना जल गिराती है। इसका उद्‌गम बेतूल जनपद में मुल्तान के पास सतपुड़ा श्रेणी से है। 724किमी लम्बी तथा 65,145 वर्ग किमी क्षेत्र का जल बहा कर ले जाती है।

साबरमती नदी मेवाड़ की पहाड़ी से निकलकर खम्भात की खाड़ी में गिरती है इसकी कुल लम्बाई 320किमी है।

महानदी रायपुर जिले के सिहावा के पास से निकलती है और पाराद्वीप के पास बंगाल की खाड़ी में गिरती है। शिवनाथ, हंसदेव, मांद और ईब, जोक, उंग एवं तेल प्रमुख सहायक नदियां हैं। यह 858किमी. लम्बी है।

सुवर्णरेखा का उद्‌गम रांची के पठार से है तथा पश्चिम बंगाल की खाड़ी में गिरती है। इसकी कुल लम्बाई 395किमी. है।

गोदावरी नदी प्रायद्वीपीय भारत की सबसे बड़ी नदी है जो 1464किमी कि लम्बाई मे 312812वर्ग किमी क्षेत्र का जल को भी समाहित करती है। प्रवरा, पूर्णा, मंजरा, पेनगंगा, वेनगंगा, वर्धा, प्राणहिता, इन्द्रावती, ताल एवं सबरी इसकी प्रमुख सहायक नदियां हैं।

कृष्णा नदी प्रायद्वीपीय भारत की दूसरी सबसे बड़ी नदी है यह महाबालेश्वर के निकट से निकलती है। यह 1400किमी. लम्बाई में 258948वर्ग किमी क्षेत्रफल में विस्तृत है। सहायक नदियों कोयना, येरला, बरना, पंचगंगा, दूधगंगा, घाटप्रभा, मालप्रभा, भीमा, तुंगभद्रा और मूसी है।

पेन्नर नदी की उत्पत्ति कर्नाटक के कोलार जनपद से है। इसका 55213वर्ग किमी अपवाह क्षेत्रफल है।

कावेरी नदी का उद्‌गम कर्नाटक के कोडगू जनपद की ब्रम्हगिरी पहाड़ी से है तथा अपना जल बंगाल की खाड़ी में विसर्जित करती है। कावेरी को दक्षिणी गंगा भी कहा जाता है। सहायक नदियों में हेमावती, लोकपावनी, शिम्शा, हेरंगी अर्कावती, लक्ष्मण तीर्थ, सुवर्णवती, भवानी एवं अम्रावती है।

ताम्रपर्णी नदी का उद्‌गम पश्चिमी घाट के अगस्तमलाई से है जो मन्नार की खाड़ी में गिरती है।

लूनी नदी अरावली पहाड़ी से निकलकर कच्छ के दलदल में लुप्त हो जाती है। इसकी सहायक नदी में

सुरसती, बुन्दी, सुकरी एवं जवाई है।

पश्चिमी सहायाद्रि की नदियां

इसके अन्तर्गत सूर्या, कालू, सावित्री, गोवा की माण्डवी, तेरखल, चपोरा, जुवरी, साल, तालपोना, काली नदी, गंगावती, शरावती, सुवर्णा, नेत्रवती बेपोर, पोन्नानी, भरतपूझा, पेरियार और पम्बा हैं।

4.6 सारांश

आपने इस प्रथम इकाई में भारत की भौमिकीय संरचना, भौतिक प्रदेश तथा अपवाह तन्त्र से सम्बन्धित अध्ययन किया है। आप भारत के भौमिकीय संरचना के विकास में प्री कैम्ब्रियम युग की शैलें, पुराण समूह की शैलें, द्रविड़ियन युग की शैले तथा आर्यन युग की शैले, भौतिक प्रदेश में हिमालय पर्वत समूह, बृहद मैदान, प्रायद्वीपीय उच्चभूमि और तटीय मैदान और द्वीप समूह तथा अपवाह तन्त्र में अपवाह तन्त्र, हिमालयी अपवाह तन्त्र, प्रायद्वीपीय अपवाह तन्त्र तथा पश्चिमी घाट की नदियों को समझ पाये होंगे।

4.7 शब्द सूची

पूर्ववर्ती Antecedent तुंगता Altitude

उत्खात भूमि Bad land द्रोणी Basin

अनुगामी Consequent जलोढ़ पंख Alluvial Fan

बालूकामय Arenaceous बांगड़ मैदान Bangar Plain

भाबर मैदान Bhabar Plain द्रुमाकृतिक Denatritic

4.8 परीक्षापयोगी प्रश्न

प्रश्न–1 करेवा भू–आकृति कहां पायी जाती है?

(क) उत्तरी–पूर्वी हिमालय (ख) पूर्वी हिमालय

(ग) हिमांचल उत्तराखण्ड हिमालय (घ) कश्मीर हिमालय

प्रश्न–2 खनिज संसाधन की दृष्टि से भारत का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भौमिकी क्रम–

(क) विन्ध्य (ख) दक्कन ट्रैप

(ग) धारवाड़ (घ) गोण्डवाना

प्रश्न–3 भारत में कैम्ब्रियन पूर्व महाकल्प की चट्टानें अधिकांशतः पायी जाती हैं–

(क) शिवालिक में (ख) पश्चिमी घाट में

(ग) अरावली में (घ) गोंडवाना में

प्रश्न–4 भारत में कोयला उत्पन्न करने वाली भौमिकी समूह–

(क) धारवाड़ (ख) विन्ध्यन

(ग) गोंडवाना (घ) कुडप्पा

प्रश्न–5 भू वैज्ञानिक संरचना की दृष्टि से मेघालय है–

(क) शिवालिक सदृश (ख) नागा–पटकोइ सदृश

(ग) अरावली सदृश (घ) छोटानागपुर सदृश

4.9 उपयोगी पुस्तकें व संदर्भ

1. प्रो0 जगदीश सिंह– भारत : भौगालिक आधार एवं आयाम, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0सी0 तिवारी भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
4. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल जियोग्राफी एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।

5- Nag, P.And Sengupta, S- Geography of India, Concept Publishing company, New Delhi.

4.10 अभ्यास प्रश्न

प्रश्न–1 भौमिकीय संरचना के विकास का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–2 आर्यन युगीन शैलों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–3 हिमालय पर्वत समूह का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–4 भारत का वृहद मैदान का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–5 हिमालयी नदियों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–6 प्रायद्वीपीय नदियों का वर्णन कीजिए।

इकाई–5 मिट्टियों का वर्गीकरण एवं वितरण, जलवायु एवं जलवायु प्रदेश

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 मृदा

5.4 भारतीय मृदा का वर्गीकरण

5.5 भारतीय मृदा का प्रकार एवं वितरण

5.6 जलवायु

5.7 जलवायु प्रदेश

5.8 सारांश

5.9 शब्द सूची

5.10 परीक्षोपयोगी प्रश्न

5.11 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

5.12 अभ्यास प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल की इस पंचम इकाई में मृदा, मृदा का वर्गीकरण, मृदा का संगठन, मृदा का प्रकार एवं वितरण एवं, जलवायु एवं जलवायु प्रदेश, जलवायु वर्गीकरण में प्रमुख विद्वानों (ब्लाडिमोर कोपेन, थार्नथ्वेट, आर0 एल0 सिंह, जी0टी0 ट्रिवार्था तथा बी0एल0 सी0 जॉनसन) का अध्ययन, मृदा में प्रमुख पदार्थ, कृषि के उपयोगी तथा कृषि हेतु उपयुक्त मृदा का अध्ययन करेंगे। भारत की मृदा में आवश्यक तत्वों का अध्ययन करेंगे। भारतीय मृदा के प्रमुख प्रकारों, उनके संगठनात्मक ढाचों, अवनयन, वितरण एवं उपयोगिता का अध्ययन करेंगे।

5.2 उद्देश्य

भारत भूगोल के इस इकाई का आप अध्ययन करने के बाद–

- भारत के मृदा का प्रकार एवं वितरण को समझ सकेंगे
- मृदा के संगठन एवं प्रमुख ढाचों को समझ सकेंगे
- भारत के जलवायु प्रदेशों का वर्गीकरण समझ सकेंगे।
- कोपेन, थार्नथ्वेट, आर0एल0 सिंह, ट्रिवार्था का जलवायु प्रदेश का वर्गीकरण एवं आधार समझ सकेंगे।

5.3 मिट्टी

मिट्टी प्रकृति प्रदत्त एक बहुमूल्य संसाधन है जो पृथ्वी के ऊपरी सतह पर एक परत के रूप में पायी जाती है। मिट्टी महीन रूप से विभाजित शैलखण्डों का चूर्ण होता है जिसमें विभिन्न प्रकार के घुलनशील तत्व भी पाये जाते हैं जो पेड़–पौधे के विकास में सहायक होती है। जहां पर मृदा में उर्वरक व पोषक तत्वों की भरमार होती है वहां कृषि उत्पादन अधिक होता है। जिसके परिणामस्वरूप वहां सघन जनसंख्या निवास करती है लेकिन जहां पर मृदा में उर्वरा शक्ति का अभाव पाया जाता है वहां जनसंख्या बहुत विरल पायी जाती है। लोगों का रहन–सहन का स्तर काफी नीचे होता है।

यह धरातल पर असंघिटत पदार्थों की ऊपरी परत है जिसे अपक्षय मृदा के निर्माण में पर्यावरण के विभिन्न

साधन योगदान व सहयोग प्रदान करते हैं जिसमें मूल चट्टान, उच्चावच, वनस्पति, जलवायु, अपवाह, जैव पदार्थ इत्यादि है। मृदा में विभिन्न प्रकार के कण शामिल होते हैं। जिसमें कणकीय मृदा या सबसे बारीक कण से बजरी एवं गुटिका तक के आकार वाले कण शामिल होते हैं।

मृदा निर्माण–

भारत में जलवायविक विविधता पायी जाती है जिसके प्रभाव से यहां मृदा भी कई प्रकार की मिलती है। भारत की मृदा में भिन्नता लाने वाले कारकों में जलवायु, उच्चावच तथा प्राकृतिक वनस्पति एवं जीव–जन्तुओं की प्रमुख भूमिका है जिसका विवरण निम्नवत है–

यथार्थ पदार्थ–

मृदा निर्माण में यथार्थ या मूल पदार्थ वे हैं जो अपरदन एवं अपक्षय से प्राप्त होते हैं जिसका प्रभाव मृदा रंग, गठन, रवों की संरचना तथा मृदा में खनिजों की मात्रा पर पड़ता है।

उच्चावच–

इसका मृदा निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका है जहां पर ढाल अधिक पाया जाता है वहां पर मृदा की गहराई कम पायी जाती है तथा जहां पर ढाल कम पाया जाता है वहां पर मृदा की गहराई अधिक पायी जाती है। इसी कारण उत्तरी मैदान में इसकी गहराई अधिक पायी जाती है।

जलवायु–

यह मृदा निर्माण का प्रमुख कारक है जिसको प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अन्य कारक भी प्रभावित करता है। मूल पदार्थ का अपक्षय तथा जीवाणुओं की क्रियाशीलता प्रभावित होती है। तापमान तथा वर्षा उसका प्रमुख तत्व हैं।

जैविक पदार्थ–

इसमें प्राकृतिक वनस्पति एवं जीवाणुओं को शामिल किया जाता है। मृदा में जीवाश्म तथा नाइट्रोजन का संचयन भी होता है। वनस्पति मृदा अपरदन को रोकता है तथा सड़े–गले जीवश्म मृदा को उर्वर बनाते हैं।

5.4 भारतीय मृदा का वर्गीकरण

भारतीय मृदा का वर्गीकरण पिछले 100 वर्षों से कई विद्वानों एवं संस्थाओं ने किया है जिसमें लेदर एवं बोय लेकर (क्रमशः 1898 एवं 1893) के आनुभाविक वर्गीकरण के आधार पर भारत की चार प्रकार की मृदा का वर्गीकरण किया। 'चेकाल्स्काया (1932) ने इसी मृदा विज्ञान संस्थान से प्रेरणा प्राप्त करके भारत की मिट्टी को 16 वर्गों में बांटा। राष्ट्रीय एटलस संगठन, कोलकाता (1957) ने देश की मृदा को 6 प्रमुख और 11 गौण भागों में बांटा। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई0सी0ए0आर0) 1963 में राय चौधरी द्वारा देश की मिट्टी को 7 प्रमुख एवं 17 उपभागों में बांटा। कुछ समय पहले भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने भारत की मृदा को 8 प्रमुख और 27 गौड़ भागों में बांटा।

5.5 भारतीय मृदा का प्रकार एवं वितरण

भारत की भू–वैज्ञानिक संरचना, धरातलीय उच्चावच, जलवायु तथा प्राकृतिक वनस्पति की विभिन्नता के कारण विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न प्रकार की मृदा पायी जाती है।

1. जलोढ़ मृदा–

यह मृदा देश के 14.25 लाख वर्ग किमी0 (43.4 प्रतिशत) पर पश्चिम में सतलुज नदी से पूर्व में ब्रह्मपुत्र घाटी तक फैला है। अन्य विस्तार में नर्मदा, ताप्ती, कावेरी, कृष्णा, गोदावरी तथा महानदी में भी पाया जाता है। इनका निर्माण हिमालय एवं प्रायद्वीपीय नदियों द्वारा लाये गये मलवा के जमाव से हुआ है। इसका रंग हल्का धूसर एवं भस्मी धूसर जैसी होती है तथा इनकी रचना रेतीली से गादी, दोमट तक है। इस मृदा में फास्फोरिक एसिड, पोटाश, चूना तथा जैव पदार्थ की प्रचुरता पायी जाती है। लेकिन इसमें नाइट्रोजन एवं ह्यूमस की कमी पायी जाती है। सिंचाई की मदद से इसमें गेहूँ, चावल, गन्ना, कपास, जूट, मक्का, तिलहन, फल एवं शाक–सब्जियों की खेती की जाती है। इसी कारण इस क्षेत्र को गेहूँ एवं चावल के कटोरे के रूप में जाना जाता है। इस क्षेत्र में घनी

जनसंख्या पायी जाती है। क्योंकि इनके पोषण हेतु खाद्य पदार्थों की आपूर्ति हो जाती है। इस मृदा को दो उपभागों में बांटा जा सकता है– प्रथम– नवीन जलोढ़ मृदा, जिसको खादर भी कहा जाता है। इसका विस्तार नदी के बाढ़ वाले भाग में पाया जाता है।, यहां प्रति वर्ष बाढ़ से नवीन परत का निर्माण होता है। द्वितीय– प्राचीन जलोढ़ जिसे बांगर मृदा भी कहते हैं। यह बाढ़ वाले भाग से दूर कुछ ऊँचाई वाला भाग होता है। इसमें चूना युक्त कंकड़ भी अधिक पाये जाते हैं। शिवालिक के गिरपद के क्षेत्र में गुटिकायुक्त मृदा को बांगर कहते हैं। इसके और दक्षिण में दलदली एवं गादी मृदा वाले क्षेत्र को तराई कहा जाता है।

2. काली मृदा–

इसे कपास मृदा, रेगुड़ मुदा एवं ट्रापिकल सेरनोज मृदा आदि के नामों से जाना जाता है। इसका निर्माण दक्कन लावा के अवसादों से हुआ है। इसका देश में 49.8 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र (15 प्रतिशत) पर विस्तार है। यह महाराष्ट्र, प0 मध्य प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा तमिलनाडु में फैला हुआ है।

इस मृदा का रंग गहरा काला से हल्का काला तक पाया जाता है। कुछ भागों में चेस्टनट के सदृश्य दिखाई देती है। इस मृदा में चूना, कैल्शियम, पोटाश एल्यूमिनियम, लोहा, और मैग्नीशियम कार्बोनेट की अधिकता पायी जाती है। नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा जैव पदार्थ की कमी पायी जाती है। काली मृदा में जल धारण करने की क्षमता अधिक होती है। यह भीगने पर चिपचिपी तथा सूखने पर कठोर एवं दरारयुक्त हो जाती है। इस मृदा को स्वतः जुताई वाली मृदा भी कहते हैं। यह मृदा कपास, अरहर, फलीदार फसल तथा रसदार फल के लिए उपयुक्त होती है।

यह मृदा काफी उर्वर होती है तथा कपास की कृषि के लिए उपयुक्त होती है इसके अलावा इसमें मूंगफली, दलहन, गन्ना, तम्बाकू व तिलहन की कृषि भी की जाती है। इसमें जल धारण की क्षमता अधिक होती है। यह मृदा एक अन्तर्कटिबन्धीय मृदा है। इस प्रकार की मृदा में प्रादेशिक भिन्नता पायी जाती है। महाराष्ट्र में हल्के रंग की पतली जमाव की काली मृदा पायी जाती है। पश्चिमी घाट के सहारे मृदा काफी मोटी संगठन वाली एवं बजरी सदृश मिलती है। मध्य प्रदेश में गहरी काली मृदा पायी जाती है। कपास उत्पादक के सम्पूर्ण क्षेत्र में गहरी काली मृदा मिलती है।

3. लाल मृदा– यह मृदा देश के 6.1 लाख वर्ग क्षेत्र (13.5 प्रतिशत) पर फैला हुआ है। इसका अधिकांश विस्तार प्रायद्वीपीय भाग में है। यह मृदा काली मृदा को उत्तर, दक्षिण एवं पूरब से घेरे हुए है। कर्नाटक, पश्चिमी तमिलनाडु, द0 महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, आन्ध्र प्रदेश, छोटा नागपुर का पठार एवं उड़ीसा में इस मृदा का वितरण पाया जाता है। यह छिटपुट रूप में पं0 बंगाल, उत्तर प्रदेश, राजस्थान के जनपदों में पाया जाता है। फेरिक आक्साइड तत्व के कारण इसका रंग लाल होता है। इस लाल मृदा के नीचे इसका रंग पीत के समान हो जाता है। इसमें चूना, मैग्नीशियम, फास्फेट, नाइट्रोजन, ह्यूमस और पोटाश की कमी पायी जाती है। इस मृदा में गेहूँ, चावल, कपास, आलू, दाल, तम्बाकू, ज्वार, अलसी, मूंगफली तथा फल की खेती की जाती है।

आकारिकी के आधार पर मृदा को दो वर्गों में बांटा जा सकता है– लाल लोमी मृदा तथा लाल मृदा। लाल लोमी मृदा मृतिका युक्त जल वृत्त, ढेलानुमा संरचना वाली होती है। लोहे का अंश अधिक होने पर इसका रंग लाल होता है। मृदा कण फेरिक आक्साइड से कोटेड होते हैं। जब यह मृदा जलयोजित होती है तो पीले रंग की हो जाती है। इसमें गहरी मृतिका पायी जाती है। तमिलनाडु की लाल मृदा का निर्माण वहां की लाल ग्रेनाइट के अपक्षय का परिणाम है जबकि छोटा नागपुर प्रदेश लाल मृतिका में अम्लीयता की अधिकता पायी जाती है। इस मृदा में अधिकांशतः मोटे अनाज की खेती की जाती है।

4. लैटेराइट मृदा–

इस मृदा का निर्माण सर्वप्रथम 1905 में वुकानन महोदय द्वारा किया गया। लैटेराइट नाम लैटिन भाषा के 'Later' शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ 'ईंट' है। यह मृदा भीगने पर मक्खन की भांति कोमल लेकिन सूखने पर कठोर हो जाता है। यह मानसूनी वर्षा वाली उष्ण कटिबन्धीय जलवायु की मृदा है। लौह आक्साइड के कारण इसका रंग लाल दिखाई देता है। यह प्रायद्वीपीय भारत के पठारी भाग पर विकसित हुई है।

सहयाद्रि, पूर्वी घाट, विन्ध्य पहाड़ी, सतपुड़ा तथा राजमहल पहाड़ियों के शिखरों पर इस मृदा का पर्याप्त विकास हुआ है। यह भारत के 1.22 लाख वर्ग किमी0 (3.7 प्रतिशत) क्षेत्र पर फैला हैं यह केरल, कर्नाटक, आन्ध्र

प्रदेश, महाराष्ट्र, पं0 बंगाल, उड़ीसा, झारखण्ड, मेघालय तथा असम के कुछ जनपदों में भी पाया जाता है। लोहा, पोटाश एवं एल्युमिनियम की अधिकता तथा नाइट्रोजन, चूना, फास्फोरस एवं जैव पदार्थ की कमी इस मृदा में पायी जाती है। इसमें कपास, चावल, रागी, दाल, गन्ना, चाय, कहवा और काजू आदि की कृषि की जाती है।

लेटेराइट मृदा का निर्माण उष्णार्द्र क्षेत्रों में होती है जहां अधिक वर्षा के कारण ऊपरी भाग से सिलिका एवं जीवाश्म का अपवहन हो जाता है तथा यह तत्व निचले संस्तरों में जमा हो जाते हैं। इस प्रक्रिया को निक्षालन कहते हैं। जिसके बाद ऊपरी संस्तर में एल्यूमीनियम एवं लोहा शेष बच जाता है। कहीं–कहीं एल्यूमीनियम इतनी मात्रा में बच जाती है जिसका उपयोग बाक्साइट के अयस्क के रूप में होने लगता है।

5. पर्वतीय मृदा–

यह मृदा हिमालय की घाटियों एवं ढालों पूर्वी एवं पश्चिमी घाट तथा प्रायद्वीपीय भारत में नीलगिरी, सतपुड़ा, इलायची की पहाड़ियों में पायी जाती है। यह 2700 मीटर से 3000 मीटर की ऊँचाई पर फैली है। यह एक अपरिपक्व मृदा है जिसमें कार्बन, नाइट्रोजन की अधिकता पायी जाती है। इसका गठन गादी दुमट से दुमट, रंग गहरा भूरा होता है। असम, दार्जिलिंग, उत्तराखण्ड, कश्मीर एवं हिमाचल प्रदेश में देवदार, अल्पाइन, देवदार के क्षेत्र में पाया जाता है। देश में दो प्रकार की पर्वतीय मृदा पायी जाती है– प्रथम भूरी वन मृदा तथा दूसरा पोडजोलिक मृदा। भूरी वन मृदा का पीएच मान 6 से 7 होता है जबकि पोडजोलिक मृदा का पीएच मान 5 से 6 होता है। पहाड़ी भाग में झूम कृषि जनजातियों द्वारा की जाती है जिसमें वन की कटाई बड़े पैमाने पर की गयी है। जिसके कारण यह क्षेत्र गम्भीर भूमि समस्या से ग्रसित हो रहा है।

6. मरुस्थलीय मृदा–

इसका विस्तार शुष्क और अर्द्धशुष्क जलवायु दशाओं में पाया जाता है। राजस्थान, पंजाब, सौराष्ट्र, कच्छ तथा हरियाणा में लगभग 142000 वर्ग किमी0 क्षेत्र पर फैली है। इसका आकार रेतीली से बजरीयुक्त तक होती है। नाइट्रोजन और ह्यूमस की कमी होती है।रेत की मात्रा पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ती जाती है। इसमें घुलने वाले लवण की मात्रा अधिक होती है। नमी और जैव पदार्थ की कमी पाई जाती है। इसमें ज्वार–बाजरा, रागी तथा मोटे अनाज पैदा किए जाते हैं।

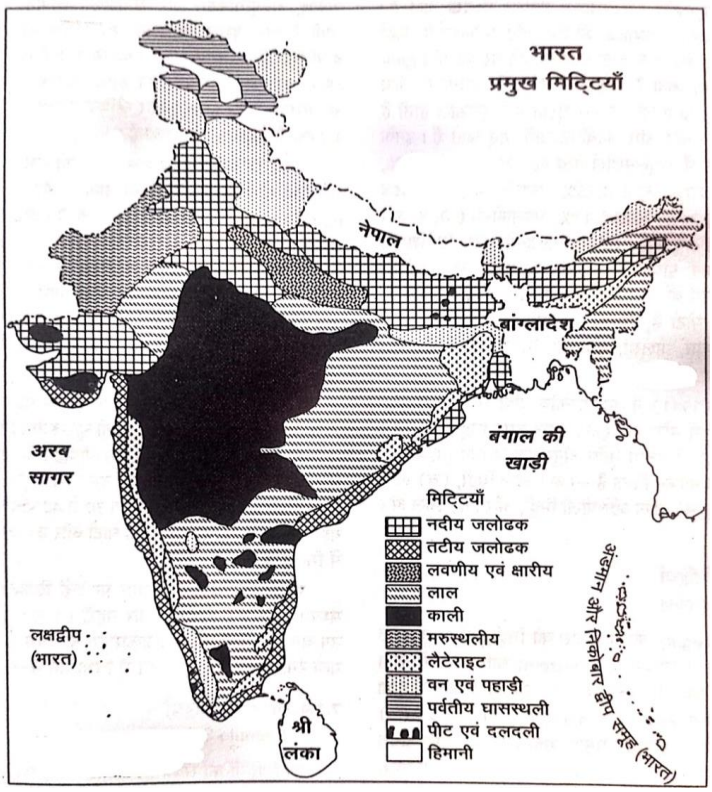

चित्र– 1

7. वन मृदा–

यह हिमालय में शंकुधारी वन क्षेत्रों में पायी जाती है जो 3000 मीटर से 3150 मीटर के बीच में मिलती है। इसका कुछ जमाव छिटपुट में पश्चिमी घाट तथा तराई के क्षेत्रों में पायी जाती है। यह मृदा पेड़–पौधे के पत्तियों से ढके रहते हैं तथा सड़ने–गलने से यह काली रंग की हो जाती है जो नीचे की ओर लाल होती है। इसमें पोटाश, फास्फोरस एवं चूने की कमी होती है। इसमें अम्लीय दशाओं में पाडजोल से लेकर कम अम्लीय के बीच परिवर्तन देखने को मिलता है। इसमें चाय, कहवा, मसालों, गेहूँ, चावल, मक्का, जौ, आदि की खेती की जाती है।

8. लवणीय एवं क्षारीय मृदा–

यह महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में 68000 वर्ग किमी0 क्षेत्र पर फैली है। इसमें कैल्शियम, सोडियम केशिका क्रिया द्वारा धरातल के ऊपर आ जाते हैं जो सफेद दिखाई देता है। इस प्रकार के अनुपजाऊ क्षेत्र को रेह, कल्लर, ऊसर, राकर, चोपन एवं धुर कहते हैं। नहर सिंचाई वाले क्षेत्रों में इस मृदा का विस्तार में वृद्धि हो रहा है। इसमें नाइट्रोजन एवं चूने की कमी पायी जाती है। इसमें गेहूँ, गन्ना, कपास तथा तम्बाकू की खेती की जाती है।

9. पीतमय एवं दलदली मृदा–

यह आर्द्र क्षेत्रों में जैव पदार्थ से सम्पन्न होती है। यह भारी वर्षा से डूब जाती है। यह काली एवं अम्लीय मृदा होती है। लवण एवं ह्यूमस की अधिकता तथा पोटाश एवं फास्फोरस की कमी पायी जाती है। यह मृदा केरल के कोट्टायम एवं अलप्पुझा जनपद के कुछ क्षेत्रों में पाया जाता है। दलदली मृदा उत्तरी बिहार, तमिलनाडु के तट, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा तथा उत्तराखण्ड के कुछ भाग में पाया जाता है।

10. तराई मृदा– यह पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार एवं पश्चिम बंगाल में विस्तृत है। यह मृदा शिवालिक गिर पद के सहारे पाया जाता है। यह मृदा अधिक उपजाऊ होती है। यहां घने वन का विस्तार पाया जाता है।

11. कंकाली मृदा–

यह विन्ध्य बलुआ पत्थर और लद्दाख में पायी जाती है। इसका रंग पीत से गहरा भूरा होता है। इसमें मोटा अनाज पैदा किया जाता है क्योंकि यह एक अप्रौढ़ मृदा है।

भारतीय मृदा की समस्या निम्न कारणों से भारतीय मृदासमस्याओं से ग्रसित है– मृदा अपरदन, भूवैज्ञानिक अपरदन एवं जलीय अपरदन है। जलीय अपरदन में वर्षा बूंद अपरदन, परत अपरदन, नलिका अपरदन, अवनलिका अपरदन तथा सरिता तटीय अपरदन आदि हैं। वायु अपरदन, समुद्र अपरदन, मानवीय अपरदन तथा कुछ विशेषीकृत अपरदन है।

5.6 जलवायु

किसी भौगोलिक क्षेत्र की हर एक दिन की वायुमंडलीय दशाओं को मौसम कहते हैं। मौसमी दशाओं के निर्माण में तापमान, वायुदाब, आर्द्रता एवं मेघावरण आदि प्रमुख तत्व योगदान देते हैं। इसी प्रकार किसी प्रदेश की लंबी अवधि तक प्रचलित मौसमी दशाओं के योग को जलवायु कहते हैं। यह अक्षांशीय स्थिति, महाद्वीपीय एवं महासागरीय स्थिति, समय तथा उच्चावच आदि तत्वों से निर्धारित होती हैं।

मौसमी दशाएं

भारतीय मौसमी दशाएं अत्यंत परिवर्तनशील है फिर भी भारतीय वैज्ञानिकों ने सुविधा के अनुसार ऋतु में बांटा है–

1. शीत ऋतु– मध्य दिसम्बर से मध्य मार्च तक
2. ग्रीष्म ऋतु– मध्य मार्च से मई तक
3. वर्षा ऋतु– जून से सितम्बर तक
4. शरद ऋतु– अक्टूबर से मध्य दिसम्बर तक

1. शीत ऋतु–

भारत में यह नवम्बर माह से शुरुआत होती है और दिसम्बर तक पूरे भारत में छा जाता है। इस ऋतु की विशेषता प्रतिचक्रवात, शुष्क तथा स्थायी वायु व नीला आकाश होता है। इस समय जेट स्ट्रीम की दक्षिणी शाखा हिमालय के दक्षिण में होती है जिससे उत्तरी गोलार्द्ध की ध्रुवीय गतिकी के पुनः प्रवल होने की सहायता आभास मिलता है। पश्चिमी जेट स्ट्रीम वापस हो जाती है और उत्तरी–पूर्वी व्यापारिक हवायें चलने लगती है। ITC पीछे हट जाता है। उत्तर–पश्चिम भारत में प्रतिचक्रवात बन जाता है जिससे देश का अधिकांश भाग शुष्क रहता है।

तापमान–

इस समय समताप रेखायें अक्षांशो के समानान्तर पायी जाती है। इसमें तापमान दक्षिण से उत्तर की ओर सामान्यतः घटता जाता हैं। जनवरी में भारत के उत्तर–पश्चिम में 15^0Cतापमान तथा उत्तर भारत में 10^0C से कम पाया जाता है। पंजाब एवं हरियाणा में कभी–कभी शीत लहर का प्रकोप छा जाता है। प्रायद्वीपीय भाग में शीत ऋतु कम प्रभावी होता है। रात में पंजाब हरियाणा तथा राजस्थान में कभी–कभी तापमान घटकर हिमांग से नीचे चला जाता है जिसके प्रभाव से तुषारित हो जाता है। प्रायः रात का तापमान सामान्य औसत से 6 डिग्री सेल्सियस से अधिक घट जाता है जिसके कारण उत्तरी गोलार्ध में शीतलहर चलती है।

वायुदाब–

तापमान का वायुदाब पर सीधा प्रभाव रहता हैं उत्तर–पश्चिम के भागों में इस समय वायुदाब बढ़कर 1019 मिलीबार हो जाता है जो उच्च वायु केन्द्र का द्योतक है जिससे प्रतिचक्रवात दशायें उत्पन्न होती है। यहां से हवाएं दक्षिण में निम्न वायुदाब (महासागर) की ओर चलती है। इस समय भूमध्य सागर से चक्रवात पूर्व की ओर चलकर उत्तर भारत में पहुंचकर उत्तर–पश्चिमी भाग में वर्षा करते हैं।

वर्षा–

शीत ऋतु सामान्य रूप से शुष्क होता है। शीत ऋतु की विशेषता भूमध्य सागर से उत्पन्न पश्चिमी विक्षोभ का अंतरवाह है। इन विक्षोभ की बारंबारता दिसंबर से मार्च तक होती है। इस समय उत्तर–पश्चिम भारत में कुछ वर्षा पश्यिमी विक्षोभ से होता है जो दिसम्बर से फरवरी के मध्य में सक्रिय होते हैं। यह रबी की फसल के लिए लाभ व्यापक होते हैं। बंगाल की खाड़ी में अक्टूबर और नवम्बर में बनने वाले अवदाब से कोरोमण्डल के कुछ भाग में भी वर्षा होती है। इसके अलावा भारत का उत्तर– पूर्वी भाग भी शीत ऋतु में कुछ वर्षा प्राप्त करता है जिसमें अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड तथा असम शामिल है जहां वर्षा 50 से. मी. रिकॉर्ड करते हैं।

2. ग्रीष्म ऋतु–

उत्तरी भारत में मार्च से मध्य जून के बीच स्पष्ट ग्रीष्म ऋतु देखने को मिलता है। इस समय सूर्य कर्क रेखा पर लम्बवत चमकता है जिससे परिध्रुवीय वातचक्र कमजोर होने लगता है। उत्तर–पश्चिम में निम्न वायुदाब अधिक तापमान के कारण जेट स्ट्रीम हिमालय के दक्षिण में होने के कारण ऊपर वायुमण्डल में गतिक चक्रवात ही क्रियाशील रहता है। इससे धरातलीय निम्न दाब आरोही प्रवाह और वर्षा नहीं कर पाता है।

तापमान–

इस ऋतु में तापमान लगातार बढ़ता रहता है। अप्रैल तक प्रायद्वीपीय क्षेत्र का औसत अधिकतम तापमान 40^0C तक पहुंच जाता है। उत्तर–पश्चिम भाग में औसत अधिकतम तापमान 42^0Cपहुंच जाता है। श्री गंगानगर में 54^0Cसे भी अधिक तापमान प्राप्त किया गया है। दक्षिण भारत में उत्तर की तुलना में तापमान कम रहता है। पूर्वी भारत और पहाड़ी क्षेत्रों में भी तापमान कम पाया जाता है। औसत दैनिक तापान्तर तटीय भागों में कम तथा आन्तरिक भागों और उत्तर–पश्चिम में अधिक पाया जाता है।

वायुदाब एवं पवने–

शीत ऋतु एवं दक्षिण–पश्चिम मानसून के मध्य संक्रमण के कारण ग्रीष्म ऋतु में वायुदाब और पवने संचार अस्थिर रहते हैं। सूर्य कर्क रेखा पर लम्बवत चमकने के कारण निम्न दाब का क्षेत्र दक्षिण–पूर्व से उत्तर–पश्चिम की ओर खिसकने लगता है। उत्तर भारत में दिन के समय गर्म व शुष्क पछुआ पवने तीव्र गति से चलती हैं। जिन्हें लू कहते हैं। जहां ये उष्ण एवं शुष्क स्थनीय हवायें समुद्री आर्द्र पवनों से मिलती है प्रचंड स्थानीय तूफान बन जाते हैं

जिनसे वर्षा और ओले पड़ते हैं।

आर्द्रता एवं वर्षा–

देश के मध्यवर्ती भाग में वायु शुष्क पाई जाती है जिसमें आपेक्षिक आर्द्रता 30 प्रतिशत या कम मिलती है। उत्तर–पश्चिम भाग में 2.5 सेमी0 से भी कम मैदानी भाग में 5–15 सेमी, मालाबार तट पर 15–25 और असम में 50 सेमी से अधिक वर्षा प्राप्त होती है।

3. वर्षा ऋतु–

ग्रीष्म ऋतु के अन्त तक आरोही वायु युक्त एक तीव्र निम्न दाब का निर्माण पश्चिम राजस्थान के क्षेत्र में हो जाता है। उष्ण कटिबन्धीय जेट स्ट्रीम की दक्षिणी शाखा कमजोर पड़ जाती है तथा यह हिमालय के दक्षिण से मध्य जून तक पीछे हट जाती है जिसके कारण सतही तापीय निम्न दाब पर एक गत्यात्मक चक्रवात बनता है। ITCZ उत्तर की ओर बढ़ता है मध्य जून तक 25^0C उत्तरी अक्षांश पर पहुंच जाता है जिसके कारण विषुवत रेखीय पछुआ हवाएं उपमहाद्वीप में प्रविष्ट कर जाती हैं। तिब्बत के पठार के तापीय उष्मन से उद्‌भव पूर्वी जेट स्ट्रीम द्वारा हिन्द महासागरीय उच्च दाब को बल मिलता है जिससे अण्टार्कटिक परिध्रुवीय वातचक्र द्वारा प्रेरित दक्षिण–पूर्वी व्यापारिक पवने दक्षिण–पश्चिम मानसून के रूप में परिणत हो जाती है। इस ऋतु के दौरान देश के अधिकतर हिस्से में आसमान बादलों से ढका रहता है। इस ऋतु के दौरान सापेक्षिक आर्द्रता सामान्य तौर पर 65 प्रतिशत से अधिक होती है। असम तथा केरल में सबसे अधिक सापेक्षिक आर्द्रता दर्ज की जाती है।वर्षा ऋतु में सापेक्षिक आर्द्रता 80 प्रतिशत से अधिक रहती है।

तापमान–

मानसून के आगमन से पहले जून में तापमान अधिकतम हो जाता है। कुछ स्थानों पर 46^0Cसे भी अधिक हो जाती है। जून माह का औसत दैनिक अधिकतम तापमान जोधपुर एवं इलाहाबाद में 40^0C, नई दिल्ली में 39^0C, चेन्नई में 38^0C,कोलकाता में 33^0C, कोच्चि का औसत तापमान उत्तर–पश्चिम तथा कोरोमण्डल तट पर 30^0C से अधिक पाया जाता है। उत्तरी मैदान में 25^0Cके बीच रहता है।

मानसून का आगमन–

भारत की आकृति के कारण दक्षिण–पश्चिम मानसून पवने विभाजित होकर दो प्रमुख शाखा के रूप में देश में प्रवेश करती है। तीव्र गर्जन, चमक के साथ वर्षा की शुरूआत होती है जिसे मानसून प्रस्फोट कहते हैं। अरब सागरीय शाखा 1 जून के आस–पास केरल तट से आगे बढ़ती हुई 10 जून तक मुम्बई पहुंचती है। जून के मध्य तक मध्य भारत में फैल जाता है। बंगाल की खाड़ी की शाखा 20 मई तक अण्डमान–निकोबार द्वीपों में और 1 जून तक त्रिपुरा और मिजोरम में पहुंच जाता है। 7 जून तक कोलकाता, 15 जून तक वाराणसी पहुंच जाती है। जून के अन्त तक सम्पूर्ण देश छा जाता है। मानसून का निवर्तन सितम्बर के मध्य से उत्तर–पश्चिम से प्रारम्भ होता है और नवम्बर के अन्त तक देश के समूचे भाग से प्रभाव हट जाता है।

वर्षा का वितरण–

मौसम तथा वर्षा की मात्रा को अनेक चक्रवाती गर्त प्रभावित करते हैं जो बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागर की माध्यम से देश में प्रवेश करते हैं। मानसून अवधि के दौरान 20 से 25 चक्रवात का विकास होता है जिसमें कुछ अधिक तीव्र होते हैं जिसके द्वारा तटवर्ती क्षेत्र में काफी नुकसान पहुंचाते हैं।

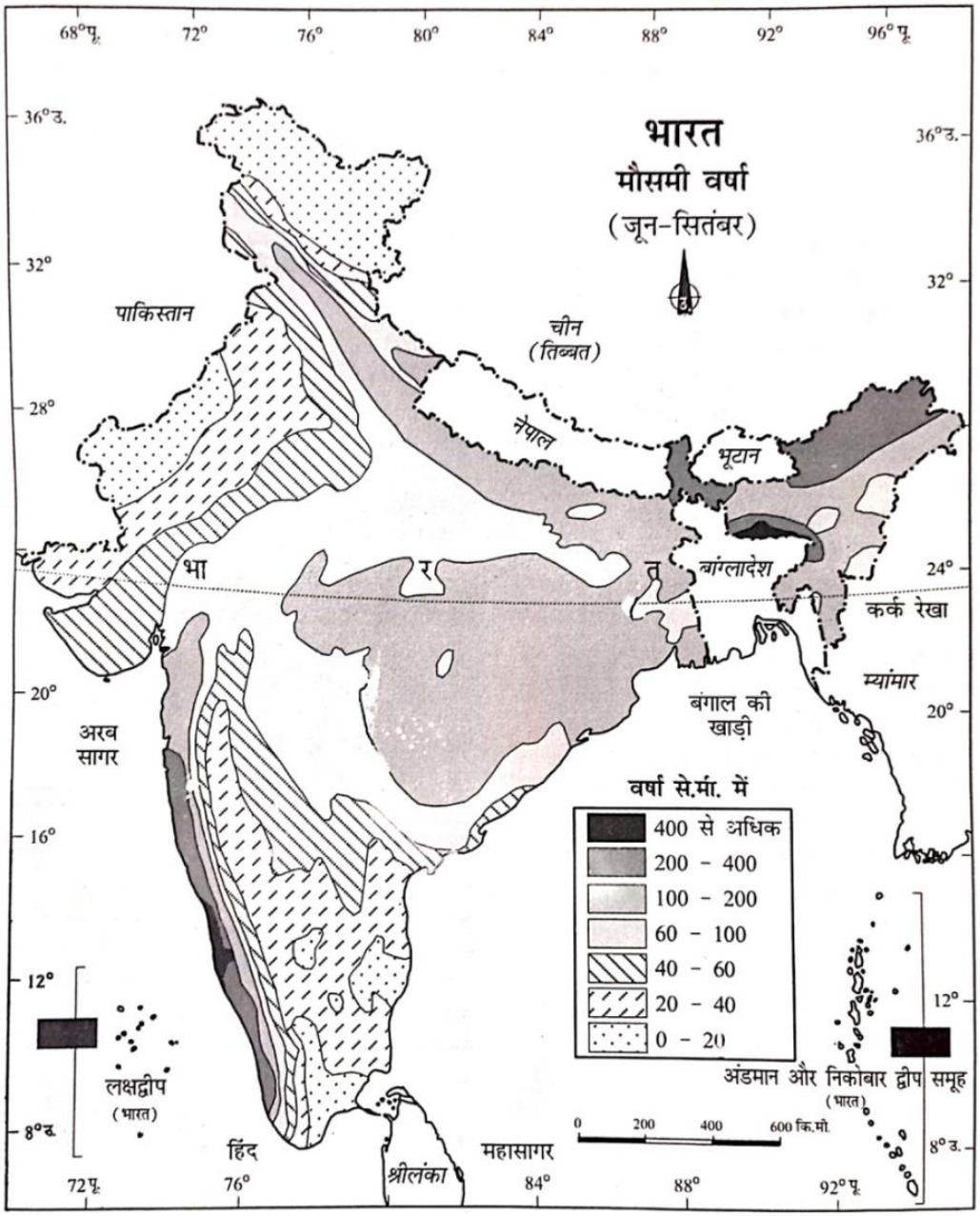

चित्र 2

भारी वर्षा होती है जिसकी मात्रा तटीय क्षेत्रों से दूर जाने पर घटती जाती है। इन दिनों जम्मू–कश्मीर, लद्दाख तथा तमिलनाडु के कुछ भाग को छोड़कर समूचे भारत में वर्षा होती है। पश्चिमी तट, सह्याद्रि, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम एवं दार्जिलिंग पहाड़ियों में 200 सेमी से अधिक वर्षा प्राप्त होती है। पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, पू0 बिहार, छत्तीसगढ़, तराई क्षेत्र तथा उत्तराखण्ड में वर्षा 100–200 सेमी पायी जाती है। राजस्थान, पं0 गुजरात, द0 आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक पठार, तमिलनाडु, हरियाणा, पंजाब और जम्मू–कश्मीर के भागों में वर्षा की मात्रा 50 सेमी0 से कम है। अन्य क्षेत्र में 50 से 100 सेमी0 वर्षा की मात्रा पायी जाती है।

4. शरद ऋतु–

सितम्बर के अन्त तक सूर्य की किरण भूमध्यरेखा पर लम्बवत चमकती है। जिसके कारण उत्तर–पश्चिम का निम्न वायुदाब का गर्त कमजोर होकर दक्षिण की ओर खिसक जाता है। अक्टूबर में उत्तरी बंगाल की खाड़ी में स्थित हो जाता है। इससे मानसून कमजोर पड़ने लगता है तथा पं0 राजस्थान से पीछे हटने लगता है। सितम्बर के अन्त तक मानसून पंजाब तथा समीची भाग से हट जाता है जिससे मौसम साफ व सुहावना हो जाता है।

तापमान–

इसमें तापमान में गिरावट आने लगता है और दिसम्बर तक शीत ऋतु का प्रभाव स्थापित हो जाता है। अक्टूबर माह में देश के अधिकांश भाग का औसत तापमान 25–27.5^{0}Cके बीच पाया जाता है।

वायुदाब एवं पवनें–

इस समय उ0–पं0 में अस्थित निम्न दाब क्षेत्र क्षीण होने लगता है। पूर्व की ओर खिककर बंगाल की खाड़ी के उत्तर में केन्द्रित हो जाता है। धीरे–धीरे दक्षिण में खिसककर दिसम्बर के अन्त तक भूमध्यरेखीय निम्न दाब में विलीन हो जाता है। नवम्बर तक उत्तर–पश्चिम भारत में एक उच्च दाब का केन्द्र स्थापित हो जाता है जिससे गंगा के मैदान में हवाएं उत्तर–पश्चिम या पश्चिम से प्रवाहित होती है। असम एवं प0 बंगाल में हवायें पूर्व से प्रायद्वीपीय भाग में उत्तर–पूर्व से और पूर्वी तट के सहारे उत्तर–पश्चिम से चलती है।

आर्द्रता एवं वर्षा–

इस ऋतु में मेघाच्छादन और आर्द्रता की मात्रा कम पाई जाती है। तमिलनाडु में लौटते मानसून से वर्षा होती है। इस ऋतु में वर्षा का होना चक्रवातों की देन है। इन उष्ण कटिबन्धीय चक्रवात से तटीय क्षेत्र अधिक प्रभावित होते हैं। चक्रवातों की बारम्बारता अरब सागर की अपेक्षा बंगाल की खाड़ी में अधिक देखने को मिलता हैं।

भारतीय मानसून–

भारतीय जलवायु मानसूनी है। इसकी प्रमुख विशेषताएं ग्रीष्म एवं शीतकाल में मौसमी दशाओं में विशेष परिवर्तन है। ग्रीष्म काल में अधिक तापमान, वायुदाब प्रवणता अधिक, आर्द्रता एवं व्यापक वर्षा है जबकि शीतकाल में सामान्य तापमान कम, कम वायुदाब प्रवणता, सापेक्षिक आर्द्रता कम तथा सामान्यतः वर्षा का अभाव। मानसूनी जलवायु में वर्षा ग्रीष्म काल में 2 से 4 माह तक सीमित, अनिश्चितता एवं अनियमितता, वर्षा की मात्रा में असमानता तथा विभंगता होती है। इसका प्रभाव फसल उत्पादन, जनजीवन तथा अर्थ तंत्र पर पड़ता है। भारतीय उपमहाद्वीप में मानसूनी जलवायु की प्रमुख विशेषताएं हैं–

इसमें प्रचुर वर्षा तथा अति न्यून वर्षा की दो ऋतु स्पष्ट होती है। वर्षा की अधिकांश मात्रा ग्रीष्म काल में तथा कम वर्षा की मात्रा शीतकाल में होती है। वर्षा की मात्रा में वर्षा ऋतु के दौरान वर्ष प्रतिवर्ष औसत से अधिक विचलन होने की संभावना बनी रहती है। सामान्यतः 5 वर्ष के अवधी में केवल एक ही वर्ष दीर्घ औसत वर्षा की होती है अन्य 4 वर्षों में वर्षा की मात्रा में बहुत अधिक उतार–चढ़ाव पाया जाता है। जून माह के कुछ तिथियों में वर्षा हो जाने की लोग अपेक्षा करते हैं लेकिन वर्षा प्रारंभ होने की कोई निश्चित नहीं होती है। कभी वर्षा अपेक्षित तिथि से पहले तो कभी तिथि से काफी बाद में प्रारंभ होती है। इसी के साथ वर्षा की समाप्ति की तिथि भी अनिश्चित होती है। भारत के जिस क्षेत्र में वर्षा कब होती है वहां वर्षा की अनिश्चितता कम पाई जाती है। शीतकाल में संपूर्ण भारत में न्यून वर्षा होती है इस समय पंजाब तथा तमिलनाडु के भाग में थोड़ी बहुत वर्षा होती है जबकि संपूर्ण भारत प्रायः शुष्क रहता है। सामान्यतः सर्वत्र भारत मे सालों भर पर्याप्त तापमान बना रहता है परंतु अत्यधिक ऋत्विक घट – बढ़ होती है।समुद्रतटीय, द्वीपीय क्षेत्र तथा समुद्र के आस पास के क्षेत्र में ऋत्विक तापांतर कम तथा विशाल मैदान के उत्तर पश्चिम में ऋत्विक तापांतर अधिक होता है। सामान्य तौर पर यहां में ग्रीष्म ऋतु में भी दो प्रकार का मौसमी दशाएं पाई जाती हैं– प्रथम वर्षा विहीन तथा द्वितीय वर्षा युक्त। मध्य मार्च से जून तक देश के अधिकांश क्षेत्र पर उच्च तापमान (35 डिग्री सेल्सियस से अधिक) रहता है। उत्तरी मैदानी भाग में प्रायः लू का प्रकोप बना रहता है। मध्य जून से मध्य अक्टूबर तक संपूर्ण उपमहाद्वीप में वर्षा होती है जिससे तापमान तो कम हो जाता है लेकिन सापेक्षिक आर्द्रता अधिक रहती है।

मानसून शब्द की उत्पत्ति अरबी भाषा के शब्द मौसिम से हुआ है जिसका तात्पर्य 'मौसम या ऋतु' है। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग अरब के नाविकों द्वारा किया गया है। नाविकों द्वारा अरब सागर में चलने वाली उन हवाओं के लिए किया जाता था जिसका मौसम के अनुसार दिशा परिवर्तन हो जाता था, अर्थात् ये हवायें जाड़े में उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम तथा गर्मी में दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व की ओर चला करती थी। हवा की दिशा में मौसमी परिवर्तन भारतीय मानसून की सबसे प्रमुख विशेषता है।

मानसून एक जटिल जलवायु प्रक्रिया का अंग है। वैज्ञानिकों एवं शोधों में हुए नवीन–नवीन प्रयोगों तथा जैसे–जैसे वायुमण्डलीय सम्बन्धित आंकड़े सुलभ होते गये वैसे–वैसे इसके जटिलता से रूबरू होते जा रहे हैं।

मानसून उत्पत्ति की संकल्पनायें–

मानसून उत्पत्ति से सम्बन्धित संकल्पनाओं का विवरण इस प्रकार है।

1. तापीय संकल्पना–

इस संकल्पना को क्लासिक सिद्धान्त भी कहा जाता है जिसका प्रतिपादन एडमण्ड हैली ने सन 1686 में किया था जिसका उद्देश्य एशियाई मानसून की उत्पत्ति की व्याख्या करना था। इनके संकल्पना के अनुसार मानसून एवं महासागरीय क्षेत्रों के विभिन्न मौसमी ऊष्मन से उत्पन्न वृहद स्तर की स्थल एवं जलीय हवायें है। जब सूर्य मकर रेखा पर लम्बवत चमकता है तो एशिया अपने समीपस्थ महासागर की अपेक्षा तेजी से ठण्डा होने लगता है जिससे इसके मध्य भाग (बैकाल झील एवं पेशावर) में एक प्रबल उच्चदाब का क्षेत्र बन जाता है।

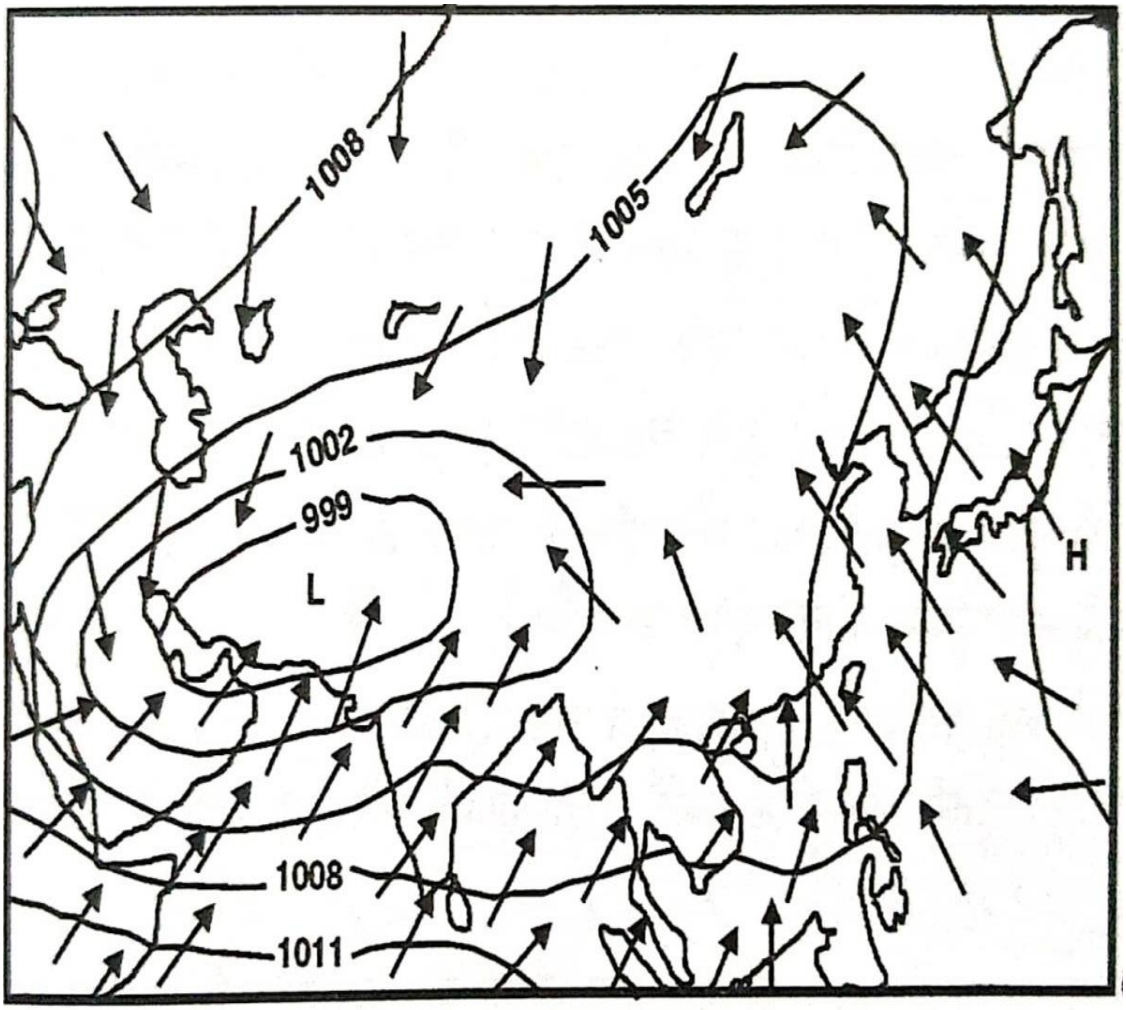

चित्र 3

इसके विपरीत दक्षिणी हिन्द महासागर के क्षेत्रों में कम वायुदाब का क्षेत्र बन जाता है। इसलिए शीतकाल में हवायें स्थलीय उच्चवायु से महासागरीय निम्न वायुदाब की ओर चलती है जिसे उत्तर–पूर्वी मानसून कहते हैं। ये हवायें स्थल से आने के कारण शुष्क, आर्द्रता विहीन और वर्षा करने में अक्षम होते हैं।

ग्रीष्म ऋतु के समय तापमान एवं दाब दशायें पलट जाती है। इन दिनों सूर्य की किरणे सीधा कर्क रेखा पर पड़ती है जिससे एशिया का भूखण्ड तप्त हो जाता है। बैकाल झील एवं पश्चिमी भारत के इलाकों में कम दाब केन्द्र का निर्माण हो जाता है जबकि हिन्द महासागर के दक्षिणी भाग में उच्च दाब केन्द्र रहता है। जिसके परिणामस्वरूप दक्षिण–पूर्व व्यापारिक हवायें निम्न दाब केन्द्रों की ओर खिंची चली आती है।

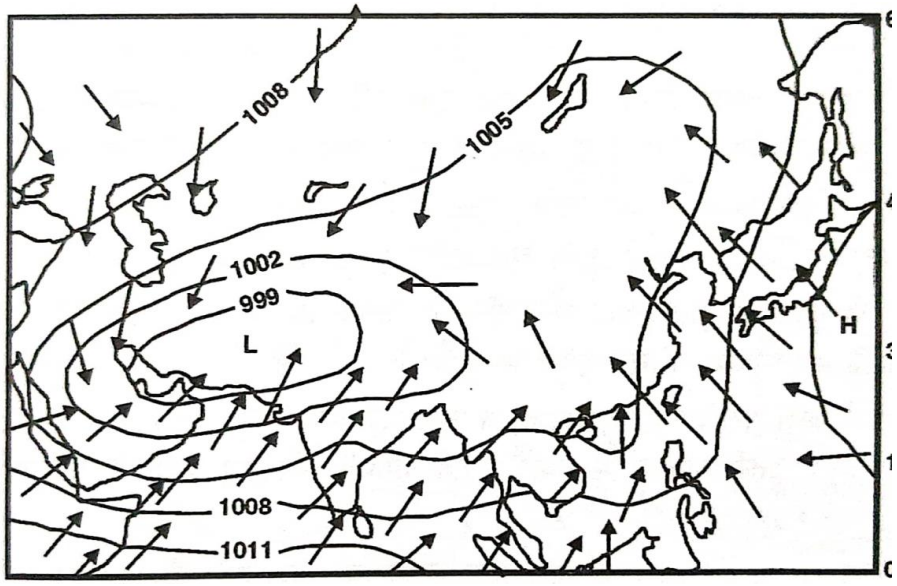

चित्र 4

विषुवत रेखा को पार करते समय ये हवायें विरोध बल (फेरल नियम) के कारण दक्षिण–पश्चिम होती है। ये हवायें महासागर से आने के कारण आर्द्रता से परिपूर्ण होती है। इनके मार्ग में अवरोध हो जाने से वर्षा की प्राप्ति होती है।

2. गतिक संकल्पना–

इस संकल्पना के प्रतिपादक फ्लोन महोदय को जाता है इन्होने अपना विचार 1951 प्रस्तुत किया, जिनके अनुसार मानसून की उत्पत्ति मौसमी परिवर्तन के कारण वायुदाब पेटियों के स्थानान्तरण पर आधारित है। दक्षिण एशिया की मानसूनी हवायें वास्तव में उष्ण कटिबन्धीय ग्रहीय पवन तन्त्र का संशोधित रूप है। इनके अनुसार ग्रीष्म ऋतु में भारत के उत्तर–पश्चिमी भाग में निम्न दाब क्षेत्र और दक्षिण–पश्चिम मानसून दोनों ही उत्तर अन्तरोष्ण अभिसरण के उत्तर की ओर दक्षिण और दक्षिण–पूर्व एशियाई क्षेत्र पर लगभग 30^{0}उत्तरी अक्षांश तक प्रसारित हो जाने के कारण उत्पन्न होते हैं। इस स्थानान्तरण में उपमहाद्वीप का ग्रीष्म काल में अत्यधिक ऊष्मन प्रमुख भूमिका अदा करता है। जिसके कारण उपमहाद्वीप पर स्थित डोलड्रम की मेखला में प्रवाहित विषुवतीय पछुआ पवने प्रवाहित होने लगती हैं जिन्हें दक्षिणी–पश्चिमी मानसून कहते हैं।

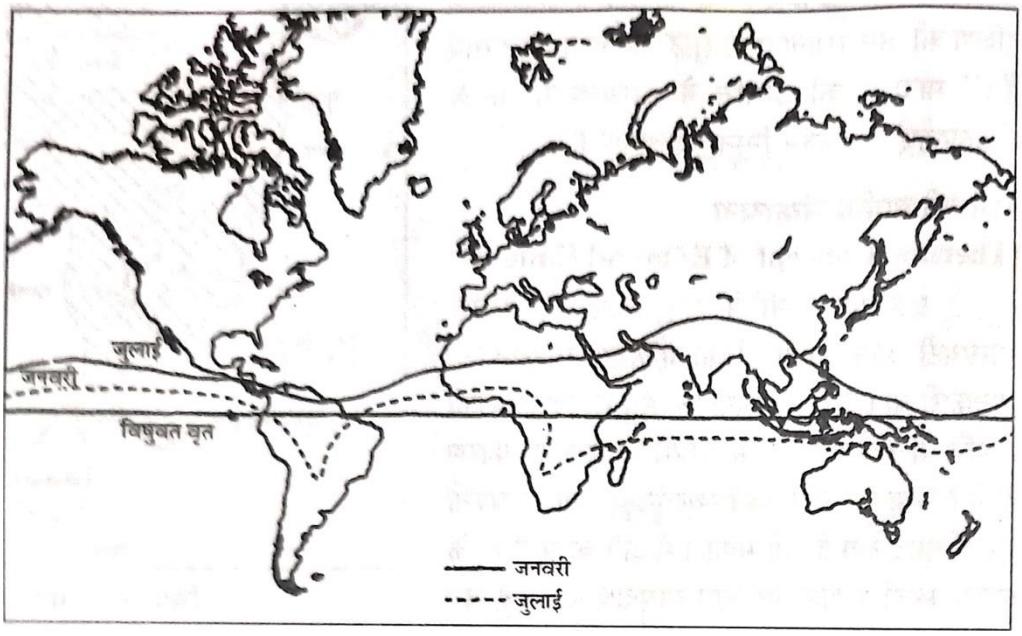

चित्र 5

जाड़े की ऋतु में सूर्य के दक्षिणायन होने के कारण सभी वायुदाब पेटियां दक्षिण को ओर खिसक जाती है जिससे दक्षिण एशिया का क्षेत्र पुनः उत्तर–पूर्व व्यापारिक पवनों के प्रभाव में आ जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि शीतकालीन मानसून उष्ण अक्षांशों में प्रवाहित व्यापारिक पवन–तंत्र का स्थापन मात्र है।

3. एल–निनो एवं मानसून–

एल–निनो मौसमी घटनाओं में एक प्रमुख घटना है जिसका निर्माण दक्षिणी अमेरिका महाद्वीप के पश्चिमी तट (प्रशांत महासागर के पूर्वी तट) के पेरू तट के निकट होता है। वर्ष 1541 में एल–निनो घटना का प्रथम बार अवलोकन किया गया था। वर्ष 1541 से आज तक कई बार एल–निनो की घटनाएँ घटित हुई है। कुछ प्रमुख घटना वर्ष है इस प्रकार है 1951–52, 1957–58, 1963–64, 1965, 1966, 1967, 1969–70, 1972–73, 1976–77, 1978, 1980, 1982–83, 1991–92, 1993, 1994–95 तथा 1997–98 आदि। एल–निनो को एक विपरीत धारा के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि यह हम्बोल्ब्ट जलधारा के विपरीत दिशा में प्रभावित होती है। एल–निनो दक्षिणी अमेरिका के पेरू तट के पश्चिम में 180 किमी. दूरी पर प्रवाहित होती है। जिसकी दिशा उत्तर से दक्षिण में होती हैं। एल–निनो घटना का विस्तार 30 डिग्री दक्षिण से 36 डिग्री दक्षिण तक पाया जाता है। कभी कभी एल–निनो का विस्तार दक्षिणी अमेरिका के पश्चिमी छोर तक हो जाता है लेकिन यह कभी विशेष वर्षों में देखने को मिलता है ध्यान देने वाली बात यह है कि पेरू देश के तट पर पेरू की ठंडी जलधारा दक्षिण से उत्तर दिशा में प्रवाहित होती है। उत्तरी गोलार्ध्द में शरदकाल के समय विषुवतरेखी विपरीत जलधारा खिसकर दक्षिणी गोलार्ध्द में प्रवाहित होने लगती है जिसके कारण गर्म एल–निनो का जन्म होता है जिसके परिणामस्वरूप पेरू के आस पास सागरीय जल का तापमान सामान्य ताप से तीन डिग्री से चार डिग्री सेल्सियस और बढ़ जाता हैं।

जब एल–निनो घटना सक्रिय होती है तब दक्षिणी अमेरिका के पश्चिम में पेरू तट पर सामान्य वर्षा से कई गुना अधिक वर्षा होती है। इसी समय एल–निनो हिंद महासागरीय मानसून को प्रभावित करता है। एल–निनो दक्षिणी अमेरिका के दक्षिणी छोर तक धीरे धीरे फैल जाता है और सारा गर्म जल पूरब की ओर दक्षिणी अटलांटिक महासागर के पश्चिमी तट की तरफ प्रवेश हो जाता है जिससे यह दक्षिणी अटलांटिक महासागर धारा से मिलकर पूरब की तरफ चला जाता है और यह जल दक्षिणी अटलांटिक महासागर के जल का तापमान बढ़ा देता है जिसके परिणामस्वरूप दक्षिणी गोलार्ध्द की शरदकाल में दक्षिणी हिंद महासागर की उच्च वायुदाब कमजोर हो जाती है जिसके प्रभाव से दक्षिणी एवं दक्षिणी–पूर्वी एशिया में ग्रीष्मकालीन मॉनसून कमजोर हो जाता है।

एल–निनो को एक मौसमी परिघटना के रूप में देखा जाता है। इसे ईशु का बच्चा तथा ला–निनो को छोटी बहन के रूप में मान्यता दी जाती है। एल–निनो घटना का संबंध उष्णकटिबंधी पूर्वी प्रशांत महासागर के जल के तापमान में वृद्धि और ला–निनो को पश्चिमी प्रशान्त महासागर के उष्मन से माना जाता है। जब एल–निनो सबल होता है तो प्रशांत महासागर के पूर्वी तट के पेरू तट पर सामान से अधिक वर्षा होती है जिसके परिणाम स्वरूप पेरू तट हरे– भरें व जैव विविधता से समृद्ध हो जाते है। एल–निनो धारा के सक्रिय होने पर पेरू तट की हम्बोल्ट ठंडी धारा गर्म हो जाती है तथा जनवरी से मार्च माह तक अत्यधिक वर्षा होती है। जब एल–निनो के बारे में पेरू लोगों को पता नहीं था तब वो लोग आसमान की तरफ देखते हुए प्रार्थना करते थे 'हे ईश्वर हमें वर्षा दीजिए और सूखे से मुक्त रखें' परन्तु वर्तमान समय में एल–निनो की सामान्य जानकारियां होने से की एल–निनो के सक्रिय होने पर अतिवर्षा होती है जिससे सागरीय जीवों का विनाश हो जाता है खासकर के प्लैंक्टन नामक जीव, जिसके विलुप्त हो जाने के कारण मछलियाँ मर जाती है जिससे आहार तथा आर्थिक विकास पर प्रभाव पड़ता है तो आज वे प्रार्थना करते हैं कि 'हे ईश्वर हमें वर्षा दीजिए परन्तु एल–निनो से मुक्त रखें'।

जिस वर्ष एल–निनो सबल होता है उस वर्ष प्रशांत महासागर के पूर्वी यानी दक्षिणी अमेरिका के पश्चिमी तट पर वर्षा में चार से छह गुना वृद्धि हो जाती है जबकि प्रशांत महासागर के पश्चिमी तट पर सूखे का प्रकोप जन्म ले लेती है जिसके परिणामस्वरूप बांग्लादेश, भारत तथा इंडोनेशिया सूखे से ग्रसित हो जाते हैं। एल–निनो एक प्रतिविषुवत रेखीय जलधारा है जिसका जन्म उष्णकटिबंधी पश्चिमी प्रशांत महासागरीय तट पर होता है। जब पूर्वी प्रशांत महासागर में एल–निनो का प्रभाव क्षीण हो जाता है तब पश्चिमी प्रशांत महासागर में एल–निनो द्वारा उत्पन्न सूखे कि दशा को ला–निनो बदल देता है और आर्द्र मौसम को जन्म देता है। सन 1998 में ला–निनो के अधिक प्रबल होने के कारण सामान्य से बहुत अधिक मात्रा में वर्षा हुई थी जिसके परिणाम स्वरूप चीन, भारत, बांग्लादेश व इंडोनेशिया में प्रचंड बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो गई थी।

4. जेट वायु धारायें–

जाड़े की ऋतु में जेट स्ट्रीम क्षोभमण्डल में लगभग 12 किमी0 की ऊँचाई पर स्थित होती हैं जो हिमालय तथा तिब्बत पठार के अवरोध के कारण दो भागों में बंट जाता है। इसमें से उत्तरी शाखा पश्चिम से पूरब को अपने वक्राकार मार्ग पर हिमालय के उत्तर तथा दूसरी शाखा इन पर्वतों के दक्षिण प्रवाहित होती हैं। दक्षिणी शाखा द्वारा बनाये गये चाप के कारण इन दिनों अफगानिस्तान और

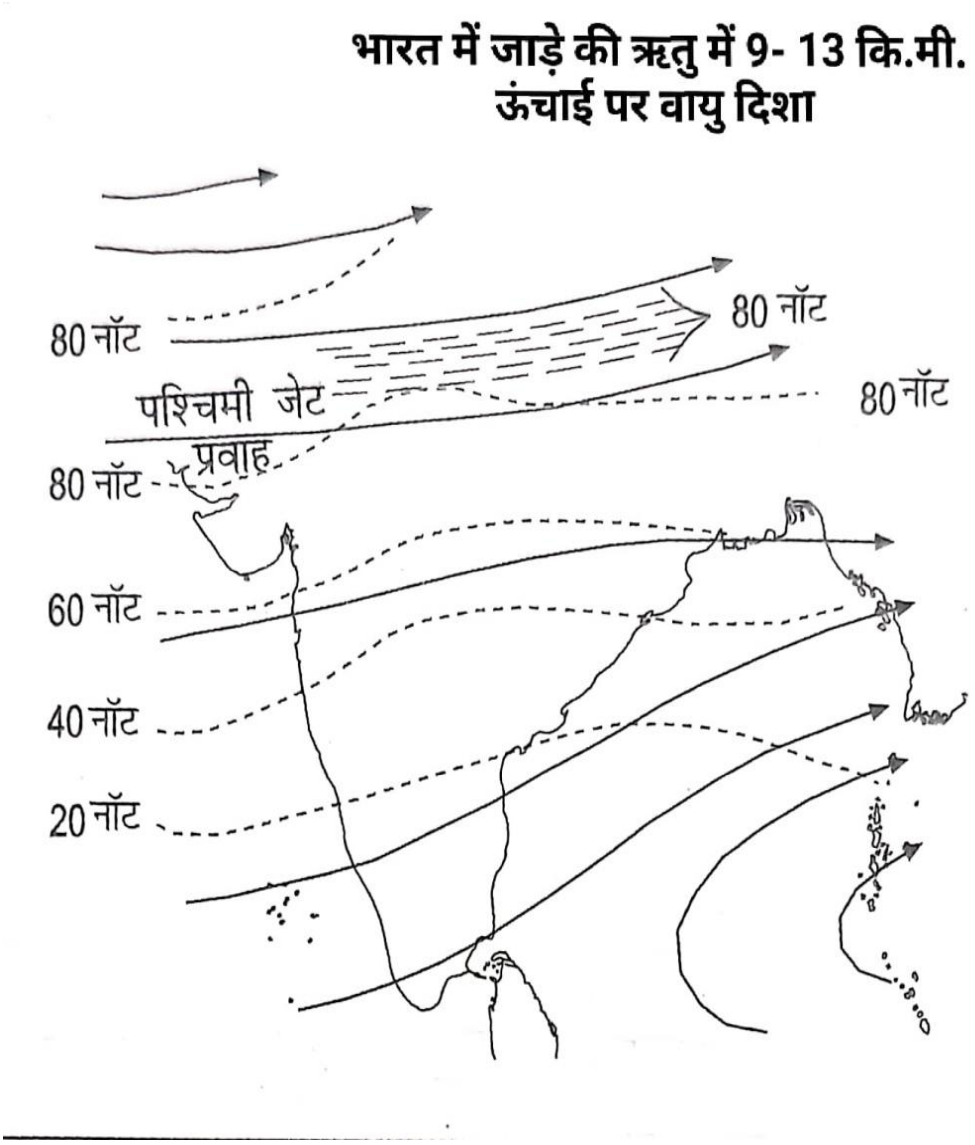

चित्र 6

उत्तर–पश्चिम पाकिस्तान के क्षेत्र पर एक उच्च दाब केन्द्र का निर्माण हो जाता है जिससे वायुमण्डल में स्थिरता पैदा हो जाती है और उत्तरी–पूर्वी मानसून हवाओं के उद्‌भव में मदद मिलती है।

ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की किरणों के कर्क रेखा पर लम्बवत चमकने के कारण ध्रुवीय उच्च वायुदाब कमजोर पड़ने लगता है जिससे जेट स्ट्रीम खिसककर हिमालय के पार बहने लगती है। लगभग जून माह तक जेट स्ट्रीम की दक्षिणी शाखा हिमालय के दक्षिण से लुप्त हो जाती है एवं यह उत्तरी शाखा से मिल जाती है। इससे भूमध्यरेखीय पछुआ हवाओं को दक्षिण एशिया में प्रशस्त होने का अवसर मिल जाता है। जेट स्ट्रीम के बनने वाले लूप के ही कारण इन दिनों उत्तर–पश्चिम भारत के भाग में एक निम्न दाब का केन्द्र बन जाता है। जो मानसून प्रस्फोट में मददगार होता है। इन दिनों दक्षिणी गोलार्द्ध की जेट स्ट्रीम अधिक प्रबल होती है। जो ITCको उत्तरी की तरफ धकेलने में सहायता करती है।

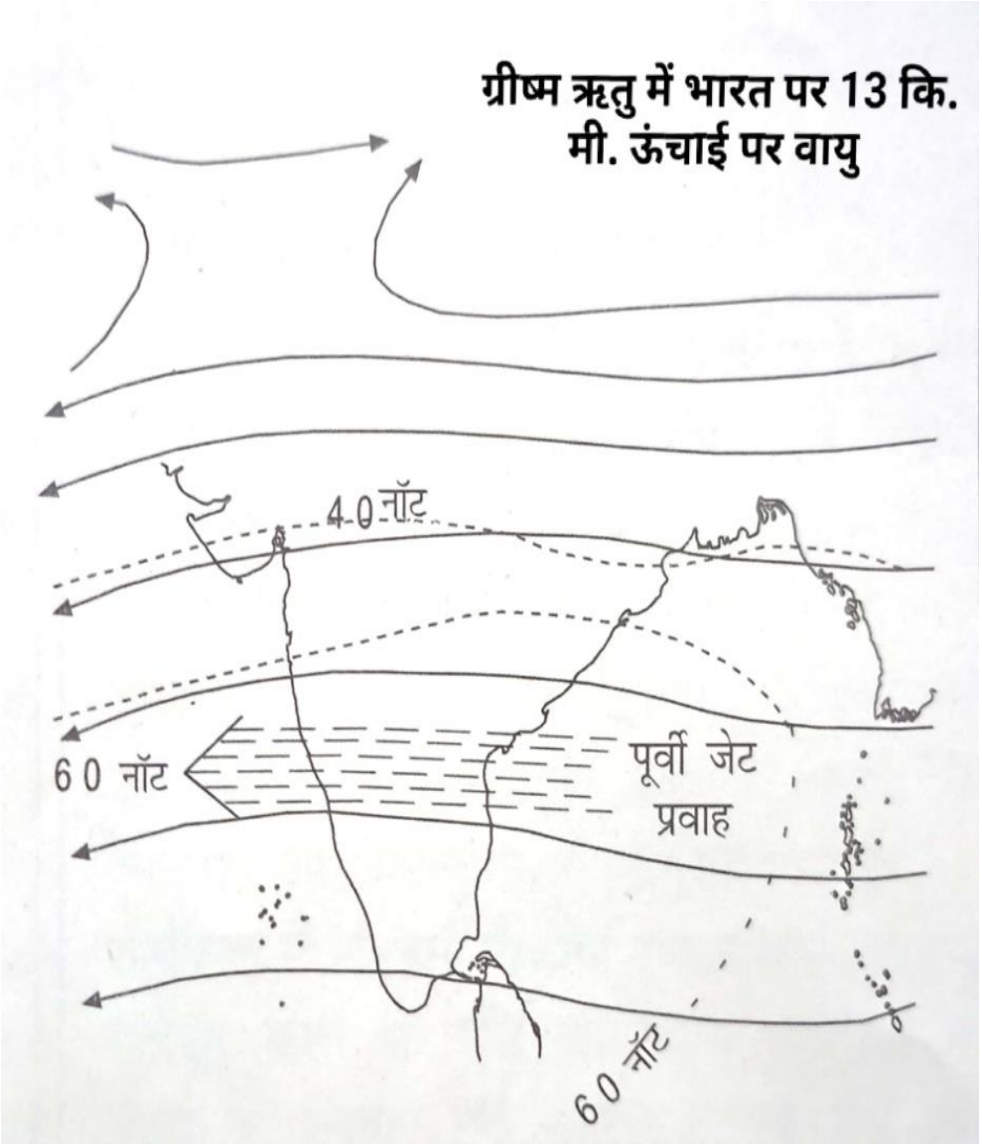

चित्र 7

5. **भारतीय मानसून तथा तिब्बत का पठार–**

यह भारतीय एवं सोवियत मौसम वैज्ञानिकों के सहयोग से 1973 में किया गया, जिसमें 4 रूसी और 2 भारतीय जहाजों ने मई से जुलाई माह के दौरान अरब सागर एवं हिन्द महासागर के क्षेत्रों से आधुनिक यंत्रों की सहायता से मौसमी आंकड़ों का संग्रह किया। इसके आधार पर मानसून की उत्पत्ति में तिब्बत के पठार की प्रमुख भूमिका होती है। इस प्रकार का विचार डॉ0 पी0 कोटेश्वरम् ने सन 1958 में एक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में भाग लेते हुए यह विचार व्यक्त किया कि तिब्बत के पठार की गर्मी में तापन मानसून परिसंचरण के उत्पत्ति तथा उसे कायम रखने में सबसे महत्वपूर्ण कारक है। भारतीय तथा सोवियत वैज्ञानिकों ने इस विचार से सहमत थे।

डॉ0 पी0 कोटेश्वरम् के अनुसार तिब्बत का पठार 2–3^{0}Cअधिक सूर्यातप प्राप्त करता है ग्रीष्म ऋतु गर्म हो उठता है जिससे तापीय प्रति चक्रवात उत्पन्न हो जाता है। इससे पश्चिमी उपोष्ण जेट स्ट्रीम कमजोर होने लगती है एवं प्रतिचक्रवात के दक्षिणी भाग में पूर्वी जेट स्ट्रीम का निर्माण होता है। यह पूर्व से खिसकती हुई पश्चिम में भारत, अरब सागर एवं पूर्वी अफ्रीका तक फैल जाती है। इस जेट स्ट्रीम के सहारे प्रवाहित वायु का हिन्द महासागर में अवतलन होता है। जिससे उच्च दाब को बल मिलता है और दक्षिण–पश्चिम मानसून का प्रादुर्भाव होता है।

6. महासागर क्षेत्र

इसमें मौसम विज्ञानियों तथा अनुसंधानकर्ताओं द्वारा एल– निनो सोमाली सागरी धारा, दक्षिणी दोलन एवं वाकर कोशिका का संबंध भारतीय मानसून के साथ स्थापित करने का प्रयास किया है। एल– निनो पेरू तट (दक्षिणी अमेरिका) पर प्रवाहित होने वाली एक गर्म महासागर धारा है जो दिसंबर माह में उत्पन्न होती है यह धारा सामान्य तौर पर वर्ष भर प्रवाहित होने वाली शीतल पेरू या हंबोल्ट धारा को बेदखल कर देती है। सामान्य परिस्थिति में पूर्वी प्रशांत (पेरू एवं इक्वाडोर के पास) का जल शीतल एवं उत्तर तथा पश्चिमी प्रशांत (पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया एवं इंडोनेशिया) उष्ण एवं गहरा होता है। इससे दक्षिणी– पश्चिमी मानसून सशक्त रहता है लेकिन एल नीनो के प्रभाव से या क्रम उलट जाता है इससे दक्षिण– पश्चिमी मानसून कमजोर पड़ जाता है और भारत में सूखे की संभावना बढ़ जाती है जिसे एल– नीनो के प्रभाव के नाम से जाना जाता है।दक्षिणी दोलन से तात्पर्य हिंद महासागर प्रशांत महासागर के मौसमी परिवर्तन से ऐसा देखा गया है कि जब प्रशांत महासागर में वायुदाब ऊंचा होता है तो हिंद महासागर में वायुदाब कम होता है इसके विपरीत जब प्रशांत महासागर में वायुदाब कम होता है तो हिंद महासागर में अधिक होता है। इस दोलन की जानकारी सर गिलबर्ट वाकर ने 1924 में दी थी। दक्षिणी दोलन की तीव्रता की माप ताहिती एवं डार्विन के बीच वायुदाब के अंतर से की जाती है। धनात्मक मान के अंतर्गत हिंद महासागर के क्षेत्र में ठंडी में वायुदाब कम तथा प्रशांत के क्षेत्रों में अधिक पाया जाता है।इस परिस्थिति में मानसून सामान्य पाया जाता है। इसके विपरीत ऋणात्मक मान के दौरान हिंद महासागर क्षेत्र में ठंडी के महीने में वायुदाब अधिक पाया जाता है इससे आने वाली मानसून कमजोर पड़ जाती है। इस प्रकार ऋणात्मक मान का एल नीनो के विकास में सीधा संबंध पाया जाता है। इस एल– निनो तथा ऋणात्मक दक्षिणी दोलन के संयोग को इन्सो कहा जाता है।

मौसम से संबंधित अनुसंधान तथा वैज्ञानिक खोज से यह स्पष्ट होता है कि उष्णकटिबंधीय क्षेत्र का वायु संचरण दो वृहद कोशिकाओं से प्रभावित होता है प्रथम– हेडली कोशिका जो उत्तर– दक्षिण धरातलीय व्यापारिक हवाओं और वायुमंडल में ऊंचाई पर प्रवाहित प्रति व्यापारिक द्वारा बनाई जाती है द्वितीय– वाकर कोशिका इसका विस्तार पूर्व– पश्चिम होता है सामान्यतः ऊपरी उड़ती वायु के क्षेत्र में तापमान अधिक (इंडोनेशिया तथा ऑस्ट्रेलिया) तथा बैठती वायु के क्षेत्र (पेरू तट) में कम होता है। इस स्थिति में सामान्य मानसून पाया जाता है परंतु ऋणात्मक दक्षिणी दोलन तथा एल– निनो के द्वारा वाकर कोशिका का अवरोही भाग पूरब की तरफ खिसक जाता है जिससे संपूर्ण भारत अवरोहण के प्रभाव में आ जाता है। जिससे मानसून कमजोर हो जाता है और सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

हिंद महासागर की गर्म धारा सोमाली जो अपने ऊपर चलने वाली वायु के अनुसार अपना दिशा बदलती रहती है। ग्रीष्म काल में यह धारा भूमध्य रेखा के दक्षिण से उत्तर के 10 डिग्री उत्तरी अक्षांश तक चलती है और आगे बढ़ कर भारत के तट की ओर मुड़ जाती है।जाड़े में यह उत्तर– पूर्व मानसून का अनुसरण करती हुई दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है। यह धारा दो वलय में प्रवाहित होती है प्रथम– उत्तरी वलय (5 डिग्री से 9 डिग्री उत्तरी अक्षांश के मध्य) द्वितीय दक्षिणी दोलन (0 डिग्री से 5 डिग्री के मध्य)।गर्मी बढ़ने के साथ –साथ दक्षिणी वलय, उत्तरी में बढ़कर उत्तरी वलय मे विलीन हो जाती है। अच्छे मानसून के समय दक्षिणी वलय की तीव्रता अधिक और कमजोर मानसून के समय मंद पाई जाती है। दोनों वलयों के बीच का क्षेत्र तीव्र उद्वेलन से प्रभावित होता है।इससे जून के माह में सोमालिया (15 डिग्री सेल्सियस) एवं मुंबई (30 डिग्री सेल्सियस) के पास तापमान में पर्याप्त अंतर पाया जाता है। यह ताप प्रवणता मानसून के विकिरण संतुलन को प्रभावित करती है।

4.7 जलवायु प्रदेश

भारतीय जलवायु को उष्ण मानसून के अन्तर्गत शामिल किया जाता है लेकिन देश का वृहद आकार, स्थलाकृतिक विभिन्नता, सागरीय प्रभाव, वायुदाब पेटियों का खिसकाव आदि के कारण उप प्रादेशिक स्तर पर जलवायु में भिन्नता पायी जाती है। भारतीय जलवायु प्रदेशों का निर्धारण कई विद्वानों ने किया है यहां कुछ प्रमुख विद्वानों का उल्लेख किया गया है–

ब्लाडिमिर कोपेन–

भारतीय जलवायु का क्रमबद्ध अध्ययन सर्वप्रथम ई0 व्लैनफोर्ड (1889) ने किया, जिन्होंने यहां की जलवायु में विश्वव्यापी जलवायु भिन्नताओं का संकेत दिया। बाद में कोपेन द्वारा विश्व की जलवायु का व्यवस्थित वर्गीकरण

प्रस्तुत किया गया। इनके अनुसार भारत को तीन प्रमुख जलवायु प्रदेशों में– आर्द्र-A, शुष्क-B, तथा अर्द्ध शुष्क-C एव D में बांटा। पुनः इनको वर्षा एवं तापमान के आधार पर उपभागों में S,W,m,w,h,g,f,c,t एवं s अक्षरों का प्रयोग करके वर्गीकरण किया है। कोपेन ने भारत को 9 जलवायु प्रदेशों में बांटा है।

Aw (उष्ण कटिबन्धीय सवाना तुल्य)–यह उष्ण कटबन्धीय सवाना घास के मैदानों और मानसूनी पर्णपाती वनस्पति क्षेत्रों से सम्बन्धित है। यहां मई सबसे गर्म तथा शीत माह का तापमान 18^0C से अधिक पाया जाता है। यहां शीत शुष्क होती है। यह प्रायद्वीप के अधिकांश भाग, पं0 बंगाल तथा झारखण्ड में पाया जाता है। यह प्रदेश।mw से अधिक उष्ण होता है क्योकि यह सागर तट से दूर रहता है। इस प्रदेश में तापमान की समानता पायी जाती है। ग्रीष्म काल में यहा वर्षा होती है। यहां औसत वार्षिक वर्षा 60 से 200 सेमी के बीच होती है।

Amw(उष्ण कटिबन्धीय मानसून तुल्य)–

यहां शीत काल की शुष्कता की अवधि छोटी होती है तथा ग्रीष्म काल व वर्षा काल में वर्षा होती है। यह उष्णकटिबंधीय जलवायु है यहां ठंड के माह में 18 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान रहता है। इसका विस्तार दक्षिणी कोकण, मालाबार तट, पश्चिमी घाट, तमिलनाडु पठार, त्रिपुरा और मिजोरम में पाया जाता है। यह प्रदेश सहयाद्री पर्वत का पश्चिमी भाग है मानसूनी पवनों की अरब सागरीय शाखा के एकदम सामने पड़ता है। कर्क रेखा के दक्षिण में होने के कारण तापमान ऊंचा रहता है।

As (उष्ण कटिबन्धीय जलवायु)–

उष्णकटिबंधीय जलवायु का एक भाग है जहां वर्षा शीतकाल में होती है। यहां ग्रीष्म ऋतु शुष्क होती है इसमें कोरोमण्डल तट शामिल है। यहां लौटते हुए मानसून से वर्षा होती है। नवंबर से जनवरी के मध्य चक्रवाती रूप में वर्षा होती है। वर्षा 60 से 200 से. मी. तक होती है।

BShw (अर्द्धकटिबन्धीय स्टेपी तुल्य)–

यहां औसत वार्षिक तापमान 18^0C से अधिक पाया जाता है। शीत ऋतु होने के कारण जिस कारण आर्द्र–शुष्क दशाएं बनी रहती हैं। वर्षा कम होती है। इसमें कर्नाटक, तमिलनाडु के वृष्टिछाया क्षेत्र, पूर्वी राजस्थान और पश्चिमी हरियाणा का कुछ भाग शामिल है। प्रायद्वीप के पश्चिमी घाट के पूर्व विभाग में अवस्थिति कर्नाटक राज्य इसका प्रमुख क्षेत्र है।

BWhs (उष्ण मरुस्थली जलवायु)–

यहां शुष्क उष्ण कटिबंधीय मरुस्थली जलवायु पायी जाती है जहां का औसत वार्षिक तापमान 18 डिग्री सेल्सियस से अधिक होता है तथा शीत शुष्क होती है जिसमें ऊँचा तापमान, अधिक तापान्तर तथा बहुत कम वर्षा पायी जाती है। इसका विस्तार पश्चिमी राजस्थान में है। यहां औसत वार्षिक वर्षा 200 सेमी से कम होती है जिसके कारण मरुभिद वनस्पति का विस्तार पाया जाता है।

Cwg (मध्य तापीय/गंगा तुल्य)–

इसमें शीत शुष्क होती है। वर्षा सबसे शुष्क माह का दस गुना होता है। शीत माह का तापमान 18^0C से कम तथा गर्म माह का औसत तापमान 18^0Cसे अधिक रहता है। इसकी प्रमुख विशेषताएं वर्षा के पूर्व गर्मी बढ़ जाती है। यहां गंगा के मैदान में फैला है। इसके अलावा गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश, असम, नागालैंड तथा मेघालय में भी फैला है।

Dfc (शीतल आर्द्र जाड़े की जलवायु)–

यह शीतोष्ण जलवायु वर्ग का है। जाड़े की ऋतु शीतल और आर्द्र होती है।सिक्किम और अरुणांचल प्रदेश क्षेत्र में फैला है। यहां उष्णतम माह का तापमान 22 डिग्री सेल्सियस से नीचे लेकिन 1 से 3 माह तक 10 डिग्री सेल्सियस से ऊपर होता है। यह हिमालय के उत्तरी पूर्वी भाग में फैला है यहां शुष्क में भी कम से कम 3 सेमी वर्षा हो जाती है।

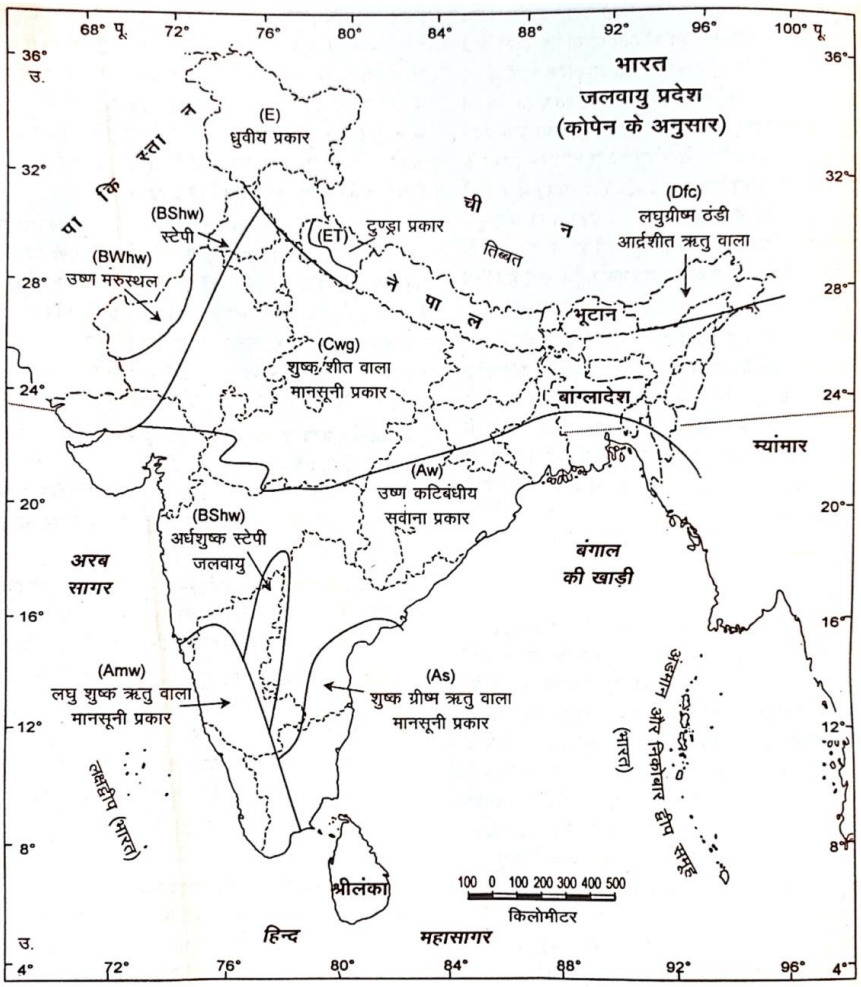

चित्र–8

E (ध्रुवीय या पर्वतीय जलवायु)–

यह एक ध्रुवी प्रकार की जलवायु है जहां सबसे गर्म महीने का तापमान 10 डिग्री सेल्सियस से कम रहता है। यह जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तराखण्ड में फैला पाया जाता है। सबसे गर्म माह का औसत तापमान 10^0Cसे कम पाया जाता है। लद्दाख में 20 सेमी से कम वर्षा होती है। हिमाचल प्रदेश तथा उत्तराखंड में वर्षा 100 से 200 सेमी तक भी होती है।

ET (टुण्ड्रा तुल्य)–

यह ध्रुवीय जलवायु प्रदेश का ही एक भाग है। यहां सबसे गर्म माह का तापमान 0^0C से 10^0C के मध्य पाया जाता है। इसका विस्तार उत्तराखण्ड के पहाड़ी भाग में है।

सी0डब्ल्यू थार्नथ्वेट–

इन्होंने वर्षण प्रभाविता सूचकांक, तापीय दक्षता सूचकांक तथा वर्षा के मौसमी सान्द्रण के आधार विश्व जलवायु का वर्गीकरण (1931, 1933 एवं 1947) करने का प्रयास किया है। इनके जलवायु वर्गीकरण में से लगभग भारत में 12 प्रकार की जलवायु पाई जाती है।

AAr उष्ण कटिबन्धीय अति आर्द्र जलवायु–

इसमें उच्च तापमान, अधिक वर्षा, वर्षभर वर्षा तथा सदाबहार वर्षा वन की विशेषता पायी जाती है। यह त्रिपुरा, पश्चिमी घाट, मिजोरम, गगां का डेल्टा, असम तथा दक्षिणी मेघालय में पाया जाता है।

BA'w उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र जलवायु–

यहां शीत ऋतु में वर्षा में कमी देखी जाती है तथा ग्रीष्म काल में पर्याप्त वर्षा होती है। इसका विस्तार पश्चिमी घाट के कुछ भाग और पूर्वी पं0 बंगाल में है।

BB'w समशीतोष्ण आर्द्र जलवायु–

इसमें जाड़े के मौसम में आर्द्रता कम पायी जाती है तथा वर्षा ग्रीष्म काल में होती है। मेघालय, असम, मणिपुर और नागालैण्ड में पायी जाती है।

CA'w उष्ण कटिबन्धीय उपार्द्र जलवायु–

इसमें शीत शुष्क होती है जिसके कारण उपार्द्र जैसी जलवायु पाई जाती है। इसका विस्तार प्रायद्वीप के अधिकांश भाग, गंगा मौदान के दक्षिणी भाग में मिलता है। यह देश का सबसे बड़ा जलवायु प्रदेश है।

CA'w' उष्णकटिबंधीय उपार्द्र जलवायु–

इसमें शीत ऋतु में वर्षा होती है जिसमे तमिलनाडु का अधिकतर भाग शामिल है

CB'w समशीतोष्ण उपार्द्र जलवायु–

यहां शीत शुष्क होती है तथा ग्रीष्म आर्द्र होती है। इसमें गंगा ब्रह्मपुत्र का मैदान शामिल है। यहां वर्षा की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है जिसके कारण इसको घास प्रदेशों में शामिल किया जाता है।

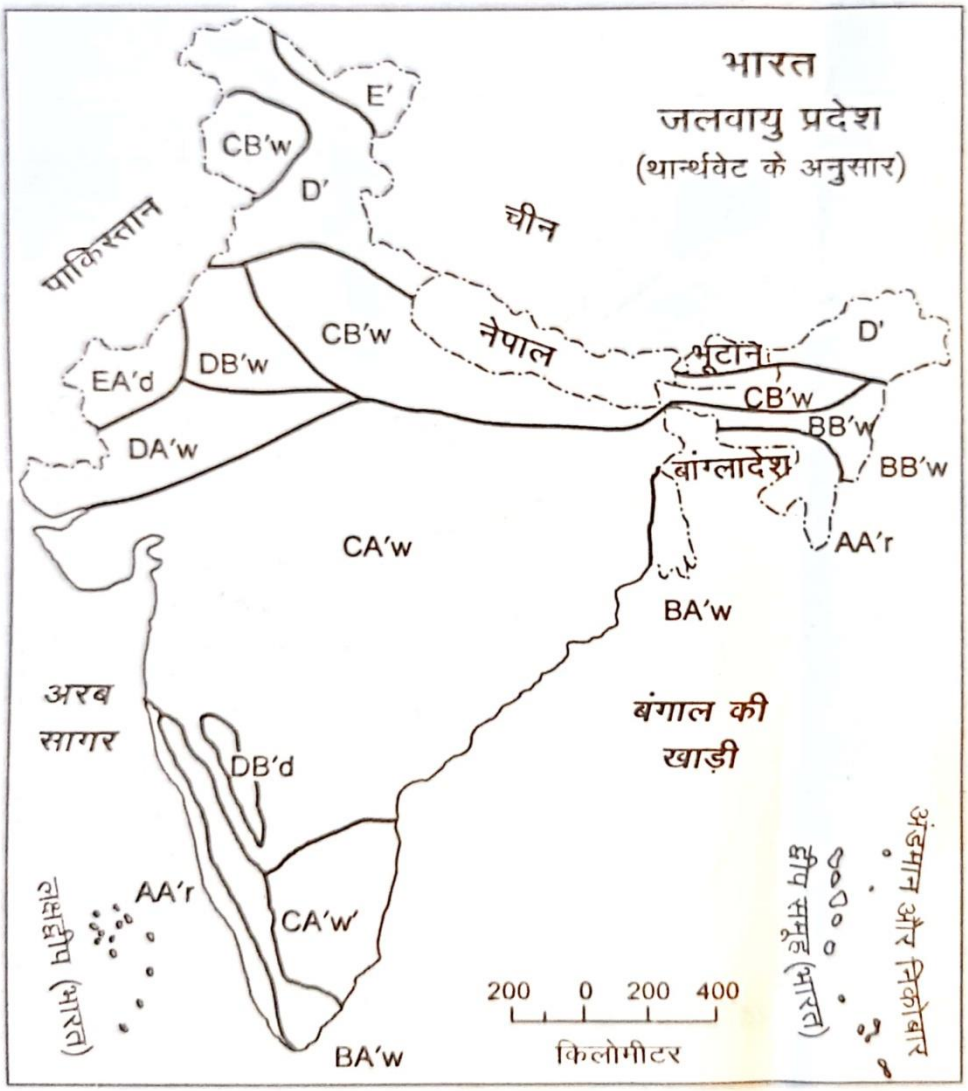

चित्र–9

DA'w उष्ण कटिबंधीय अर्द्धशुष्क जलवायु–

यहां शीतकाल में वर्षा की कमी पायी जाती है तथा ग्रीष्म काल में वर्षा होती है। इसका प्रभाव कच्छ एवं द0पू0 राजस्थान में पाया जाता है।

DB'd समशीतोष्ण अर्द्ध शुष्क जलवायु–

इस जलवायु में प्रत्येक माह या वर्षभर आर्द्रता की कमी रहती है। इसमें सहयाद्रि वृष्टि छाया भाग शामिल है।

DB'w समशीतोष्ण अर्द्ध शुष्क जलवायु–

इसमें शीत शुष्क होती है तथा ग्रीष्म काल में वर्षा होती है। उ0प्र0, राजस्थान, पंजाब और द0–पं0 हरियाणा इसमें शामिल है। यह जलवायु प्रदेश स्टेपी जलवायु प्रदेश के सदृश्य है।

D' टैगा तुल्य जलवायु–

इसमें तापीय दक्षता सूचकांक कम (16– 31) होता है। हिमाचल प्रदेश से अरुणाचल प्रदेश तक हिमालय के निचले ढाल के सहारे फैला है। यहां पर अपेक्षाकृत लंबी शीत ऋतु मिलती है वह तापमान भी कम पाया जाता है।

EA'd उष्ण कटिबन्धीय शुष्क जलवायु–

यहां वर्ष भर वर्षा की कमी पायी जाती है। इसके अन्तर्गत राजस्थान का थार मरुस्थल शामिल है।यहां वाष्पीकरण अधिक होता है। अवरोध के अभाव के कारण वर्षा का अभाव पाया जाता है।

E' टुण्ड्रा तुल्य जलवायु–

यह प्रदेश उन जलवायु प्रदेशों में मिलती है जहां वर्षभर तापमान हिमांक से नीचे रहता है और शीतकाल में सदैव हिमपात होता रहता है। इसमें तापीय दक्षता सूचकांक 1–15 पाया जाता है। इसका विस्तार उंचाई वाला हिमालय व लद्दाख में देखने को मिलता है।

जी0टी0 ट्रिवार्था–

इन्होंने कोपेन के वर्गीकरण में संशोधन करके 1945 में जलवायु की जननिक विशेषताओं को अधिक महत्व दिया। इन्होंने भारत की जलवायु को 4 प्रमुख 7 गौंड़ भाग में बांटा–

(क) उष्ण कटिबन्धीय जलवायु (A)-

1. उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र वर्षा जलवायु (Am)-इसमें औसत वार्षिक तापमान 27^0Cतथा वार्षिक वर्षा 250 सेमी0 से अधिक होती है। पश्चिमी घाट, त्रिपुरा तथा दक्षिणी असम का भाग शामिल है। इसमें शुष्कता स्पष्ट रूप से मिलती है।

2. उष्ण कटिबन्धीय शुष्क वर्षा जलवायु (Aw)-इसका विस्तार प्रायद्वीपीय भारत और मिजोरम में पाया जाता हैं इसमें औसत वार्षिक तापमान 27^0C तथा वर्षा 100 सेमी0 होती है।

(ख)शुष्क जलवायु (B)-

3. उष्ण कटिबन्ध स्टेपी तुल्य जलवायु (BS)- इसमें वार्षिक तापमान का औसत 27^0C से अधिक तथा वर्षा 100 सेमी0 से कम होती है। पश्चिमी घाट का वृष्टिछाया भाग में विस्तार पाया जाता है। इसमें तमिलनाडु का आंतरिक क्षेत्र, कर्नाटक, महाराष्ट्र तथा आंध्रप्रदेश का पश्चिमी भाग शामिल है।

4. उपोष्ण कटिबन्ध स्टेपी तुल्य जलवायु (Bsh)- यह अर्द्ध शुष्क जलवायु का क्षेत्र है। इसमें गुजरात, पूर्वी एवं मध्यवर्ती राजस्थान और दक्षिणी हरियाणा शामिल है। यहां औसत वार्षिक तापमान 27 डिग्री सेल्सियस से अधिक तथा वर्षा 50 से मी से 100 से मी के मध्य होती है।

5. उष्ण कटिबन्ध मरुस्थलीय जलवायु (Bwh)- इसका विस्तार कच्छ और पश्चिमी राजस्थान में हैं यहां

तापान्तर अधिक पाया जाता है। वार्षिक वर्षा 12.5 सेमी0 से भी कम होती है। यहां वनस्पति के रूप में कटीली झाड़ियां अधिक पाई जाती है।

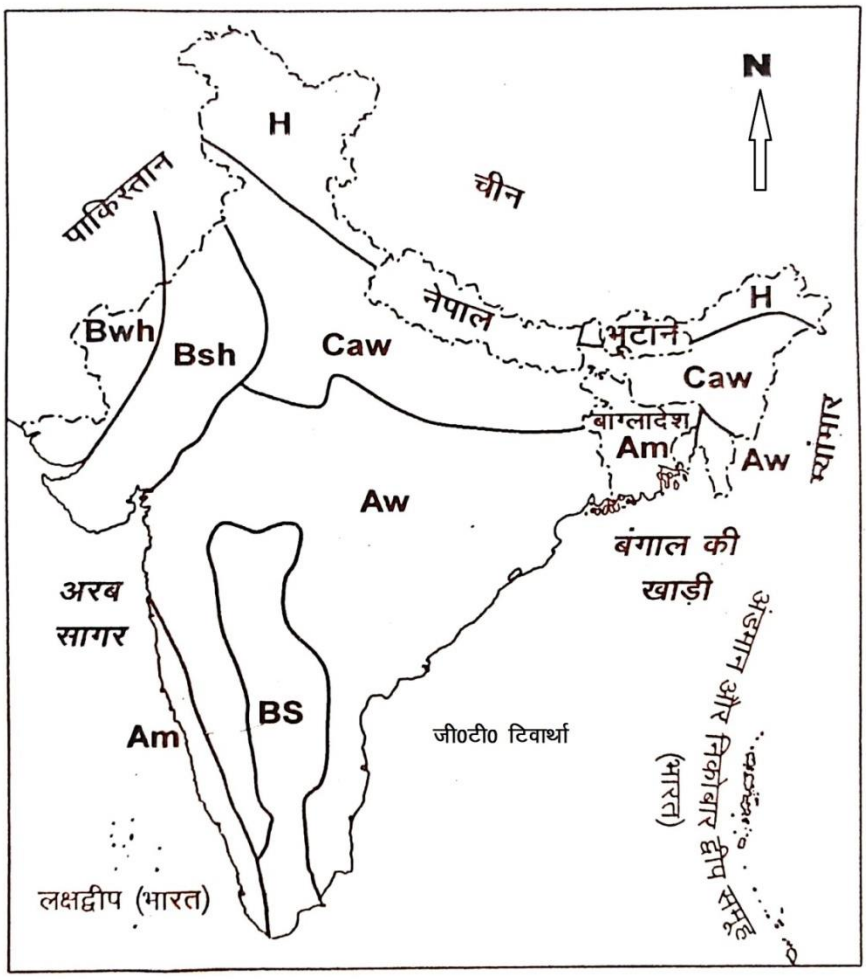

चित्र–10

(ग) शीतोष्ण जलवायु(C)-

6. आर्द्र उपोष्ण जलवायु (Caw)- इसका विस्तार गंगा के मैदान से असम तक फैला हुआ है। यहां शीत ऋतु में औसत तापमान 18^0Cसे कम तथा ग्रीष्म ऋतु में 46^0C से 48^0C तक पाया जाता है। औसत वार्षिक वर्षा 63 सेमी है जो पूर्वी भाग में बढ़कर 250 सेमी से भी अधिक हो जाता है।

(घ) पर्वतीय जलवायु (H)-

7. पवर्ततीय जलवायु (H)- इसमें कश्मीर से लेकर अरुणांचल प्रदेश तक का हिमालयी क्षेत्र शामिल है। यहां जून का तापमान 15^0C से 17^0C तथा शीत में 8^0C से कम पाया जाता है। यहां ठंडी में वर्षा पश्चिमी विक्षोभ से भी होता है।

आर0एल0 सिंह–

इन्होंने भारत की जलवायु को 10 भागों में बांटा है जो वार्षिक वर्षा की मात्रा पर निर्भर है। इसका वर्गीकरण केन्ड्रयू और स्टाम्प की विधि का संशोधन है।

1. अति आर्द्र उत्तर–पूर्व–

इसमें सिक्किम, उत्तरी पश्चिम बंगाल और उत्तर–पूर्व भारत (त्रिपुरा को छोड़कर) शामिल है। यहां 200 सेमी0 से अधिक वर्षा प्राप्त होती है तथा जुलाई एवं जनवरी माह का तापमान क्रमशः 25^0C–33^0Cएवं 11^0C–25^0C के बीच

पाया जाता है।

2. आर्द्र सहयाद्रि एवं पश्चिमी तट– इसमें समस्त पश्चिमी तट शामिल है। यहां वार्षिक 200 सेमी0 से अधिक तथा तापमान 18^0C–32^0Cतक पाया जाता है।

3. आर्द्र दक्षिण–पूर्व– इसमें छोटा नागपुर, पं0 बंगाल, उड़ीसा पठार, दक्षिणी छत्तीसगढ़ और पूर्वी आन्ध्र प्रदेश शामिल है। वर्षा 100–200 सेमी के मध्य तथा तापमान जुलाई में 26^0C–34^0Cएवं जनवरी में 12^0C–27^0C तक पाया जाता है।

4. उपार्द्र संक्रमण– इसका विस्तार मध्य गंगा, पूर्वी उत्तर प्रदेश और पं0 बिहार में पाया जाता है। यहां वर्षा 100–200 सेमी तथा तापमान जुलाई में 26^0C–41^0C एवं जनवरी का 9^0C–24^0Cपाया जाता है।

5. उपार्द्र तटीय– इसका विस्तार कोरोमण्डल तट के भाग में है। यहां वर्षा 75–150 सेमी होता है। तापमान मई में 28^0C–38^0Cएवं जनवरी में 20^0C–29^0C मिलता है।

6.उपार्द्र महाद्वीपीय– इसमें उत्तरी गंगा का मैदान शामिल है। यहां वर्षा 75–150 सेमी तथा तापमान जुलाई में 26^0C–41^0C एवं जनवरी में 7^0C–23^0Cपाया जाता है।

7. अर्द्ध शुष्क उपोष्ण– इसमें पूर्वी राजस्थान, हरियाणा और पंजाब के क्षेत्र शामिल है। यहां वर्षा 25 से 100 सेमी0 होती है। औसत तापमान 24 डिग्री से 41 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है।

8. शुष्क उपोष्ण– इसमें मध्य और पश्चिमी प्रायद्वीप का भाग शामिल हैं यहां वर्षा 50–100 सेमी पाया जाता है। पूर्वी कर्नाटक, पश्चिमी आंध प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, पश्चिम मध्य प्रदेश में इसका प्रभाव है।

9. शुष्क– इसमें कच्छ, पं0 राजस्था, द0प0 हरियाणा का क्षेत्र शामिल है। यहां वर्षा 25 सेमी से कम तथा तापमान जून माह में 28^0C–45^0Cऔर जनवरी में 50^0C–22^0Cपाया जाता है।

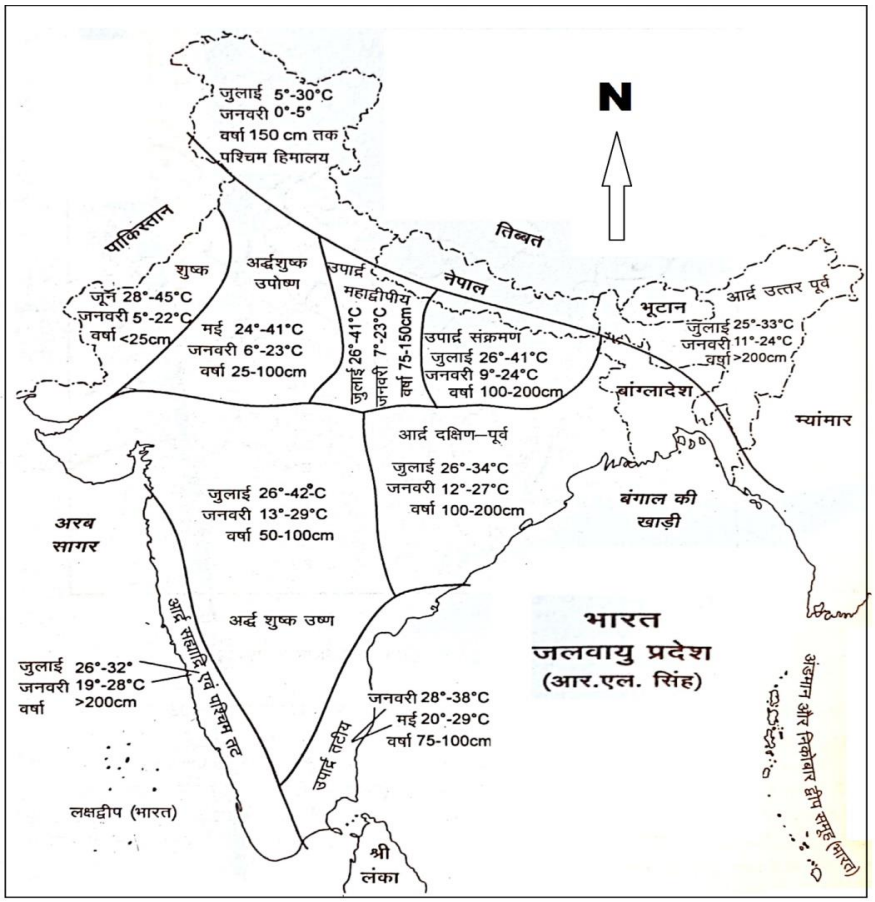

चित्र–11

10. पश्चिम हिमालय– इसमें जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश उत्तराखण्ड का पहाड़ी भाग शामिल है। यहां वर्षा 150 सेमी0 तथा तापमान 5^0C–30^0Cपाया जाता है।

वी0एल0सी0 जॉनसन– इन्होंने 1969 में भारत के जलवायु को 6 प्रकारों में बांटा है

1. केरल–असम प्रकार– इसमें शुष्क ऋतु छोटी होती है, शीत ऋतु का अभाव पाया जाता है। इसमें मालाबार तट और देश का उत्तर–पूर्वी भाग शामिल है। यहां शीत ऋतु का अभाव पाया जाता है तथा तापांतर भी कम पाया जाता है।

2. कोरोमण्डल तट प्रकार– इसमें तमिलनाडु का क्षेत्र शामिल है। यहां वर्षा शीत ऋतु में चक्रवात के रूप में होती है। यहां पर जून–जुलाई के महीने में दक्षिण–पश्चिम मानसूनी हवा में अवतलन की प्रवृत्ति देखी जाती है।

3. मध्य भारतीय प्रकार– इसमें भारत का अधिकांश भाग शामिल है। शीत ऋतु शुष्क तथा साफ रहा है। बसन्त ऋतु भी शुष्क रहता है। मध्य जून से मध्य सितम्बर तक द0पू0 मानसून से भारी वर्षा होती है। इसे वर्षा की मात्रा के आधार पर कई उपभागों में बांटा जा सकता है–

अ. कोंकण तट– औसत वार्षिक वर्षा 178 सेमी से कम होती है।

ब. पूर्वी मध्य भारत– 100 सेमी की सम वर्षा रेखा इस क्षेत्र को शुष्क क्षेत्र से पृथक करती है।

स. पश्चिमी मध्य भारत– यहां वर्षा 60 से 100 सेमी के मध्य होती है।

द. वृष्टि छाया क्षेत्र– यह औसत वार्षिक वर्षा 60 सेमी से कम होती है।

य. अर्द्ध मरुस्थल– यहां 60 सेमी से कम वर्षा की मात्रा पाई जाती है।

4. पंजाब प्रकार–

यह मध्य भारत प्रकार का उपभाग है जिसमें थोड़ी–बहुत वर्षा शीत ऋतु में हो जाती है। यहां ग्रीष्म ऋतु अधिक गर्म तथा शीत ऋतु अधिक शीत पाई जाती है।

5. मरुस्थलीय प्रकार–

इसमें पश्चिमी राजस्थान क्षेत्र शामिल है जहां वर्षा बहुत कम पायी जाती है। जिसके कारण जलवायु शुष्क पाई जाती है।

6. हिमालयी प्रकार–

इसमें कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, सिक्किम, उत्तराखण्ड और भूटान शामिल है। यहां वर्षभर हिमवर्षा के रूप में वर्षा होती रहती है। यहां ग्रीष्म ऋतु सुहावनी तथा शीत ऋतु बहुत ठंड भरी होती है।

केंड्रयू तथा एल0 डी0 स्टाम्प–

उन्होंने भारत को दो जलवायु प्रदेशों उपोष्ण कटिबंधीय एवं उष्णकटिबंधीय भागों में बांटा है जिसका निर्धारण जनवरी माह कि 18 डिग्री सेल्सियस समताप रेखा जो भारत के मध्य भाग में कर्क रेखा के समानांतर पाई जाती है। वर्षा के आधार पर उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु को पांच तथा उष्णकटिबंधीय जलवायु को 6 उप प्रदेशों में विभाजित किया है।

(क) उपोष्ण कटिबंधीय (महादीपीय) भारत–

1. हिमालय प्रदेश–

इस प्रदेश पर समुद्र का कोई प्रभाव नहीं होता है। यहां 2450 मीटर की ऊंचाई पर जाड़े का तापमान 4 डिग्री सेल्सियस से 7 डिग्री सेल्सियस और गर्मी का तापमान 13 डिग्री सेल्सियस से 18 डिग्री सेल्सियस के मध्य पाया जाता है वर्षा की मात्रा पश्चिमी से पूरब की ओर बढ़ती जाती है। पश्चिमी भाग में 125 सेमी वर्षा तथा पूर्वी भाग में 200 सेमी से अधिक वर्षा पाई जाती है।

उत्तर–पश्चिमी पठार–

यहां 16 डिग्री सेल्सियस तापमान ठंडी में पाया जाता है। सबसे गर्म माह का औसत तापमान 34 डिग्री सेल्सियस रहता है। यहां वर्षा 40 से मी होती है।

उत्तर–पश्चिमी शुष्क मैदान–

यहां शीत ऋतु का तापमान 13 डिग्री से 24 डिग्री सेल्सियस के मध्य पाया जाता है परंतु ग्रीष्म काल में बढ़कर 40 डिग्री सेल्सियस पहुंच जाता है। यहां वार्षिक वर्षा 5 सेमी से भी कम पाया जाता है। इसमें राजस्थान, कच्छ तथा दक्षिण–पश्चिमी हरियाणा शामिल हैं।

मध्यम वर्षा का क्षेत्र–

यहां शीत ऋतु तथा ग्रीष्म ऋतु का तापमान क्रमशः 15 डिग्री सेल्सियस से 17.2 डिग्री सेल्सियस तथा 35 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है। वार्षिक वर्षा की मात्रा 40 से 80 सेमी के मध्य पाया जाते हैं। इसका विस्तार पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दिल्ली, पूर्वी राजस्थान तथा मध्यप्रदेश में पाया जाता है।

संक्रमण मैदान–

यहां औसत तापमान शीत ऋतु में 16 डिग्री से 18 डिग्री सेल्सियस के बीच तथा गर्मी का 35 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है। वार्षिक औसत वर्षा 100 से 150 सेमी के बीच पाया जाता है।

(ख) उष्णकटिबंधीय भारत –

अत्यधिक वर्षा का क्षेत्र–

यहां वार्षिक वर्षा की मात्रा 100 से 200 सेमी के बीच पाया जाता है। इसका विस्तार पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, झारखंड छत्तीसगढ़, कुछ मध्य प्रदेश के क्षेत्र, पूर्वी महाराष्ट्र तथा उत्तर–पूर्वी आंध्र प्रदेश के भागों में पाया जाता है।

मध्यम वर्षा का क्षेत्र–

इसका विस्तार पश्चिमी घाट के पूर्वी भाग में पाया जाता है। यह वर्षा का वार्षिक मात्रा 75 सेमी से कम एवं औसत तापमान ग्रीष्म काल में 32 डिग्री सेल्सियस तथा शीत ऋतु में 18 डिग्री से 24 डिग्री सेल्सियस के बीच पाया जाता है।

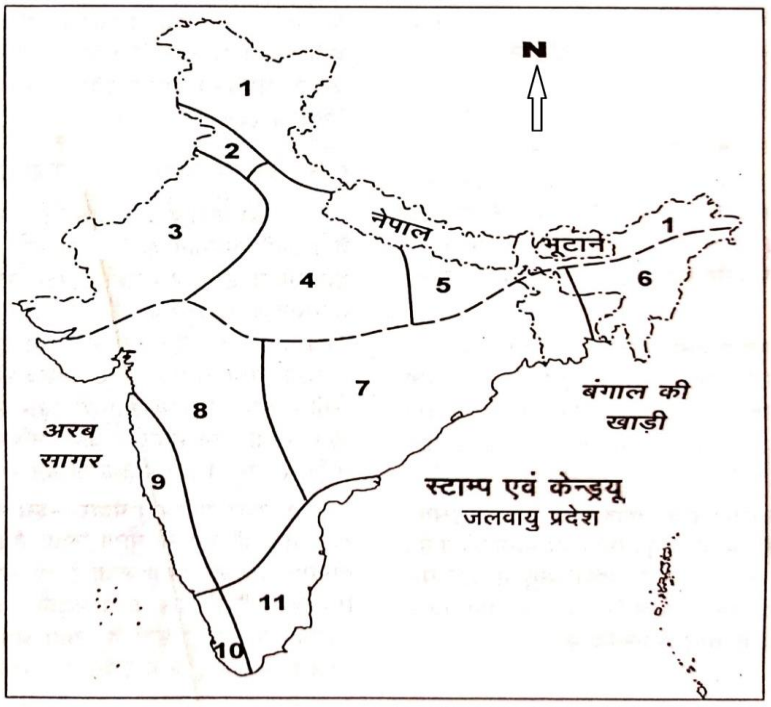

चित्र–12

कोंकण तट–

यहां वार्षिक वर्षा की मात्रा 200 सेमी पाई जाती है इसका विस्तार गोवा में नर्मदा नदी के मुहाने तक पश्चिमी घाट के सारे पाया जाता है।

मालाबार तट–

यहां वार्षिक वर्षा की मात्रा 500 से मी पाई जाती है औसत वार्षिक तापमान 27 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है। यह वर्षा अरब सागरी शाखा से होती है।

तमिलनाडु–

औसत वार्षिक वर्षा 100 से 150 सेमी पाई जाती है जो नवंबर दिसंबर में लौटते मानसून से होती है। यहां शीत युद्ध का औसत तापमान 24 डिग्री सेल्सियस पाया जाता है।

5.8 सारांश

अपने इस पंचम इकाई में मिट्टी, मिट्टी का वर्गीकरण, मृदा का संगठन, मृदा का प्रकार एवं वितरण, वनस्पति का प्रकार एवं वितरण, जलवायु प्रदेश, एल–निनो, जलवायु प्रदेश, जलवायु प्रदेश का वर्गीकरण– ब्लाडिमोर कोपेन, सी0 डब्ल्यू थार्नथ्वेट, जी0टी0 ट्रिवार्था, आर0एल0 सिंह एवं बी0एल0 सी0 जॉनसन का वर्गीकरण, मानसून, मानसून उत्पत्ति के कारणों मानसून की प्राचीन एवं नवीन संकल्पनाओं तथा मौसमी दशाओं का अध्ययन किया है। अब आप समझ गये होंगे कि मानसून भारत में कब जन्म लेता है और कब निवर्तन हो जाता है, मानसून की प्रवृत्ति कैसी है, मानसून की उत्पत्ति में कौन– कौन अन्य कारक बल प्रदान करते है। मानसून का प्रभाव किस क्षेत्र में अधिक है तिब्बत का पठार तथा हिन्द महासागर का महत्व।

5.9 शब्द सूची

जलवायु प्रदेश– Climatic Regions, एल–निनो– El-Nino, मानसून– Monsoon, मानसून अभियान– Monsoon Expedition, प्राकृतिक प्रकोप– Natural Hazard, ला–निनो– Law-Nino, दक्षिणी दोलन– Southern Osillation, तापीय दक्षता– Thermal Efficiency

5.10 परीक्षोपयोग प्रश्न

1. लैटेराइट मृदा का प्रयोग होता है

   (क) कृषि कार्य में (ख) बागवानी में

   (ग) भवन निर्माण में (घ) बर्तन निर्माण में

2. कपास की काली मृदा में किसका आधिक्य है–

   (क) इलाइट (ख) केओलिनाइट

   (ग) क्लोराइट (घ) चूना

3. दक्षिण भारत में ज्वालामुखी से सम्बन्धित है–

   (क) मृदा (ख) वन

   (ग) बस्ती प्रतिरूप (घ) स्थलाकृति

4. लैटेराइट मृदा में कौन–सी फसल सम्बन्धित है–

   (क) गेहूँ (ख) चावल

   (ग) बागवानी (घ) कपास

5. गुजरात में कौन–सी मृदा प्रमुख है–

(क) काली मृदा (ख) लैटेराइट मृदा

(ग) लाल मृदा (घ) मरुस्थलीय मृदा

6. कोपेन भारत को कितने जलवायु प्रदेशों में बांटा है–

(क) 4 (ख) 9 (ग) 10 (घ) 15

7. थार्नथ्वेट ने भारत को कितने प्रदेशों में बांटा है।

(क) 10 (ख) 12 (ग) 15 (घ) 8

8. कोपेन ने मध्य गंगा के मैदान के लिए किस जलवायु संकेत का प्रयोग किया।

(क) lw (ख) ls (ग) Cwg (घ)Am

उत्तरमाला–1–ग, 2–क, 3–क, 4–ग, 5–क, 6–ख, 7–ख, 8–ग

5.11– महत्वपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ

1. प्रो0 जगदीश सिंह– भारत : भौगालिक आधार एवं आयामा, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0सी0 तिवारी भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
4. सिंह, आर0एल0–इण्डिया : रीजनल जियोग्राफी एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।
5. Nag, P.And Sengupta, 8- Geography of India, Gorakhpur, Concept Publicshing company, New Delhi.

4.12 अभ्यास प्रश्न

1. काली एवं लाल मृदा का वर्णन कीजिए।
2. पर्वतीय एवं दलदली मृदा का वर्णन कीजिए।
3. भारतीय मृदा का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
4. ब्लाडिमोर कोपेन का जलवायु प्रदेश का वर्णन कीजिए।
5. थार्नथ्वेट महोदय का जलवायु प्रदेश का वर्णन कीजिए।

इकाई–6 वनस्पति प्रदेश, भारत में कृशि एवं प्रमुख फसले–गेहूं, चावल,गन्ना

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 प्राकृतिक वनस्पति

6.4 भारत में कृषि

6.5 प्रमुख फसलें–गेहूं, चावल, गन्ना

6.6 सारांश

6.7 शब्द सूची

6.8 परीक्षोपयोगी प्रश्न

6.9 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

6.10 अभ्यास प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल की यह छठी इकाई है इसमें वनस्पति प्रदेश, वर्गीकरण, वनस्पति को प्रभावित करने वाले कारक, वनस्पति पर ऊचाई का प्रभाव तथा अल्पाइन वनस्पति को स्पष्ट किया गया है। आर्थिक दृष्टि से उपयोगी वनों, सदाबहार वन से लेकर मरुस्थलीय वन तथा पर्वतीय वन से लेकर तटवर्ती वन का अध्ययन करेंगे। भारतीय कृषि, भूमि उपयोग, प्रमुख फसल, कृषि को प्रभावित करने वाले कारक, कृषि प्रकार, कृषि की आवश्यक तत्वों, कृषि संगठन एवं संस्था आदि का अध्ययन करेंगे। प्रमुख फसलों में गेहूं, चावल एवं गन्ना उत्पादन एवं वितरण व्याख्या किया गया है।

6.2 उद्देश्य

भारत भूगोल के इस इकाई का आप अध्ययन करने के बाद–

- भारत की वनस्पति का प्रकार एवं वितरण समझ सकेंगे
- हिमालयी वनस्पति को समझ सकेंगे
- वनस्पति को प्रभावित करने वाले तत्व को समझ सकेंगे
- भारतीय कृषि को समझ सकेंगे
- कृषि प्रकारों को समझ सकेंगे
- प्रमुख फसलों में गेहूं, चावल एवं गन्ना के उत्पादन एवं वितरण समझ सकेंगे
- भूमि उपयोग को समझ सकेंगे
- कृषि को प्रभावित करने वाले कारकों को समझ सकेंगे।

6.3 प्राकृति वनस्पति प्रदेश–

भारत की जलवायु एवं धरातलीय बनावट के विविधता के कारण यहां आर्द्र सदाबहार वन से लेकर शुष्क कांटेदार तक के वन पाये जाते हैं। भारतीय वन का अनेक विद्वानों ने समय–समय पर अपना वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है। इनमें एच0जी0 चैपियन, 'वीनफर्थ, कार्ल ट्राल, सी0जी0 काल्डर, जी0 एस0 पुरी आदि का वर्गीकरण महत्वपूर्ण है। इनमें चैम्पियन का वर्गीकरण काफी महत्वपूर्ण है जिसमें उन्होंने भारत की कुल 116 वनस्पति प्रदेशों में

बांटा है। बाद में पुरी एवं सेठी ने संशोधन करके कुल 16 वनस्पति प्रदेशों बांटा। इन सभी वनस्पति प्रदेशों का वर्गीकरण करने वाले लेखकों के विचारों की व्याख्या निम्नवत है–

1. उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वनस्पति–

इसमें उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र एवं अर्द्ध सदाबहार वनस्पति प्रदेशों को शामिल किया जाता है। इस प्रकार के वनस्पति 200 वर्षा वाले क्षेत्रों में मिलते हैं। यहां वनस्पति के साथ–साथ सघन वन एवं लतायें भी पायी जाती हैं। असम, त्रिपुरा मणिपुर, मेघालय व नागालैण्ड, पश्चिमी घाट तथा अण्डमान निकोबार द्वीप समूह में इसका विस्तार पाया जाता है। ये वनस्पति 300 सेमी0 वर्षा वाले भागों में पाया जाता है। पश्चिमी घाट के पवनोभिमुखी ढाल पर इस प्रकार के वन का विस्तार मिलता है क्योंकि यहां भारी मात्रा में वर्षा होती है। यहां के वृक्ष 30 से 60 मीटर लम्बे व सीधे होते हैं जिस पर लतायें फैली होती हैं। महोगनी, साल, रबड़, एबोनी, पलास, ताड़, वैत, तलसर आदि प्रमुख हैं।

उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वन सदा हरे–भरे रहते हैं। सघन वन होने के कारण इनके नीचे घास का अभाव पाया जाता हैं यह क्षेत्र इलायची, काली मिर्च, लौंग और मसालों के बगानों के लिए अनुकूल है। पश्चिमी घाट देश का सर्वाधिक जैव विविधता से सम्पन्न प्रदेश है, इसे जैव विविधता के हॉट स्पॉट में गिना जाता है। इसमें सदाबहार एवं पर्णपाती दोनों प्रकार का वन पाया जाता है। यहां के वृक्षों का कागज निर्माण में अधिक प्रयोग किया जाता है।

2. उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र पर्णपाती वनस्पति–

इसका विस्तार देश के उन भागों में मिलता है जहां वर्षा 100–200 सेमी0 के आस–पास होती है। इस प्रकार के वन सघन तो पाये जाते हैं लेकिन लम्बे नहीं होते हैं। इस प्रकार वन वर्ष में एक ग्रीष्म ऋतु से पूर्व अपनी सम्पूर्ण पत्तियां गिरा देती है। चन्दन, साल, शीशम, महुआ, सागौन, आंवला, जामुन व खैर के वृक्ष मिलते हैं जो आर्थिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण होते हैं। वृक्षों के बीच में खुला–खुला स्थान होता है। जहां धास भूमि मिलती है। यह वन हिमालय की तलहटी में भाबर एवं तराई के क्षेत्र, सहाद्री पर्वत के पूर्वी ढाल पर तथा उत्तर–पूर्वी भारत के अनेक क्षेत्रों में मिलता है। इनकी लम्बाई 24–36 मीटर तक होती है। ये वन कठोर, टिकाऊ, महंगी होने के कारण मांग बहुत होती है। इन वनों की लकड़ी का प्रयोग रेलवे स्लीपर एवं भवन निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

3. उष्ण कटिबन्धीय शुष्क पर्णपाती वनस्पति–

यह तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, तेलंगाना, कर्नाटक, द0प0 उत्तर प्रदेश, पूर्वी राजस्थान, दक्षिणी पंजाब, हरियाणा, तराई, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखण्ड आदि राज्यों के उन भागों में पाया जाता है जहां वर्षा 50–100 सेमी0 वार्षिक होती है। इसमें वृक्ष न तो सघन होते हैं न तो ऊँचे होते हैं। ग्रीष्म ऋतु से पूर्व वर्ष में एक बार अपनी पत्तियां गिरा देती है। इनकी छाल मोटी होती है ताकि शुष्कता से बच सके। बबूल, सीरस, आम, सागौन, शीशम, कीकर, नीम, पलास, तेन्दु, खैर, बेर, पीपल, महुआ व हल्दू आदि के वृक्ष इसमें पाये जाते हैं। तमिलनाडु के कुछ भाग में अधिक तापमान तथा आर्द्रता होने के कारण शुष्क सदाबहार वनस्पति पाये जाते हैं।

4. उष्ण कटिबन्धीय कांटेदार वनस्पति–

इस प्रकार के वन उन क्षेत्रों में मिलता है जहां पर50 सेमी0 से कम वर्षा होती है। वर्षा की कमी के कारण वृक्षों की वृद्धि कम होती हैं, पत्तियां भी कम होती हैं तथा कांटेदार होती हैं, जो झाड़ियों के रूप में मिलती है। इन वनस्पतियों के जड़ें लम्बी होती है तथा छाल चिकनी होती है। इस प्रकार के पेड़ों को मरुद्भिद पादप कहते हैं। नागफनी, बबूल, खेजड़ी, कत्था, थूहड़, खजूर, कैर व घासें प्रमुख हैं इनका विस्तार राजस्थान का पश्चिमी शुष्क भाग व अरावली मध्य प्रदेश तथा आन्तरिक प्रायद्वीपीय भारत का पश्चिमी घाट के पूर्व में स्थित वृष्टि छाया क्षेत्र में इसके अलावा गुजरात एवं पंजाब के कुछ भाग में भी पाया जाता है।

5. शीतोष्ण कटिबन्धीय वनस्पति–

भारत में शीतोष्ण वनस्पति के तीन वर्ग मिलते हैं। प्रथम–आर्द्र शीतोष्ण वनस्पति है जो पर्वतीय भाग में पाया जाता है। यह हिमालय में 1800–3000 मीटर की ऊँचाई पर मिलती है। इसको सदाबहार वनस्पति भी कहा जाता है। शिवराय, पालनी, अन्नामलाई, नीलगिरी पहाड़ी भागों में भी पाया जाता है। दूसरा–सामान्य शीतोष्ण कटिबन्धीय वनस्पति व तृतीय–शुष्क शीतोष्ण कटिबन्धीय वनस्पति देश में प्रमुख पर्वतीय भागों में पाया जाता है। इन वनों में मेपुल, देवदार, चीड़, पापलर, ब्लूपाइन, एल्व, स्प्रूस, फर आदि देशज तथा मैग्नोलिया सिनकोना, यूकेलिप्टस विदेशज

वृक्ष मिलते हैं।

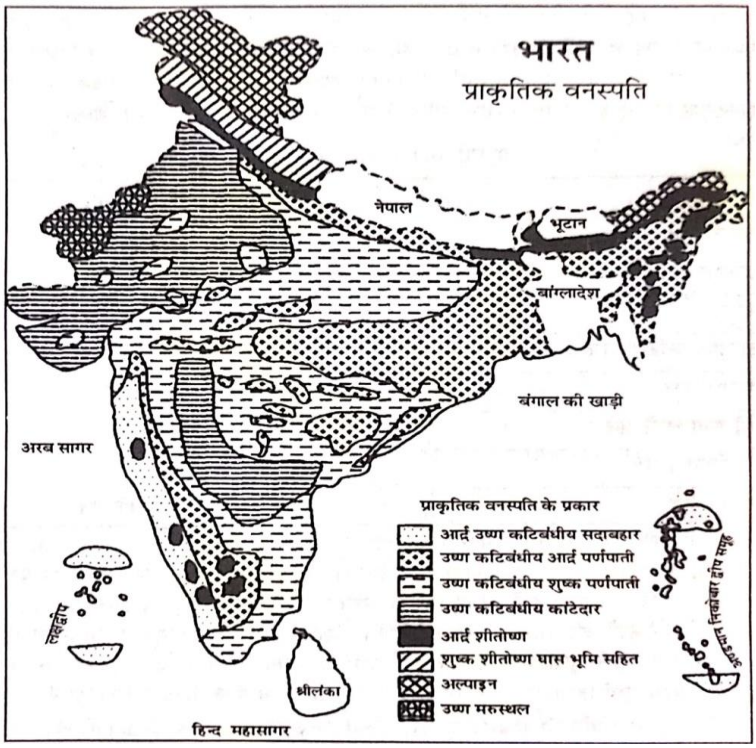

चित्र–1

6. अल्पाइन या पवर्ततीय वनस्पति–

पर्वतीय भाग में उच्चावच में भिन्नता के कारण जलवायिक दशायें भी बदली हैं जिसके परिणामस्वरूप वनस्पति में भी विविधता पायी जाती है। यह विविधता तापमान तथा वर्षा के भिन्नता के कारण है। इसका विस्तार हिमालय, प्रायद्वीपीय भाग तथा पश्चिमी घाट व पूर्वी घाट में है। पर्वतीय वन को दो भागों में विभाजित किया गया है–

(क) दक्षिणी पर्वतीय वनस्पति

(ख) हिमालयी वनस्पति

(क) दक्षिणी पर्वतीय वनस्पति

दक्षिणी भारत की पहाड़ियां सामान्य ऊँचाई वाली है जिसने में मैकाल, सतपुड़ा, विन्ध्याचल, पालनी, अन्नामलाई, नीलगिरी इसके अतिरिक्त पूर्वी घाट एवं पश्चिमी घाट पहाड़ियाँ शामिल है। दक्षिण भारत में 1050–1525 मीटर की ऊँचाई वाले भागों पर आर्द्र पर्वतीय वन मिलते हैं। इसमें पालनी एवं नीलगिरी शामिल है। यहां उष्ण कटिबन्धीय वन सदाबहार वन से भिन्न होते हैं सतपुड़ा, माउण्ट आबू, मैकाले तथा पश्चिमी घाट के शिखरों पर इनके उपवर्ग मिलते हैं। नीलगिरी तथा अरावली में उपोष्ण सवाना वनस्पति मिलती है।

पालनी, अन्नामलाई तथा नीलगिरी की पहाड़ियों पर 1525 मीटर की ऊँचाई वाले वह क्षेत्र जहां 150 सेमी0 से अधिक वर्षा होती है वहां आर्द्र शीतोष्ण वनस्पति मिलती है। दक्षिणी पर्वतीय वनस्पति में बीच–बीच में उर्मिल घास, लाइकेन व फर्न भी पाये जाते हैं।

(ख) हिमालयी वनस्पति–

हिमालय में ऊँचाई के अनुसार विभिन्न प्रकार की वनस्पति पायी जाती है। पूर्वी हिमालय तथा पश्चिमी हिमालय के वनस्पति में भिन्नता पायी जाती है। हिमालय में ऊँचाई के साथ सूर्यातप एवं वर्षा में भिन्नता होने के कारण भी वनस्पति में विविधता पायी जाती है। इस कारण सम्पूर्ण हिमालयी वनस्पति के दो प्रमुख क्षेत्रीय विभाजन किये गये है।

पूर्वी हिमालय की वनस्पति–

यहां की वनस्पति को आर्द्र पर्वतीय वन भी कहते हैं। यहां 200 से 255 सेमी0 औसम वर्षा प्राप्त होती है जो पश्चिमी हिमालय की अपेक्षा बहुत अधिक है। इसमें पश्चिम बंगाल, बिहार सिक्किम तथा पूर्वांचल की पहाड़ियां शामिल है। यहां 1000 से 2000 मीटर की ऊँचाई के मध्य आर्द्र शीतोष्ण वन पाये जाते हैं। ओक एवं चेस्टनट यहां प्रमुख रूप से पायी जाती हैं। ऐश एवं चीड़ के वन पाये जाते हैं जो आर्थिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण हैं। देवदार हिमालय क्षेत्र में 1700 से 2500 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है। 2400 मीटर की ऊँचाई पर चेस्टनट, मैपिल, ओक व बर्च के वृक्ष मिलते है। 3660 से 4880 मीटर की ऊँचाई पर अल्पाइन घास मिलती है।

पश्चिमी हिमालय की वनस्पति–

यह क्षेत्र पूर्वी हिमालय की अपेक्षा अधिक शुष्क होता है। यहां 101 से 203 सेमी0 वार्षिक वर्षा होती है। 1000 मीटर पर उष्ण एवं उपोष्ण झाड़ियां पायी जाती है। 1000 से 2000 मीटर की ऊँचाई के मध्य चेस्टनट, पापलर मैपिल, ओक एवं एल्व वृक्ष मिलते हैं। 2000 से 3000 मीटर की ऊँचाई के मध्य आर्द्र–शीतोष्ण वन मिलते हैं। यहां देवदार, चीड़ सिल्वर फर, स्प्रूस, सीडार तथा यू प्रमुख वृक्ष हैं। यहां के देवदार वृक्ष आर्थिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण हैं। 3000 से 4500 मीटर की ऊँचाई पर शंकुधारी वन मिलते हैं। शंकुधारी वन 3400 मीटर की ऊँचाई तक ही मिलते हैं। इनसे ऊपर अल्पाइन वन मिलते हैं। 4500 मीटर के ऊपर अल्पाइन शुरू हो जाते हैं। अल्पाइन चारागाह मिलते है जहां घुमक्कड़ी जनजाति पशुचारण करती हैं।

7. ज्वारीय वनस्पति–

यह वनस्पति नदियों के डेल्टाई भागों में पायी जाती है जिसमें गंगा, कृष्णा, महानदी, गोदावरी एवं कावेरी नदियों के डेल्टा। गंगा के डेल्टा में सुन्दरी वन विश्व प्रसिद्ध हैं। इन वनों के लवण सहन क्षमता अधिक होती है। डेल्टा तथा दलदली भागों में यह पाये जाते हैं। इनकी लकड़ी जलावन में काम आती हैं यहाँ, सुन्दरी, ताड़, बेल, नारियल, सोनेरीटा तथा फोनिक्त भी पाये जाते हैं।

भारतीय अर्थव्यावस्था में कृषि का विशेष योगदान है। देश कृषि प्रधान होने के कारण यहां कि अधिकांश जनसंख्या कृषि उत्पाद पर निर्भर हैं। भारतीय कृषि में योगदान देने वाले तत्वों का हम अध्ययन करेंगें।

6.4 भारत में कृषि

भूमि उपयोग

भारत में भूमि उपयोग प्रतिरूप स्थलाकृति, जलवायु, मृदा, मानवीय गतिविधियों प्रौद्योगिक आदानों जैसे अनेकों कारकों का प्रतिफल हैं।वर्तमान समय में जनदबाव एवं परिणामस्वरूप खाद्यानों की मांग, विकासात्मक गतिविधियों और प्रौद्योगिक उन्नति के कारण भूमि उपयोग के प्रतिरूप तथा प्रकार में निरंतर बदलाव देखने को मिला हैं। भारत में भूमि उपयोग संबंधी आँकड़े नौ बड़े वर्गों में उपलब्ध हैं यथा–(1.) वन, (2.) कृष्येत्तर कार्यों में लगी भूमि, (3.) बंजर और खेती अयोग्य भूमि, (4.) स्थायी चारागाह व चराई भूमि, (5) वृक्षों और बागों के अधीन भूमि, (6.) कृषि बेकर भूमि, (7.) वर्तमान परती, (8.) अन्य परती, (9.) शुद्ध बोया गया क्षेत्र। यह सर्वविदित हैं कि भारत के 328.726 मिलियन हेक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र में से केवल 307.82 मिलियन हे0 (93.64.%) क्षेत्र के बारे में ही भूमि उपयोग के आँकड़े प्राप्त हैं। उपर्युक्त प्रतिवेदित क्षेत्र (307.82 मि0हे0) का 45.52 प्रतिशत भाग शुद्ध बोया गया क्षेत्र के अन्तर्गत, 23.32 प्रतिशत भाग वन के अन्तर्गत, 14.25 प्रतिशत कृषि हेतु अनुपलब्ध भूमि के अन्तर्गत, 4.90 प्रतिशत वर्तमान परती, 4.05 प्रतिशत कृष्य बेकार भूमि, 3.33 प्रतिशत स्थायी चारागाह, 3.60 प्रतिशत अन्य परती, 1.01प्रतिशत वृक्षों तथा बागों के अधीन भूमि के अन्तर्गत सम्मिलित हैं।

1. शुद्ध बोया गया क्षेत्र

भारत जैसे देश में शुद्ध बोया गया क्षेत्र का विशेष महत्व हैं। विश्व में इसका औसत 32% हैं जबकि भारत में 45.52% हैं (2014–2015)। भारत में प्रति हेक्टेयर कृषि भूमि पर 8 व्यक्तियों का गुजारा होता हैं परन्तु जनाधिक्य के कारण भारत में प्रति व्यक्ति कृषि भूमि का औसत केवल 0.13 हे0 हैं जबकि आस्ट्रेलिया (3.39 हे0) में सर्वाधिक भूमि हैं। स्थानिक तौर पर पंजाब, हरियाणा, पं0.बंगाल, उत्तर प्रदेश, बिहार तथा महाराष्ट्र का 55 प्रतिशत से अधिक

प्रतिवेदित क्षेत्र शुद्ध बोया गया क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मलित हैं। शुद्ध बोया गया क्षेत्र के अन्तर्गत भारत के कुल प्रतिवेदित क्षेत्र (307.82 मि0हे0) का 45.52 प्रतिशत (140.13 मि0हे0) हैं।

2. वन

वर्तमान समय में केवल 24.62 प्रतिशत प्रतिवेदित क्षेत्र पर वनों का फैलाव पाया जाता हैं। जो 1952 की वननीति के 33.3 प्रतिशत लक्ष्य से बहुत कम हैं। NRSA के अनुसार वास्तविक वन 67.71 मि0हे0 एवं संघन वन केवल 38.72 मि0हे0।

3. कृषि हेतु अनुपलब्ध भूमि

इस प्रणाली में दो तरह की भूमि सम्मिलित होती हैं– पहला– अधिवास, परिवहन मार्ग, नहरे, खदान आदि कृष्येत्तर कार्यों में लगी भूमि तथा दूसरा– पर्वत, मरूस्थल, दलदल, बीहड आदि के रूप में कृषि अयोग्य भूमि।

4. परती भूमि

यह भूमि भी दो प्रकार की होती हैं– नई परती (1–2 वर्ष) और पुरानी परती (2–5 वर्ष) जिसके अन्तर्गत देश के प्रतिवेदित क्षेत्र का 8.50 प्रतिशत भाग पाया जाता हैं। जहाँ नई परती के क्षेत्र में वृद्धि होती हैं वही पुरानी परती का क्षेत्र कम हो जाता हैं।

5. अन्य अकृष्टि भूमि

इसमें देश के कुल प्रतिवेदित क्षेत्र का 8.39 प्रतिशत भाग लगा हैं। जिसमें स्थायी चारागाह एवं चराई भूमि (3.33प्रतिशत) वृक्षों और बागों के अन्तर्गत भूमि (1.01 प्रतिशत) और कृष्य बेकार भूमि (4.05 प्रतिशत) सम्मलित हैं।

नोटः–भूमि उपयोग नियोजन और भूमि संसाधनों के भरपूर उपयोग हेतु 1988 में राष्ट्रीय भूमि उपयोग नीति तैयार की गयी थी।

कृषि के प्रकार

भारत में प्राचीन काल से ही कृषि लोगों का मुख्य पेशा रहा हैं। देश की भौगोलिक, सामाजिक तथा आर्थिक दशाओं में अन्तर के कारण यहाँ कई प्रकार की फसले उगाई जाती रही हैं साथ ही साथ विभिन्न प्रकार की कृषि पद्धतियाँ भी अपनायी जाती रही हैं जो कि निम्नलिखित हैं–

1. झूम कृषि

यह एक स्थानान्तरणशील पद्धति हैं जिसे भारत के पूर्वोत्तर राज्य व मध्यवर्ती आदिवासी बहुल राज्य में पायी जाने वाली जनजातियों के द्वारा अपनाया जाता हैं। इसे असम में झूम, केरल में पोनम, आन्ध्र प्रदेश एवं उड़िसा में पोडु, मध्य प्रदेश में बीवर, मशान, पेण्डा, तथा बीरा नामों से जाना जाता हैं।

2. निर्वाहक धान्य कृषि

इसे प्राच्य धान्य कृषि भी कहा जाता हैं इसमें पुरानी तकनीकों और उपकरणों से छोटे भू–जोतों पर भोजन और अन्य घरेलू जरूरतों के लिए पशुओं की मदद से खेती की जाती हैं। इसमें खाद्यान्नों की कृषि की प्रधानता होती हैं और निर्यात के लिए बहुत कम बचत हो पाती हैं।

3. व्यापारिक धान्य कृषि

इस नई कृषि पद्धति की शुरूआत, हरियाणा व उत्तर प्रदेश के सुनिश्चित सिंचाई वाले भागों में हुई हैं जिसमें पांरपरिक निर्वाहक कृषि का स्थान व्यापारिक कृषि लेती जा रही हैं।

4. बगाती कृषि

इसके अन्तर्गत यूरोपीय बाजारों में चाय, कहवा, रबर आदि की माँग की पूर्ति हेतु ब्रिटिश शासन काल में शुरू की गई बागाती कृषि को सम्मिलित करते हैं। प्रारंभ में इन बगानो के मालिक यूरोपीय लोग थे। परन्तु स्वतंत्रता के बाद इनका स्वामित्व भारतीयों के हाथों में आ गया। दार्जलिंग पहाडियों, असम हिमालय, नीलागिरी

पहाडियों और उत्तरांचल के कुमाऊँ क्षेत्र में ऐसे बगान उपलब्ध हैं।

हाल के वर्षों में भारतीय कृषि में काफी परिवर्तन हुआ हैं। न केवल इसका दृष्टिकोण व्यापारिक और बाजारू हो रहा हैं वरन् इसमें विविधीकरण बढ़ रहा हैं। आज मत्स्य पालन, रेशम उत्पादन, शहद, उत्पादन, मुर्गीपालन आदि कृषि के भाग बनते जा रहे हैं जिसमें कृषकों की रूचि बढ़ी हैं।

5. कृषि के निर्धारक

भारत में कृषि भौतिक, सांस्थनिक और प्रौद्योगिक कारकों के समुच्चय का प्रतिफल होती हैं। नीचे इनका एक संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा हैं।

1. भौतिक कारक

भौतिक कारकों का शस्यप्रतिरूप, शस्यगहनता, कृषि उत्पादकता एवं कृषि प्रकारिकी पर प्रभाव देखा जाता हैं।भौतिक कारकों के अन्तर्गत उच्चावच, जलवायु व मृदा महत्त्वपूर्ण हैं जो प्रमुख रूप से भारतीय कृषि को करते हैं।

2. सांस्थानिक कारक

सांस्थानिक कारकों के अन्तर्गत सामाजिक संस्थाओं, प्रथाओं, भूधारिता भूस्वामित्व आदि को सम्मलित करते हैं जो खेतों के आकार, उनमें प्रतिरूप, कृषि प्रकार, शस्यभूमि उपयोग, शस्य उत्पादकता आदि को प्रत्यक्ष तौर पर प्रभावित करते हैं।

3. प्रौद्योगिक कारक

इस प्रकार के कारको का पर्यावरणीय समस्याओं को दूर करने और कृषि में नये परिवर्तनों तथा विकास को लागू करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही हैं। इनमें सिंचाई, उर्वरक, उन्नतशील बीजों, कीटनाशकों, कृषि मशीनों, वित्तीय संस्थाओं, शोध संस्थानो आदि की शामिल किया जाता हैं।

6. भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषताए–

भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषताये निम्नवत हैं यथा–

- भारत के ग्रामीण क्षेत्र में अत्याधिक सघन कृषि की जाती हैं।
- कृषि की जा रही कुल जोतों की तीन – चौथाई जोते सीमांत हैं। जिनका क्षेत्रफल एक हेक्टेयर से कम हैं।
- वर्तमान समय में भारत में कृषि का अधिकतर यन्त्रीकरण हो चुका हैं।
- भारतीय कृषि पूर्णतः मानसून आधारित हैं।
- वर्तमान समय में किसान दवाइयों वाली जड़ी–बूटियों तथा अन्य जड़ी–बूटियाँ एवं सुगन्ध वाले उच्च मूल्य के पौधों की कृषि में अधिक रूचि लेने लगे हैं।

कृषि समस्याएँ

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्त्वपूर्ण योगदान हैं फिर भी पश्चिमी देशों के सन्दर्भ में काफी पिछड़ी हुई हैं। कृषि उत्पादकता कम हैं तथा किसानों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त ही दयनीय हैं। यहाँ कतिपय कृषि समस्याओं का उल्लघंन किया जा रहा हैं जिसके कारण देश में कृषि विकास बाधा बनी हुई हैं।

1. कृषकों की गरीबी एवं कर्ज दारी।
2. कृषि में निवेशों की कमी।
3. भू–जोतों का अनार्थिक आकार एवं उसका विखण्डन।
4. बुनियादी सुविधाओं का अभाव।
5. निम्न उत्पादकता।

6. मृदा अपरदन एवं मृदा अवक्रमण।

7. कृषि शोध, शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधाओं का अभाव।

भारतीय कृषि की विकास प्रवृत्ति

स्वतंत्रता के पहले व बाद भारतीय कृषि की स्थिती बहुत दयनीय थी जो कि मुख्यतः पांरपरिक कृषि पद्धति से की जाती थी, उनमें भी खाद्यान्नों की प्रधानता थी। देश के विभाजन के कारण खाद्यानों का एक बड़ा भाग पाकिस्तान में चले जाने के कारण भारतीय उद्योग धन्धे कच्चे माल की कमी के कारण शिथिल पढ गये थे। इसीलिए शायद प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही नियोजित विकास के रूप में कृषि को सर्वाधिक प्राथमिकता दी गई। फलस्वरूप देश न केवल खाद्यानों के मामले में आत्मनिर्भर हो सका, सकंट के समय बफर स्टाक बनाया जा सका वरन् निर्यात के लिए अतिरिक्त उत्पादन किया जा सका।1950–51 से 1995–96 के दौरान इसी के तहत खाद्यानों के उत्पादन में 3.6 तिलहन में 4.35 आलू में 10.35 गन्ना में 4.95, कपास में 4.31 और जूट– मेस्टा में 2.7 गुना की वृद्धि देखी गई।

कृषि उत्पादकता

कृषि उत्पादकता का सीधा संबंध प्रति हेक्टेयर उत्पादन से होता हैं। यह लागत–आगत के मध्य का अनुपात होता हैं कृषि उत्पादकता कृषि सक्रियता, कृषिगहनता एवं कृषि कुशलता पर निर्भर करती हैं। यदि इनमें कमी आती हैं, तो उत्पादकता भी कम हो जाती हैं। प्रो0 माजिद हुसैन ने सभी फसलों से प्राप्त मुद्रा के आधार पर भारत को पाँच प्रमुख उत्पादकता प्रदेशों में विभाजित किया हैं–

1. अति उच्च उत्पादकता– इसमें गंगा– सतुलज मैदान के पंजाब, हरियाणा गंगा–यमुना दो आब, पंजाब, दक्षिण बिहार, प0बंगाल, असम के निचले भाग वाले क्षेत्रों के साथ–साथ दक्षिणी भारत के पालघाट, तंजावूर, आन्ध्र प्रदेश का गुण्डूर उड़ीसा का कटक क्षेत्र को भी इसके अन्तर्गत शामिल किया जाता हैं।

2. उच्च उत्पादकता– इस श्रेणी के अन्तर्गत उर्पयुक्त प्रदेशों के सीमान्त क्षेत्रों को सम्मिलित करने के अतिरिक्त आंध्रप्रदेश का तटवर्ती क्षेत्र, तमिलनाडु का तटीय भाग, गुजरात का सूरत क्षेत्र तथा महाराष्ट्र के कोल्हापुर व सतारा जनपदों को भी शामिल किया जाता हैं।

3. मध्यम उत्पादकता– इसमें उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले की शिवालिक पहाडियों के सहारे पूरब में विहार के दरभंगा जिले में शामिल करते हुये, मध्य तमिलनाडू, उडीसा का तटीय भाग, मध्य गुजरात, महाराष्ट्र में छिटपुट रूप से, पूर्वी कर्नाटक, पं0 बंगाल की वीरभूमि, बांकुडा व दीनाजपुर जिलों को भी सम्मिलित करते है।

4. निम्न उत्पादकता – इस वर्ग के अन्तर्गत हिमांचल प्रदेश के उत्तरी भाग, उत्तरी पूर्वी बिहार, अर्द्ध रेगिस्तानी राजस्थान, गुजरात का अहमदाबाद क्षेत्र के अलावा द0 भारत के उडीसा, आंध्रप्रदेश, केरल कर्नाटक, महाराष्ट्र व गुजरात के छिट– पुट भागों को सम्मिलित करते हैं।

5. अति निम्न उत्पादकता –इस वर्ग में जम्मू लद्दाख, राजस्थान का मरूक्षेत्र, द0 तेलगांना, कर्नाटक का पठारी भाग शामिल किया जाता हैं।

6.5 प्रमुख फसलें

भारत देश की जलवायु अधिकांश कृषि फसलों के लिए अनुकूल है जहां लगभग सभी कृषि फसलों का उत्पादन किया जाना सम्भव है। इस इकाई में भारत की प्रमुख फसल गेहूँ, चावल तथा गन्ना का अध्ययन करेंगे

गेहूँ–

गेहूँ देश का क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से दूसरा महत्वपूर्ण खाद्यान्न है। भारत का विश्वभर में गेहूँ उत्पादन के मामले में चीन के बाद दूसरा स्थान रखता है। देश में हरित क्रान्ति के बाद गेहूँ के उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई जिससे देश खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर हो गया।

उपज के लिए अनुकूल दशायें– गेहूँ की फसल विभिन्न प्रकार के भौगोलिक दशाओं में पैदा किया जाता है परन्तु

यह एक शीतोष्ण कटिबन्ध घास मैदान का पौधा है। इसको ग्रीष्म तथा शीत दोनों ऋतुओं में बोया जाता है। भारत में इसे रबी की फसल के रूप में बोया जाता है। इस फसल के लिए सामान्यतया 10^0C से 15^0C तापमान की आवश्यकता होती है। बोते समय 10^0C तापमान तथा पकते समय 15^0C तापमान की आवश्यकता होती है। इस फसल के लिए 80 सेमी0 वार्षिक वर्षा अनुकूल होती है। गेहूँ के लिए हल्की दुमट, बलुई दुमट एवं चीका दुमट मृदा अधिक उपयुक्त होती है। भारत में अधिकांश गेहूँ जलोढ़ मृदा के क्षेत्र में बोया जाता है। भारत में दो तरह का गेहूँ उगाया जाता है– सफेद रंग का मुलायम जो उत्तरी मैदानी क्षेत्र तथा लाल रंग का कठोर किस्म का मकरोनी गेहूँ जो प्रायद्वीपीय काली मृदा के क्षेत्र में उगाया जाता है।

गेहूँ की कृषि भारत के सकल कृषि क्षेत्र के लगभग 15 प्रतिशत भाग पर की जाती है। पिछले कई दशकों से गेहूँ की कृषि क्षेत्र में लगातार वृद्धि हुई है। गेहूँ देश के कुल खाद्यान्न में 35 प्रतिशत का योगदान करता है। वर्ष 1967–68 के बाद गेहूँ उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई है जिसका प्रमुख कारण हरित क्रान्ति को माना जाता है यहां तक कि हरित क्रान्ति को गेहूँ क्रान्ति भी कहा जाता है। देश में गेहूँ का अधिकांश उत्पादन उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, हरियाणा तथा बिहार राज्यों में किया जाता है। उत्तर भारत के तीन राज्य उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं हरियाणा सम्मिलित रूप से देश का 51 प्रतिशत क्षेत्र तथा 58 प्रतिशत गेहूँ का उत्पादन करता है। गेहूँ का प्रमुख उत्पादन वाले क्षेत्र सतलुज–गंगा मैदान तथा काली मृदा (महाराष्ट्र, गुजरात एवं मध्य प्रदेश) का क्षेत्र है।

उत्तर प्रदेश– देश में गेहूँ उत्पादन में इस राज्य का प्रमुख स्थान है। देश के 31.16 प्रतिशत क्षेत्रफल पर 31.77 प्रतिशत गेहूँ का उत्पादन अकेले उत्तर प्रदेश करता है। इस प्रकार देश में इसका गेहूँ उत्पादन में प्रथम स्थान है। इस राज्य में गेहूँ का अधिकांश उत्पादन गंगा–यमुना दोआब तथा रूहेलखण्ड के मैदानी भाग में किया जाता है। मुजफ्फर नगर, मुरादाबाद, मेरठ, अलीगढ़, बुलन्दशहर, मथुरा, कानपुर, सहारनपुर, बदायूँ, आगरा, इटावा, देवरिया, प्रयागराज, वाराणसी, जौनपुर तथा आजमगढ़ आदि जनपदों में गेहूँ उत्पादन की प्रमुखता है। इन जनपदों में उन्नतशील बीज, रासायनिक उर्वरक, सिंचाई व्यवस्था तथा तकनीकीय मशीनों की प्रमुख भूमिका है।

मध्य प्रदेश– इसका गेहूँ क्षेत्रफल में 20.20 प्रतिशत तथा उत्पादन में 20.98 प्रतिशत की देश में भूमिका है। इस प्रकार इस राज्य का क्षेत्रफल तथा उत्पादन की दृष्टि से देश में द्वितीय स्थान है। इस राज्य के मालवा पठार के काली मृदा में गेहूँ का उत्पादन अधिक किया जाता है जिसके कारण इस क्षेत्र में गेहूँ का उत्पादन अधिक किया जाता है। जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र का गेहूँ उत्पादन में विशेष स्थान है। रायसेन, मुरैना, सागर, भिण्ड एवं विदिशा जनपद प्रमुख गेहूँ उत्पादक है जबकि सीहोर, ग्वालियर, भोपाल, उज्जैन, सतना, होशंगाबाद, गुना एवं रीवां गौड़ गेहूँ उत्पादक जनपद है।

पंजाब– देश में इस राज्य का गेहूँ के क्षेत्रफल में 11.15 प्रतिशत तथा उत्पादन में 13.87 प्रतिशत का योगदान है इस प्रकार देश में क्षेत्र एवं उत्पादन की दृष्टि से यह तृतीय स्थान रखता है। कृषि के प्रमुख उत्पादन साधनों, उपकरणों तथा तकनीकों का उच्च उपयोग के कारण यहां प्रति हेक्टेयर उत्पादन सर्वाधिक (4862 किग्रा0) है। गेहूँ का उत्पादन इस राज्य में सभी भागों में किया जाता है। पटियाला, अमृतसर, फरीदकोट, संगरूर, फिरोजपुर तथा लुधियाना प्रमुख गेहूँ उत्पादन करने वाले जनपद है। जहाँ पर राज्य का 60 प्रतिशत से अधिक गेहूँ का उत्पादन किया जाता है। इस राज्य के द्वारा घरेलू उपयोग के बाद गेहूँ का उत्पादन किया जाता है। इस राज्य के द्वारा घरेलू उपयोग के बाद गेहूँ को बाहर भेजा जाता है।

हरियाणा– इस राज्य का गेहूँ उत्पादन में देश का चौथा स्थान है। इस राज्य में भी उच्च कृषि आदानों के उपयोग के कारण प्रति हेक्टेयर उत्पादन अधिक पाया जाता है। हरित क्रान्ति का प्रभाव इस राज्य पर भी पड़ा जिसके कारण उत्पादन में वृद्धि हुई है। राज्य के करनाल, कुरूक्षेत्र, हिसार, रोहतक, जींद तथा हिसार में 25–25 प्रतिशत क्षेत्र पर गेहूँ की कृषि की जाती है।

बिहार–इस राज्य में गहूँ का उत्पादन 5.5 प्रतिशत किया जाता है। राज्य में भोजपुर, रोहतास, मुंगेर, बेगूसराय तथा सारन प्रमुख गेहूँ उत्पादक जनपद है जबकि मुजफ्फरपुर, पटना, साहाबाद, पूर्णिया, पूर्वी चम्पारन तथा गोपालगंज गौड़ गेहूँ उत्पादक जनपद है।

राजस्थान– यह देश का लगभग 9 प्रतिशत गेहूँ का उत्पादन 9 प्रतिशत क्षेत्रफल पर करता है। सिंचाई सुविधा में लगातार विस्तार के कारण गेहूँ उत्पादन में भी विस्तार एवं वृद्धि हुई है। यहां की इन्दिरा गाँधी नहर के विकास का प्रभाव गेहूँ पर अधिक रहा है। राज्य का 50 प्रतिशत गेहूँ गंगानगर, जयपुर, कोटा, अलवर तथा भरतपुर जनपद में

किया जाता है। इन जनपद के अलावा टोंक, चित्तौड़गढ़, सवाईमाधोपुर, उदयपुर, भीलवाड़ा एवं पाली जनपद का भी गेहूँ उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान है।

देश में गेहूँ का उत्पादन करने वाले अन्य राज्यों में गुजरात, महाराष्ट्र, पं0 बंगाल, कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर छत्तीसगढ़, झारखण्ड में किया जाता है। गुजरात के राजकोट, खेड़ा, मेहसाणा एवं बनासकांठा जनपद, महाराष्ट्र के नागपुर, अमरावती, अकोला एवं औरंगाबाद जनपद, प0 बंगाल के मुर्शिदाबाद, वर्द्धमान, पं0 दीनाजपुर, वीरभूम एवं नदिया जनपद में गेहूँ का उत्पादन किया जाता है।

व्यापार– वर्तमान समय में भारत गेहूँ के उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गया है। घरेलू खपत के बाद रूस, बांग्लादेश एवं अन्य राज्यों को गेहूँ का निर्यात करता है। देश में गेहूँ की उत्पादन मात्र में भिन्नता पायी जाती है। उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान तथा मध्य प्रदेश में क्षेत्रीय खपत के अतिरिक्त उत्पादन करते हैं जबकि महाराष्ट्र, बिहार, प0 बंगाल तथा दिल्ली में कम उत्पादन होता है। उत्पादन का 50 प्रतिशत हिस्सा उत्पादक क्षेत्र में खपत हो जाता है। शेष का बाजार में निर्यात कर दिया जाता है जिसका आधा हिस्सा सरकार द्वारा बफर स्टॉक बनाने के लिए खरीद लिया जाता है।

चावल–

चावल एक प्रमुख खाद्य फसल है जो भारत के प्रत्येक भाग में बोया जाता है। इस फसल का सर्वाधिक सान्द्रण उत्तरी–पूर्वी एवं दक्षिणी भारत के क्षेत्रों में पाया जाता है। यह एक उष्ण कटिबन्धीय फसल है इसके लिए 24^0C औसत तापमान, 150 सेमी0 वार्षिक वर्षा एवं चीका व दोमत मृदा की आवश्यकता होती है। यह भारतीय मूल की फसल है।

भारत देश में चावल के तीन प्रकार की कृषि की जाती है– I-छिटकाव करके II-ड्रिल करके III-प्रतिरोपण करके।

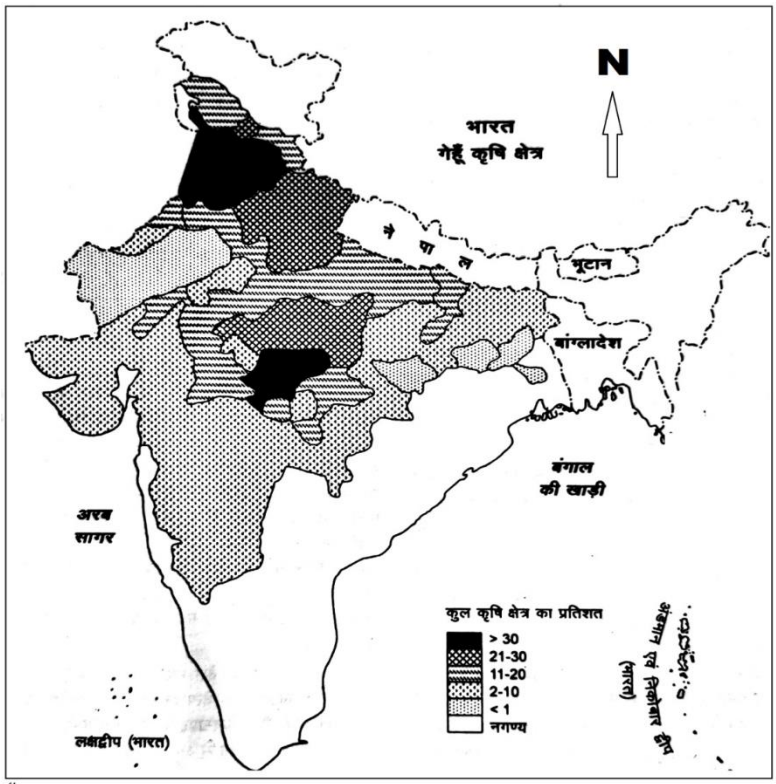

चित्र–2

- छिटकाव विधि में बीज को खेत जोतने से पूर्व या खेत जोतने के बाद छींट दिया जाता है।
- ड्रिल विधि में बीज को खेत में ड्रिल करके कतार में बोया जाता है। इस प्रकार की बोवाई प्रायद्वीपीय भारत में देखने को मिलता है।
- प्रतिरोपण विधि में बीज को सबसे पहले सघन रूप से छोटे–छोटे खेतों में उगाया जाता है। जब ये थोड़ा बड़ा हो जाते हैं तो उन्हें तैयार किये गये दूसरे खेत में प्रतिरोपित कर दिया जाता है। इस प्रकार की प्रचलन भारत के मैदानी व डेल्टाई भागों में पाया जाता है।

भारत में चावल प्रमुख्यतः खरीफ फसल के रूप में उगाया जाता है जो जून से अगस्त माह के बीच में बो दिया जाता है और नवम्बर से जनवरी माह के बीच काट लिया जाता है। इस फसल को अगहनी व अमन नामों से जाना जाता है। इसके अलावा भारत के पं0 बंगाल, ओडिशा, असम, तमिलनाडु तथा बिहार में ग्रीष्म व शरद ऋतुओं में चावल का उत्पादन किया जाता है। ग्रीष्म ऋतु की फसल को बोरो कहा जाता है जो नवम्बर से दिसम्बर माह में बो दिया जाता है एवं मार्च–अप्रैल माह में काट लिया जाता है। इसी भांति शरदकालीन फसल को ऑस कहते हैं जो मई–जून माह में बो दिया जाता है और सितम्बर–अक्टूबर माह तक काट लिया जाता है।

चावल की प्रजातियाँ– IR-5, IR-8, IR-20, IR-22, चियांग–3, साबरमती, बाला, रत्ना, IET-1099, जमुना, करुणा, जया, कॉची, जगन्नाथ, कृष्णा, कावेरी, हंसा, पदमा, विजय, पंकज एवं अन्नापूर्णा आदि चावल की प्रजातियाँ हैं।

भारत में चावल की कृषि खाद्यान्नों के क्षेत्र के 35 प्रतिशत तथा सकल कृषि क्षेत्र का 26 प्रतिशत भाग पर किया जाता है। वर्ष 1950–51 से 2016–17 के बीच यह क्षेत्र 308 लाख हे0 से बढ़कर 431 लाख हेक्टेयर हो गया है। चावल का उत्पादन देश के सभी राज्यों में कुछ न कुछ मात्रा में उत्पादित की जाती है परन्तु अधिकांश मात्रा में उत्पादन केवल 8 राज्यों में पाया जाता है जिसमें पं0 बंगाल, उत्तर प्रदेश, पंजाब, आन्ध्र प्रदेश, ओडिशा, छत्तीसगढ़, बिहार तथा तमिलनाडु राज्य आदि हैं। प्रादेशिक स्तर पर देश के प्रमुख चावल उत्पादक क्षेत्रों में गंगा एवं ब्रह्मपुत्र घाटियों के आर्द्र एवं अति आर्द्र भागों, उत्तरी–पूर्वी प्रायद्वीप एवं दक्षिणी–पूर्वी भागों, मालाबार तट, कोरोमण्डल, कोंकण तट तथा हरियाणा–पंजाब का नहरी सिंचित क्षेत्र शामिल है।

पश्चिम बंगाल– पश्चिम बंगाल में चावल एक प्रमुख फसल है जिसका चावल क्षेत्र में दूसरा (5.58 मि0 हे0 या 12.38 प्रतिशत) तथा उत्पादन में प्रथम स्थान (12.87 प्रतिशत) है। चावल का उत्पादन राज्य के प्रत्येक जनपद में किया जाता है। वर्द्धमान, मेदिनीपुर, चौबीस परगना, वीरभूमि और दीनाजपुर जनपदों में राज्य का 50 प्रतिशत से अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। इस राज्य में वर्ष भर में चावल की तीन फसल (अमन, आस एवं बोरो) उगाई जाती है। अमन फसल का उत्पादन राज्य में सबसे अधिक (78 प्रतिशत) किया जाता है।

उत्तर प्रदेश– उत्तर प्रदेश चावल में क्षेत्रफल के आधार पर देश में प्रथम (2020–21 में 12.60 प्रतिशत) तथा उत्पादन में द्वितीय (2021–22 में 12.87 प्रतिशत) स्थान पर है। उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में चावल एक प्रमुख फसल है जहाँ पर अधिक मात्रा में चावल का उत्पादन किया जाता है। राज्य के देवरिया, बस्ती, गोरखपुर, सिद्धार्थनगर, आजमगढ़, महराजगंज, गोण्डा एवं पीलीभीत जनपद आदि प्रमुख चावल उत्पादक हैं।

पंजाब– पंजाब चावल उत्पादन की दृष्टि से वर्तमान में तृतीय स्थान पर है। इस राज्य में चावल का उत्पादन सिंचाई पर आधारित है। यहां उन्नत बीजों, उर्वरकों, कीटनाशक दवाओं तथा मशीनों का उपयोग करके प्रति हेक्टेयर उत्पादन सर्वाधिक किया जाता है। जालन्धर, गुरुदासपुर, फिरोजपुर, पटियाला तथा अमृतसर जनपदों में चावल का उत्पादन 65 प्रतिशत से अधिक किया जाता है। अन्य चावल उत्पादक जनपद में लुधियाना, फरीदकोट, कपूरथला तथा संगरूर आदि है।

आन्ध्र प्रदेश– आन्ध्र प्रदेश में कुल कृषि भूमि के 22 प्रतिशत क्षेत्र में चावल का उत्पादन किया जाता है। यह राज्य चावल उत्पादन में देश में सातवें स्थान पर है। चावल की खेती सम्पूर्ण राज्य में किया जाता है जबकि गुन्टूर, कृष्णा, प0 गोदावरी एवं पूर्वी गोदावरी में अधिकांश मात्रा में चावल का उत्पादन किया जाता है। चावल की खेती के लिए कृष्णा तथा गोदावरी नदी घाटी का क्षेत्र सर्व प्रसिद्ध है।

बिहार– इस राज्य में देश का 7.6 प्रतिशत क्षेत्र चावल का है जबकि 6.8 प्रतिशत चावल उत्पादन करता है। राज्य के सम्पूर्ण कृषि क्षेत्रफल के 40 प्रतिशत भाग पर चावल की खेती की जाती है। गया, मुंगेर, पूर्णिया, मुजफ्फरपुर, भागलपुर, दरभंगा तथा समस्तीपुर जनपद चावल के प्रमुख उत्पादक हैं। इस राज्य में उन्नशील बीज, तकनीकीय

उपकरण, सिंचाई सुविधा तथा उर्वरकों के कम उपयोग से प्रति व्यक्ति उपज कम पाया जाता है।

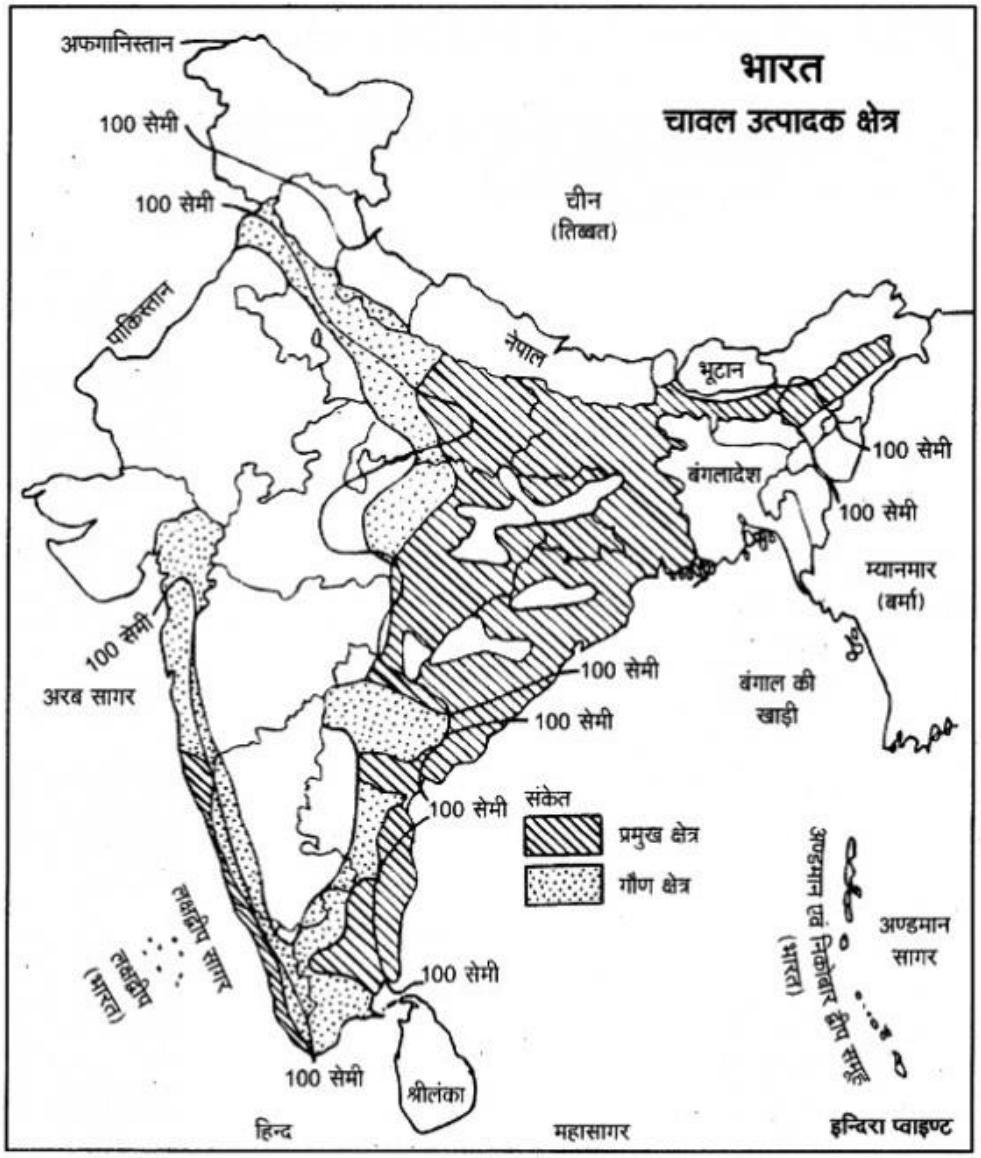

चित्र–3

तमिलनाडु– इस राज्य का देश के चावल उत्पादक राज्यों में बारहवाँ स्थान है। यहाँ के कुल कृषि क्षेत्र के 42 प्रतिशत क्षेत्र पर चावल की कृषि की जाती है। चावल का अधिकांश उत्पादन दक्षिणी अर्काट, तंजावूर, कांचीपुरम, मदुरै, तिरुवल्लूर तथा उ0 अर्काट में पाया जाता है जो राज्य का 75 प्रतिशत चावल का उत्पादन करते हैं। सिंचाई की उचित व्यवस्था, उन्नतशील बीजों एवं उर्वरक के उपयोग से प्रति हेक्टेयर उत्पादन अधिक पाया जाता है।

ओडिशा– यह देश का चौथा बड़ा चावल उत्पादक राज्य है जिसके सम्पूर्ण कृषि क्षेत्रफल के 57 प्रतिशत भाग पर चावल उत्पादन किया जाता है। चावल का अधिकांश उत्पादन कटक, सम्बलपुर, पुरी, बालासोर एवं कोरापूत जनपद में किया जाता है।

कर्नाटक– यह देश का 2.4 प्रतिशत चावल क्षेत्र के साथ 2.3 प्रतिशत चावल उत्पादन करता है। इस राज्य के मैसूर, शिमोगा, द0 कन्नड़, माड़या एवं उ0 कन्नड़ प्रमुख चावल उत्पादक जनपद है। जहां पर 50 प्रतिशत से अधिक चावल का उत्पादन किया जाता है।

उपरोक्त राज्यों के अलावा महाराष्ट्र (चन्द्रपुर, थाणे, भण्डारा एवं कोलावा जनपद), झारखण्ड (संथाल, रांची, सिंहभूमि, परगना जनपद), हरियाणा (करनाल, अम्बाला एवं कुरूक्षेत्र जनपद), मध्य प्रदेश (बालाघाट, जबलपुर एवं

देवास), केरल (एर्नाकुलम, अलप्पुजा, मलप्पुरम, पालघाट, त्रिशूल जनपद) तथा जम्म–कश्मीर (अनन्तनाग एवं बारामुला जनपद) में भी चावल की खेती की जाती है।

व्यापार– चावल के उत्पादन में भारत का दूसरा स्थान है। सम्पूर्ण उत्पादित चावल का अधिकांश हिस्सा स्थानीय तौर पर उपभोग कर लिया जाता है। देश में पंजाब, असम, हरियाणा, ओडिशा, तमिलनाडु एवं आन्ध्र प्रदेश राज्य में आवश्यकता से अधिक मात्रा में चावल का उत्पादन होता है जिसे गुजरात, महाराष्ट्र, पं0 बंगाल, केरल एवं कुछ अन्य राज्यों को भेजा जाता है क्योंकि यहां पर चावल के माँग के अनुरूप उत्पादन नहीं हो पाता है। कभी–कभी श्रीलंका, थाईलैण्ड, म्यामार, मिश्र, बांग्लादेश एवं संयुक्त राज्य से भारत चावल का आयात करता है। उच्च कोटि के चावल का भारत अपने पड़ोसी राज्यों को निर्यात भी करता है।

गन्ना–

गन्ना भारतीय मूल का पौधा है। इससे चीनी, खाँडसारी, गुड़, शीरा से शराब एवं खोई से कागज को प्राप्त किया जाता है। यह एक नकदी फसल है जिसे देश के 2 प्रतिशत कृषि क्षेत्र पर उत्पादन किया जाता है। गन्ना उत्पादन में देश का ब्राजील के बाद द्वितीय स्थान है। जबकि चीनी उत्पादन में ब्राजील एवं क्यूबा के बाद तृतीय स्थान है। भारतीय गन्ना में शर्करा की कमी पायी जाती है जिसके कारण चीनी उत्पादन में तीसरे स्थान पर है।

गन्ना एक उष्ण कटिबन्धीय पौधा है जिसके लिए सामान्यतया 20^0C से 26^0C तापमान की आवश्यकता होती है। अधिक तापमान इस पौधा के लिए हानिकारक है। इस फसल के लिए लगभग 150 सेमी0 वार्षिक वर्षा लाभदायक होती है। विभिन्न क्षेत्रों में सिंचाई द्वारा वर्षा की कमी को पूरा किया जाता है। गहरी उर्वर दोमट मृदा इस फसल के अधिक लाभकारी है। भारत में इसकी कृषि दोमट, मटियार दोमट तथा काली मृदा में की जाती है। इस फसल के लिए अधिक श्रमिकों की आवश्यकता है। इस फसल की बुआई जनवरी से अप्रैल तक कर लिया जाता है और अक्टूबर–नवम्बर से अप्रैल तक कटाई व पेराई किया जाता है।

उत्पादन– गन्ना उत्पादन के तीन प्रमुख क्षेत्र है जिसमें सतलुज–गंगा मैदान, प्रायद्वीपीय काली मृदा तथा तटीय आन्ध्र प्रदेश एवं तमिलनाडु का क्षेत्र है। गन्ने की भौगोलिक दशाएं देखी जायें तो दक्षिणी भारत की उत्तरी भारत से अधिक अनुकूल है परन्तु गन्ने का कृषि क्षेत्र का सर्वाधिक विस्तार उत्तरी भारत में पाया जाता है क्योंकि यहां नकदी फसल की प्रतिस्पर्धा कम पाया जाया है जिसके कारण गन्ने के कृषि क्षेत्र का विस्तार अधिक है। देश में गन्ने का क्षेत्र तथा उत्पादन में उत्तर प्रदेश का प्रथम स्थान है। इसके बाद महाराष्ट्र, कर्नाटक तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, बिहार का स्थान आता है।

उत्तर प्रदेश– यह राज्य गन्ना का सबसे बड़ा उत्पादक है जो 49 प्रतिशत क्षेत्र पर 47 प्रतिशत गन्ना का उत्पादन करता है। गन्ने का उत्पादन पश्चिमी तथा दक्षिणी–पश्चिमी भाग को छोड़कर समूचे राज्य में किया जाता है। राज्य के गंगा–यमुना दोआब में 70 प्रतिशत तक गन्ना उत्पादन होता है जो इस राज्य का सर्वाधिक सांद्रता वाला क्षेत्र है। आजमगढ़, जौनपुर, वाराणसी, गाजीपुर, बलिया, बुलन्दशहर, अलीगढ़, शाहजहांपुर, पीलीभीत, सीतापुर, बरेली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, बिजनौर, मुरादाबाद तथा देवरिया जनपद में गन्ने का अधिक उत्पादन होता है।

महाराष्ट्र– यह राज्य गन्ना उत्पादन में द्वितीय स्थान पर है यहां 14 प्रतिशत क्षेत्र पर 16 प्रतिशत गन्ना का उत्पादन किया जाता है। यहाँ सिंचाई के द्वारा काली मृदा में गन्ना को उगाया जाता है। कोल्हापुर, सांगली, औरंगाबाद, शोलापुर, नासिक, थुले, सतारा एवं उस्मानाबाद जनपद महाराष्ट्र के प्रमुख गन्ना उत्पादक है।

कर्नाटक– इस राज्य का गन्ना उत्पादन में देश में तीसरा स्थान है। कृष्णराज सागर और तुंगभद्रा परियोजना का गन्ना सिंचाई में महत्वपूर्ण भूमिका है जिसके परिणामस्वरूप गन्ना की प्रति हेक्टेयर उत्पादन और उत्पादन में वृद्धि हुई है। मैसूर, वेल्लारी, रायचूर, बेलगाम तथा माण्ड्या जनपद यहां के प्रमुख गन्ना उत्पादकता है। जहां पर लगभग 60 प्रतिशत गन्ना उत्पादित किया जाता है।

तमिलनाडु– इस राज्य का गन्ना उत्पादन में चौथा स्थान है जबकि प्रति हेक्टेयर उपज में दूसरा स्थान है। सलेम, अर्काट, तिरुचिरापल्ली तथा कोयम्बटूर जनपद में सर्वाधिक गन्ना का उत्पादन होता है।

आन्ध्र प्रदेश– इस राज्य का देश के गन्ना के क्षेत्र में 2.3 प्रतिशत तथा उत्पादन में 2.5 प्रतिशत का योगदान है। यहां गन्ना का उत्पादन गोदावरी–कृष्णा नदी के डेल्टाई भाग और राज्य के तटीय मैदान में की जाती है।

गुजरात– इस राज्य का देश के गन्ना उत्पादन में 3.90 प्रतिशत का योगदान है। भावनगर, जामनगर, राजकोट,

जूनागढ़, बलसाड तथा सूरत यहां के प्रमुख गन्ना उत्पादक जनपद है।

पंजाब– इस राज्य का देश में गन्ना उत्पादन में 2 प्रतिशत का योगदान है। यहां गन्ना उत्पादन में अमृतसर, जालन्धर, गुरूदासपुर, रूपनगर, संगरूर, पटियाला, लुधियाना, होशियारपुर, फिरोजपुर जनपद में किया जाता है। जो यहां के प्रमुख गन्ना उत्पादक जनपद हैं।

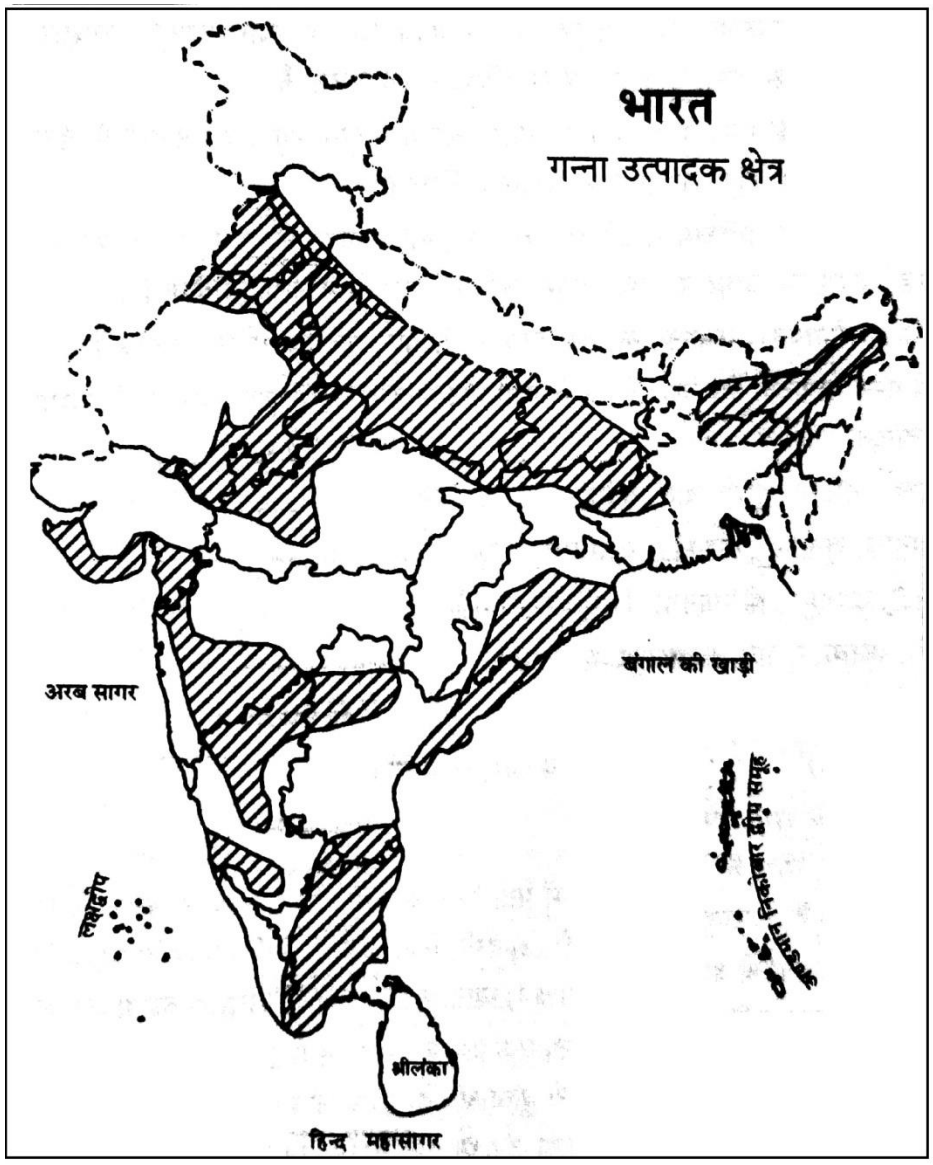

चित्र–4

उपरोक्त गन्ना उत्पादक राज्यों के अलावा देश में मध्य प्रदेश (उज्जैन, मुरैना, इन्दौर, शिवपुरी, रतलाम, ग्वालियर एवं बेतुल), उत्तराखण्ड (हरिद्वार और ऊधमसिंह नगर), असम (नौगाँव, कछार, शिवसागर, डिब्रूगढ़), प0 बंगाल (हुगली, माल्दा, वर्द्धमान, वीरभूमि, नदिया एवं मुर्शिदाबाद), बिहार (सिवान, गोपालगंज, चम्पारण, मुजफ्फरपुर), छत्तीसगढ़, उड़ीसा तथा राजस्थान में गन्ना का उत्पादन किया जाता है।

गन्ना एक भार ह्रास पदार्थ है जिसका अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नहीं होता है। इसका अधिकांश खपत स्थानीय स्तर पर गुड़, खाडसारी व चीनी बनाने हेतु समीप के मिलों में किया जाता है। गन्ने से बने सामग्री (गुड़ वा चीनी) ब्रिटेन को निर्यात करता है।

6.6 सारांश

इस छठी इकाई में वनस्पति प्रदेश, प्रकार एवं वितरण, भारतीय कृषि, कृषि के प्रकार, भूमि उपयोग तथा प्रमुख फसलों के उत्पादन एवं वितरण का व्याख्या किया गया है। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त वनस्पति प्रदेश, प्रकार एवं वितरण, भारतीय कृषि, कृषि के प्रकार, भूमि उपयोग, प्रमुख फसलों, वितरण, हिमालयी वनस्पति, प्रायद्वीपीय वनस्पति, तटीय वनस्पति, प्रमुख फसलों में गेहूँ आदि को समझ गये होंगे। वन का विकास किन तत्वों से प्रभावित व संबन्धित होता है वन का महत्व, वन का आर्थिक उपयोग भी समझ गये होंगे।

6.7 शब्द सूची

अल्पाइन वन	Alpine forest		
निर्वनीकरण	Deforestation	पर्णपाती वन	Deciduous forest
डेल्टा मैदान	Delta Plain	मरुस्थल	Desert
सदापर्णी वन	Evergreen Forest	घास का मैदान	Grassland
अवनालिका अपरदन	Gully Erosion	बीहड़	Ravines

6.8 परीक्षोपयोग प्रश्न

1. भारत में भूमि उपयोग संबंधी आँकडो को कितने वर्गों में उपलब्ध कराया गया हैं।
   (अ) 9 (ब) 5 (स) 4 (द) 10
2. उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वन पाये जाते हैं–
   (क) अरावली पर्वत (ख) शिलांग पठार
   (ग) शिवालिक श्रेणी (घ) प्रायद्वीपीय पठार
3. भारत में मैग्रोव वनस्पति का सर्वाधिक विस्तार है–
   (क) गोवा (ख) पं0 बंगाल (ग) आन्ध्र प्रदेश (घ) उड़ीसा
4. पश्चिमी घाट की महत्वपूर्ण वनस्पति–
   (क) चन्दन (ख) देवदार (ग) चीड (घ) सागौन
5. भारत के किस क्षेत्र में गन्ने के क्षेत्रफल का विस्तार सर्वाधिक है –
   (क) उ0 भारत (ख) द0 भारत (ग) प0 भारत (घ) पू0 भारत
6. भारत में गेहूँ का प्रथम उत्पादक राज्य कौन है–
   (क) उत्तर प्रदेश (ख) मध्य प्रदेश (ग) पंजाब (घ) हरियाणा

6.9– महत्वपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ

1. प्रो0 जगदीश सिंह– भारत : भौगालिक आधार एवं आयामा, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0सी0 तिवारी भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
4. सिंह, आर0एल0–इण्डिया : रीजनल जियोग्राफी एन0जी0एस0आई0, गोरखपुर।
5. Nag, P.And Sengupta, 8- Geography of India, Gorakhpur, Concept Publishing company, New

Delhi.

6.10 अभ्यास प्रश्न

1. भारतीय अर्थव्यवस्था का कृषि एक महत्त्वपूर्ण आधार हैं स्पष्ट कीजिए।
2. भूमि उपयोग से आप क्या समझते हैं? विस्तृत चर्चा कीजिए।
3. कृषि के विभिन्न प्रकारों की व्याख्या कीजिए।
4. कृषि के प्रमुख फसलों की व्याख्या कीजिए।
5. अल्पाइन एवं पर्वतीय वनस्पति का वर्णन कीजिए।
6. गेहूं तथा चावल का उत्पादन एवं वितरण की व्याख्या कीजिए।
7. गन्ना का उत्पादन एवं वितरण की व्याख्या कीजिए।

इकाई–7 कपास, चाय एवं दलहन का उत्पादन एवं वितरण, भारत में हरित क्रान्ति

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 कपास का उत्पादन एवं वितरण

7.4 चाय का उत्पादन एवं वितरण

7.5 दलहन का उत्पादन एवं वितरण

7.6 हरित क्रान्ति की पृष्टभूमि

7.7 भारत में हरित क्रान्ति

7.8 भारत में हरित क्रान्ति की विशेषताये

7.9 भारत में हरित क्रान्ति का प्रभाव

7.10 हरित क्रान्ति के पर्यावरणीय प्रभाव।

7.11 द्वितीय हरित क्रान्ति (समस्या से समाधान की ओर)

7.12 भारत में हरित क्रांति के तहत योजनाएं

7.13 हरित क्रांति से जीन क्रांति तक

7.14 सारांश

7.15 शब्द सूची

7.16 स्वमूल्याकंन प्रश्न

7.17 सन्दर्भ/उपयोगी पुस्तके

7.18 अभ्यास प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में हम कपास, चाय एवं दलहन का उत्पादन एवं वितरण, भारत में हरित क्रांति एवं इसके पर्यावरणीय प्रभाव का अध्ययन करेंगे। स्वतंत्रता के बाद देश की प्रमुख समस्याओं में खाद्य सुरक्षा व कृषि का विकास रहा हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना का मुख्य केन्द्र कृषि विकास एवं खाद्य सुरक्षा रहा, इसके बावजूद भी द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान देश ने गम्भीर खाद्य कमी का सामना किया हैं। फलस्वरूप इस प्रकार की समस्या से निपटने के लिये जाँच करने व उपचारी सुझाव देने के लिए अमेरिकी विशेषज्ञों के दल को आमान्त्रित किया गया। यह दल USA के कृषि विभाग के डॉ.एस.एफ. जानसन की अध्यक्षता में भारत आया था। इस दल ने "Indian's Food ProblemAnd steps to meet it" (1959) नाम से अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की कि भारत को ऐसे क्षेत्रों पर अत्यधिक ध्यान देना चाहिये जहाँ कृषि उत्पादकता बढाने की सम्भावना अधिक हैं। 1960 के ही दशक कृषि विकास के संबंधित दो मुख्य कार्यक्रमों यथा सघन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (IAAP, 1961) तथा सघन कृषि जिला कार्यक्रम (IADP, 1964) प्रारंभ किए गए। उपर्युक्त दोनो ही कार्यक्रमों द्वारा कृषि अनुसंधान और विकास, शिक्षा और विस्तार सेवाओं पर भारी निवेश किया गया परिणामतः भारतीय कृषि में उत्पादकता और उत्पादन में उच्च वृद्धि को सम्भव बनाया। एक तरफ जहाँ हरित क्रांति समग्र कृषि उत्पादन, उत्पादकता व आय पर्याप्त रूप से बढ़ाई,

खाद्य कमी अर्थव्यवस्था को खाद्य पर्याप्तता में रूपातंरित किया वही दूसरी तरफ पर्यावरणीय दृष्टि से हरित क्रांति ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कई नकारात्मक प्रभाव भी उत्पन्न किये तथा भौमजल स्तर का अवक्षय, मृदा की गुणवत्ता में कमी आदि।इस इकाई के अन्तर्गत हम भारतीय अर्थव्यवस्था पर हरित क्रांति के सकारात्मक और नकारात्मक प्रभावों पर विस्तार से अध्ययन करेंगे।

7.2 उद्देश्य

इस ईकाई को पढनें के बाद आप–

- कपास, चाय एवं दलहन के लिए उपयोगी दशाओं, उत्पादन एवं वितरण को समझ सकेंगे।
- हरित क्रांति (Green Revolution) की अवधारणा समझ सकेंगे।
- प्रथम हरित क्रांति के ऐतिहासिक संदर्भ और मुख्य विशेषताओं की रूपरेखा प्रस्तुत कर संकेगे।
- हरित क्रांति की विशेषताओं का, उसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों आयामों से वर्णन कर सकेंगे;
- हरित क्रांति के बाद उन प्रयासों की आवश्यकता निर्दिष्ट कर संकेगे जो उन क्षेत्रों का कृषि विकास प्राप्त करने के लिए प्रारंभ किये जाने आवश्यक हैं जिनमें हरित क्रांति नही फैली हैं।

7.3 कपास

कपास एक कच्चा पदार्थ है भारत में जिसका उपयोग सूतीवस्त्र उद्योग में किया जाता है। यह एक नकदी फसल है जिसके पौधे का प्रमाण भारत के प्राचीन ग्रन्थों में पाया जाता है इस प्रकार यह एक देशज पौधा है। भारत 1947 से पूर्व कपास का एक प्रमुख निर्यातक देश था परन्तु देश के विभाजन के बाद प्रमुख कपास उत्पादक क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये। 2022–23 के ऑकडों के अनुसार भारत चीन के बाद दुसरा प्रमुख कपास उत्पादक देश है।

कपास के लिए अनुकूल दशायें– यह उष्ण एवं उपोष्ण क्षेत्र का पौधा है जिसके लिए 20^0C से 30^0C के बीच औसत तापमान की आवश्यकता होती है। 18^0C से कम तापमान तथा पाला कपास के लिए हानिकारक है। कपास के पकते समय 26^0C तपामान की आवश्यकता होती है। 50 सेमी0 से 75 सेमी0 वार्षिक वर्षा इस फसल के लिए अनुकूल होती है लेकिन 85 सेमी0 से अधिक वर्षा इसके लिए हानिकारक होती है। दोमट एवं काली मृदा इस फसल के लिए अधिक उपयुक्त होती है। इस फसल के लिए अधिक श्रमिकों की आवश्यकता होती है क्योकि फसल की बुआई तथा कपास की चुनाई के लिए अधिक श्रमिकों की आवश्यकता पडती है। भारत में कपास की कृषि खरीफ फसल के रूप में बोया जाता है जिसकी बुवाई उत्तरी भारत में अप्रैल–जून तथा दक्षिणी भारत में सितम्बर– अक्टूबर में किया जाता है चुनाई जनवरी से मई के बीच में किया जाता है।

कपास के प्रकार– भारत में कपास की 5 प्रकार की फसल उगाई जाती है–

1. **सर्वोत्तम किस्म के लम्बें रेशे की कपास**– इस रेशे की लम्बाई 27 मिमी0 से अधिक होती है। गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु एवं कर्नाटक में इसका उत्पादन किया जाता है।
2. **लम्बे रेशे की कपास**– इस रेशे की लम्बाई 24 से 26 मिमी0 होती है। आन्ध्रा प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र में इसका उत्पादन किया जाता है।
3. **उत्तम मध्यम रेशे की कपास**– इस रेशे की लम्बाई 22 से 24 मिमी0 होती है। आन्ध्रा प्रदेश, पंजाब, हरियाण, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, गुजरात, तमिलनाडु एवं महाराष्ट्र में इसका उत्पादन किया जाता है।
4. **मध्यम रेशे की कपास**– इस रेशे की लम्बाई 20 से 22 मिमी0 होती है। आन्ध्रा प्रदेश, राजस्थान एवं गुजरात में इसका उत्पादन किया जाता है।
5. **छोटे रेशे की कपास**– इस रेशे की लम्बाई 19 मिमी0 से कम होती है। पंजाब, हरियाणा,

हिमांचल प्रदेश, दिल्ली, जम्मू– कश्मीर एवं महाराष्ट्र में इसका उत्पादन किया जाता है।

उत्पादन एवं वितरण– देश में 5 प्रतिशत क्षेत्र पर कपास की कृषि की जाती है। स्वतन्त्रता के बाद से अब तक कपास के उत्पादन में लगातार वृद्वि हुई है जिसका प्रमुख कारण अच्छे किस्म के कपास के उपयोग की मांग है। देश में महाराष्ट्र, गुजरात, तेलंगाना तथा मध्य प्रदेश प्रमुख कपास उत्पादक राज्य है जहां पर 70 प्रतिशत से अधिक उत्पादन किया जाता है। राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, आन्ध्रा प्रदेश तथा कर्नाटक गौड कपास उत्पादक राज्य है। देश में कपास के उत्पादक क्षेत्र में दक्कन पठार की काली मृदा, गुजरात–सौराष्ट्र, पं0 आन्ध्रा प्रदेश, उत्तरी कर्नाटक तथा पंजाब–हरियाणा–उत्तर प्रदेश प्रमुख क्षेत्र है।

महाराष्ट्र– यह राज्य कपास के क्षेत्र एवं उत्पादन के दृष्टि से प्रथम स्थान रखता है। यहां पर कपास उत्पादक क्षेत्र काली मृदा में फैला हुआ है जहां पर 65–100 सेमी वर्षा पायी जाती है। अमरावती, अकोला, बुलढ़ाणा एवं परभणी प्रमुख कपास उत्पादक तथा जलगांव, औरंगाबाद, वर्दा, नागपुर, बीड एवं चन्द्रपुर अन्य कपास उत्पादक जनपद है।

गुजरात– यह देश का दूसरा प्रमुख कपास उत्पादक राज्य है। राजकोट, बड़ोदरा, सरेन्द्रनगर, अहमदाबाद एवं साबारकांठा जनपद में राज्य का 50 प्रतिशत कपास का उत्पादन होता है, इसके अलावा मेहसाणा, सूरत, खेड़ा, भरूच, भावनगर, अमरेली तथा पंचमहल जनपद में भी किया जाता है।

आन्ध्र प्रदेश– देश में यह राज्य 5 प्रतिशत के लगभग कपास का उत्पादन करता है। यह राज्य कपास उत्पादन में काफी प्रगति किया है। कुर्नूल, अनन्तपुर, आदिलाबाद, प्रकासम एवं गुण्टूर जनपद प्रमुख कपास उत्पादक है।

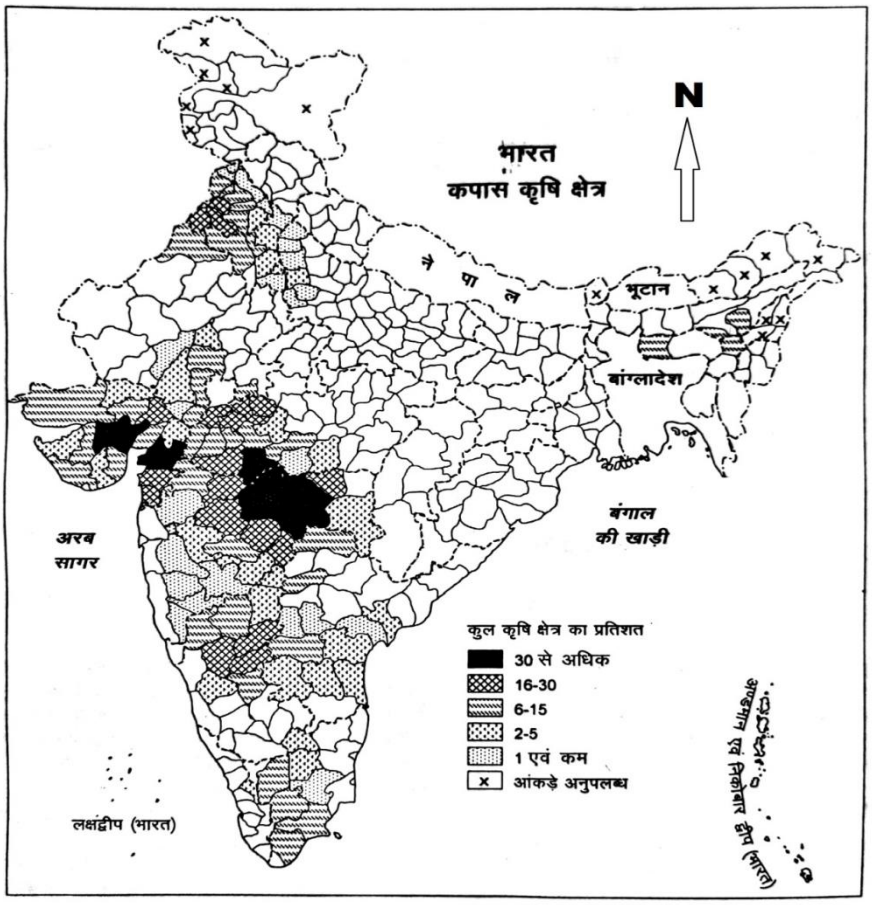

चित्र–5

पंजाब– इस राज्य में कपास की प्रति हेक्टेयर उपज देश में सर्वाधिक है। देश का लगभग 4 प्रतिशत कपास का उत्पादन करता है। संगरूर, फिरोजपुर, फरीदकोट एंव भटिंडा में राज्य का सर्वाधिक उत्पादन किया जाता है जबकि

लुधियाना, पटियाला, होशियारपुर एवं गुरूदासपुर में अपेक्षाकृत कम उत्पादक जनपद है।

राजस्थान–यह देश का लगभग 5 प्रतिशत कपास का उत्पादन करता है। अलवर, भीलवाड़ा, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, गंगानगर, अजमेर पाली तथा झालवाड़ जनपद यहां के कपास उत्पादक है।

कर्नाटक– यह देश का लगभग 4 प्रतिशत कपास का उत्पादन करता है। धारवाड़, रायचूर, गुलबर्गा, वेल्लारी, चिकमंगलूर, चित्रदुर्ग, शिमोगा, बीजापुर, हासन एवं बेलगांव में अधिकांश कपास का उत्पादन किया जाता है।

तमिलनाडु– यहां देश 1.3 प्रतिशत कपास का उत्पादन किया जाता है। मालवा पठार और नर्मदा घाटी में अधिकांश कपास उत्पादित की जाती है। उज्जैन, रामगढ़, रतलाम, होशंगाबाद, निमाड, धार, देवास तथा राजापुर प्रमुख कपास उत्पादक जनपद है।

हरियाणा– यहां देश का लगभग 5 प्रतिशत कपास का उत्पादन होता है। कपास की खेती सिंचाई पर निर्भर करती है। सिरसा, जींद एवं हिसार यहां के प्रमुख उत्पादक जनपद है।

अन्य उत्पादक राज्य में उत्तर प्रदेश (सहारनपुर, अलीगढ़, मथुरा, मेरठ, मुजफ्फरनगर तथा बुलन्दशहर), उड़ीसा (गंजम, कोटापुर एवं कलाहाडी), मेघालय, केरल का पालघाट जनपद, हिमाचल प्रदेश का कांगड़ा जनपद, असम का कार्बी–आंगलौंग, जम्मूकश्मीर का जम्मू जिला, बिहार का कटिहार जनपद तथा झारखण्ड का रांची शामिल है।

7.4 चाय

चाय एक बागानी फसल है। जो चीन देश का मूल पौधा है। चीन से मंगाये गये बीजों से असम, प0 बंगाल एवं नीलगिरि क्षेत्रों में चाय के बागान लगाये गये। चाय से सम्बन्धित काम–काजों में देश के 10 लाख से अधिक लोगों को रोजगार मिला है। भारत विश्व में चीन के बाद दूसरा प्रमुख चाय उत्पादक देश है। इसका कृषि उपजों के कुल मूल्य में एक प्रतिशत का योगदान है।

चाय एक उष्ण कटिबंधीय जलवायु का पौधा है। इसके लिए 24 डिग्री से0 से 30 डिग्री से0 तापमान की आवश्यकता होती है। पाला इस फसल के लिए अधिक हानिकारक तथा 15 डिग्री से0 कम तापमान नुकसानदायक होता है। वार्षिक वर्षा 150 सेमी0 से 250 सेमी0 तथा दोमट मृदा आवश्यक होती है। पर्याप्त संख्या में सस्ते श्रमिक की इस फसल के लिए आवश्यकता होती है। चाय की पत्तियों को सुखाकर बाजार में भेजा जाता है।

असमी एवं चीनी चाय दो प्रमुख चाय की किस्में हैं। असमी चाय का पौधा छोटा होता है और पत्तियॉ मोटी व कड़ी होती हैं तथा चीनी चाय की पत्ती मुलायम एवं 1500 मीटर की ऊँचाई तक उगाया जाता है। मृदा तथा ऊँचाई का चाय की गुणवत्ता पर प्रभाव पड़ता है। सुगन्धित एवं स्वादिष्ट चाय सामान्य ऊँचाई पर पायी जाती है। भारत में चाय का उत्पादन तथा वितरण इस प्रकार है–

असम– यह देश का सबसे प्रमुख चाय उत्पादक राज्य है। यहां 55 प्रतिशत क्षेत्र पर 53 प्रतिशत चाय का उत्पादन किया जाता है। सूरमा घाटी तथा ब्रह्मपुत्र घाटी राज्य के प्रमुख क्षेत्र हैं। शिवसागर, लखीमपुर, दरांग, नौगांव, कामरूप तथा ग्वालपाडा जनपद में चाय उगाई जाती है। चाय इस राज्य की अर्थव्यवस्था का प्रमुख स्रोत है। कछार जनपद जो सूरमा घाटी में स्थित है वह चाय के लिए प्रसिद्ध है।

पं0 बंगाल– यहाँ 25 प्रतिशत क्षेत्र पर 26 प्रतिशत चाय का उत्पादन होता है। यह देश का दूसरा प्रमुख चाय उत्पादक राज्य है। दार्जिलिंग, जलपाईगुड़ी तथा पुरुलिया यहाँ के यहां के प्रमुख चाय उत्पादक जनपद हैं जो दार्जिलिंग पहाड़ी तथा दुआर के क्षेत्र में हैं। दार्जिलिंग चाय अपने स्वाद एवं सुगन्ध के कारण विश्वभर में प्रसिद्ध है।

तमिलनाडु– इस राज्य का देश में चाय उत्पादन में तीसरा स्थान है जहां पर 13 प्रतिशत चाय का उत्पादन होता है। मदुरै, कन्याकुमारी, कोयम्बटूर, तिरूअन्नामलै तथा तिरूनवेली जनपद यहां के प्रमुख चाय उत्पादक हैं। यहां की चाय का रूस और यूरोपीय देश में अधिक मांग है। इस राज्य में चाय की उपज अधिक पायी जाती है जिसका प्रमुख कारण चाय की अनुकूल जलवायु है।

केरल– यह देश का चतुर्थ शीर्ष उत्पादक वाला राज्य है जहां पर 4.5 प्रतिशत चाय का उत्पादन किया जाता है। पालघाट, त्रिशूर, त्रिवेन्द्रम, इडुक्की, वायनाड, कोल्लम तथा कोट्टायम जनपद यहां के चाय उत्पादक हैं।

चित्र–6

देश में उपरोक्त राज्यों के अलावा अन्य राज्य भी हैं जहां पर चाय का उत्पादन का किया जाता है। हिमाचल प्रदेश (कांगड़ा एवं मंडी), कर्नाटक, त्रिपुरा, उत्तराखण्ड (देहरादून, अल्मोड़ा, नैनी एवं गढ़वाल), झारखण्ड तथा महाराष्ट्र राज्य के जनपदों में किया जाता है।

भारत देश का चाय निर्यातक देशों में श्रीलंका एवं चीन के बाद तीसरा स्थान है। इस प्रकार चाय भारत की प्रमुख निर्यातक वस्तु है। वर्ष 1950 से 2000 तक चाय निर्यात अंशदान में तीन गुना कमी हुई है। विश्व में भारतीय चाय के प्रमुख ग्राहकों में यू0एस0ए0, कनाडा, रूस, यूनाइटेड किंगडम, मिश्र, सूडान, आस्ट्रेलिया, जर्मनी एवं अफगानिस्तान आदि देश शामिल हैं। वर्तमान समय में भारतीय चाय का चीनी चाय तथा श्रीलंका की चाय से भारी प्रतिस्पर्धा है जिसके कारण अन्तर्राष्ट्रीय बाजार के निर्यात में तीसरा स्थान है।

7.5 दलहन

दालों के अन्तर्गत कई खाद्यान्न शामिल है। इसका उपयोग मानव भोजन तथा पशु चारा के रूप में करता है। ये पौधे मृदा में नाइट्रोटन तथा उर्वरता बनाये रखने में सहायक होते है। दालों के अन्तर्गत चना, अरहर, मूंग, मसूर, उड़द, मटर, मोठ खेसारी तथा कुल्थी आदि शामिल है।

दालों की विविध फसल है जिनकी बुवाई भिन्न–भिन्न समय में किया जाता है जिसके कारण तापमान, वर्षा तथा मृदा की आवश्यकता में भी विविधता पायी जाती है। इनको रबी तथा खरीफ फसलों के साथ मिश्रित रूप में बोया जाता है। देश में दालों को राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश तथा कर्नाटक में प्रमुख रूप से बोया जाता है। वर्ष 2021–22 में खरीफ के रूप में 8.4 मिलियन टन तथा रबी के रूप में 18.5 मिलियन टन

दालों का उत्पादन हुआ। भारत में कुल दाल के उत्पादन में शीर्ष राज्य क्रमशः मध्य प्रदेश (21.78 प्रतिशत), महाराष्ट्र (18.75 प्रतिशत) तथा राजस्थान (14.51 प्रतिशत) आदि का है। वर्ष 1950 से 2015 तक दाल का उत्पादन घटकर आधा हो गया है। इस प्रकार दालों की घटती उत्पादन की मात्रा देश के लिए शुभ संकेत नहीं है। दालें प्रोटीन का प्रमुख स्रोत हैं जो मानव जीवन के लिए आवश्यक तत्व हैं। भारत में दाल के उत्पादन में कमी के साथ भारतीय लोगों में प्रोटीन की कमी भी देखने को मिल रही है।

भारत में राज्य स्तर पर कुल दाल का उत्पादन एवं क्षेत्र

राज्य	क्षेत्र		उत्पादन	
	क्षेत्र (मि0 हेक्ट0)	क्षेत्र (मि0 हेक्ट0)	उत्पादन (मिलियन टन)	भारत (प्रतिशत)
राजस्थान	6.15	21.32	4.02	14.51
मध्यप्रदेश	4.89	16.95	6.03	21.78
महाराष्ट्र	4.47	15.49	5.19	18.75

स्रोत– India Year Book, India, 2020

भारत में दालों की कृषि के विकास में मुख्य रुकावट उपजाऊ मृदा की कमी, उर्वरकों का कम उपयोग, सिंचाई व्यवस्था की कमी, कीट–मकोड़ों से फसल का नुकसान एवं उचित मूल्य का अभाव आदि है।

चना–

दलहन की फसलों में चना भी एक प्रमुख फसल है जिसका उपयोग मानव अपने भोजन के अलावा पशुओं को चारा के रूप में भी करता है। चना प्रोटीन एवं कार्बोहाइड्रेट का प्रमुख स्रोत है।

उपज की अनुकूल दशाएं– चना के लिए हल्की शीतल मौसम अधिक अनुकूल होता है। इसके लिए 20 डिग्री से0 25 डिग्री0 से0 तापमान, 30 सेमी0 से 50 सेमी0 वार्षिक वर्षा तथा जलोढ़ मृदा अधिक अनुकूल होती है। पाला इस फसल के लिए हानिकारक होता है। इस फसल को सामान्यतः सभी मृदा में बोया जाता है। चना को अकेले तथा विभिन्न फसल के साथ मिश्रित रूप में भी अक्टूबर–नवम्बर में बोया तथा मार्च–अप्रैल में कॉटा जाता है।

उत्पादन एवं वितरण– चना की खेती देश के विभिन्न भागों में किया जाता है लेकिन इस फसल का सर्वाधिक संकेन्द्रण देश के शुष्क पश्चिमी भाग में मिलता है जैसे– मध्य प्रदेश, राजस्थान तथा महाराष्ट्र आदि। इन राज्यों से देश को 70 प्रतिशत चना का उत्पादन प्राप्त होता है। इन राज्यों के अलावा उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात तथा कर्नाटक में भी चना का उत्पादन किया जाता है।

मध्य प्रदेश– यह देश के 21.35 प्रतिशत क्षेत्र पर 22.05 प्रतिशत चना का उत्पादन करता है। यह राज्य चना उत्पादन में दूसरा तथा क्षेत्रफल में तीसरा स्थान रखता है। यहां के रायसेन, धार, विदिशा, मुरैना, भिण्ड, जबलपुर, सीहोर, ग्वालियर तथा होशंगाबाद आदि जनपद चना के फसल के लिए प्रसिद्ध है।

महाराष्ट्र– यह देश का प्रथम राज्य है जो सर्वाधिक चना का उत्पादन करता है। यहाँ देश के 21.75 प्रतिशत क्षेत्र पर 23.82 प्रतिशत का उत्पादन होता है। अहमदनगर, नासिक, शोलापुर, परभणी, औरंगाबाद, उस्मानाबाद, नान्देड़ तथा बीड़ जनपद यहां के प्रमुख चना उत्पादक है।

राजस्थान– यह देश का तृतीय शीर्ष चना उत्पादक राज्य है जो 21.45 प्रतिशत क्षेत्र पर देश का 19.28 प्रतिशत चना का उत्पादन करता है। चूरू, अजमेर, झुंझनू, टोंक, कोटा, अलवर, भरतपुर, जयपुर एवं सवाई माधोपुर जनपद यहां के प्रमुख चना उत्पादक है।

देश में उपरोक्त राज्य के अलावा बिहार, हरियाणा, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा उत्तर प्रदेश (बांदा, सुल्तानपुर, जौनपुर, ललितपुर, आगरा, बाराबंकी, जालौन, प्रयागराज, कौशाम्बी, झांसी, फतेहपुर, सीतापुर, कानपुर देहात तथा हमीरपुर जनपद) राज्य भी प्रमुख चना उत्पादक है।

देश में चना के कुल उत्पादन का लगभग 39 प्रतिशत भाग का बाजार में बेच दिया जाता है। महाराष्ट्र,

मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा आन्ध्र प्रदेश आदि राज्यों द्वारा चना का निर्यात किया जाता है।

अरहर–

अरहर की दाल को तअुर भी कहा जाता है इसमें खनिज, कार्बोहाइड्रेट, लोहा, कैल्शियम आदि पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। इसकी जड़ों में पाये जाने वाले राइजोबियम जीवाणु, मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा में वृद्धि करते हैं। दालों में अरहर का दूसरा प्रमुख स्थान है।

उपज के लिए अनुकूल दशाएं– इस फसल के लिए 20 डिग्री से 25 डिग्री सेल्सियस तापमान, 40 से 80 सेमी वार्षिक वर्षा, काली एवं जलोढ़ मृदा तथा पकते समय खुली धूप की आवश्यकता होती है। इस फसल के लिए जल जमाव तथा पाला हानिकारक होता है। यह एक वर्षी फसल का पौधा है। इसे मिश्रित फसल के रुप में बोया जाता है जिसको मई–जून मे बो तथा जनवरी–अप्रैल माह में काट लिया जाता है।

अरहर का क्षेत्रफल एवं उत्पादन– वर्ष 1960 से अब तक अरहर के उत्पादन तथा क्षेत्रफल में मंद गति से वृद्धि हुई है। भारत देश में मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश तथा गुजरात अरहर के प्रमुख उत्पादक है।

कर्नाटक–यह राज्य देश के 33.96 प्रतिशत क्षेत्रफल पर 14.34 प्रतिशत अरहर का उत्पादन करता हैं। यहां पर कलबुर्गी, यादगिर, बीदर और बीजापुर आदि क्षेत्रों में अरहर का उत्पादन किया जाता हैं। यह देश का दुसरा शीर्ष अरहर उत्पादन करने वाला राज्य है।

महाराष्ट्र– यह राज्य देश के 25.74 प्रतिशत क्षेत्रफल पर 31.49 प्रतिशत अरहर का उत्पादन करता हैं। यह देश का सर्वाधिक अरहर उत्पादन करने वाला प्रथम राज्य है। अमरावती, परभणी, उस्मानाबाद, वर्धा, बीड तथा नागपुर आदि प्रमुख अरहर उत्पादन वाले जनपद है।

उत्तर प्रदेश– यह राज्य देश का 8 प्रतिशत अरहर का उत्पादन करता हैं जो देश का शीर्ष तृतीय उत्पादक राज्य है। जौनपुर, वाराणसी, चन्दौली, आजमगढ, प्रयागराज, सीतापुर, कानपुर, बाराबंकी, कौसाम्बी तथा झॉसी जनपदों में अरहर उत्पादन किया जाता है।

तेलंगाना–यह राज्य देश के लगभग 9 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अरहर का उत्पादन करता हैं जो देश का शीर्ष तृतीय क्षेत्रफल वाला राज्य है।

उपरोक्त राज्यों के अलावा देश में झारखण्ड, कर्नाटक, गुजरात, मध्यप्रदेश, आन्ध्रा प्रदेश तथा बिहार राज्य में भी अरहर का उत्पादन किया जाता है।

देश के कुल उत्पादन का लगभग 19 प्रतिशत अरहर को बाजार में बेंचा जाता है जबकि अधिकांश मात्रा का घरेलू उपयोग में लिया जाता है। महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, गुजरात तथा उत्तर प्रदेश अरहर को बाजार में बेंचतें है।

7.6 हरित क्रान्ति की पृष्ठभूमि

हरित क्रांति का तात्पर्य 1960 के दशक में खाद्य फसलों के ऐसे बीजों के विकास एवं उपयोग से हैं जिसके कारण इनके उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई हैं।'हरित क्रांति' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग USA के डॉ0 विलियम गौड ने किया। इसकी शुरूआत का श्रेय 1950 के दशक में राक़फेलर और फोर्ड फाउन्डेशन के तत्वाधान में विकसित गेहूँ की अधिक उपज देने वाली ऐसी किस्मों से हैं जो पारंपारिक किस्मों से ठिगनी एवं अधिक उत्पादक थी।ये ऐसी किस्में थी जो मौसम परिवर्तनों से कम प्रभावित होती थी, शीघ्र ही तैयार हो जाती एवं उर्वरकों से अनुकूल प्रतिक्रिया दर्शाती थी। इसी कारण इस कार्यक्रम के निदेशक डॉ0 नारमन बोरलाग को 1970 में विश्व शान्ति का नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ।

1960 के दशक में ही राकफेलर व फोर्ड फाउण्डेशन द्वारा स्थापित मनीला (फिलपीस) के अन्तर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान ने चावल की एक ऐसे बीज का विकास किया जो इण्डोनेशिया एवं ताइवान के चावल का वर्ण संकर या एवं अधिक उपज देने वाला था। इस तरह गेहूँ एवं चावल के इन नये बीजों का प्रसार विश्व में हुआ। इसकी सफलता का आशय इस तथ्य से लगाया जा सकता कि भारत में गेहूँ का उत्पादन केवल 5 वर्षो में दुगुना हो गया उदाहरणार्थ भारत ने 1965–66 के दौरान लगभग 10 मिलियन टन गेहूँ आयात किया था परन्तु 1971 में आत्मनिर्भरता के साथ–साथ वह गेहूँ के निर्यात की स्थिति में आ गया। इसी प्रकार की दशा एशिया एवं लैटिन

अमेरिका के विभिन्न देशों में देखी गयी।

भारतीय हरित क्रांति के जनक के रूप में डॉ. स्वामीनाथन को जाना जाता हैं, ये एक जेनेटिक्स वैज्ञानिक थे जिन्होने मैक्सिको के बीजों को पंजाब के देशी बीजों के साथ मिश्रित करते हुये एक नई एवं अत्याधिक उत्पादन देने वाली किस्मों का विकास किया था। इनके इसी योगदान के कारण इन्हे पद्मभूषण पुरस्कार से भी नवाजा गया।

7.7 भारत में हरित क्रांति (Green Revolution in India)

भारत स्वतत्रंता के पहले से ही खाद्य समस्या से झूम रहा था। अनाज की कमी की आपूर्ति के लिए भारत नें USA के साथ 1956 में PL –480 व्यापार समझौता किया, जिसके अन्तर्गत 3.1 मिलयन टन गेहूँ तथा 0.19 मिलियन टन चावल के आयात का प्रावधान किया गया। 1962–63 में भीषण सूखा पड़ने के कारण पैडॉक बन्धुओं ने भारत में अकाल पड़ने की भविष्यवाणी की और कहा कि 1975 तक भारत में माल्थस का सिद्धान्त लागू हो जायेगा। ऐसी परिस्थितियों से निपटने के लिए भारत में हरित क्रांति आरम्भ हुई।भारत में हरित क्रांति की शुरूआत 1966–67 में मेक्सिकों में विकसित नवीन उर्वरक प्रतिचारी (Responsive) गेहूँ की बौनी प्रजातियों के प्रयोग से हुयी। इसके पहले 1959 में फोर्ड फाउन्डेशन के कृषि वैज्ञानिको के एक समूह को भारत की कृषि में सुधार हेतु समुचित सुझाव देने के लिए आमंत्रित किया गया था। जिन्होने अपनी रिपोर्ट अप्रैल 1959 में प्रस्तुत की थी। इसी के परिणाम स्वरूप 1960–61 में देश के 7 चयनित जनपदों (आंध्र प्रदेश के पं0 गोदावरी, बिहार के शाहाबाद, छत्तीसगढ, के रायपुर, तमिलनाडु के तंजावुर, पंजाब के लुधियाना, राजस्थान के पाली एवं उत्तरप्रदेश के अलीगढ़) में सघन कृषि जनपद कार्यक्रम (IADP) को प्रारम्भ किया गया। इसके अन्तर्गत खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि हेतु शुरू किये गये एक कार्यक्रम की सफलता को देखते हुये अक्टूबर 1965 में संघन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (IAAP) के रूप में इसे देश के 114 जनपदों तक फैला दिया गया।1966–67 में घोषित नयी कृषि नीति में उन्नत बीजों के प्रयोग के कार्यक्रम (HYVP) पर अधिक जोर दिया गया।

भारत में हरित क्रांति की शुरूआत पंजाब, हरियाण एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों में गेहूँ की कृषि से हुई। परन्तु 1983 के बाद इसका प्रसार चावल की कृषि में हुआ जिससे बिहार, आंध्र प्रदेश एवं तमिलनाडू के भाग लाभान्वित हुए।हरित क्रान्ति के कारण देश में गेहूँ का उत्पादन 123 लाख टन (1964–65) से बढकर (1985–86) में 470.5 लाख टन एवं 1990–91 में 551.3 लाख टन पहुँच गया। यह मुख्यतः गेहूँ की प्रति हेक्टेयर उपज में तीव्र वृद्धि के कारण था। गेहूँ के बाद हरित क्रांति का प्रभाव को चावल की खेती पर देखा गया, जिसके परिणामस्वरूप चावल का उत्पादन 1965–66 के 306 लाख टन से बढकर 1980–81 में 536 लाख टन तथा 2008–09 में 992 लाख टन तक पहुँच गया जिससे गत 43 वर्षों में 224 प्रतिशत की तीव्र वृद्धि का संकेत मिलता हैं।

7.8 भारत में हरित क्रांति की विशेषताये

भारत में हरित क्रांति की प्रमुख विशेषताये निम्नलिखित हैं।

- HYV बीज, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग।
- आधुनिक कार्य मशीनों का अनुप्रयोग।
- विस्तृत सिंचाई सुविधायें।।
- अनेक शस्यन।
- उन्नत ऋण सुविधाये।
- समर्थन मूल्य नीति और उन्नत अनुसंधान।
- विकास, विस्तार तथा आधारभूत संरचना।

उपर्युक्त सभी तथ्य भारत में हरित क्रांति आन्दोलन की मुख्य विशेषतायों के रूप में उल्लेखनीय है।

7.9 भारत में हरित क्रांति का प्रभाव

निश्चित रूप से स्वतंत्रता के बाद या उससे पहले भारत खाद्य संसाधनों की बेहद कमी थी जिसको हरित क्रांति के माध्यम से बेहद प्रभावित व त्वरित तरीके से दूर किया। वहीं पर जहां हरित क्रांति के माध्यम से खाद्य संसाधनों में आत्मनिर्भरता मिली दूसरी तरफ अनेक प्रकार की आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरणीय समस्याये भी जन्म ली। इस प्रकार भारत में हरित क्रांति का प्रभाव सकारात्मक व नकारात्मक दोनो पहलुओं में महत्वपूर्ण रहा हैं।

7.9.1 सकारात्मक प्रभाव

हरित क्रांति के भारतीय कृषि पर पड़ने वाले सकारात्मक प्रभावों को निम्न प्रकार से विवेचित किया जा सकता हैं–

1. हरित क्रांति से कृषि गहन उत्पादन प्रणाली का विकास हुआ जिससे कृषि उत्पादन में भारी वृद्धि के कारण खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को प्राप्त किया जा रहा हैं।

2. हरित क्रांति के कारण भारतीय कृषि, जीवन निर्वाहक कृषि के बजाय व्यापारिक तथा बाजारोन्मुखी रूप ग्रहण करती जा रही हैं। इसके साथ ही नयी प्रौद्योगिक के उपयोग से कृषि में रोजगार के अवसरों की वृद्धि हुई हैं।

3. हरित क्रांति से कृषि उद्योग सम्बन्धों में मजबूती आयी हैं जिसके परिणाम स्वरूप पहले अग्र अनुबन्ध (Forward Linkage) के साथ–साथ अब पश्च अनुबंध (Back Linkage) भी क्रियाशील हो गये हैं।

4. हरित क्रांति से अभिज्ञान प्रसार के माध्यम से कृषि का विकास अन्य क्षेत्रों में होने की संभावना के साथ– साथ इससे ग्रामीण समृद्धि में वृद्धि हुयी हैं, इसके द्वितीयक एवं तृतीयक प्रभाव संभावित हैं।

7.9.2 नकारात्मक प्रभाव

हरित क्रांति के कुछ नकारात्मक पहलू भी हैं जिनका विवरण निम्नवत हैं।

1. हरित क्रांति में भारी पूँजी निवेश की आवश्यकता फलस्वरूप इसका लाभ बड़े कृषकों तक सीमित हैं क्योकि भारी पूँजी की छोटे व सीमान्त कृषक सहन नही कर सकते हैं।
2. राव (V.K.R.V. Rao) के अनुसार यह बात अब सर्वविदित हैं कि हरित क्रांति ने कृषकों के मध्य आर्थिक विषमता को व्यापक कर दिया।
3. हरित क्रांति से ग्रामीण क्षेत्रों में त्रिकोणीय संघर्ष का सृजन हुआ, जिससे बड़े व छोटे किसानों के बीच भू स्वामी एवं असामी के बीच तथा मालिक व मजदूर के बीच सदैव टकराहट की स्थिति बनी रही।
4. हरित क्रांति का प्रभाव कुछ खाद्यान फसलों, जैसे गेहूँ, चावल, मक्का, बाजरा आदि तक सीमित रहा हैं, वही दलहन, तिलहन, मुद्रादायिनी एवं चारा आदि की फसले इसके प्रभाव से वंचित रही हैं।
5. हरित क्रांति के कारण होने वाली कृषि समीकरण के फलस्वरूप बड़े पैमाने पर श्रम विस्थापन एवं बेरोजगारी के बढने की प्रबल सम्भावना हैं।
6. वर्तमान के अध्ययनों से पता चला है कि (लेस्टर ब्राउन व हालकेन की पुस्तक 'Full House' में की गयी भविष्यवाणी) सन् 2030 तक भारत को प्रतिवर्ष 4 करोड़ टन खाद्यान्न का आयात करना पडेगा जो 1966 के पूर्व के आयात का चार गुना होगा।

7.10 हरित क्रान्ति के पर्यावरणीय प्रभाव

नये अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ हैं कि हरित क्रांति के क्षेत्रों में प्रति हे0 उत्पादन या तो स्थिर रहा हैं अथवा उसमें गिरावट आ रही हैं। इन क्षेत्रों में भूगर्भ जल, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के अन्धाधुन प्रयोग से पर्यावरणीय प्रदूषण का खतरा बढ़ रहा हैं।

लवणीकरण

नवीन बीजों में कई बार सिंचाई की आवश्यकता पड़ती हैं, विशेषकर पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिम उत्तर प्रदेश में जहाँ वर्षा मात्र 60–65 सेमी0 होती हैं। सिंचाई के माध्यम से निरंतर आर्द्रता की आपूर्ति से मृदा में परिवर्तन आया हैं। लवणी तथा क्षारीय प्रभावित मृदा को पंजाब में कल्लया थूर, उत्तर प्रदेश में कल्लर ऊसर अथवा रेह कहा जाता हैं। एक आकलन के अनुसार पंजाब तथा हरियाणा के कृषीय भूमि का लगभग 50 प्रतिशत घुलनशील लवणों से प्रभावित हुआ हैं। लवणता तथा क्षारीयता का हल गोबर तथा वनस्पतिक खाद का प्रयोग द्वारा फसल चक्र में दलहन की फसलों का चयन कर लिया जा सकता है। लवण सहनशील फसलें, जैसे टमाटर, पालक, जौ, घास, शत़ावर, चुकन्दर इत्यादि की खेती इस समस्या के समाधान में सहायता कर सकती हैं तथा भूमि की उर्वरता में सुधार ला सकती हैं।

मृदा अपरदन

हाल के वर्षों में कृषि भूमि के विस्तार के लिए बड़ी मात्रा में वृक्षों को काटा गया हैं फलस्वरूप मृदा अपरदन की बढ़ती गति के कारण न केवल कृषि क्षेत्रों को नुकसान पहुँचता हैं बल्कि उन क्षेत्रों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हैं जहाँ अपरदित मृदा का निक्षेपण होता हैं।

मृदा अपरदन की समस्या से निपटने का सर्वाधिक कारगर तरीका वनारोपड़ हैं। अवनालिकाओ का समतली करण किया जाना चाहिये। पहाड़ी क्षेत्रों में समोच्च रेखीए जुताई के द्वारा भी मृदा अपरदन कम किया जा सकता है।

प्रदूषण

यदि रासायानिक खाद, कीटनाशकों तथा पीड़कनाशियों का अधिक मात्रा में उपयोग किया गया तो उच्च उत्पादक फसल जातियों से पैदावार अच्छी होती हैं। अधिक मात्रा में प्रयोग किये जाने पर थे निवेश उन सूक्ष्म जीवों को नष्ट कर देते हैं, जो मृदा की उर्वरता को कायम रखने के लिए अनिवार्य हैं। रासायनिक खादों की जगह हरी एवं गोबर की खाद के प्रयोग से मृदा प्रदूषण की समस्या को कम किया जा सकता हैं।

जलमग्नता

जलमग्न भूमि की समस्या अत्यधिक सिंचाई से जुड़ी हैं। पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के नहर सिंचित क्षेत्र में यह एक गंभीर समस्या हैं। इसका सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण राजस्थान के श्री गंगानगर, बीकानेर तथा जैसलमेर में स्थिति इंदिरा गाँधी नहर प्रणाली के चतुर्दिक क्षेत्रो में पाया जाता हैं जहाँ पहले मोटे अनाजों जैसे बाजरा, ज्वार, राई, दलहन, जौ, कपास, मूंगफली, ज्वार, चारा एवं सूरजमूखी की खेती होती थी किन्तु वर्तमान में वहाँ के लोग चावल तथा गेहूँ की खेती करने लगे हैं। गर्मी तथा जाड़े के मौसम में इन क्षेत्रों की बार–बार सिंचाई के कारण काफी भूमि जलमग्न हो गयी हैं, विशेषकर नहर के दोनो ओर।

भौम जलस्तर का घटना

चावल तथा गेहूँ के नये बीजों को सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती हैं। पंजाब तथा हरियाणा के कम वर्षा वाले क्षेत्रों में चावल तथा गेहूँ की फसल को कई बार सिंचाई की आवश्यकता पड़ती हैं इस पानी की आपूर्ति सिंचाई के द्वारा की जाती हैं, यह सिंचाई नलकूपों तथा पम्पिंग के द्वारा अधिक की जाती हैं। इसके कारण हरियाणा के पूर्वी जिलो में भौम जल स्तर नीचे चला गया हैं।

स्वास्थ्य के लिये खतरा

बड़ी मात्रा में कीटनाशकों, तथा रासायनिक खादों का प्रयोग स्वास्थ्य के लिये खतरनाक साबित हो रहा हैं। इनका सब्जियों, फलों तथा घासों पर प्रयोग स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (AIMS) के अनुसार खाद्य, कीटनाशक तथा पीड़कनाशी के छिण़काव के कारण दूध तथा सब्जियों में जस्ता, ताबाँ, सीसे के अंश पाए जाते हैं। पंजाब में कैंसर के रोगियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हुई हैं। धान तथा गेहूँ के पुआल/भूसा को खेत में जलाने से वायु प्रदूषण की समस्या बढ़ रही हैं, जिसका लोगों के स्वास्थ्य पर खराब असर पड़ रहा हैं।

राजस्थान तथा पंजाब के शुष्क तथा अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के सिचिंत भाग में बड़ी मात्रा में मलेश्यिा के मामले देखे

जाते हैं क्योकि अत्याधिक सिंचाई तथा नहर के किनारे जलाक्रांति के कारण मच्छरों के प्रजनन के लिए एक उपयुक्त स्थान बन जाता हैं।

7.11 द्वितीय हरित क्रांति (समस्या से समाधान की ओर)

भारत में कृषि उत्पादन धीमी, स्थिर तथा कुछ क्षेत्रों में ह्रासमान हैं। कृषि क्षेत्र में वर्तमान वृद्धि दर 4.5 प्रतिशत (2021–22) रही। इससे कृषि में तेजी हेतु नवीन कृषि क्रांति लाने की जरूरत हैं। दूसरी हरित क्रांति मुख्य रूप से भोजन की आवश्यकता और पृथ्वी पर बढ़ती जनसंख्या के भरण–पोषण की मांग को पूरा करने हेतु कृषि उत्पादन में एक परिवर्तन हैं। इसे खाद्य पदार्थों की बढ़ती कीमतों, और अन्य कारकों के बीच खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग के प्रत्युत्तर के तौर पर शुरू किया गया।

भारत में, जैसाकि प्रथम हरित क्रांति ने खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित किया चूंकि देश में भोजन की अत्यंत कमी थी। दूसरी हरित क्रांति का उद्देश्य निर्धनों के लिए सतत् आजीविका का सृजन करना है और लाभकारी स्व–रोजगार के सृजन से निर्धनता उन्मूलन करना है। जहां प्रथम हरित क्रांति का उद्देश्य बेतहाशा उत्पादन करना था, दूसरी हरित क्रांति लोगों द्वारा उत्पादन को प्रोत्साहित करने का लक्ष्य रखती है।

दूसरी हरित क्रांति में फसल प्रतिरूप, विविधीकरण, पश्च–फसल हानियों को रोकना, सतत् संव्यवहार, मृदा एवं जल संरक्षण इत्यादि शामिल किया गया है। इसमें जैव उर्वरकों, जैव–कीटनाशी, एवं जैविक खेती को प्रोत्साहित करने का भी समावेश किया गया है। इसमें अवसंरचना, भण्डारण, और मूल्य–वर्द्धन कृषि संसाधन के सुधार के तत्व भी शामिल हैं।

दूसरी हरित क्रांति ने कृषि उत्पादन में बढ़ोत्तरी करते हुए लघु एवं सीमांत किसानों और भूमिहीन किसानों के लिए रोजगार सृजन पर बल दिया। जैसाकि इन परिवारों के पास अधिकतर बंजर एवं निम्न उर्वर भूमि है, जो सिंचाई से वंचित है, ऐसी भूमियों के बेहतर प्रयोग पर ध्यान दिया जाना चाहिए। जैसाकि ऐसी भूमियां उच्च पैदावार खाद्यान्न और नकदी फसल की गहन फसल के लिए उचित नहीं हैं, शुष्क भूमि बागवानी और एग्री–चारागाह को प्रमुखता दी जानी चाहिए। वृक्षारोपण की फसल प्रकृति के प्रतिकूल प्रभावों में भी बनी रहती है और किसी प्रकार का भारी नुकसान नहीं होता। वृक्ष की खेती पूरे वर्ष रोजगार प्रदान करती है और मृदा अपरदन और वर्षा जल बहाव को भी रोकती है। वृक्ष की खेती को प्रोत्साहन मृदा उर्वरता में भी वृद्धि करेगी और भौम जल स्तर में बढ़ोतरी करेगी। इसलिए, ऐसे कार्यक्रम जीवन गुणवत्ता में सुधार कर सकते हैं और पर्यावरण का संरक्षण करते हैं।

11वीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र में इस प्रकार के समग्र ढांचे पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला गया तथा कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए अग्रलिखित नीति का सुझाव दिया गया– (1) सिंचित क्षेत्र की वृद्धि दर को दुगुना करना (2) जल प्रबंधन में सुधार करना, वर्षा जल का संचयन तथा जल संभर विकास (3) निम्नस्तरीय भूमि का पुनरुद्धार करना तथा मृदा गुणवत्ता पर ध्यान देना (4) प्रभावी विस्तार के माध्यम से ज्ञान के अंतर को पाटना (5) उच्च मूल्य वाली उपज, फल, सब्जियां, फूल, जड़ी–बूटी, मसाले, औषधीय पौधे, बांस, बायो–डीजल जैसी विभिन्न प्रकार की फसलें उगाना। किंतु ऐसा करते समय खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित किये जाने के लिए पर्याप्त उपाय किये जाने चाहिएय (6) पशुपालन और मत्स्यपालन को बढ़ावा देना (7) वहनीय दरों पर आसान ऋण उपलब्ध कराना और (8) प्रोत्साहन ढांचा और बाजारों की कार्यप्रणाली को सुधारना (9) कृषि सुधार संबंधी मुद्दों पर फिर से ध्यान देना।

दूसरी हरित क्रांति को पूरी तरह से नवीन पद्धति और समग्र तौर पर प्रौद्योगिकियों के नए समुच्चय पर चलाए जाने की आवश्यकता है। जलवायु परिवर्तन, न केवल भारत पर अपितु पूरे विश्व पर अपना शिकंजा कस रहा है और खाद्य आपूर्ति को खतरा पैदा कर रहा है। कृषि के लिए अपरिहार्य दुर्लभ प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण कभी भी अधिक महत्वपूर्ण नहीं रहा।

'यथार्थ कृषि' की नई पद्धति मुख्य समाधान हो सकती है। हरित क्रांति के संदर्भ में अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि बीज–पानी–उर्वरक तकनीक पर आधारित यह व्यवस्था अपने चरम बिंदु पर पहुंच गई है एवं उत्पादकता में और अधिक वृद्धि कर पाना अब इस तकनीक से संभव नहीं होगा। इसके साथ ही हरित क्रांति के पर्यावरण पर प्रभावों को देखते हुए भी उत्पादकता वृद्धि के वैकल्पिक मार्गों की खोज की जा रही है। इसी का परिणाम है यथार्थ कृषि।

यथार्थ कृषि में मृदा–प्रबंधन, किस्म संवर्द्धन, जल प्रबंधन, समेकित कीट नियंत्रण, टिशू कल्चर, जेनेटिक

इंजीनियरिंग एवं समेकित बीज प्रबंधन जैसे विभिन्न विषयों के समन्वय के माध्यम से कृषि कार्य किया जाता है। यथार्थ कृषि विधि भूमि व जल के वैज्ञानिक आयोजन पर आधारित होती है जिसके अंतर्गत प्रकृति की सेवाओं व प्राकृतिक पूंजी स्टॉक पर एक साथ ध्यान दिया जाता है। प्राकृतिक पूंजी स्टॉक में मिट्टी व मिट्टी के पोषक तत्व, जैव–विविधता, जल, खनिज, वन व सागर इत्यादि आते हैं। प्रकृति की सेवाओं में जल–चक्र, पोषण–चक्र कृषि–वानिकी इत्यादि आते हैं।

यथार्थ कृषि के अंतर्गत कृषि विज्ञान, मृदा विज्ञान, कीट विज्ञान, मौसम विज्ञान, पादप क्रिया विज्ञान, पादप रोग विज्ञान, पारिस्थितिकी विज्ञान व अर्थशास्त्र इत्यादि क्षेत्रों के अनुसंधान कार्यों से लाभ उठाया जाता है। भविष्य में मानव की मूलभूत आवश्यकताओं को, पर्यावरण को बिना क्षति पहुंचाये पूरा करने की दिशा में यथार्थ कृषि आशा की किरण है। वर्तमान बीज– जल–उर्वरक आधारित तकनीक संवहनीय विकास की दिशा में नहीं ले जाती

कुछ ऐसे महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जिन पर दूसरी हरित क्रांति के दौरान विचार किए जाने की आवश्यकता है–

(अ) जैसाकि बढ़ती जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए भूमि की उत्पादकता बढ़ाए जाने की आवश्यकता है, यह सुझाव दिया गया कि बंजर भूमि को सड़क निर्माण, कृषि–संसाधन उद्योगों और भण्डारण सुविधाओं के निर्माण हेतु उपयोग किया जाए, जो कृषि उत्पाद के संसाधन और बिक्री के लिए आवश्यक हैं। इसके अलावा मौजूदा खेती तकनीकियों के परिणामस्वरूप पानी की बर्बादी होती है। भारत को जल संरक्षण प्रौद्योगिकियों को अपनाने की आवश्यकता है, जैसाकि कई विकसित देश कर रहे हैं। यह कम पानी वाले कृषि क्षेत्रों में मदद करेगा, और पर्यावरणीय रूप से अधिक सतत् होगा।

(ब) मनोवृत्ति में परिवर्तनः किसान परम्परागत रूप से यह विश्वास करते हैं कि उनकी भूमिका फसल उगाने तक सीमित है। उनकी मनोवृत्ति में परिवर्तन उन्हें यह समझने या महसूस करने में मदद करेगा कि उनके कार्य का क्षेत्र अनाज उत्पादन से खाद्य संसाधन और विपणन तक बढ़ सकता है। इसके लिए, सेवाओं में नई प्रौद्योगिकियों पर जोर देना चाहिए।

द्वितीय हरित क्रांति तत्व निम्नवत है

1. भारत जैसे जनाधिक्य वाले देश में हरित क्रांति के अन्तर्गत ऐसी प्रौद्योगिकी के अपनाये जाने की आवश्यकता है जिसकी लागत कम हो तथा जिससे श्रम का विस्थापन न्यूनतम संभव हो सके।
2. हरित क्रांति को कृषि के नये क्षेत्रों में लागू करने की आवश्यकता हैं। अर्थात् पारिस्थितिकीय विशेषताओं के आधार पर नये बीजों का अनुसंधान कर इसे मोटे अनाजों, दलहन, तिलहन, मुद्रादायिनी एवं चारा आदि फसलों में लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता हैं।
3. हरित क्रांति को अत्याधिक प्रभावी बनाने के लिए समूचे देश को कृषि जलवायु प्रदेशों (Agro – Climatic regions) में बाँटकर तदानुसार कृषि योजनाओं को बनाने और क्रियान्वयन करने की आवश्यकता हैं।
4. हरित क्रांति को कारगर बनाने के लिये राइजोबियम, नील हरित शैवाल आदि जैव रसायनों का प्रयोग किया जाना चाहियें।
5. जल संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता को देखते हुए सिंचाई एवं जल प्रबन्धन की नई विकास विधि को अपनाये जाने की जरूरत हैं ऐसे में स्प्रिकिंग सिंचाई, ड्रिप सिंचाई आदि की विधियों से जल का संरक्षण किया जा सकता हैं।
6. ऐसी सहकारी समितियों का गठन किया जाना चाहियें जिससे छोटे एव सीमान्त कृषकों को उन्नत बीज, उर्वरक, मशीन आदि क्रय करने हेतु कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध हो सके। किराये पर ट्रैक्टर, हारवेस्टर आदि की उपलब्धि छोटे किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध होगा।
7. कृषि उत्पादों के मूल्य की एक सन्तुलित नीति होनी चाहिये जिससे कृषकों को कृषि उत्पादों का समुचित लाभ मिल सकें तथा वे कृषि में अधिकाधिक निवेश हेतु प्रोत्साहित हो सके।

7.12 भारत में हरित क्रांति के तहत योजनाएं

प्रधानमंत्री ने 2017 से 2020 तक कृषि क्षेत्र में छाता योजना हरित क्रांति–कृषोन्नति योजना (Umbrella Scheme Green Revolution– 'Krishonnati Yojana')) का समर्थन किया, 33,269.976 करोड़ रुपये के केंद्रीय हिस्से के साथ। अम्ब्रेला योजना हरित विद्रोह कृष्णनीति योजना (Umbrella plan Green Insurgency Krishonnati Yojana) में इसके तहत 11 योजनाएं शामिल हैं और योजनाओं के इस भार से कृषि व्यवसाय और एकीकृत क्षेत्र को तार्किक और व्यापक तरीके से बढ़ावा देने की उम्मीद है ताकि उपयोगिता, सृजन, और उपज से बेहतर लाभ का विस्तार करके किसानों के वेतन का निर्माण किया जा सके। निर्माण ढांचा, बागवानी और भागीदारी उपज के निर्माण और प्रदर्शन के खर्च को कम करना।

हरित क्रांति के तहत अम्ब्रेला योजनाओं के लिए आवश्यक 11 योजनाएं निम्नलिखित हैं–

7.9.1 बागवानी के एकीकृत विकास के लिए मिशन या MIDH– यह कृषि क्षेत्रों के व्यापक विकास को आगे बढ़ाने, क्षेत्र के उत्पादन में वृद्धि, पोषण सुरक्षा पर काम करने और परिवार के खेतों को आय में वृद्धि करने की योजना बना रहा है।

7.9.2 कृषि विस्तार पर प्रस्तुतीकरण

राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों आदि के निरंतर विस्तार तंत्र को मजबूत करने के लिए और इसी तरह

खाद्य सुरक्षा और किसानों की वित्तीय मजबूती को पूरा करने के लिए, विभिन्न भागीदारों के बीच सफल लिंकेज और सहकारी ऊर्जा का उत्पादन करने के लिए, कार्यक्रम व्यवस्था और निष्पादन उपकरण को व्यवस्थित करने के लिए, एचआरडी मध्यस्थता का समर्थन करना, इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया, रिलेशनल पत्राचार, और आईसीटी उपकरणों और इसी तरह के अपरिहार्य और अभिनव उपयोग को आगे बढ़ाता है।

7.9.3 सतत कृषि के लिए राष्ट्रीय मिशन

लक्ष्य आर्थिक कृषि प्रथाओं को आगे बढ़ाना है जो प्रमुख कृषि विज्ञान के लिए उपयुक्त हैं जो खेती को शामिल करने पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं, अधिकारियों की मिट्टी को अच्छी तरह से फिट कर रहे हैं, और संपत्ति संरक्षण नवाचार को समन्वयित कर रहे हैं।

7.9.4 बीज और रोपण सामग्री पर उप–मिशन

नींव को मजबूत और आधुनिक बनाने के लिए मूल्य बीजों के उत्पादन का विस्तार करने, खेत से बचाए गए बीजों की प्रकृति में बदलाव और एसआरआर (SRR) बढ़ाने, बीज दोहराव श्रृंखला को मजबूत करने और बीज उत्पादन, परीक्षण, प्रसंस्करण आदि में नई तकनीकों और प्रगति को आगे बढ़ाने का इरादा है। बीज उत्पादन, गुणवत्ता, भंडारण और प्रमाणन आदि के लिए।

7.9.5 कृषि मशीनीकरण पर उप–मिशन

रैंच ऑटोमेशन (RanchAutomation) के दायरे को बहुत कम और नगण्य रैंचरों तक विस्तारित करने के लिए और उन जिलों में जहां होमस्टेड पावर (Homestead_power) की पहुंच कम है, कस्टम हायरिंग सेंटर्स (Custom Hiring Centers) को तरक्की करने के लिए, छोटे जोत और व्यक्तिगत स्वामित्व के महत्वपूर्ण खर्च के कारण उभरती पैमाने की विरोधी अर्थव्यवस्थाओं को संतुलित करने के लिए, उच्च तकनीक और उच्च–सम्मान वाले रैंच गियर (ranch gear) के लिए केंद्र बनाएं, निर्माण अभ्यासों को दिखाने और सीमित करने के माध्यम से भागीदारों के बीच सचेतन बनाने के लिए, और देश भर में पाए जाने वाले परीक्षण समुदायों में निष्पादन परीक्षण और मान्यता की गारंटी दें।

7.9.6 पौध संरक्षण और योजना संगरोध

इस योजना का उद्देश्य दुर्भाग्य को कीड़ों, कीटों, खरपतवारों आदि से फसल की गुणवत्ता और उपज तक सीमित करना है, हमारी बागवानी जैव–सुरक्षा को बाहरी प्रजातियों के आक्रमण और प्रसार से बचाने के लिए, भारतीय कृषि के किराए के साथ काम करना है। विश्वव्यापी व्यापार क्षेत्रों के लिए वस्तु, और महान ग्रामीण प्रथाओं को आगे बढ़ाने के लिए, विशेष रूप से संयंत्र बीमा पद्धतियों और प्रक्रियाओं से संबंधित।

7.9.7 कृषि जनगणना, अर्थशास्त्र और सांख्यिकी पर एकीकृत योजना

बागवानी गणना का प्रयास करने के लिए, देश के कृषि–मौद्रिक मुद्दों पर केंद्रित अनुसंधान को शामिल करें, प्रमुख उपज, स्टोर सभाओं, स्टूडियो और पाठ्यक्रमों के विकास के खर्च का अध्ययन करें, जिसमें प्रसिद्ध ग्रामीण शोधकर्ताओं, व्यापार विश्लेषकों, विशेषज्ञों का नेतृत्व करने के लिए कागजात लाने के लिए शामिल हैं। क्षणिक जांच, कृषि अंतर्दृष्टि दर्शन को और विकसित करना और फसल की स्थिति और फसल उत्पादन पर बुवाई से लेकर कटाई तक विभिन्न स्तरीय डेटा ढांचा बनाना।

7.9.8 राष्ट्रीय ई–शासन योजना कृषि

राष्ट्रीय ई–गवर्नेंस योजना में रैंचर संचालित और प्रशासन आधारित परियोजनाओं को लाने की उम्मीद है फसल चक्र के दौरान डेटा और प्रशासन तक किसानों की पहुंच को और विकसित करना और वृद्धि प्रशासन के दायरे और प्रभाव को उन्नत करना केंद्र और राज्यों के मौजूदा आईसीटी अभियानों का विस्तार, सुधार और समन्वय करना किसानों को उनकी बागवानी दक्षता बढ़ाने के लिए उपयुक्त और लागू डेटा देकर परियोजनाओं की दक्षता और पर्याप्तता में सुधार करना।

7.9.9 राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन या NFSM

इसमें NMOOP– तिलहन और तेल वृक्ष पर राष्ट्रीय मिशन शामिल है। इसे गेहूं की दालों, चावल, मोटे अनाज और वाणिज्यिक फसलों के उत्पादन, दक्षता उन्नयन और उपयुक्त तरीके से क्षेत्र के विस्तार, घरेलू स्तर की अर्थव्यवस्था में सुधार, मिट्टी की समृद्धि और एकल खेत स्तर पर उपयोगिता को फिर से स्थापित करने के लिए पेश किया गया था।

7.9.10 कृषि विपणन पर एकीकृत योजना

इस योजना का उद्देश्य कृषि विपणन बुनियादी ढांचे का विकास करना है कृषि विपणन बुनियादी ढांचे में नवीन तकनीकों और प्रतिस्पर्धी विकल्पों को बढ़ावा देना कृषि उपज के ग्रेडिंग, मानकीकरण और गुणवत्ता प्रमाणन के लिए बुनियादी सुविधाएं प्रदान करना एक राष्ट्रव्यापी विपणन सूचना नेटवर्क स्थापित करने के लिए कृषि वस्तुओं आदि में अखिल भारतीय व्यापार को सुविधाजनक बनाने के लिए एक आम ऑनलाइन बाजार मंच के माध्यम से बाजारों को एकीकृत करना।

7.7.11 कृषि सहयोग पर एकीकृत योजना

इसका उद्देश्य सहकारी समितियों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करना, क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करना, कृषि प्रसंस्करण, भंडारण, विपणन , कम्प्यूटरीकरण और कमजोर वर्ग के कार्यक्रमों में सहकारी विकास को गति देना है विकेंद्रीकृत बुनकरों को उचित दरों पर गुणवत्ता वाले धागे की आपूर्ति सुनिश्चित करना और कपास उत्पादकों को मूल्यवर्धन के माध्यम से उनकी उपज के लिए लाभकारी मूल्य प्राप्त करने में मदद करना।

7.13 हरित क्रांति से जीन क्रांति तक

हम जानते हैं कि जीन क्रांति प्रौद्योगिकी से सम्बद्ध उत्पादकता में बढ़ोत्तरी 1990 के दशक के दौरान काम होनी प्रारंभ हो गई थी ,इस संदर्भ में कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए अपेक्षित संभावना प्रदान करने तथा खाद्य सुरक्षा की समस्या हल करने के लिए जैव प्रौद्योगिकी की संकल्पना की गई है। प्रौद्योगिकी ने 1980 के दशक के प्रारंभ में गति प्राप्त की जब विशाल निगमों ने पराजैविक फसलें विकसित करने के लिए अनुसंधान और विकास के लिए भारी निवेश करना प्रारंभ किया।

जननिक रूप से रूपांतरित बीजों के प्रयोग की भूमिका उत्पादकता में आश्चर्यजनक वृद्धि करने के वचन की पूर्ति माना गया था तथा एक ओर किसानों को कृषि से अपनी आय बढ़ाने के सहायक अन्य संसाधन तो दूसरी ओर अधिक सस्ता और गुणवत्ता की खाद्य सामग्री मुहैया कर उपभोक्ताओं के लिए लाभ कर मन गया। जैव प्रद्यौगिकी केंद्रित तरीकों के प्रयोग को भी पैमाना निरपेक्ष समझा गया था क्योंकि यह बीजों पर फोकस करता है, रासायनिक , उर्वरकों और महगीं फार्म मशीनरी पर नहीं। बीजों को अधिक उत्पादनकारी , अधिक कीटनाशी सह और सभी श्रेणियों के फार्मों और सभी कृषि क्षेत्रों के लिए उपयुक्त समझा गया है। परंतु भारतीय कृषि में जीन प्रौद्योगिकी का अंगीकरण अभी वाद विवाद और चर्चा का विषय है क्योंकि पादपों , जंतुओं और मानव जीवन पर उसके सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाओं का पूरी तरह से परीक्षण अभी नहीं हुआ है। यद्यपि एक ओर बीज प्रौद्योगिकी के पर्यावरणीय, पारिस्थतिकीय और स्वास्थ्य संबंधी परिणामों को उसके आर्थिक लाभों की अपेक्षा अधिक महत्व दिया गया है तो दूसरी ओर बहुत से ऐसे मुद्दे हैं जिन्होंने अनुसंधानकर्ताओं और सक्रियतावादियों का ध्यान आकर्षित किया है। उनमें प्रमुख हैं, नैतिक, सुरक्षा और स्वामित्व मुद्दे। उसे अपनाने का सबसे बड़े खतरों में एक यह है कि आधारभूत मानवीय आवश्यकता (भोजन), पर कुछ बहुराष्ट्रीय जैव बीजों के प्रजनक कंपनियों का एकाधिकार नियंत्रण हो जाएगा। इस प्रकार यद्यपि बीज प्रौद्योगिकी में भारतीय कृषि में क्रांति लाने की विपुल संभावना है परंतु बीज प्रौद्योगिकी महंगी और अपने स्वरूप में स्वामित्व होने के कारण संदेह है कि प्रौद्योगिकी संसाधन सम्पन्न किसानों के लिए अधिक उपयुक्त हो सकती है और सीमांत और छोटे किसानों की बहुत बड़ी संख्या , विशेषकर पिछड़े कृषि क्षेत्रों में इसके लाभ प्राप्त करने से छूट जाते हैं। परंतु हमें स्मरण करना चाहिए कि जीन क्रांति आधारित प्रौद्योगिकी भी छोटे और सीमांत किसानों की तुलना में केवल धनी किसानों के अनुकूल है। इसलिए हरित क्रांति और जीन क्रांति के बीच आधारभूत अंतर है, ऐसा कहा जा सकता है कि हरित क्रांति मुख्यतः सार्वजनिक क्षेत्र प्रेरित थी तो 'जीन क्रांति का आधार निजी क्षेत्र रहेगा।

7.14 सारांश

संक्षेप में कहा जाय तो भारत में हरित क्रांति का प्रभाव मिश्रित रहा हैं। एक ओर जहाँ पंजाब, हरियाणा, व पश्चिमी उत्तर प्रदेश के बडे किसानों को अत्याधिक लाभ मिला हैं वही दूसरी तरफ पूर्वोत्तर भारत में यह लगभग अनुपस्थित रहा हैं। निश्चित ही एक तरफ जहाँ 1965–66 में हुई खाद्यान्न की कमी को 1971–72 में खाद्यान्न आत्मनिर्भरता प्राप्त हुई, वही दूसरी तरफ इसके क्षेत्र में पर्यावरणीय समस्याओं सामाजिक तथा आर्थिक असमानताओं को भी जन्म दिया। इसीलिये उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर ही हाल में ''दूसरी हरित क्रांति'' की आवश्यकता पर चर्चा आरम्भ हुई हैं जो अधिक समावेशी स्वरूप से खाद्य सुरक्षा/असुरक्षा की समस्या का समाधान करने के लिये उपयुक्त हो, अर्थात् प्रक्रिया के मुख्य घटकों के रूप में छोटे सीमांत किसानों और वर्षा प्रधान तथा शुष्क क्षेत्रो पर बल सहित कृषि उत्पादकता बढ़ाने का आग्रह करती हों।

7.15 शब्द सूची

भूमि उपयोग	Land Use
कृषि प्रदेश	Agriculture region
कृषि शाख	Agriculture credit
कृषि आदान	Agriculture input
कृषि उत्पादकता	Agriculture productvity
कृषि जलवायु प्रदेश	Agro climatic region
कृषि वानिकी	Agroforestry
कृषि पारिस्थितक प्रदेश	Agro ecological region

7.16 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

1. वैश्विक संदर्भ में हरित क्रांति के जनक कौन थे?

   (अ) राजकृष्णा (ब) M.S. स्वामीनाथन

   (स) नॉर्मन बोरलाग (द) इनमें से कोई नही

2. निम्नलिखित में से कौन हरित क्रांति को संदर्भित करता हैं?

   (अ) हरी खाद का उपयोग (ब) फसलों का उच्च उत्पादन

   (स) हरित वनस्पत्ति (द) उच्च पैदावार विविधता कार्यक्रम

3. हरित क्रांति के बुनियादी तत्व हैं–

   (अ) खेती के क्षेत्रों का विस्तार

   (ब) मौजूदा खेती की दोहरी फसल

   (स) हरित क्रांति की विधि में HYVP बीजों का उपयोग

   (द) उपरोक्त सभी।

4. किसने भारत में कृषि उत्पादन बढ़ाने हेतु 'सदाबहार क्रांति' शब्द का प्रयोग किया।

   (अ) M.S. स्वामीनाथन (ब) नार्मन बोरलाग

   (स) राजकृष्णा (द) आर0के0वी0राव

5. द्वितीय हरित क्रांति का उद्देश्य किन फसलों के उत्पादन के लिए था।

   (अ) चावल के उत्पादन के लिए। (ब) दलहन के उत्पादन के लिये।

   (स) तिलहन के उत्पादन के लिए। (द) इनमें से सभी के लिये।

6. हरित क्रांति की शुरूआत किस पंचवर्षीय योजना के दौरान की गई थी?

   (अ) प्रथम (ब) द्वितीय (स) तृतीय (द) चतुर्थ

आदर्श उत्तर (1) स, (2) द, (3) द, (4) अ, (5) द, (6)स,

7.17 सन्दर्भ / उपयोगी पुस्तकें

1. प्रो.आर.सी. तिवारी – भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन।
2. डॉ. अलका गौतम – भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन प्रयागराज।
3. प्रोफेसर माजिद हुसैन– भारत का भूगोल, मैग्रा हिल।
4. Jagdish Singh, India :A ComprehensiveAnd systematic Geography. Gyanodaya Publication Grokhpur.
5. Singh R.L. – India :A Regional Geography, N.G.S.I. Grokhpur
6. Nag, P.And Sengupta, S : Geography , New Delhi.
7. Ford Foundation (1959 : Report on Indian's Food crisisAnd step to meet It New Delhi : Ministry of foodAnd AgricultureAnd Ministry of community Developement.

7.18 अभ्यास प्रश्न (परीक्षा की तैयारी हेतु)

- स्वतंत्रोत्तर देश में उत्पन्न खाद्य संकट को किस प्रकार दूर किया गया?
- हरित क्रांति का भारत में किस प्रकार प्रचार–प्रसार किया गया?
- हरित क्रांति के ऐतिहासिक संदर्भ की एक संक्षिप्त व्याख्या प्रस्तुत कीजिये।
- हरित क्रांति के सकारात्मक व नकारात्मक पहलुओं की व्याख्या कीजिये।
- हरित क्रांति के पर्यावरणीय प्रभाव को महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं के माध्यम से समझाइये।
- द्वितीय हरित क्रांति से आप क्या समझते है? समझाइयें
- भारत में कपास के उत्पादन एवं वितरण व्याख्या कीजिए।
- भारत में चाय के उत्पादन एवं वितरण व्याख्या कीजिए।
- दलहन पर टिप्पणी लिखिए।

नोटः इस इकाई का अध्ययन कर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर स्वंय लिखिये।

इकाई–8 लौह अयस्क–उत्पादन एवं वितरण, अभ्रक– उत्पादन एवं वितरण

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 खनिज संसाधन

8.4 लौह अयस्क– उत्पादन एवं वितरण

8.5 अभ्रक– उत्पादन एवं वितरण

8.6 सारांश

8.7 शब्द सूची

8.8 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

8.9 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

8.10 अभ्यास प्रश्न।

8.1 प्रस्तावना

खनिज किसी देश के औद्योगिक विकास का आधार बनाते है। भारत कुछ आवश्यक खनिज पदार्थो के पर्याप्त भण्डारो की दृष्टि से काफी भाग्यशाली है। हमारे देश में लौह खनिज, अभ्रक, मैग्नीज अयस्क, मैग्नेसाइट, बाक्साइट तथा थोरियम के विशाल भण्डार पाये जाते है। भारत के लिए इन खनिजों का निर्यात संभव है। कोयले चूने के पत्थर, डोलोमाइट, यूरेनियम तॉबे के अयस्क तथा जिप्सम भण्डार भारत की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त है। किन्तु कुछ खनिजों की दृष्टि से भारत बहुत निर्धन है जेसे–पारा, टंगस्टन, मालीवेड्नम, चांदी कोबाल्ट, निकिल टिन जस्ता, ऐन्टिमनी तथा प्लैटिनम प्राप्त होते हैं किन्तु हमारा देश खनिजों की खोज में बहुत सक्रिय है तथा अधिक खनिज भण्डारों के निकट भविष्य में मिलने की काफी सम्भावनाएं है। ब्रिटेन, जर्मनी का रूर क्षेत्र डोनेज बेसिन तथा यू0एस0ए0 के उत्तरी अप्लेशियन प्रदेश उच्च कोटि के कोयले की दृष्टि से सम्पन्न होने के कारण विश्व के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है। झारखण्ड तथा पश्चिम बंगाल के साथ लगते भागों में क्योंकि उच्च कोटि का कोयला पाया जाता है अतः ये भाग भारत के प्रमुख इस्पात निर्माण तथा इस्पात से सामान तैयार करने वाले क्षेत्र हैं।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के गद आप–

1. भारत में खनिज संसाधनों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. भारत के आर्थिक विकास में खनिज संसाधनों के महत्व को समझ सकेंगे।
3. लौह–अयस्क के भण्डारण एवं उत्पादन तथा सम्बन्धित व्यापार की समझ विकसित कर सकेंगे।
4. भारत में अभ्रक खनिज के वितरण तथा उसके महत्व को समझ सकेंगे।
5. संयुक्त रूप से भारतीय अर्थव्यवस्था में खनिजों का महत्व समझ सकेंगे।

8.3 खनिज संसाधन

खनिज किसी देश के औद्योगिक विकास का आधार बनाते है। खनिज दो या दो से अधिक तत्वों का पूर्ण योग होता है, जिसकी एक स्पष्ट रासायनिक संयोजन परमाणुविक संरचना होती हैं। यह अजैविक प्रक्रियाओं के माध्यम से बनता है। ये भू–पृष्ठ में अयस्क के रूप में पाये जाते हैं इसका निष्कर्षण किया जाता है तथा संसोंधित कर इसे समाज में आर्थिक लाभ के लिए उपयोग किया जाता है। वर्तमान समय में देश से भारी मात्रा में अयस्क

खनिजों का निर्यात किया जाता है। देश में भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण (1851), भारतीय खान ब्यूरो (1948), राष्ट्रीय खनिज विकास लिमिटेड (1958) आदि संस्थायें खनिजों के शोध, शोषण व संरक्षण में कार्यरत् है।भारत खनिज संसाधन की दृष्टि से बहुत सम्पन्न है परन्तु इनका वितरण बहुत असमान है। भारत में खनिजों के वितरण का सक्षिप्त वर्णन निम्नवत् उल्लेखित किया गया है।

8.3.1 खनिजों का वितरण–

खनिज संपदा की दृष्टि से प्रायद्वीपीय भारत सम्पन्न है। यहां पर भारत की प्रमुख खनिज पेटियों का वर्णन निम्नानुसार किया गया है–

1. छोटा नागपुर मेखला :–

इसका अधिकतर भाग झारखण्ड राज्य के अन्तर्गत शामिल है इसे भारत का रूर प्रदेश की उपमा प्रदान की गई है। इसके अन्तर्गत शामिल महत्वपूर्ण क्षेत्र यथा–धनबाद, हजारी बाग, पलामू रांची, संधाल परगना, सिंहभूमि (झारखण्ड), कटक, धनकेनाल, क्योझर म्यांझट, कोरापुर, मयूरभंज, संभलपुर, सुन्दरगढ़ (उड़ीसा), बाँकुरा, वीरभूमि, मेदिनीपुर व पुरालिया (पं0 बंगाल) है।इस क्षेत्र में काइनाइट रिजर्व 100 प्रतिशत, लौह वयस्क 1.93 प्रतिशत, कोयला, 84 प्रतिशत तथा 70 प्रतिशत क्रोमाइट पाये जाते है। इस क्षेत्र में पाये जाने वाले खनिजों में कोयला, लोहा, बाक्साइट, यूरेनियम, फोस्फेट, चूना पत्थर, क्रोमाइट, मैंगनीज व अभ्रक आदि शामिल है।

2. मध्य भूमि मेखला :–

यह क्षेत्र छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, आन्ध्रप्रदेश, तेलगांना व महाराष्ट्र राज्य में विस्तृत है जिसके अन्तर्गत मैग्नीज अयस्क, बाक्साइट, अभ्रक, ताँबा, ग्रेफाइट, चूना पत्थर आदि खनिज संसाधन पाये जाते है। इस मेखला की महत्वपूर्ण विशेषता चूना पत्थर की अवस्थति है।

3. दक्षिणी पेटी :–

इसका विस्तार आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक व तमिलनाडु में है जिसमें पाये जाने वाले महत्वपूर्ण खनिज सोना, लोह अयस्क, क्रोमाइट, मैग्नीज, लिग्नाइट, अभ्रक, बाम्साइट, जिसम, डोलो माइट चूनापत्थर है।

4. पश्चिमी मेखला :–

इसका विस्तार राजस्थान, गुजरात व महाराष्ट्र राज्य में है जिसके अन्तर्गत महत्वपूर्ण खनिज ताबा, सोना, जिंक, यूरेनियम, अथ्रक, मैग्नीज, नमक व एस्बेस्टस आदि हैं यहां खनिज तेल के भण्डार भी पाये जाते है।

5. दक्षिणी–पश्चिमी मेखला :–

इस मेखला का विस्तार कर्नाटक, गोवा व केरल में पाया जाता है जहां इल्मेनाइट, जिरकान, मोनाजाइट, बालू, गार्नेट, चीनी मिट्टी लौह धातु, बाक्साइट, अभ्रक, चूना पत्थर आदि के भण्डार पाये जाते है।

6. हिमालयी मेखला :–

इस मेखला का फैलाव जम्मू–कश्मीर (लद्दाख) से लेकर हिमालय की तलहटी होते हुये पूर्वोत्तर भारत तक है। यहां पायी जाने वाली खनिज सम्पदा में एण्टीमनी, सीसा जस्ता, ताबां, निकिल, कोबोल्ट, टंगस्टन, जिस्सम, चूना पत्थर, सोना, चांदी व कीमती पत्थर शामिल है।

7. हिन्द महासागर :–

इस विशाल क्षेत्र के अन्तर्गत अरब सागर के महाद्वीपीय कगार व बंगाल की खाड़ी शामिल है। इन क्षेत्रों में खनिज तेल व प्राकृतिक गैस की उपलब्धता के साथ–साथ इसके नितल में मैग्नीज, फास्फेट, वेरियम, एल्यूमिनियन, सिलिकान, टाइटेनियम, सोडियम, पोटैसियम, क्रोमियम, मानोजाइट, इल्मीनाइट, मैग्नीटाइट और गर्नेट पाये जाते है।

8.3.2 खनिज संसाधनों का वर्गीकरण :–

सामान्यतः खनिजों को तीन श्रेणियों में बाटा जाता है यथा–

1. धात्विक खनिज :–

ये वे खनिज है जिनको गलाने से धातु प्राप्त होते है। उल्लेखनीय है कि धातु लचीले होते है उनसे कोई भी वस्तु बना सकते है। धात्विक खनिजों को दो भागों में बाटा गया है–

1. लौहांश खनिज– लौह अयस्क, मैग्नीज, क्रोमिपय, कोबाल्ट, टगस्टन, मोलीबेडनय, वैनेडियम, टाइटेनियम बोरान, निकिल आदि।
2. अलौह धातुए– तांबा, सीसा, जस्ता, बाक्साइट, टिन, मैग्नीशियम, एवं प्लेटिनम आदि को शामिल किया जाता है।

2. अधात्विक खनिज

इनमें धात्विक अशं का अभाव रहता है। चोट पड़ने पर ये टूट जाते है यथा–डोलोमाइट, चूनापत्थर, अभ्रक, जिप्सम, पाइराइट्स नमक, एस्वेस्ट्रास, हीरा, चीपा पत्थर एवं विभिन्न प्रकार की मिट्टियां आदि।

3. खनिज ईधन

इसके अन्तर्गत आविक खनिज, कोयला, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस को शामिल किया जाता है।

8.3.3. खनिज उद्योग की समस्यायें

भारत में खनिज उद्योग अनेक समस्याओं से ग्रसित है, जो इस प्रकार है–

1. खनन और प्रसंस्करण की समुचित नीति का आभाव।
2. अवैज्ञानिक तरीके से अंधाधुन खनन।
3. पुरानी प्रौद्योगिकी।
4. देश में खनिज संसाधनों का विधिवत अन्वेषण और सूचीकरण नहीं किया जा सकता है।
5. पूंजी की अल्पता।
6. पर्यावरण पर कुप्रभाव।

8.3.4. खनिज संसाधनों का संरक्षण

ये अनवीकरणीय संसाधन होते है क्योंकि एक बार भण्डार समाप्त हो जाने के बाद पुनः उत्पादन नहीं कर सकते है। नीचे कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिये गये है– यथा–

1. नयी शोधों द्वारा दुर्लभ खनिजों के स्थान पर 'प्रतिस्थापन खनिजों को खोजने और विकसित करने की आवश्यकता है।
2. नये प्रकार के आर्थिक विकास के मार्ग को प्रशस्त करने के लिये खनिज–आधारित उद्योगों के विस्तारण की भारी सम्भावना है।
3. संरक्षण नीति में पोषणीय खनन में अधिक बल दिया जाना चाहिये। उन खनिजों के शोषण और उपयोग को प्राथमिकता दिया जाना चाहिये जो नवीकरणीय व प्रचुर है।

8.4. लौह अयस्क

लौह अयस्क को आधुनिक सभ्यता के धुरी नाम से जाना जाता है। इस पर किसी देश की अर्थव्यवस्था टिकी हुई होती हैं यह खनिज पृथ्वी पर शुद्ध रूप से नहीं पायी जाती है बल्कि यह अक्सर चूना, मैग्नीशियम, फास्फोरस, सिलिका, सल्फर (गन्धक) तथा तांबे के साथ मिश्रित रूप में पायी जाता है। यह 4 प्रकार के पाये जाते है, यथा–

1. **मैग्नेटाइट (fe2o3)**–यह काले रंग का सर्वोत्तम किस्म का चुम्बकीय लौह अयस्क है। इसमें धातु का अंश 72 प्रतिशत होता है। इसमें वेनेडियम, टाइटेनियम तथा क्रोमियम के भी अंश पाये जाते है। इस प्रकार

के लौह अयस्क का 42 प्रतिशत भाग दक्षिणी भारत अर्थात् कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश एवं तमिनलाडु में पाया जाता है।

2. **हेमेटाइट अयस्क (fe2o3)**–इसमें धातु का प्रतिशत 70 से 60% तक होता हैं यह दूसरा सर्वोत्तम किस्म का लौह अयस्क है। इसका 59 प्रतिशत भाग पूर्वी क्षेत्र अर्थात् झारखण्ड, ओडिशा व छत्तीसगढ़ राज्य के अन्तर्गत शामिल है। भारत का अधिकांश लोहा इसी प्रकार का है।

3. **लियोनाइट (2fe2o3H2o)**–यह जलयोजित लोहा आक्साइड कहलाता है। इसमें धातु का अंश 40 से 50 प्रतिशत होता है। यह अवसादी शेलों में पाया जाता है।

4. **सिडेराइट (fe3co3)**–इसे लोहा कार्बोनेट कहा जाता है यह भी अवसादी शैलों से ही प्राप्त किया जाता है।

भण्डार – भारत में लौह अयस्क का कुल सचिंत भण्डार 33276 मिलियन टन (मिनरल ईयर बुक 2019) है, जिसमें से 22487 मिलियन टन हेमेटाइट व 10789 मिलि. टन मैग्नेटाइट सम्मलित है। कुल भण्डारण में क्रमशः कर्नाटक, ओडिशा, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ एवं आन्ध्र प्रदेश का शीर्ष स्थान है।

यह उल्लेखनीय है कि भारत के पूर्वी राज्यों– ओडिशा, झारखण्ड, पश्चिमबंगाल, छत्तीसगढ़ व उत्तरी आन्ध्र प्रदेश में देश के 80 प्रतिशत लौह भण्डार पाये जाते है (भारत 2020)। हेमेटाइट भण्डारण में शीर्ष 5 राज्य क्रमशः ओडिशा (34 प्रतिशत), झारखण्ड (23 प्रतिशत), छत्तीसगढ़ (22.0) कर्नाटक (11.0 प्रतिशत) व गोवा 5.0 प्रतिशत है। मैग्नेटाइट भण्डारक शीर्ष पांच राज्य क्रमशः कर्नाटक (72 प्रतिशत), आन्ध्रप्रदेश (13 प्रतिशत), राजस्थान (6 प्रतिशत), तमिलनाडु (5 प्रतिशत), गोवा (2 प्रतिशत) है।

लौह अयस्क उत्पादन एवं वितरण –

वर्तमान समय में विश्व में लौह अयस्क के उत्पादन में भारत का चतुर्थ स्थान (7.05 प्रतिशत) है।देश में लौह अयस्क का उत्पादन 206.44 मिलियन टन (IMYB-2019) है। देश में लौह अयस्क उत्पादन वाले शीर्ष राज्य क्रमशः ओडिशा (54.76 प्रतिशत), छत्तीसगढ़ (16.93 प्रतिशत), कर्नाटक (14.43 प्रतिशत) व झारखण्ड (11.35 प्रतिशत) है। देश के लौह अयस्क उत्पादक क्षेत्रों का वितरण क्षेत्र अधोलिखित है–

ओडिशा– इस राजय का देश में लौह अयस्क उत्पादन का प्रथम स्थान (54.76 प्रतिशत) है। इसके अन्तर्गत आने वाले प्रमुख क्षेत्र गुरूमहिसानी, पोम्पाद, बदाम पहाड़ (मयूरगंज+सुन्दरगढ़) जिले, बांसपानी टोडा (केवझर जिला), तोमाका श्रेणी (कटक), कान्डाधार पहाड़ (सुन्दरगढ़ जिला) सम्बलपुर तथा कोरा पुट जिले की हीरापुर पहाड़ी।बादाम पहाड, बोनाईगढ़ श्रेणी तथा मयूरगंज के लौह अयस्क का प्रयोग बोकारो, दुर्गापुर, जमशेदपुर तथा राउरकेला के लोहे एवं स्टील संयत्रों के लिए भेजा जाता है।

छत्तीसगढ़– इस राज्य का देश में लौह अयस्क उत्पादन में दूसरा (16.93 प्रतिशत) महत्वपूर्ण स्थान है। बैलाडिला (बस्तर जिले में) तथा डल्ली राजहरा (दुर्ग जिला) इस राज्य के महत्वपूर्ण लौह अयस्क खनिज उत्पादन राज्य है। बैलाडिला खान देश की सबसे बड़ा यन्त्रीकृत लौह–अयस्क की खान है। 270 किमी0 लम्बी एक स्लॅरी पाईपलाइन का निर्माण किया गया है ताकि अयस्क को बैलाडिला से विशाखा पत्तनम संयन्त्र तक लाया जा सके। बैलाडिला से अधिकतर लौह अयस्क का निर्यात जापान को किया जाता है। यह निर्यात विशाखापट्टनम बन्दरगाह से किया जाता है। ढल्ली–राजहरा श्रेणी जो लौह अयस्क के भण्डार हेतु सुप्रसिद्ध है, छत्तीसगढ़ के दुर्ग जिले में स्थित है। यहां के अयस्क में लोहे की मात्रा 70 प्रतिशत हैं इस श्रेणी के भण्डार का उपयोग हिन्दुसतान स्टील संयत्र, भिलाई द्वारा किया जाता है। छत्तीसगढ़ राज्य के अन्य खनिज लौहे उत्पादन करने वाले जिले बिलासपुर, जगदलपुर, रायगढ़ तथा सरगुजा है।

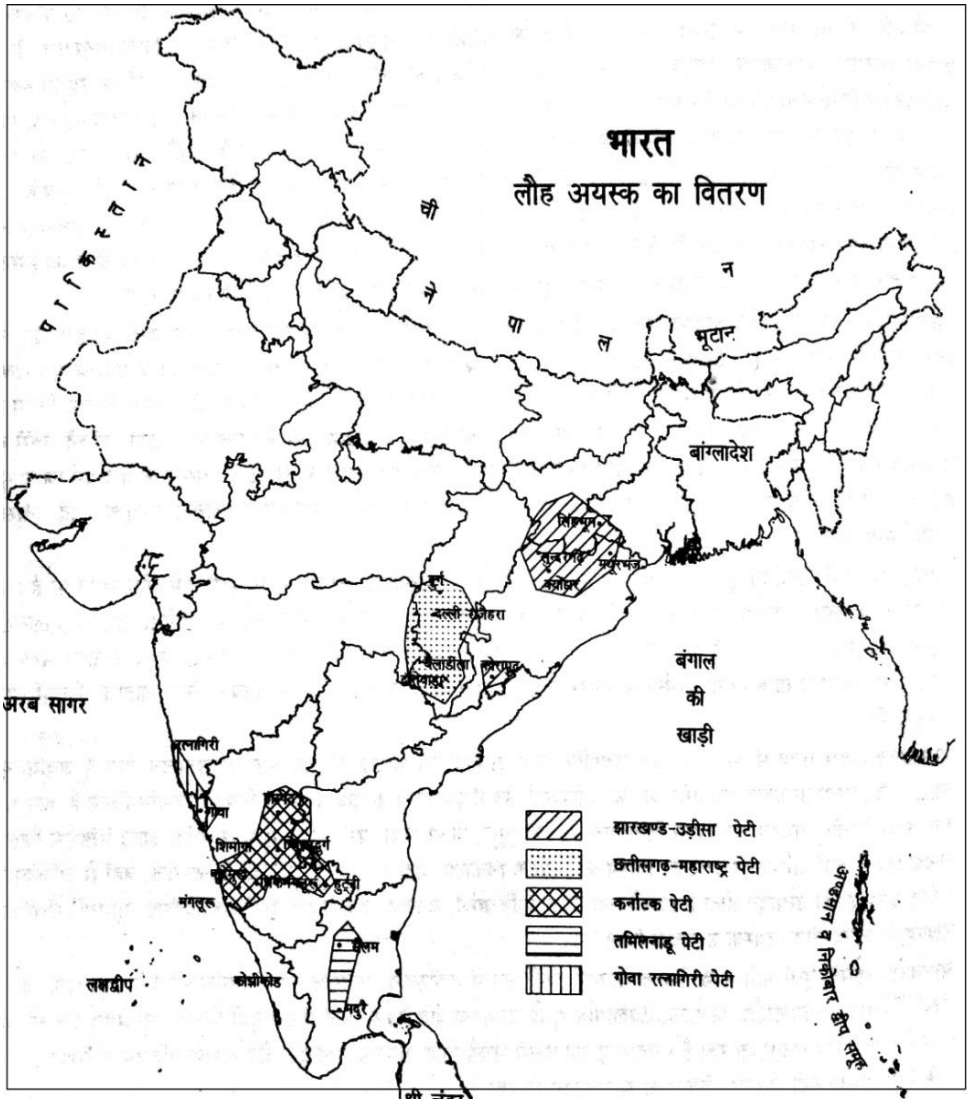

चित्र–1

कर्नाटक– भारत में लौह अयस्क के उत्पादन में कर्नाटक का तीसरा महत्वपूर्ण (14.43 प्रतिशत) स्थान हैं। लौह अयस्क भण्डारण की दृष्टि से यह राज्य देश में सर्वोच्च स्थान रखता है। उच्च श्रेणी के भण्डार हैमेटाइट तथा मैग्नेटाइट प्रकार के है तथा ये केम्मनगुंडी (चिकमंगलूर जिले के बाबाबूदन पहाड़ी में) में पाये जाते है।

1. बाबाबुदन पहाड़ी–यह कर्नाटक के चिकमंगलूर जिले में स्थित है। यहां हेमेटाइट के भरपूर भण्डार है। यहां का लौह अयस्क खनिज मंगलौर बन्दरगाह द्वारा ईरान को निर्यात किया जाता हैं
2. कुद्रेंमुख भण्डार–यह भण्डार भी चिकमंगलूर जिले में स्थित है। जहां मैग्नेटाइट प्रकार के लौह अयस्क का भण्डार पाया जाता है। इस खान का विकास ईरान के साथ एक निर्यात समझौते के तहत हुआ हैं यहां से खनिज लौह का निर्यात मंगलौर बन्दरगाह के द्वारा किया जाता है।
3. संदूर श्रेणी इस श्रेणी का विस्तार कर्नाटक के बेल्लारी तथा हासपेट जिलों में हैं इस श्रेणी का खनिज लोहा कठोर, सघन तथा 'स्टील–ग्रे' होता हैं यहां के खनिज लौह को विजयनगर स्टील संयत्र भेजा जाता है।
4. खनिज लोहा उत्पादन करने वाले कर्नाटक के अन्य जिले चित्रदुर्ग, धारवाड, उत्तरी कन्नड़, सिमोंगा व तुमकुर है।

झारखण्ड– यह राज्य देश के कुल लौह अयस्क उत्पादन का 11.35 प्रतिशत प्रतिनिधित्व करता है। इस दृष्टि से यह देश का चौथा प्रमुख लौह अयस्क उत्पादक क्षेत्र है। जबकि भण्डारण की दृष्टि से देश में तीसरा प्रमुख स्थान

रखता है। यहां की लौह पेटी उड़ीसा की पेटी का ही विस्तार है। सिंह भूमि प्रमुख उत्पादक जिला है। यहां नोवामण्डली, गुआ क्षेत्रों में उत्तम कोटि का हेमेटाइट लौह–अयस्क पाया जाता हैं। इसके अतिरिक्त पलामू जिले के डाल्टनगंज और सिंह भूमि के दुब्लाबंरा और सिन्दुरपुर मैग्नेटाइट लौह अयस्क के जमाव पाये जाते है। गुआ क्षेत्र का लौह अयस्क कुल्टी और बर्नपुर के इस्पात संयत्रों को और किरीबुक और मेधहादूबट क्षेत्र NMDC जरिये बोकारो और राउर केला इस्पात केन्द्रों को भेजा जाता है। कुछ लौह अयस्क हल्दिया बन्दरगाह से निर्यात भी किया जाता है जिसके लिए 70किमी0 लम्बी रेल लाइन बिछायी गयी है।

गोवा– यह देश का एक महत्वपूर्ण लौह अयस्क उत्पादक एवं भण्डारक राज्य है। उत्तरी गोवा का लौह–अयस्क उच्च कोटि का है। यहां का मुख्य खनन केन्द्र पिसा अडोलपेल– अस्नोरा, सेन्क्युलिम– पोंडा, कुन्देम– सुरला तथा सिरीगाओ– बिछोलिम– डालडा है। निकटवर्ती बन्दरगाह इन खानो के लिए अत्यन्त लाभकारी है जहां से लौह–अयस्क का निर्यात किया जाता है यहां से निर्यात मुख्यतः जापान व ईरान को किया जाता है।

आन्ध्र प्रदेश– यहां के प्रमुख खनन केन्द्र अन्तपुर, खम्मम, कृष्णा, कुर्नूल, कुडप्पा एवं नैल्लौर जिलों में हेमाटाइट किस्म के लौह–अयस्क का जमाव पाये जाते हैं जिसमें जग्गपा पेट्टा, रमल्ला कोटा, वेल्डुर्टी, नयुडुपेट्टा और बेय्याराम प्रमुख खनन क्षेत्र है।

तमिलनाडु– यहां के प्रमुख भण्डारण क्षेत्र सलेम (तिथमिलाई, कंजामलाई गोइमलाई कोल्लामलाई, चेत्तेरी बेलुकुरिची, पांचालाइस, नामागिरी, महादेवी पहाड़ी), उ0 अर्काट, नीलगिरी, धर्मपुरी जिलों में पाए जाते है।

राजस्थान– इस राज्य में लौह अयस्क के महत्वपूर्ण भण्डार मोरिजा (भीलवाड़ा) नथराकिपल (उदयपुर) जमालपुर, शिरोर एवं तओड़ा (झुंझुन जनपद) में पाये जाते है।

महाराष्ट्र– यहां लोहे के जमाव मुख्यतः लोहार, पीपल गांव, असेाला, देवल गांव, सूरजगढ़ (चन्द्रपुर जिला), रेडी, सावन्तवाड़ी, बंगुरला, गुल्डुर अरोज (रत्नागिरी), खुर्शीपुर एवं अम्बेतलाब (भण्डारा जनपद) क्षेत्रों में पाये जाते है।

अन्य क्षेत्र– लघु मात्रा में लौह अयस्क के जमाव मध्यप्रदेश के जबलपुर, मांडला एवं बालाघाट जिलों में, गुजरात के भावनगर एवं बड़ोदरा, हरियाणा के महेन्द्रगढ़ जिला में, जम्मू–कश्मीर के राजौरी, (जम्मू एवं उधमपुर जिलों) में पाये जाते है। उत्तरप्रदेश के सोनभद्र व मिर्जापुर जिलों और हिमांचल प्रदेश के कागड़ा व मण्डी जिलों में प्राप्त होते है।

व्यापार– भारत लौह अयस्क के उत्पादन के मामले में विश्व का चौथा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। भारत में लौह अयस्क का घरेलु खपत के बाद अधिकतर भाग निर्यात कर दिया जाता है। भारत अपने कुल खनिज लोहे के उत्पादन का लगभग 55 प्रतिशत भाग जापान, दक्षिण कोरिया, पश्चिमी यूरोप, ईरान, यू0ए0ई0 अन्य देशों को निर्यात कर देता है।यह निर्यात मुख्यतः बैलाडिला (छत्तीसगढ़), दैत्री बराजमदा (उड़ीसा), बेल्लारी–हास्पेट, दोनेमलाई–कुन्द्रेमुख (कर्नाटक) एवं गोवा के क्षेत्रों में विशाखापट्टनम्, पाराद्वीप, हल्दिया, चेन्नई, मर्मागोवा बन्दरगाहों से किया जाता है। विश्व बाजार में भारत के लौह खनिज के निर्यात को आस्ट्रेलिया, मलेशिया (जापान को,) लैटिन अमेरिकी देशों (पं0 यूरोप को) एवं रूस (पू0 यूरोप को) से कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है।

8.5 अभ्रक

यह एक महत्वपूर्ण अधात्विक खनिज है जो कि विद्युत का कुचालक होता है। इसलिए इसका उपयोग मुख्यतः विद्युत उद्योगों में किया जाता है। इसका उपयोग बिजली के मोटर, डायनमो, बेतार का तार, हवाई जहाज, मोटरगाड़ी, धमनभट्टी, ताप सह एवं विद्युत कुचालक ईट, लालटेन की चिमनी, नेत्र रक्षक चश्मा, सजावट के समान एवं मकान बनाने में किया जाता है। अभ्रक का मुख्य अयस्क पिग्माटाइट है। वैसे यह मस्कोवाइट, फ्लोगोपाइट, बायोटाइट तथा लेपिडोलाइट जैसे खनिजों का समूह है जो आग्नेय एवं रूपान्तरित शेलों में खण्डों के रूप में पाये जाते है।

भण्डारण

भारत अभ्रक शीट के भण्डारण में विश्व में प्रथम हैं 2019 के अनुसार भारत में अभ्रक के शीर्ष चार भण्डारक राज्य क्रमशः आन्ध्रप्रदेश (41 प्रतिशत) राजस्थान (28 प्रतिशत), ओडिशा (17 प्रतिशत) व महाराष्ट्र (13 प्रतिशत) है (1 अप्रैल 2015 तक)।

उत्पादन एवं प्रादेशिक वितरण

भारत विश्व में अभ्रक शीट का प्रथम स्थान है। 1960 के पूर्व में बाजार में इसकी मांग बहुत ज्यादा था, इसके बाद इसकी मांग में क्रमशः ह्रास देखा गया। भारत में शीर्ष अभ्रक कच्चा उत्पादक राज्य क्रमशः आन्ध्रप्रदेश व राजस्थान है। अन्य राज्यों में झारखण्ड का बिहार महत्वपूर्ण है।

देश के समूचे अभ्रक का उत्पादन केवल चार राज्यों (आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान, झारखण्ड व बिहार) में किया जाता है, जिसमें से अकेले आन्ध्रप्रदेश देश 97.62 प्रतिशत अभ्रक उत्पादन करता है।

आन्ध्र प्रदेश– यहां की अभ्रक की मुख्य पेटी गुडूर और संगम के बीच नेल्लौर जिले में पाई जाती है। यहां पर कालीचेटू, कल्यानारामा, सीताराम, पल्लीमाता, बसापर और पट्टाभिरामा प्रमुख खदाने है।

राजस्थान– यहां की अभ्रक पेटी उ0पू0 में जयपुर से द0प0 में उदयपुर तक फैली है। भीलवाड़ा, अजमेर, उदयपुर और जयपुर जिले प्रमुख उत्पादक है। यहां के अभ्रक का रंग हल्का हरा और गुलाबी है।

झारखण्ड– इस राज्य का मुख्य उत्पादक क्षेत्र कोडरमा, हजारीबाग, गिरिडीह, एवं धनबाद जिलों से प्राप्त होती है जो गया भागलपुर तक फैली अभ्रक पेटी का भाग हैं यहां का अभ्रक लाल रंग व उत्तम कोटि का होता है। कोडरमा विश्व की प्रसिद्ध अभ्रक की मण्डी है।

बिहार– बिहार में गया (डाबर, सिंगुर, राजौली) मुगेंर (महेसवरी, नवडीह एवं चकाई), भागलपुर, नवादा, जमुई और बांका जिलों में अभ्रक के जमाव पाये जाते हैं।

सांसर श्रृंखला

यह श्रृंखला महाराष्ट्र के नागपुर तथा भण्डारा एवं मध्यप्रदेश में छिदंवाड़ा जिले में फैली हुई हैं इस श्रृंखला से प्राप्त अभ्रक हल्के हरं रंग का होता है।

साकोली श्रृंखला

यह मध्यप्रदेश के जबलपुर तथा रीवा जिले में फैली हुइ हैं यह श्रृंखला अभ्रक हेतु धनी है।

अन्य क्षेत्र– अभ्रक के छिटपुट जमाव कर्नाटक, तमिलनाडु, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ केरल, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, हिमांचलप्रदेश, असम (ग्वालपाड़ा), व पश्चिम बंगाल में पाये जाते है।

व्यापार– भारत में विश्व में सबसे बड़ा उत्पादक एवं निर्यातक है। इसके समस्त उत्पादन का मात्र 10 प्रतिशत ही घरेलू खपत बिजली और इलेक्ट्रॉनिक्स उद्योगों में हो पाती है बाकी बचे 90 प्रतिशत को विदेशों (जापान, यू0एस0ए0, ग्रेटब्रिटेन, नार्वे, रूस, पोलैण्ड, जर्मनी, चेकगणराज्य, स्लोवाकिया, हंगरी, नीदरलैण्ड, कनाडा, आस्ट्रेलिया को निर्यात कर दिया जाता है।निर्यात के प्रमुख पत्तन कोलकाता एवं विशाखा पत्तनम बन्दरगाह है।हमारें प्रमुख ग्राहकों में चीन, यू0एस0ए0 साउदीअरब, नीदरलैण्ड, जापान, फिनलैण्ड एवं जर्मनी शामिल है। हाल ही में भारत के निर्यात को ब्राजील में प्रतिस्पर्धा एवं कृत्रिम अभ्रक का सामना करना पड़ रहा है।

8.6 सारांश

संक्षेप में हम इस तथ्य को गहनता से स्वीकार्य कर सकते है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में खनिज संसाधनों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वर्तमान समय में विश्व की 10 सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था में अगर शामिल हुआ है तो इसका महत्वपूर्ण कारण इस देश के खनिज संसाधन ही रहा है। इस इकाई के अध्ययन से हम लौह–अयस्क, अभ्रक व कोयला खनिजों के उत्पादन, भण्डारण, वितरण व व्यापार के बारे में विस्तृत से जानकारी प्राप्त किए। इस इकाई के माध्यम से हमने यह सीखा कि किस प्रकार भारत में खनिजों का वितरण पाया जाता है एवं उद्योग–धन्धे अर्थात् औद्योगिक गतिविधियों का निर्धारण किस प्रकार से होता है, के बारे में सीखा।

8.7 शब्द सूची

Leather inddustry- चमडा उद्योग, Cotton texile inddustry- सूती वस्त्र उद्योग, Fossil fuel- जीवाश्म ईधन, Silk texile- रेशमी वस्त्र उद्योग, Mica- अभ्रक, Coal washery- कोयला शोधन

8.8 स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. निम्नांकित में कौन सुमेलित नहीं है–

अ– केमानुगुण्डी–भद्रावती　　ब– राजहरा– चन्द्रपुर

स– नोआमण्डी–सिंहभूमि　　द–गुरूमहिसानी–क्योंझर

2. खनिज पदार्थो की दृष्टि से कौन सा भारतीय क्षेत्र अधिक समृद्धि है–

अ– मालवा पठार　　ब– तिब्बत का पठार

स– दक्कन पठार　　द– छोटानागपुर पठार

3. भारत में सर्वाधिक कोयला भण्डार पाया जाता है–

अ–झारखण्ड　　ब– उड़ीसा

स– छत्तीसगढ़　　द– मध्य प्रदेश।

4. अभ्रक की प्राप्ति होती है–

अ– जलोढ़ निक्षेपों से　　ब– अवसादी शैलों से।

स– कायान्तरित शैलों से　　द– आग्नेय शैलों से।

5. कोरबा कोयला क्षेत्र कहाँ अवस्थित है।

अ– ओडिशा में　　ब– छत्तीसगढ़ में

स– पं0 बंगाल में　　द–झारखण्ड में।

उत्तर 1.(ब), 2. (द), 3 (अ), 4 (द), 5 (ब)।

8.9 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

1. प्रो0 जगदीश सिंह, भारत : भौगोलिक आधार एवं आयाम, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0 सी तिवारी– भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन, प्रयागराज।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
4. प्रो0 काशीनाथ व प्रो0 जगदीश सिंह, आर्थिक भूगोल, ज्ञानादेय प्रकाशन।
5. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल ज्योग्राफी एन0जी0एस0आई0 गोरखपुर।

8.10 अभ्यास प्रश्न (सत्रान्त परीक्षा हेतु)

1. भारत के खनिज संसाधन पर एक प्रकाश डालिए।
2. भारत में लौह अयस्क के भण्डारण, उत्पादन एवं वितरण का वर्णन कीजिये।
3. अभ्रक खनिज का वर्णन आन्ध्रप्रदेश राज्य के सन्दर्भ में कीजिये।

इकाई–9 बाक्साइड– उत्पादन एवं वितरण, मैग्नीज– उत्पादन एवं वितरण

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 बाक्साइड– उत्पादन एवं वितरण

9.4 मैग्नीज– उत्पादन एवं वितरण

9.5 सारांश

9.6 शब्द सूची

9.7 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

9.8 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

9.9 अभ्यास प्रश्न।

9.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल के इस इकाई में देश के मैग्नीज तथा बाक्साइट के उत्पादन, भण्डारण, वितरण तथा व्यापार का अध्ययन प्रस्तुत किया गया हैं। जिसमें भारत का विश्व के संदर्भ में उत्पादन तथा भण्डारण की स्थिति का मूल्यांकन करेंगे। भारत में बाक्साइट के अयस्क, बाक्साइट के उत्पादन एवं भण्डारण तथा बाक्साइट के प्रमुख निर्यातक एवं आयातक राज्य का वर्णन करेंगे। भारत में मैग्नीज तथा बाक्साइट के संयन्त्रों, राज्यों में उनके प्रमुख खानों एवं जमाव क्षेत्रों का वर्णन करेंगे।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. भारत में बाक्साइड तथा मैग्नीज के भण्डारण एवं उत्पादन का क्षेत्रीय विषमता को समझ सकेंगे।
2. भारत के आर्थिक विकास में बाक्साइड तथा मैग्नीज के महत्व को समझ सकेंगे।
3. बाक्साइड के भण्डारण एवं उत्पादन तथा सम्बन्धित व्यापार की समझ विकसित कर सकेंगे।
4. मैग्नीज के भण्डारण एवं उत्पादन तथा व्यापार को समझ सकेंगे।
5. संयुक्त रूप से भारतीय अर्थव्यवस्था में बाक्साइड तथा मैग्नीज के महत्व को समझ सकेंगे।

9.3 बाक्साइड

एल्युमिनियम का ऑक्साइड होता है। इसका रंग लाल, सफेद एवं गुलाबी होता है जो लोहांश की मात्रा पर निर्भर करता है। यह टर्शियरी युग की लैटेराइट शैलों में पायी जाती है। इस अयस्क में एल्युमिना का अंश 54–65 प्रतिशत के बीच पाया जाता है। एल्युमिनियम की मांग व उपयोग की दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण धातु है जिसका उपयोग बिजली विभाग, धातु उद्योग, बर्तन उद्योग, वायुयान एवं मोटरगाड़ी में किया जाता है।

भारत में बाक्साइड का अनुमान 3897 मिलियन टन है लेकिन 656 मिलियन टन प्रमाणित भण्डार की मात्रा आंकी गई है। Indian Mineral Year Book, 2020 के अनुसार भारत में कुल 3896864 हजार टन बाक्साइड के

भण्डार हैं। भारत में बाक्साइड के शीर्ष भण्डार वाले राज्य क्रमशः ओडिशा, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, झारखण्ड तथा महाराष्ट्र है।

भारत में बाक्साइड का संचित भण्डार– 2020

राज्य	भण्डार (हजार टन)
ओडिशा	1994574
आन्ध्रा प्रदेश	615267
गुजरात	350581
झारखण्ड	239061
महाराष्ट्र	184574

स्रोत–Indian Mineral Year Book, 2020

एल्युमिनियम के मांग में लगातार वृद्धि के कारण उत्पादन में भी लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2019–20 में भारत में कुल 218.23 लाख टन एल्युमिनियम का उत्पादन हुआ है। विश्वभर में भारत बाक्साइड के उत्पादन में छठा शीर्ष देश है जहां अधिकांश बाक्साइड का उत्पादन ओडिशा राज्य द्वारा किया जाता है जो देश का लगभग एक तिहाई हिस्सा है। इसके बाद क्रमशः गुजरात, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, मध्य प्रदेश शीर्ष 5 उत्पादक राज्य हैं।

भारत में बाक्साइड का उत्पादन–2020

राज्य	भण्डार (हजार टन)
ओडिसा	154.83
गुजरात	20.74
छत्तीसगढ़	15.66
झारखण्ड	14.18
मध्य प्रदेश	6.85

स्रोत–Indian Mineral Year Book, 2020

ओडिशा– यह भारत देश का सर्वाधिक बाक्साइड उत्पादन करने वाला राज्य है जहां पर देश का 51 प्रतिशत भण्डार तथा 48 प्रतिशत उत्पादन होता है। इस राज्य का कोरापुट तथा कालाहांडी जिला प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है जो आन्ध्र प्रदेश तक विस्तृत है, यह देश का एक वृहद बाक्साइड क्षेत्र है। यहां की खोण्डलाइट श्रेणी की शिलाओं में बाक्साइट का जमाव पाया जाता है। बफलीमाली, चन्दगिरि, कोरालपुर, कुन्नूमाली, कोटिंगमाली, पोट्टंगी प्रमुख खनन क्षेत्र है।

गुजरात– यह भारत देश का दूसरा प्रमुख बाक्साइट उत्पादक राज्य है जहाँ 23 प्रतिशत बाक्साइड का उत्पादन होता है। लखपत, नखराना, माण्डवी, भुज, जामनगर, साबरकांठा, खेड़ा में कपद्धज, सूरत में अरजाई एवं पथरी के

बीच पाया जाता है। वर्तमान समय में यहां कुल 2074098 बाक्साइट का उत्पादन किया गया है।

झारखण्ड– यह भारत देश का चतुर्थ प्रमुख बाक्साइट उत्पादक राज्य है। पलामू जनपद में नेतरहट पठार एवं राँची जनपद में लोहारडागा यहां के प्रमुख बाक्साइट क्षेत्र हैं। राज्य के लोहरडागा और मूरी में ऐलुमिना का संयंत्र लगाया गया है जहां पर कच्ची धातु का परिशोधन किया जाता है।

छत्तीसगढ़– यह देश का तीसरा प्रमुख बाक्साइट उत्पादक राज्य है। रायगढ़, बिलासपुर तथा सरगुजा में फैला अमरकण्टक पठार, दुर्ग एवं रामनन्दगांव जनपद में फैला मैकाल पर्वत राज्य का प्रमुख बाक्साइट क्षेत्र है।

मध्य प्रदेश– यह देश का पंचम बाक्साइट उत्पादक राज्य है। यहां उमरगांव, नान्कू दादर, रक्तीदादर एवं जमुनादादर क्षेत्र शहडोल–माण्डला जनपद के प्रमुख क्षेत्र हैं। यहां का शिवपुरी, कटनी, सतना तथा गुना प्रमुख बाक्साइड जमाव के जनपद हैं।

महाराष्ट्र– बाक्साइट के उत्पादन में इस राज्य का भी महत्वपूर्ण योगदान है। इस राज्य में थाणे, कोबाला, सतारा, रत्नागिरि तथा कोल्हापुर जनपद में बाक्साइट का जमाव पाया जाता है। कोल्हापुर में इदेरगंज, उदगेरी, राधा नगरी तथा धंगरबाड़ी प्रमुख बाक्साइट क्षेत्र हैं।

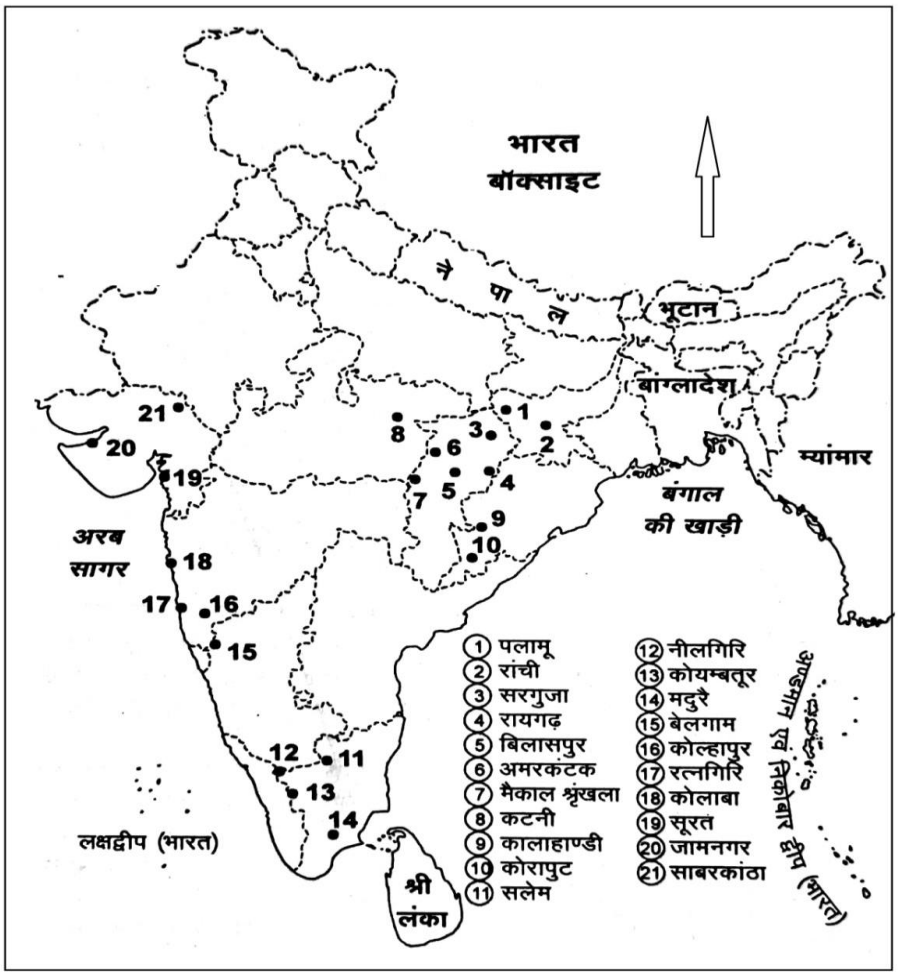

चित्र–1

तमिलनाडु– यहां बाक्साइट का जमाव नीलगिरि पहाड़ियों (ऊटकमण्ड, कर्जन घाटी, कोटागिरि), किल्लाइमलाई पहाड़ियों, मदुरै (पलनी एवं कोडाइकनाल पहाड़ियों) तथा सलेम (शिवराय पहाड़ियों) में पाया जाता है।

कर्नाटक– इस राज्य के दक्षिणी कन्नड़ जनपद के दोद्दहेरा तथा बेलगांव जनपद का उत्तर–पश्चिम के भाग में बाक्साइड का प्रमुख जमाव है। इसके अलावा यहां बाबाबूदान पहाड़ी, केम्मगुंडी, धुपडगिरि और कहटागिरि क्षेत्र में भी पाया जाता है।

उपरोक्त राज्यों के अलावा थोड़ा–बहुत बाक्साइड का जमाव गोवा (क्यूपेम एवं कानकोना), आन्ध्र प्रदेश (विशाखापत्तनम में अनन्तगिरि पठार क्षेत्र), जम्मू कश्मीर के पूछ, ऊधमपुर एवं राजौरी जनपद, उत्तर प्रदेश के बादा, मिर्जापुर प्रयागराज तथा वाराणसी जनपद में पाया जाता है।

भारत में स्वतंत्रता के समय दो एल्युमिनियम संद्रावक कारखाने केरल में अलवाये तथा प0 बंगाल में आसनसोल स्थित थे। बाद में उत्तर प्रदेश में रेनुकूट, तमिलनाडु में मेटूर, उड़ीसा में हीराकुण्ड तथा कर्नाटक में बेलगांव आदि निजी क्षेत्र का कारखाना, सार्वजनिक क्षेत्र का छत्तीसगढ़ में कोरबा, महाराष्ट्र में रत्नगिरि, उड़ीसा में दामनजोडी तथा गुजरात में भुज कारखाना बनाया गया। भारत बाक्साइट का ओमान, संयुक्त अरब अमीरात, चीन तथा कुबैत देशों को थोड़ी–बहुत मात्रा में निर्यात करता है।

9.4 मैग्नीज

यह धारवाड़ शैल क्रम में पाया जाता है। यह लोहे के समान काला तथा कठोर धातु होता है। इसका उपयोग रासायनिक उद्योगों, शीशा उद्योग, चमड़ा उद्योग, चीनी बर्तन को रंगने, फोटोग्राफी में उपयोग किया जाता है। इसके अलावा माचिस तथा शुष्क बैटरी बनाने में इसका उपयोग किया जाता है।

भारत में मैग्नीज का भण्डारण धारवाड़ क्रम की शैलों में पाया जाता है। भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार देश में कुल 497 मिलियन टन मैग्नीज का भण्डार है। यह भण्डार कर्नाटक, ओड़िसा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र एवं गोवा राज्य में संग्रहीत है। इसके अलावा प0 बंगाल, झारखण्ड, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात तथा राजस्थान में छोटे–छोटे जमाव पाया जाता है।

उत्पादन– भारत विश्व में पांच प्रतिशत मैग्नीज का उत्पादन करके छठे स्थान पर आता है। वर्ष 2022–23 में भारत में 28.27 लाख टन मैग्नीज का उत्पादन हुआ। वर्ष 2001–02 से लगातार उत्पादन में वृद्धि हुई है। महाराष्ट्र तथा मध्य प्रदेश मिलकर देश का 60 प्रतिशत मैगनीज का उत्पादन करते हैं।

भारत में मैग्नीज उत्पादन में प्रगति–2020

वर्ष	उत्पादन (टन में)
2018–19	2832314
2019–20	2910186
2020–21	2703313
2021–22	2695991
2022–23	2827231

स्रोत–Indian Mineral Year Book, 2020

देश में मैग्नीज के तीन प्रमुख वितरण क्षेत्र है जो उत्तरी–पूर्वी क्षेत्र, मध्य भारत क्षेत्र तथा प्रायद्वीपीय क्षेत्र है।

मध्य प्रदेश– वर्ष 2020–21 के आंकड़ों के अनुसार यह देश का प्रथम मैग्नीज उत्पादक राज्य है। मैग्नीज का यहां प्रमुख उत्पादन–बालाघाट, छिंदवाड़ा, झाबुआ, जबलपुर, देवास, सिहोर और निमाड़ में होता है। बालाघाट की पहाड़ी 10 किमी0 लम्बी है जिसमें 15 मीटर मोटी मैग्नीज की परत पायी जाती है। इस राज्य के छिंदवाड़ा से सर्वाधिक

मैग्नीज को निकाला जाता है।

महाराष्ट्र– इस राज्य का मैग्नीज उत्पादन में दूसरा स्थान है। यहाँ उच्च कोटि का मैग्नीज पाया जाता है। नागपुर तथा भण्डारा यहां के प्रमुख उत्पादक जनपद है। रत्नागिरि में निम्नकोटि का मैग्नीज पाया जाता है। यहां इसका उपयोग बैटरी तथा रासायन के निर्माण में किया जाता है।

ओडिशा– यह देश का तृतीय मैग्नीज उत्पादक राज्य है तथा भण्डारण में इसका प्रथम स्थान है। यहां सुन्दरगढ़, क्योइमर, कोरापुट, कालाहारी, वोलनगीर, मयुरभंज, कटक, गंजम तथा ढ़ेकानल जनपद में मैग्नीज का जमाव पाया जाता है। यहां की मैग्नीज में फास्फोरस की मात्रा कम तथा लोहा की मात्रा अधिक पायी जाती है। वर्तमान समय में यह भारत का 17.97 प्रतिशत मैग्नीज का उत्पादन करता है।

कर्नाटक– यह मैगनीज के उत्पादन में चतुर्थ तथा भण्डारण में द्वितीय स्थान रखता है। शिमोगा, बेल्लारी, उत्तर कन्नड़, तुमपुर, धारवाड़, बीजापुर, चिकमगलूर, बेलगांव, चित्रदुर्ग यहां के प्रमुख उत्पादन करने वाले जनपद हैं। यहां की अधिकांश खाने निम्न कोटि की हैं।

आन्ध्र प्रदेश– यह राज्य देश का 9 प्रतिशत मैग्नीज का उत्पादन करता है। विशाखापट्टनम श्रीकाकुलम, विजयनगर, कुडप्पा तथा गंटूर यहां के प्रमुख मैग्नीज जमाव वाले जनपद हैं।

गोवा– यहां देश का 7 प्रतिशत मैग्नीज का भण्डार पाया जाता है। जबकि उत्पादन एक प्रतिशत से भी कम पाया जाता है। बारडेर तथा परनेम यहां के प्रमुख उत्पादन वाले जनपद हैं।

झारखण्ड– यहां के बीरमित्रपुर, कलेण्डा, गितिल्पी, तुतुगुटे जो चायवास के निकट का जमाव है वहां अच्छे किस्म का मैग्नीज जबकि बासडेरा, पहाड़पुर एवं गिरगितनौर जो कि सिंहभूमि के निकट का जमाव है वहां पर निम्नकोटि का धातु पाया जाता है। इसके अलावा धनबाद एवं हजारीबाग में भी कुछ जमाव पाया जाता है।

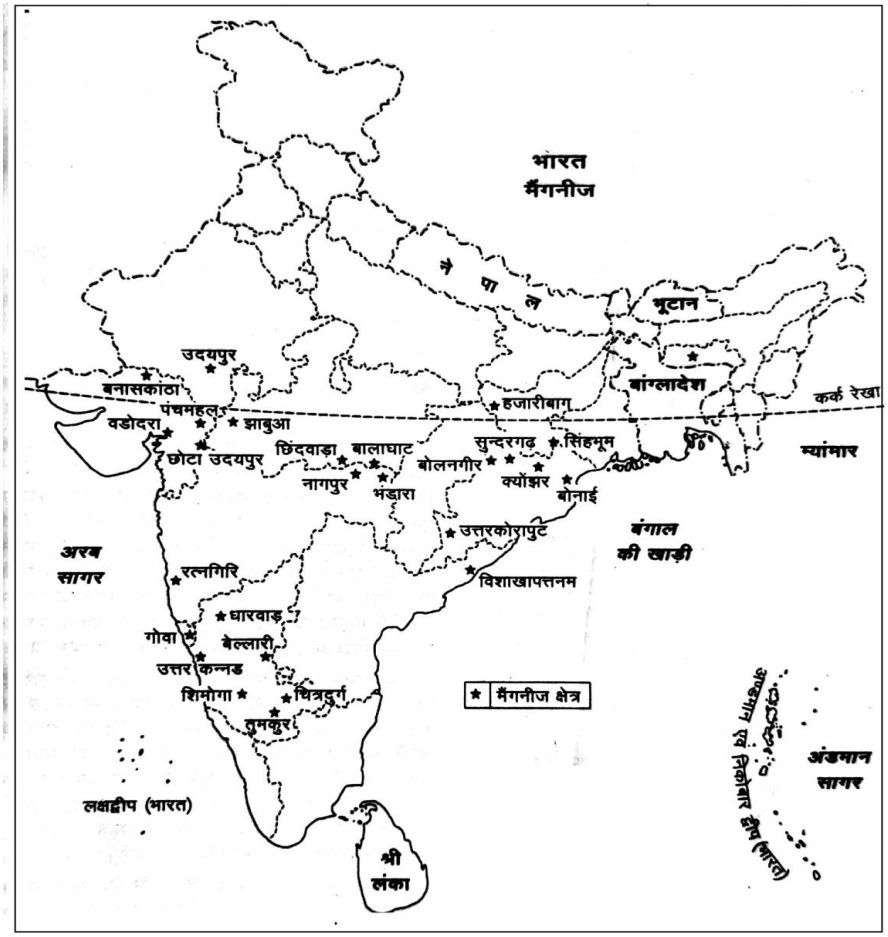

चित्र–2

गुजरात– यहां मैग्नीज का जमाव पंचमहल, बड़ोदरा, साबरकांठा एवं बनासकांठा आदि जनपदों में जमाव पाया जाता है।

उपरोक्त राज्यों के अलावा राजस्थान के बासवाड़ा, उदयपुर एवं पाली जनपदों तथा प0 बंगाल के मेदिनीपुर जनपद में मैग्नीज का जमाव पाया जाता है।

मैग्नीज का व्यापार– देश के कुल उत्पादित मैग्नीज का लगभग 15 प्रतिशत मैग्नीज का निर्यात कर दिया जाता है। भारत के मैग्नीज का द0 अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, ब्राजील एवं मैक्सिको आदि देशों के साथ प्रतिस्पर्धा के कारण निर्यात में गिरावट हुई है। भारत विश्व का छठवां सबसे बड़ा मैग्नीज उत्पादक देश है यहां से बांग्लादेश, जापान, बहरीन, आयरलैण्ड, केन्या, जापान तथा भूटान को मैग्नीज का निर्यात किया जाता है। भारत मैग्नीज का निर्यात मुम्बई, चेन्नई, मरमुगाँव, कोलकाता एवं विशाखापत्तनम बंदरगाह से करता है। मैग्नीज के स्थान पर फेरो मैग्नीज का निर्यात किया जाता है। फेरो मैग्नीज के लिए महाराष्ट्र के कान्हन एवं तुमसर, कर्नाटक के भद्रावती, ओडिशा के रायगड़ा एवं जोदा तथा आन्ध्र प्रदेश के गिरिविदी में संयन्त्र लगाया गया है।

9.5 सारांश

इस इकाई में भारत देश के मैग्नीज तथा बाक्साइट के उत्पादन, वितरण तथा व्यापार का व्याख्या किया गया है जिसमें भारत का विश्व के संदर्भ में उत्पादन तथा भण्डारण की स्थिति का मूल्यांकन किया गया है। भारत में बाक्साइट के अयस्क, बाक्साइट के उत्पादन एवं भण्डारण तथा बाक्साइट के प्रमुख निर्यातक एवं आयातक राज्य का वर्णन किया गया है। भारत में मैग्नीज तथा बाक्साइट के संयन्त्रों, राज्यों में उनके प्रमुख खानों एवं जमाव क्षेत्रों का वर्णन किया गया है।

9.6 शब्द सूची

Manganese- मैग्नीज, Mineral- खनिज, Bauxite- बॉक्साइट, Magnesite– मैग्नेसाइट, Mica- अभ्रक,

9.7 स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. बीरमित्रपुर मैग्नीज की खदान किस राज्य में स्थित है ?

अ–झारखण्ड ब– ओडिशा

स– बिहार द–छत्तीसगढ

2. मैग्नीज का शीर्ष प्रथम उत्पादक राज्य कौन है ?

अ– झारखण्ड ब– छत्तीसगढ

स– मध्य प्रदेश। द– छोटानागपुर पठार

3. भारत में सर्वाधिक बाक्साइट का भण्डार पाया जाता है–

अ–झारखण्ड ब– उड़ीसा

स– छत्तीसगढ़ द– मध्य प्रदेश।

4. मैग्नीज का क्षेत्र बालाघाट–छिंदवाड़ा किस राज्य में स्थित है ?

अ– छत्तीसगढ़ ब– मध्य प्रदेश।

स– झारखण्ड द– मध्य प्रदेश।

5. बाबाबूदान की पहाड़ी किस खनिज के लिए जाना जाता है ?

अ– बॉक्साइट ब– मैग्नीज

स– अभ्रक द–लौह अयस्क।

9.8 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

1. प्रो0 जगदीश सिंह, भारत : भौगोलिक आधार एवं आयाम, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0 सी तिवारी– भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन, प्रयागराज।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
4. प्रो0 काशीनाथ व प्रो0 जगदीश सिंह, आर्थिक भूगोल, ज्ञानादेय प्रकाशन।
5. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल ज्योग्राफी एन0जी0एस0आई0 गोरखपुर।

9.9 अभ्यास प्रश्न (सत्रान्त परीक्षा हेतु)

1. भारत के सन्दर्भ में बॉक्साइट पर टिप्पणी लिखिए।
2. भारत में बॉक्साइट के भण्डारण, उत्पादन एवं वितरण का वर्णन कीजिए।
3. भारत में बॉक्साइट के भण्डारण, उत्पादन एवं वितरण का वर्णन कीजिए।

इकाई–10 पेट्रोलियम, कोयला, जल विद्युत, आण्विक/परमाणु ऊर्जा

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 पेट्रोलियम

10.4 कोयला

10.5 जल विद्युत

10.6 आण्विक ऊर्जा

10.7 सारांश

10.8 शब्द सूची

10.9 स्वमूल्यांकन प्रश्न व आदर्श उत्तर

10.10 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

10.11 अभ्यास प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल की यह 10वीं इकाई है इसमें भारत के महत्वपूर्ण शक्ति के संसाधनों यथा पेट्रोलियम, जल विद्युत ऊर्जा, आण्विक ऊर्जा व कोयला के बारे में पढ़ेंगे तथा आप यह भी जान पायेंगे कि भारत में ये संसाधन किस प्रकार उद्योगों, कारखानों, शहरों, कृषि को, पर्यावरण को समाज को, राजनीति व्यवथा को साथ–साथ अर्थव्यवस्था को प्रभावित करते है। इस इकाई के अध्ययन से हम यह भी सीखेंगे की हमारे देश में इन संसाधनों का वितरण कैसा है तथा ये किस प्रकार क्षेत्रीय असंतुलन पैदा करते है।

इस इकाई के अन्तर्गत आप सबसे पहले शक्ति के ससाधनों के बारे एक सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे उसके इसके अन्तर्गत शामिल प्रत्येक संसाधनों का भारत के सन्दर्भ में उत्पादन, भण्डारण, वितरण व विदेशों से होने वाले व्यापार की बारीकियों को समझेंगे तथा भविष्योन्मुखी नियोजन के भी प्रयास करेंगे। इस इकाई में आप शक्ति के संसाधनों से होने वाली महत्वपूर्ण पर्यावरणीय समस्याओं के बारे में जानेंगे तथा उनके नियोजन के प्रयासों का अवलोकन करेंगे।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के माध्यम से आप–

1. भारत में शक्ति के सांधनों का पर्याय समझ सकेंगे।
2. कोयला शक्ति को समझे सकेंगे।
3. पेट्रोलियम संसाधन की एक विस्तृत रूप रेखा तैयार कर सकेगे।
4. आण्विक ऊर्जा के बारे में वर्तमान व भविष्योन्मुखी परिदृश्य को समझ सकेंगे।
5. जल विद्युत ऊर्जा का भारत में क्या महत्व है इसकी जानकारी प्रस्तुत इकाई के माध्यम से प्राप्त कर सकेंगे।
6. शक्ति के ससाधनों को लेकर के एक वैकल्पिक विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।
7. सम्बन्धित परीक्षोपयोगी प्रश्नों को समझ के आधार पर हल कर सकेगे।

10.3 पेट्रोलियम

पेट्रोलियम ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, यह किसी भी देश के त्वरित आर्थिक विकास के लिये आवश्यक है। यह एक मुख्य ईधन संसाधन है। यह अनेक उद्योगों को स्नेहल व कच्चे पदार्थ की आपूर्ति करता है ये उत्पाद यथा–कृत्रिम रबड़, डीजल, मिट्टी का तेल, पेट्रोल, विमान का ईधन, कृत्रिम रेशा, कार्बन ब्लैक, डाई, खाद्यरंग, द्रव्यरंग, विस्फोटक, छपाई का स्याही, फोटोग्राफी फिल्म, ग्रीस, कास्मेटिक, पेन्ट, ल्यूब्रिकेन्ट ऑयल, पैराफिन तथा मोम आदि। इसीलिए इसे तरल सोना कहा जाता है। आधुनिक समाज हेतु पेट्रोलियम एक बहुमूल्य उपहार है जिसका स्थलीय एवं हवाई परिवहन, ऊर्जा उत्पादन, सामरिक महत्व के कार्यो आदि में उपयोग किया जाता है।

प्राप्ति स्थल

कच्चा पेट्रोलियम लगभग 30 लाख वर्ष पुरानी सागरीय अवसादी शैलो से प्राप्त किया जाता है। भारत में टर्शियरी काल की चट्टनों अपनतियों और भ्रंश ट्रिप्स में पाया जाता है। भारत में पेट्रोलियम सम्भाव्य वाली मेसोजोइक और टर्शियरी शिलाओ का एक विस्तृत क्षेत्र है जो कि 27 बेसिनों में विभाजित है ये बेसिन उपरी असम, पं0 बंगाल, पं0 हिमालय, राजस्थान, कच्छ, उ0 गुजरात, गंगाघाटी, पूर्वीतट, अण्डमान, निकोबार, कैम्बे– बम्बई हाई के अपतटीप भागों में स्थित है।

पेट्रोलियम खोज

भारत में तेल की खोज पहली बार 1860 में असम रेलवे तथा व्यापार कम्पनी द्वारा मार्गेरिटा उपरी असम में की गई। बाद में तेल की खोज डिग्बोई (1889) में हुई। 20 वीं सदी के प्रारम्भ में (1917) तेल की खोज बदरपुर (असम) में हुई। 1954 में तेल का उत्पादन नहरकटिया क्षेत्र में हुआ। तेल तथा प्राकृतिक गैस आयोग की स्थापना 1956 में हुई। तेल तथा प्राकृतिक गैस आयोग की मदद से तेल की खोज खंभात की खाड़ी में 1961 में तथा बाम्बे हाई में 1976 में की गई। भारत में पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस की खोज निम्नलिखित बेसिनों में हुई है– उपरी असम बेसिन, पश्चिमी बंगाल बेसिन, पश्चिमी हिमालय के बेसिन, राजस्थान–सौराष्ट्र–कच्छ बेसिन, उत्तरी गुजरात बेसिन, गंगा घाटी बेसिन, तटीय तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश तथा केरल बेसिन, अंडमान एवं निकोबार तटीय बेसिन खभांत, 'बॉम्बे हाई तथा बेसिन का अपतट।

पेट्रोलियम भण्डार

पेट्रोलियम तथा रसायन मंत्रालय के अनुसार भारत में कच्चे तेल का कुल भण्डार 618.94 मिलियन टन है। इसमें 341.33 MT कच्चा तेल अभितटीय व 277.60 MT अपतटीय क्षेत्र में संचित है। (2018–19)।

देश में कच्चे तेल के संचित तीन प्रमुख क्षेत्र है–

1. जम्मू–कश्मीर से लेकर असम तक हिमालय के समानान्तर तराई मेखला।
2. गंगा, समुलज घाटियों सहित गंगा, महानदी, गोदावरी, कृष्णा एवं कावेरी के डेल्टा क्षेत्र।
3. पश्चिमी तट का मग्नतटीय क्षेत्र, खम्भात की खाड़ी और अरब सागर तथा बंगाल की खाड़ी में स्थित द्वीप।

पेट्रोलियम उत्पादन

विश्व के कुल कच्चे तेल के उत्पादन में भारत का योगदान लगभग 1 प्रतिशत है। कच्चे तेल के शीर्ष 5 उत्पादन क्षेत्र/राज्य क्रमशः अपतटीय (49.31 प्रतिशत), राजस्थान (22.41 प्रतिशत), गुजरात (13.52 प्रतिशत) असम (12.60 प्रतिशत) व तमिलनाडु (1.15 प्रतिशत)

खनिज तेल क्षेत्र

भारत में चार प्रमुख खनिज तेल उत्पादक क्षेत्र है, यथा–

1. ब्रह्मपुत्र घाटी
2. गुजरात तट।
3. पश्चिमी अपतटीय क्षेत्र।

4. पूर्वी अपतटीय क्षेत्र।

1. ब्रह्मपुत्र घाटी

यह देश की सबसे पुरानी तेल पेटी है जो लगभग 1300 किमी0 तक दिहांग घाटी से सूरमा घाटी तक विस्तृत हैं भारत में सर्वप्रथम खनिज तेल का कुंआ उपरी असम के माकूम क्षेत्र में 1867 में खोदा गया। तदोपरान्त डिगबोई में 1889 में तेल कूए की खुदाई की गई। यहां के प्रमुख तेल उत्पादक केन्द्र है– डिगबाई (डिब्रूगढ़), नाहरकटिया, हगरीजन–मोरान, रूद्रसागर–लकवा तथा सुरमा घाटी।

2. गुजरात तट

यह क्षेत्र देश का लगभग 18 प्रतिशत तेल उत्पादन करता है। यहां तेल उत्पादन की दो पेटियां है यथा–

- खम्भात की खाड़ी के पूर्वी तट के सहारे, जहां अंकलेश्वर तथा खम्भात प्रमुख तेल क्षेत्र है।
- खेड़ा से मेहसाना तक (कलोल, सानन्द, नवगांव, कोशाम्बा, ढोलका, ओल्पाद मेहसाना तथा बचार जी प्रमुख तेल क्षेत्र है।
- अंकलेश्वर तेल क्षेत्र भरूच जिले में 30 किमी0 क्षेत्र पर विस्तृत है। अशुद्ध तेल कोयली तथा ट्राम्बे में परिष्कृत किया जाता है।
- खम्भात–लुनेज क्षेत्र, जिसे गान्धार क्षेत्र भी कहते है बडोदरा के पश्चिम में स्थित है।
- अहमदाबाद, कलोल क्षेत्र खम्भात बेसिन के उत्तर में अहमदाबाद के चारो ओर स्थित है।

3. पश्चिमी अपतटीय क्षेत्र

इस क्षेत्र में देश का कुल 39.56 प्रतिशत कच्चा तेल उत्पादित किया जाता है, इसके अन्तर्गत तीन क्षेत्र शामिल है–

- बाम्बे हाई क्षेत्र देश का विशालतम पेट्रोलियम उत्पादक क्षेत्र है। अतिदोहन के कारण इसका उत्पादन निरन्तर घट रहा है।
- राज्यों सर्वाधिक कच्चे तेल का उत्पादन राजस्थान में होता है।
- बेसिन तेल क्षेत्र बाम्बे हाई के दक्षिण–पश्चिम में स्थित है। इस क्षेत्र के तेल भण्डार बाम्बे हाई से अधिक बड़े हैं
- अलिया बेट तेल क्षेत्र भावनगर से 45 किमी0 दूर खम्भात की खाड़ी में स्थित है।

4. पूर्वी अपतटीय क्षेत्र

गोदावरी–कृष्णा नदी बेसिन के अपतटीय एवं अभितटीय दोनों भागों मे तेल पाया जाता है।

- अभितटीय क्षेत्र में इसका विस्तार गोदावरी धाले (आन्ध्रप्रदेश) से लेकर तमिलनाडु के तजांवुर क्षेत्र तक है।
- कृष्णा–गोदावरी अपतटीय बेसिन में स्थित रवा (RAVA) क्षेत्र में तेल प्राप्त हुआ है अन्य तेल क्षेत्र अमलापुर (आन्ध्रप्रदेश) नरीमनम तथा कोइरकरापल्ली (कावेरी बेसिन) में स्थित है। अशुद्ध तेल क्षेत्र चेन्नई के निकट पनाइगुडि में परिष्कृत किया जाता है।
- केयर्न एनर्जी एवं ONGC कम्पनियों द्वारा राजस्थान के बाडमेर जिले में मंगला, भाग्यम, ऐश्वर्य नामक तेल क्षेत्रों की खोज की है।
- दक्षिणी चीन सागर में तेल एवं गैस की खोज हेतु ONGC ने वियतनाम की कम्पनी पेट्रो वियतनाम से समझौता किया था। चीन के विरोध के कारण यह एक अन्तर्राष्ट्रीय मुरदा बना हुआ है।

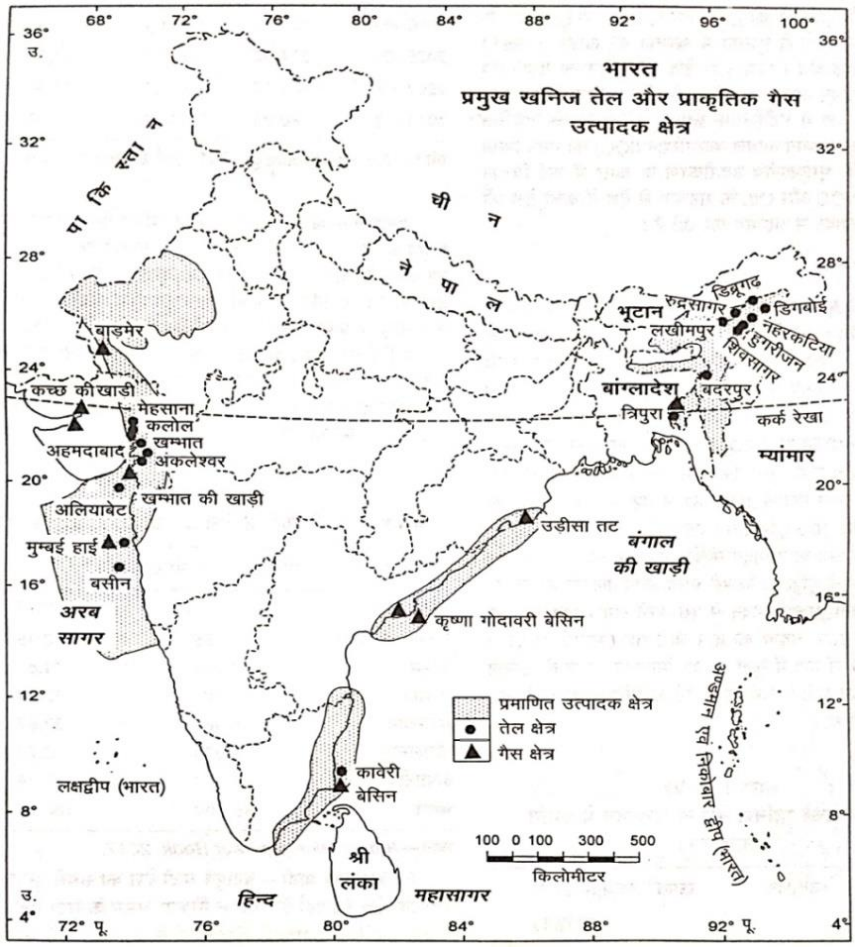

चित्र–1

5. सम्भाव्य क्षेत्र

ये वे क्षेत्र है जहां भविष्य में खनिज तेल पाये जाने की सम्भावना है। ये क्षेत्र है–

अ– मन्नार की खाड़ी में (तिरूनवेल्ली के समीप),।

ब– ज्वाइन्ट कालिमेर एवं जाफना प्रायद्वीप और अवन्तगी–कराईक्कुडि तटो के बीच का अपतटीय क्षेत्र।

स– बंगाल की खाड़ी में (12^0N'– 16_{0}N तथा 84^0E– 86^0E के मध्य स्थित अपतटीय गहरा क्षेत्र),।

द– महानदी, गोदावरी, कृष्णा एवं कावेरी नदियों का सागरीय डेल्टा क्षेत्र।

य– द0 बंगाल एवं बलेश्वर तट तथा 'स्ट्रेच ऑफ नो ग्राउण्ड' के बीच का सागरीय क्षेत्र,।

र– राजस्थान का शुष्क क्षेत्र,।

ल– कश्मीर, पंजाब एवं हरियाणा से पं0 उत्तर प्रदेश तक फैली विस्तृत मेखला।

व– अण्डमान द्वीप समूह के पश्चिम का अपतटीय क्षेत्र। हाल ही में भारत सरकार ने विश्व प्रतिस्पर्धा को आकर्षित करते हुये नई अन्वेषण लाइसें नीति के (NELP) तहत 48 नये तेल क्षेत्रों को तेल की खोज हेतु खोल रखा है।

कच्चे तेल तथा पेट्रोलियम आयात

कच्चे तेल तथा पेट्रोलियम उत्पादों के क्षेत्र में भारत आत्मनिर्भर नहीं है। भारत विश्व में खनिज तेल का चौथा सबसे बड़ा उपभोक्ता है। इसलिए प्रतिवर्ष उसे बड़ी मात्रा में खनिज तेल विदेशों से आयात करना पड़ता है।

तेल शोधन शाला

तेल क्षेत्रों से निकाले गये कच्चे तेल में अनेक अशुद्धियां पाई जाती है। जिन्हें दूर करने के लिए इसका परिष्करण आवश्यक हो जाता है। यह परिष्करण एक जटिल प्रक्रिया है जिसमें भारी निवेश की जरूरत होती है। अप्रैल, 2019 तक देश की तेलशोधन संस्थापित क्षमता 249.36 MT प्रतिवर्ष थी। ज्ञातव्य है कि स्वतंत्रता के समय यह क्षमता 0.25 MT थी। कच्चा तेल शोधन क्षमता में तीव्र गति से हुये विस्तार के चलते देश अब पेट्रोलियम उत्पादो का निर्यातक हो गया है। उल्लेखनीय है कि 1 अप्रैल 2017 तक देश में 23 तेल शोधनशालायें थी जिसमें 18 सार्वजनिक क्षेत्र की, 3 निजी तथा 2 संयुक्त उपक्रम की थी। सार्वजनिक क्षेत्र की 18 तेल शोधन शालाओं में 9 का स्वामित्व IOCL, 2 चेन्नई पेट्रोलियम के पास, 2, BPCL 1 तेल एवं प्राकृतिक गैस लि0, (ONGC) 1 नूमालीगढ़ रिफाइनरीज लि0 के पास, 1 मंगलोर रिफाइनरीप एण्ड पेट्रोकेमिकल लि0 के पास, 2 रिलायंस इंडस्ट्रीज लि0 के पास व 1 एस्सार आयल लि0 के पास तथा संयुक्त क्षेत्र के पास दो का स्वामित्व था।

पाइपलाइन

तेल के कुए से कच्चा तेल तथा तेल–शोध कारखानों से उत्पाद को बाजार तक पहुचाने के लिये सामान्यतः परिवहन पाइपलाइनों द्वारा किया जाता है। तेल तथा पेट्रोलियम का पाइप लाइनो द्वारा परिवहन सस्ता, प्रभावी तथा सुरक्षित माना जाता है। इन लाभों को ध्यान में रखते हुये भारत में पाइप लाइनों का एक जाल विकसित किया गया है। 1 नवम्बर 2016 की स्थिति के अनुसार देश में परिचालित प्राकृतिक गैस पाइपलाइन का कुल नेटवर्क 16240.4 किमी0 है, जबकि निर्माणाधीन गैस पाइप लाइन का नेटवर्क 10258 किमी0 है। ध्यातव्य है, कि हजीरा, विजयपुर, जगदीशपुर–GREP दाहेज, विजयपुर, CHVJ/UDPL 4222 KMS देश की सबसे बड़ी पाइप लाइन है।

कुछ प्रमुख पाइप लाइने निम्न प्रकार है–

1. नाहरकटिया–नूनमटी–बरौनी पाइप लाइन– (1152 किमी0)

यह पाइप लाइन 78 नदियों को पार करती है तथा इस पर कुल 9 पम्पिंग स्टेशन तथा अनेक सहायक पाइप लाइने है–

1. नूनमटी–सिलीगुड़ी पाइप लाइन।
2. लकवा– रूद्रसागर–बरौनी पाइप लाइन (1968)।
3. बरौनी–हल्दिया पाइप लाइन (1966)।
4. दुलिया जान–बोगांई गांव–बरौनी।
5. हल्दिया–मौरी ग्राम–राजबन्ध (1998)।

2. सलाया (कच्छ)– मथुरा– पानीपत (1870किमी0) पाइप लाइन।

3. मुन्द्रा–पानीपत पाइप लाइन (1174 किमी0)।
4. मथुरा–जालंधर पाइप लाइन।
5. गुजरात राज्य की पाइप लाइनें–

- कलोल–साबरमती–पाइप लाइन।
- कोयली–विरामगाय–सिधपुर पाइप लाइन।
- कैम्बे–धुवारन गैस पाइप लाइन।
- अंकलेश्वर–उत्तरान गैस पाइप लाइन।
- अंकलेश्वर–बड़ोदरा गैस पाइप लाइन।

- कोयली–अहमदाबाद प्रोडक्ट्स पाइप लाइन।

6. मुम्बई हाई–मुम्बई– अंकलेश्वर–कोयली पाइप लाइन।
7. मुम्बई–पूणे तथा मुम्बई मनमाड–मागिंला पाइप लाइन।
8. विजाग–विजयवाड़ा–सिंकरदाबाद पाइप लाइन।
9. काण्डला (मेहसाना)– भटिण्डा पाइप लाइन।
10. चेन्नई–त्रिची–मदुरै पाइप लाइन (IOC द्वारा निर्माणाधीन)।

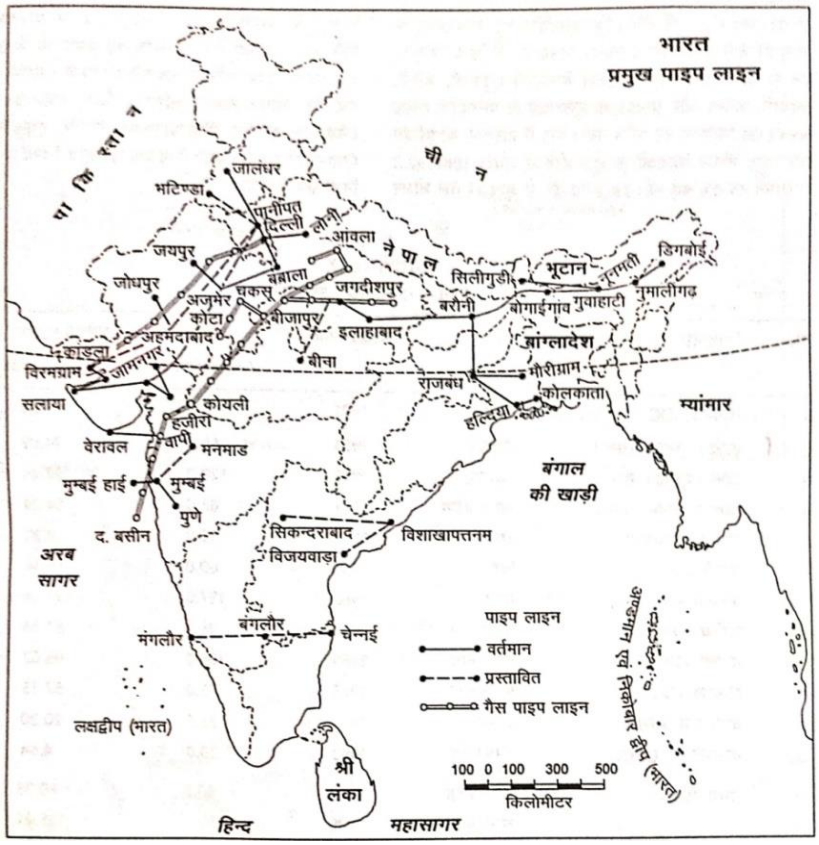

चित्र–2

11. मंगला (राजस्थान)– सलाया–मथुरा हीटिड पाइप लाइन–

वाडमेर से केयर्न इण्डिया और ONGC ने हीटिड तेल पाइप लाइन के द्वारा गुजरात के सलाया तक मोम की अधिक मात्रा वाले कच्चे तेल को पहुचाने में जून 2010 को सफलता प्रापत की थी (विश्व की सबसे लम्बी)।

12. दाभोल–बंगलुरू प्राकृतिक गैस पाइप लाइन

यह पाइपलाइन दायोल (MH) व बंगलुरू (KN) को जोड़ती है।

13. हजीरा– विजयपुर– जगदीशपुर (HVJ) गैस पाइप लाइन (4222किमी0)

यह पश्चिमी तटीय तेल क्षेत्रों का सम्बन्ध देश के आन्तरिक भागों से स्थापित करता है। यह विश्व की सर्वाधिक लम्बी गैस पाइप लाइन है। यह कावस (गुजरात), अन्ता, (राजस्थान) तथा औरया, (UP) के तीन विद्युत स्टेशनों तथा बीजापुर, सवाई माधोपुर, जगदीशपुर, शाहजहांपुर, आँवलातथा बबराला के 6 उर्वरक संयत्रों को प्राकृति गैस प्रदान करते है।

10.4 कोयला

कोयला भारत का मुख्य उर्जा स्रोत है और देश की व्यवसायिक उर्जा की खपत में इसका 67 प्रतिशत योगदान है। कोयले से प्राप्त शक्ति खनिज तेल का दो गुना, प्राकृतिक गैस से पांच गुनी, तथा जल विद्युत शक्ति आठ गुना अधिक होती है। इसकी इसी उपयोगिता कारण इसे काला सोना की उपमा प्रदान की जाती है। कोयले के समस्त उत्पादन का 83.8 प्रतिशत भाग बिजली उत्पादन में खपत होता है।

भारत में कोयले का वर्गीकरण

भारत में पाये जाने वाले कोयले को दो वर्गो में बांटा जाता है–

1. गोंडवाना कोयला

इस प्रकार का कोयला कार्बोनीफरेस काल का कोयला है, जो कि दामोदर, गोदावरी, नर्मदा घाटीयों में पाया जाता है। इस शैल समूह की मुख्य कोयले की खान रानीगंज, झरिया, बोकारो, गिरडीह, चन्द्रपुर, कर्णपुरा, तातापानी, तलचर, हिमगिरी, कोरबा, पेंच घाटी, सरगुजा, साम्पेटी, वर्धा घाटी, श्रृंगरेनी (आन्ध्रप्रदेश) तथा सिंगरौली है।

1. झिनगूर्ढा कोयले के खान (MP) में गोण्डवाना काल के कोयले की सबसे मोटी परत (132 मी0) पायी जाती है।
2. इस काल का कोयला मुख्यतः एन्थ्रेंसाइट व बिटुमिनस प्रकार का है।

2. तृतीयक युग का कोयला

इसे टर्शिपरी युग का कोयला भी कहा जाता है एवं इस काल में पाये जाने वाले कोयला को भूरा कोयला भी कहते है। यह कोयला भारत के कुल कोयला उत्पादन का मात्र 2 प्रतिशत प्रतिनिधित्व करता हैं इस काल में पाये जाने वाले कोयला निम्नकोटि के है।

भारत में कोयले के प्रकार

कार्बन, वाष्प व जल की मात्रा के आधार पर भारतीय कोयला को निम्न चार भागों में बांटा गया है, यथा–

1. एन्थ्रेंसाइट

यह उत्तम किस्म का कोयला होता है जिसमें कार्बन की मात्रा 90 से 95 प्रतिशत पायी जाती है। यह जलते समय धुआ नहीं देता है। इस प्रकार का कोयला जम्मू कश्मीर राज्य से प्राप्त होता है।

2. बिटुमिनस

भारत में पाया जाने वाला कोयला अधिकतम इसी श्रेणी का है जिसमें कार्बन की मात्रा 55 प्रतिशत से 80 प्रतिशत तक पायी जाती है। यह क्षेत्र देश के कुल 11.3 कोयला क्षेत्रों में से 80 कोयला क्षेत्र का प्रतिनिधित्व यही करता हैं अधिकतर बिटुमिनस कोयला झाखण्ड, ओडिशा, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, तथा मध्यप्रदेश में पाये जाते हैं

3. लिग्नाइट कोयला

यह घटिया किस्म का भूरा कोयला हैं इसमें कार्बन की मात्रा 40 प्रतिशत से 55 प्रतिशत तक पायी जाती है। यह कोयला तमिलनाडु,(मन्नारगुडी), राजस्थान, मेघालय, असोम (माकुम), वेल्लारे, दार्जिलिंग (पं0 बंगाल) में मिलता है।

4 पीट कोयला

यह सबसे निम्न कोटि का कोयला होता है, जिसमें आर्दता सर्वाधिक होती है। यह कोयले के निर्माण के पहले चरण को निरूपित करता है।

भण्डारण

कोयले के भण्डारण की दृष्टि से भारत का विश्व में 5 वां स्थान है। भारतीय भू–विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार देश में 1200 मीटर की गहराई तक सुरक्षित कोयले का भण्डार 308.80 बिलियन टन अनुमानित है। (कोकिंग कोल

व नॉन कोकिंग कोल सन्नहित) (1 अप्रैल 2015)। भारत में कोयले के भण्डारण की दृष्टि से शीर्ष पांच राज्य क्रमशः झारखण्ड, ओडिशा, छत्तीसगढ़, पं0 बंगाल व मध्यप्रदेश है। (2019) लिग्नाइट संचित शीर्ष 3 राज्य क्रमश' तमिलनाडु (79.17), राजस्थान (13.81) व गुजरात (5.94) है।

उत्पादन

IMYB–2019 के अनुसार वर्ष 2017–18 के दौरान कोयले का कुल उत्पादन 728.72 मिलियन टन है, जिसका 74.5 प्रतिशत बिजली उत्पादन, 2.36 प्रतिशत स्टील उद्योग, 1.6 प्रतिशत स्पंज आयरन में तथा सीमेंट उद्योग में 1.22 प्रतिशत खपत हुआ। भारत में कोयले के उत्पादन की दृष्टि से शीर्ष पांच राज्य क्रमशः छत्तीसगढ़ (22.22 प्रतिशत), ओडिशा (19.80 प्रतिशत), झारखण्ड (18.48) मध्यप्रदेश (16.28 प्रतिशत) व तेलगांना (8.49 प्रतिशत) है। वही पर लिग्नाइट कोयला उत्पादक शीर्ष तीन राज्य क्रमशः तमिलनाडु, गुजरात व राजस्थान है।

वितरण क्षेत्र

भारत एक कोयला सम्पन्न देश है अर्थात् यह अधिकतम राज्यों में अपने किसी न किसी रूप में पाया जाता है। भारत में कोयला पाये जाने के महत्वपूर्ण क्षेत्र निम्नलिखित है–

1. छत्तीसगढ़

हाल ही में छत्तीसगढ़ कोयला उत्पादन में देश का प्रथम राज्य हो गया हैं इसके प्रमुख खदानों में सरगुजा, बिलासपुर, रायगढ़ जिलो में पाये जाते है। कोरबा कोयला क्षेत्र राज्य का प्रमुख कोयला क्षेत्र है जिसके समीप स्थित ताप गृह संचालित होते है।

2. झारखण्ड

कोयला उत्पादन में तीसरा व भण्डारण में प्रथम स्थान हैं इसके मुख्य कोयला खनन केन्द्र– बोकारो डाल्टनगंज, धनबाद, गिरडीह, हूटर, झरिया, कर्णपुर तथा रामगढ़ है।

3. उड़ीसा

यह देश का दूसरा महत्वपूर्ण कोयला उत्पादक राज्य है। अधिकांश कोयले का जमाव ढेंकानल एवं सम्बलपुर जिलो में स्थित है।

ब्राह्मणी नदी घाटी में स्थित तलचर देश का सबसे प्रमुख कोयला क्षेत्र है।

4. मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश राज्य के प्रमुख कोयला जनन केन्द्र सिंगरौली (सीधी जिला) उमरिया, कोरार, सोहागपुर, जोहिल्ला (शहडोल), मोहापनी–गोतिलोरिया, पेंच–कन्हन–तवा आदि प्रमुख है। सिंगरौली राज्य का सबसे बड़ा कोयला क्षेत्र है जिससे ओबरा के तापग्रह को कोयला की आपूर्ति होती है।

5. तेलंगाना

यहां के कोयला भण्डार गोदावरी नदी घाटी में स्थित हैं सिंगरेनी राज्य का सबसे बड़ा कोयला क्षेत्र है।

6. टर्शियरी कोयला क्षेत्र

इसका मुख्य क्षेत्र राजस्थान, असम, मेघालय, अरूणांचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर और तमिलनाडु है। सम्पूर्ण भारत का 2 प्रतिशत कोयला टर्शियरी युग की चट्टानों से प्राप्त होता है। राजस्थान में लिग्नाइट कोयले का भण्डार पलाना, बरसिंगसर, बियनोक (बीकानेर) कपूरड़ी, जालिप्पा (बाड़मेर) और कसनऊ– इग्यार (नागौर) में है।

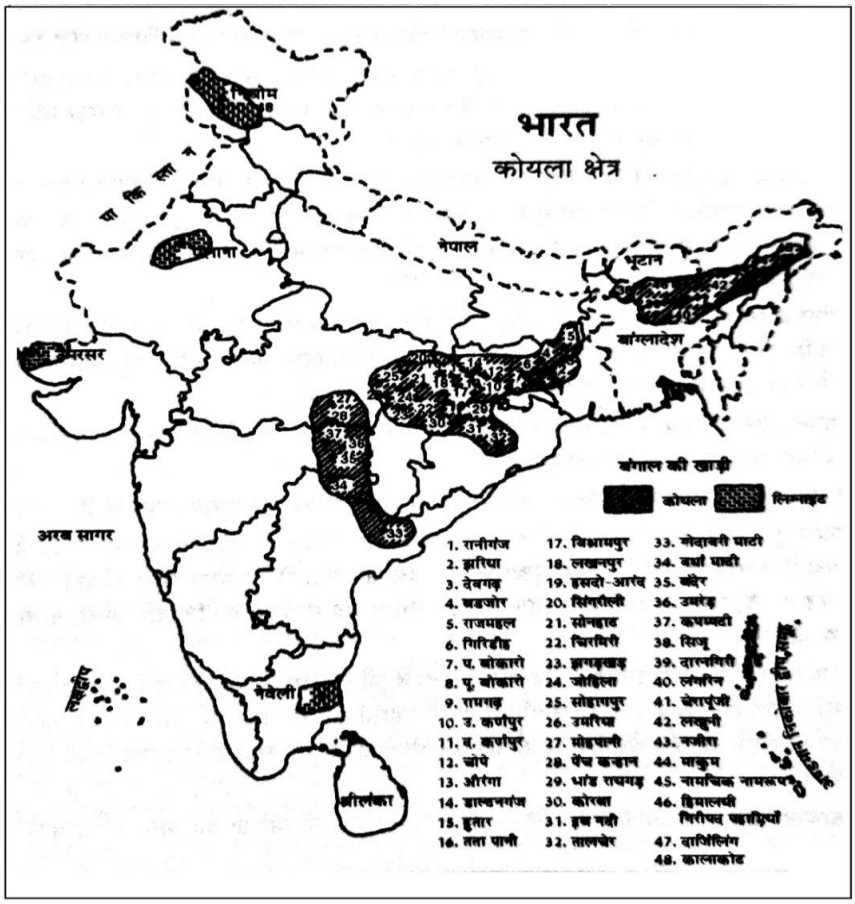

चित्र–3

अन्य क्षेत्र कालाकांड नीचा होम, उमरसार गुजरात, बाहुर (पाण्डिचेरी), बरकला (केरल), माकूम असम नवेली, (TN), नागचिक नाम (अरूणांचल प्रदेश) आदि।

व्यापार

कोयला के क्षेत्र में भारत विश्व का तीसरा बड़ा उत्पादक व पांचवा सबसे बड़ा भण्डारक है। भारत का कोयला घरेलू मांग की पूर्ति के उपरान्त कुछ भाग पड़ोसी देशों (बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, म्यामार और श्रीलंका) को निर्यात कर देता है। विश्व बाजार में कोयले की उंची कीमत होने के कारण इसे जापान यूरोपीय आर्थिक समुदाय और मध्य पूर्व के देशों को भी निर्यात के प्रयास किये जा रहे है। यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि भारत ने 2016–17 में आस्ट्रेलिया, इण्डोनेशिया एवं द0 अफ्रीका से 191 मिलियन टन कोकिंग कोल का आयात भी किया।

10.5 जल विद्युत

जल विद्युत एक नवीकरणीय, पर्यावरण मैत्रीपूर्ण तथा ऊर्जा का संस्ता साधन है। भारत में जल विद्युत का विशाल विभव है। केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण (CEA) द्वारा किये गये अध्ययन के अनुसार देश में जल विद्युत स्थापित क्षमता 45798 मेगावाट (31 जनवरी 2021) है। भारत में प्रथम जल विद्युत संयत्र 1897 में दार्जिलिंग में 130KW क्षमता की स्थापित की गई। इसके बाद 1902 में कावेरी नदी (कर्नाटक) पर शिवसमुद्रम में जल विद्युत केन्द्र स्थापित हुआ। 1975 में जल विद्युत विकास के लिये राष्ट्रीय जल विद्युत निगम (N.H.P.C) की स्थापना की गइ।

जल विद्युत विभव

हिमालय क्षेत्र में देश का लगभग आधा जल शक्ति विभव मौजूद है। यहां अधिक वर्षा, गहरा, हिमाच्छादन, तीवग्रामी सदावाहिनी नदियाँ तथा बांध बनाने के लिये उपयुक्त स्थानों की सुविधाएं प्राप्त है। किन्तु विषम धरातल

तथा उपभोग के केन्द्रों से दूरी होने के कारण जल शक्ति का विकास सीमित ही हुआ है। पश्चिमी घाट एवं प्रायद्वीप का मध्यवर्ती उच्च भूमियों में मध्यम विभव मिलता है। जबकि राजस्थान, गुजरात तथा उत्तरी मैदानों में जल शक्ति का निम्न विभव पाया जाता हैं। शीर्ष पांच जल शक्ति स्थापन क्षमता वाले राज्य क्रमशः कर्नाटक, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब व उत्तराखण्ड है। (CEA : DEC 2019) शीर्ष पांच जल विद्युत उत्पादक राज्य क्रमशः पंजाब, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र व मध्य प्रदेश है। (CEA : DEC 2019) विश्व में जल उत्पादक देश में भारत का सातवां स्थान है, इस कड़ी में शीर्ष से क्रमशः चीन, ब्राजील, कनाड़ा, यू0एस0ए0, रूस, नार्वे है।

देश की प्रमुख जल विद्युत परियोजनाये

1. **केरल**–इदुक्की पनियार, शोलापार, पल्लीवासल, नारिया मंगलम कुटिपाड़ी, सेन्गुलम, पेरिंगल कुथु।
2. **तमिलनाडु**– कुण्डा, मैटूर, पेरियार, कोडियार, शोलियार, पायकारा, अलियार, मोयार, सुरूलियार, सरकारपति, पापानाशम।
3. **गुजरात**– उकाई, नर्मदा घाटी।
4. **मध्य प्रदेश**– गांधी सागर, तवा, इन्दिरा सागर, ओंकारेश्वर।
5. **महाराष्ट्र**– कोयना, टाटा, मीरा, खोपली, शिवपुरी, वैतरणी।
6. **जम्मू–कश्मीर**– निचली झेलम, सलाल, किश्तरवार, बगलिहार, उरी, दुलहस्ती, निम्मो–बाजगो, प्रकलटुल।
7. **हिमांचल प्रदेश**– बसी, बाटा, नाथपा झाकरी, चमेरा, पार्वती, बैरा सिडल अधोभौमिक संजय जल विद्युत परियोजना।
8. **आन्ध्रप्रदेश**–नागार्जुन, सागर, मचकुण्ड, तुगंभद्रा, निजाम सागर, उपरी व निचली सिलेरू, श्री शैलम।
9. **कर्नाटक**– शरावती, काली नदी, जोग, शिवसमुद्रम, मुनिराबाद।
10. **पंजाब–हरियाणा**–भाखड़ा, पोंग, देहर, गंगावाल, कोटला, सनम।
11. **राजस्थान**–राणाप्रताप सागर व जवाहर सागर।
12. **उत्तर प्रदेश**– रिहन्द, चिल्ला, गंगा ग्रिड, माताटीला, यमुना।
13. **बिहार–झारखण्ड**–गण्डक, कोसी, सुवर्णरेखा, मैथान, तिलैया, कोयलकारो।
14. **पश्चिमी बंगाल**–पंचेत हिल, जल ढाका।
15. **ओड़िशा**– हीराकुण्ड, बालिमेला।
16. **असम**–अमियाम, कोपली।
17. **मेघालय**–किरदेम कुलई।
18. **सिक्किम**–तीस्ता।
19. **मणिपुर**– लोकटक।
20. **अरूणांचल प्रदेश**–तवांग व तातो, सुबनसिरी, कामेंग, रंगा, दिबांग सिप्पी।
21. **नागालैण्ड**–दोयांग।
22. **उत्तराखण्ड**– टनकपुर, रामगंगा। कालागढ़ पथरी, धौली गंगा, टेहरी, खटीमा किशऊ।

10.6 परमाणु ऊर्जा

बेहतर मानव कल्याण तथा सतत आर्थिक विकास के लिए ऊर्जा आवश्यक हैं। परमाणु ऊर्जा, लोगों तक स्वच्छ, सस्ती व विश्वसनीय ऊर्जा के वितरण को सुनिश्चित करता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के हानिकारक

प्रभावों को कम किया जा सकता हैं। यह वैश्विक ऊर्जा आपूर्ति का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं तथा आने वाले दशकों में इसका उपयोग बढ़ने की उम्मीद हैं। IAEA (अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा संस्थान) दुनिया भर में मौजूदा और नए परमाणु कार्यक्रमों का समर्थन करके, ऊर्जा, योजना, विश्लेषण और परमाणु सूचना और ज्ञान प्रबन्धन में 'नवाचार और निर्माण' क्षमता को बढ़ावा देकर परमाणु ऊर्जा के कुशल और सुरक्षित उपयोग को बढावा देता हैं। यह एजेंसी देशो के विकास के लिए बढ़ती ऊर्जा की मांग को पूरा करने में मदद करती हैं, जबकि ऊर्जा सुरक्षा में सुधार, पर्यावरण और स्वास्थ्य प्रभावों को कम करने और जलवायु परिवर्तन को कम करने में मदद करती हैं। ऊर्जा के नये स्त्रोतों में नाभिकीय ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्थान हैं। वर्तमान में नाभिकिय ऊर्जा विद्युत उत्पादन हेतु तापीय ऊर्जा, जलविद्युत एवं नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों के उपरान्त चौथा प्रमुख स्त्रोत है।

भारत में परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम की शुरूवात भारत में परमाणु शक्ति के जनक डा0 होमी जहाँगीर भाभा के निर्देशन में परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना (AEC-1948) की गई थी। परमाणु ऊर्जा विभाग की स्थापना (DAE) 1954 में की गयी, उसी वर्ष ट्राम्बे में परमाणु ऊर्जा संस्थान स्थापित किया गया, जिसका नाम बदलकर 1967 में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र (BARC) रखा गया। देश में परमाणु विद्युत गृहों के निर्माण, स्थापना संचालन और देखरेख के लिये भारतीय परमाणु विद्युत निगम (NPCIL) का गठन किया गया।

देश में नाभिकीय विद्युत की स्थापित क्षमता 31 जनवरी, 2021 तक 6780 मेगावॉट (1.9%) थी, जिसे 2032 तक स्थापित क्षमता 27500 मेगावाट करने का सरकार का लक्ष्य हैं। देश में नाभिकीय विद्युत के कुल 22 रियेक्टर वर्तमान हैं जिसमें से 8 विभिन्न केंद्रो पर कार्यरत है, 4 प्लाण्ट निर्माणाधीन हैं व 20600 मेगावॉट के कुल 10 प्लाण्ट प्रस्तावित है। ध्यातव्य है कि कुडनकुलम संयत्र के दूसरे परमाणु ऊर्जा रियेक्टर का परिचालन देश के 22 वें परमाणु ऊर्जा रियेक्टर के रूप में 10 जुलाई 2016 को प्रारम्भ हो गया। इस प्रकार अब देश की कुल स्थापित परमाणु ऊर्जा क्षमता 6780 मेगावॉट हो गई। ज्ञातव्य है कि तमिलनाडु के तिरूनवेली जिले में स्थित 1000 मेगावॉट क्षमता वाला यह संयत्र परियोजना भारत एवं रूस की संयुक्त परियोजना हैं। भारत में परमाणु शक्ति के विकास के लिए अनके अनुसंधान रिएक्टर बनाये गये हैं। इनमें अप्सरा –I (1956), साइरस (1960, जो कि अब बन्द हो गया हैं), जर्लिना (1961), पूर्णिमा–I (1972), पूर्णिमा–II (1984), ध्रुव (1985), कामिनी तथा पूर्णिमा–III (1990) सम्मिलित हैं, भारत में तीन शताब्दी से अधिक समय तक परमाणु ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति के लिये थोरियम के पर्याप्त भण्डार उपलब्ध हैं।

सारणी संख्या– 1

भारत में नाभिकीय ऊर्जा केन्द्र : कार्य भील केन्द्र एवं रियेक्टरों की संख्या

क्रम संख्या	विद्युत गृह	राज्य	रियेक्टर्स व क्षमता	कुल क्षमता (मेगावाट)
1.	कैग्रा	कर्नाटक	220X4	880
2.	काकरापारा	गुजरात	220X2	440
3.	कलपक्कम्	तमिलनाडू	220X2	440
4.	नरौरा	उत्तर प्रदेश	220X2	440
5.	रावतभाटा	राजस्थान	100X1 200X1 220X4	1180 (कनाड़ा के सहयोग)

6.	तारापुर	महाराष्ट्र	160X2 540X2	1400(USA के सहयोग)
7.	कुडनकुलम	तमिलनाडु	1000X2	2000(रूस की सहयोग से
कुल 22 रियेक्टरों का योग 6780 मेगावाट				

भारत में परमाणु विद्युत शक्ति का उत्पादन अमेरिका की सहायता से तारापुर (महाराष्ट्र) में 1969 में स्थापित 320 मेगावाट क्षमता के प्रथम परमाणु शक्ति केन्द्र की स्थापना के साथ प्रारम्भ हुआ (सारणी 11.1)। रावतभाटा (राजस्थान) में कनाडा की सहायता से स्थापित दो दाबित भारी जल रिएक्टरों (PHWRs) ने वाणिज्यिक उत्पादन 1972 व 1980 से प्रारम्भ किया। तदोपरान्त, चेन्नई के निकट कलपक्कम में 220 मेगावाट के दो स्वदेशी रिएक्टर 1984 व 1986 में स्थापित किये गये। इसके पश्चात् 220 मेगावाट के दो अन्य रिएक्टर नरौरा (उत्तर प्रदेश) में 1989 व 1991 में स्थापित किये गये। दाबित भारी जल रिएक्टर की देशी प्राविधिकी से 1992 तथा 1995 में काकरापारा (गुजरात) में 220 मेगावाट क्षमता के दो संयत्रों की स्थापना के साथ ही वाणिज्यिक प्रौढ़ता प्राप्त कर ली। 1999 तथा 2000 में 220 मेगावाट के दो अन्य दूषित भारी जल रिएक्टर कैगा (कर्नाटक) तथा रावतभाटा (राजस्थान) में स्थापित किये गये (सारणी 11.1)।

सारणी– 2

भारत के निर्माणाधीन नाभिकीय संयत्र

राज्य	स्थिति	क्षमता (मेगावाट)
गुजरात	काकरापारा	2X700
राजस्थान	रावत भाटा	2X700
तमिलनाडु	कुडुनकलम	2X1000
		500
हरियाणा	गोरखपुर	2X700

सारणी– 3

23. भारत के नदी अनुमोदित नाभिकीय परियोजनाएँ

राज्य	स्थिति	क्षमता (मेगावाट)
गुजरात	काकरापारा	2X700
राजस्थान	रावत भाटा	2X700
तमिलनाडु	कुडुनकलम	2X1000
		500
हरियाणा	गोरखपुर	2X700

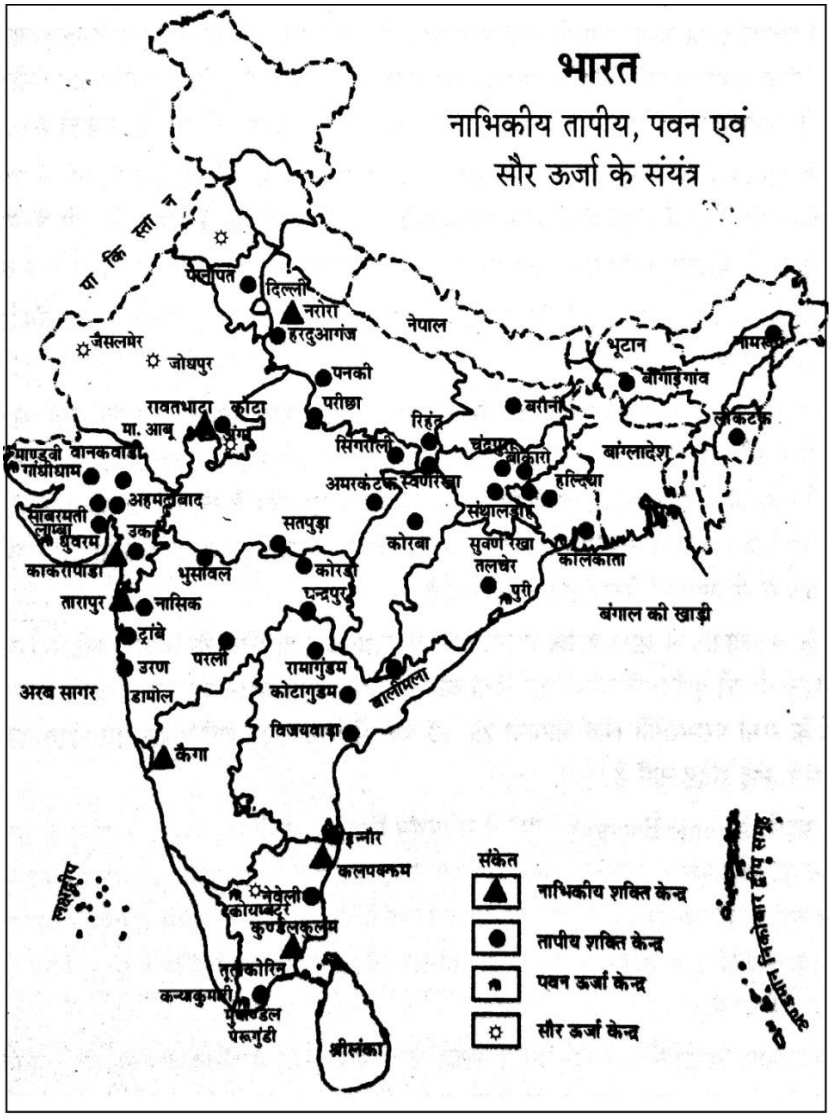

चित्र– 4

सारणी– 4

भारत के अनुमोदित भावी नाभिकीय संयत्र स्थल

राज्य	स्थिति	क्षमता (मेगावाट)	सहयोगी देश
महराष्ट्र	जैतपुर	6X1650	फ्रांस
आन्ध्र प्रदेश	कोवाडा	6X1208	USA
गुजरात	मीठी पिंडी	8X1000	USA
पं0 बंगाल	हरिपुर	6X1000	रूस
म0प्र0	भीमपुर	4X700	स्वदेशी PHWR

भारी जल

देश में कुल आठ भारी जल के संयत्र थे जिसमें नागंल (1961, पंजाब), बड़ोदरा (1980, गुजरात), तुतीकोरन (1987, तमिलनाडु), कोटा (1985, राजस्थान), तलचर (1985, उड़ीसा), थाल (1987, महाराष्ट्र), हाजिरा (1991, गुजरात) एवं मानुगुरू (1991, तेलंगाना) में स्थापित व सक्रिय थे। वर्तमान समय में कुल 7 संयत्र सक्रिय व क्रियाशील हैं, क्योकि नांगल (1961, पंजाब) भारी जल संयत्र को 2002 में बन्द कर दिया गया। भारी जल का प्रयोग दाबित भारी जल रियेक्टरों (PHWRs) में मॉडरेटर तथा कूलैन्ट के रूप में होता हैं। हाल ही में भारत ने कोरियाई गणतन्त्र को 100 टन भारी जल का निर्यात भी किया हैं। देश में परमाणु ऊर्जा विभाग(DAE) के चार शोध केन्द्र ट्राम्बे (BARC), कलपक्कम (IGCAR), इन्दौर (CAT) और कोलकाता (VECC) में कार्य कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त उच्च तुगंता की शोध प्रयोगशाला गुलमर्ग , न्यूक्लीय शोध प्रयोगशाला श्रीनगर और भूकम्पीय स्टेशन गौरी बिदनूर (कर्नाटक) में स्थापित किये गये हैं। इन केन्द्रो में परमाणु ऊर्जा, फास्ट ब्रीडर प्रौद्योगिकी, लेजर, ऐसी लरेटर, क्रायोजेनिक, सुपरकंडक्टिविटी एवं अल्ट्रा हाई वैल्यूम आदि क्षेत्रों में महत्वपूर्ण शोध किये जा रहे हैं।

10.7 सारांश

संक्षेप में हम कह सकते है कि शक्ति के साधन किसी भी देश के गतिशील होने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इनके बिना कोई देश प्रगति नहीं कर सकता। इस इकाई के माध्यम से आपने यह भी देखा कि पेट्रोलियम व प्राकृतिक गैस एक दूसरे के पूरक होते है। ये पाये भी साथ ही में जाते हैं हमने यह भी देखा कि हरित ऊर्जा के क्षेत्र में जलविद्युत ऊर्जा की भूमिका भारत के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण हो रही है। आये दिन नई जलविद्युत परियोजनाओं का विकास हो रहा है जो कि हमारे देश की हरित ऊर्जा में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका स्पष्ट कर रहे है। हम कोयला, पेट्रोलियम, जलविद्युत ऊर्जा व आण्विक के उत्पादन, भण्डारण, वितरण व व्यापार के बारे में विस्तृत से जानकारी प्राप्त किए।

10.8 शब्द सूची

Water potential- जल सम्भाव्यता, Hydro electric- जल विद्युत, Petro chemicals- पेट्रो रसायन, Inddustrial cluster- औद्योगिक गुच्छ, Off Shore- अपतटीय, Leather inddustry- चमडा उद्योग, Cotton texile inddustry- सूती वस्त्र उद्योग, Fossil fuel- जीवाश्म ईधन, Silk texile- रेशमी वस्त्र उद्योग, Mica- अभ्रक, Coal washery- कोयला शोधन

10.9 स्वमूल्यांकन प्रश्न व आदर्श उत्तर

1. कोइलकारी जल विद्युत परियोजना निम्नलिखित में से किस राज्य में है–
   (अ) उत्तराखण्ड (ब) हिमांचल प्रदेश
   (स) झारखण्ड (द) तमिलनाडु
2. कैथर्न एनर्जी का मुख्यालय है–
   (अ) स्काटलैण्ड (ब) ब्राजील में
   (स) दक्षिण कोरिया (द) U.S.A.में
3. नवग्राम तेल क्षेत्र स्थित है।
   (अ) झारखण्ड में (ब) हिमांचल प्रदेश
   (स) असम (द) तमिलनाडु
4. नूनमाटी का तेल शोधनशाला का कारखाना कहा अवस्थित है।
   (अ) बिहार (ब) असम
   (स) गुजरात (द) तमिलनाडु

5. भारत में सर्वप्रथम तेल/ऊर्जा संकट कब हुआ।

(अ) 1950, 1960 (ब) 1930, 1940

(स) 1990, 2000 (द) 1970,1980

6. भारत में अधिकांश प्राकृतिक गैस का उत्पादन निम्न में से कहा किया जाता है।

(अ) आन्ध्र प्रदेश तट (ब) गुजरात तट

(स) मुम्बई हाई से (द) तमिलनाडु तट से

7. काकरापारा परमाणु शक्ति केन्द्र किस राज्य में स्थित हैं–

(अ) राजस्थान (ब) तमिलनाडु

(स) गुजरात (द) केरल

8. तमिलनाडू के कुडनकुलम में यह परमाणु रिएक्टर्स की कितनी इकाइयां लगाने हेतु राजी हुआ हैं?

(अ) 02 (ब) 05

(स) 04 (द) 06

9. भारत में कुल उत्पादित विद्युत में परमाणु शक्ति का भाग हैं लगभग–

(अ) 4% (ब) 2%

(स) 1% (द) 5%

10. हरितऊर्जा से संबंधित हैं।

(अ) कोयला (ब) पेट्रोलियम

(स) जीवाश्म ईंधन (द) जल विद्युत

11. राष्ट्रीय ऊर्जा संरक्षण दिवस कब मनाया जाता हैं–

(अ) 12 दिसंबर (ब) 14 दिसंबर

(स) 13 दिसंबर (द) 15 दिसंबर

आदर्श उत्तर 1–(ब), 2–(अ), 3–(द) 4–(ब), 5–(द), 6–(स) 7. (स) ,8. (अ) ,9. (ब) ,10. (द) ,11. (ब)

10.10 उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

1. प्रो.आर.सी. तिवारी, भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन।
2. डॉ. अलका गौतम, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन प्रयागराज।
3. प्रोफेसर माजिद हुसैन भारत का भूगोल, मैग्रा हिल।
4. Jagdish Singh, IndiaA ComprehensiveAnd systematic Geography. Gyanodaya Publication Grokhpur.
5. Singh R.L. – IndiaA Regional Geography, N.G.S.I. Grokhpur
6. Nag, P.And Sengupta, S Geography , New Delhi.
7. Ford Foundation (1959) Report on Indian's Food crisisAnd step to meet It New Delhi : Ministry of

foodAndAgricultureAnd Ministry of community Developement.

10.11 अभ्यास प्रश्न

1. भारत में पेट्रोलियाम उत्पादन एवं वितरण की विस्तृत चर्चा कीजिए।
2. विश्व के सन्दर्भ में भारत में जलविद्युत ऊर्जा की स्थिति को स्पष्ट कीजिए।
3. भारत में पायी जानी वाली प्रमुख जल विद्युत परियोजनाओं का राज्यवार वर्णन प्रस्तुत कीजिये।
4. भारत में प्रमुख पेट्रोलियम उत्पादन क्षेत्रों की समीक्षा कीजिए।
5. पर्यावरणीय दृष्टि से जल विद्युत ऊर्जा का क्या महत्व है, स्पष्ट कीजिए।
6. प्रमुख पेट्रोलियम उत्पादों की एक सारणी बनाइये।

इकाई–11 जनसंख्या वृद्धि एवं जनसंख्या विस्फोट, जनसंख्या वितरण तथा उसको प्रभावित करने वाले कारक

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 जनसंख्या वृद्धि

11.4 जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक

11.5 जनसंख्या वितरण

11.6 जनसंख्या वितरण एवं घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक

11.7 सारांश

11.8 शब्द सूची

11.9 परीक्षोपयोगी प्रश्न

11.10 महत्वनपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ

11.11 अभ्यास प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल के इस इकाई के अन्तर्गत आप जनसंख्या वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक, जनसंख्या वितरण, जनसंख्या वितरण एवं घनत्व को प्रभावित करने वाले कारकों आदि का अध्ययन करेंगे। जनसंख्या वृद्धि के अन्तर्गत जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति, जनसंख्या वृद्धि का वितरण, जनसंख्या वृद्धि के वर्ग, जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप, जनसंख्या वितरण, जनसंख्या वितरण की असमानता, जनसंख्या घनत्व, जसंख्या घनत्व का वर्ग, जनसंख्या घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक, जनसंख्या घनत्व का देश में वितरण को आप समझ पायेंगे। इसके अलावा जनंसख्या वृद्धि का सामाजिक–आर्थिक उत्थान में बांधा, जनसंख्या के कारण खाद्यान्न संकट, सघन नगरीय क्षेत्र में पर्यावरण पर प्रभाव, तथा लोगों का रहन–सहन का स्तर आदि को भी समझ पायेंगे।

11.2 उद्देश्य

भारत भूगोल के इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप–

- जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति तथा उसका वितरण समझ सकेंगे।
- जनसंख्या वृद्धि के स्तर को समझ सकेंगे।
- जनसंख्या वितरण तथा उसको प्रभावित करने वाले प्रमुख कारणों को समझ सकेंगे।
- जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप को समझ सकेंगे।
- जनसंख्या विस्फोट को समझ सकेंगे।

11.3 भारत में जनसंख्या वृद्धि

भारतीय जनसंख्या की विशेषताओं में एक मुख्य विशेषता इसकी तीव्र वृद्धि दर भी है। भारत की जनसंख्या वृद्धि औसतन प्रतिवर्ष 1.64 प्रतिशत है। यद्यपि विश्व की जनसंख्या, जनसंख्या वृद्धि 1.8 प्रतिशत प्रति वर्ष है। भारत

की जनसंख्या वृद्धि से कम चीन की वृद्धि वर्तमान में है। चीन की जनसंख्या वृद्धि दर 1.3 प्रतिशत है। प्रथम जनगणना के समय भारत की जनसंख्या 20.3 करोड़ थी, प्रथम जनगणना वर्ष 1871 में हुई थी। 1871 से लेकर 1901 तक जनसंख्या वृद्धि की दर बहुत मंद गति से बढ़ रही थी, जो 1871 से 1901 के मध्य केवल 3.3 करोड़ की वृद्धि हुई। इसका प्रमुख कारण दुर्भिक्ष एवं महामारी के परिणामस्वरूप उच्च मृत्यु दर थी।

20वीं सदी के दौरान बढ़ रही जनसंख्या वृद्धि को 4 चरणों में बांटा जा सकता है–

a) मन्द वृद्धि–

देश में 1901 से 1921 के बीच जनसंख्या अति धीमी गति (0.27 प्रतिशत/वर्ष) में बढ़ी है जो 23.84 करोड़ से बढ़कर 25.13 करोड़ हो गयी। भारत में 1911 से 1921 के दौरान इन्फ्लुएन्जा महामारी तथा सूखे के कारण जनसंख्या वृद्धि में कमी पायी गई।

b) स्थिर वृद्धि–

1921 से 1951 के मध्य औसत जनसंख्या वृद्धि 1.45 प्रतिशत प्रति वर्ष थी जो 25.13 करोड़ से बढ़कर 36. 11 करोड़ हो गई। वर्ष 1921 को जनांकिकीय विभाजक वर्ष कहा जाता है। यह जनसंख्या वृद्धि दर महामारी, अकाल पर नियंत्रण तथा स्वास्थ्य सुविधा में सुधार का परिणाम है। मृत्यु दर को 47 प्रति हजार से घटकर 27 प्रति हजार हो जाने के कारण है।

c) तीव्र वृद्धि–

1951 से 1981 के बीच जनसंख्या वृद्धि का औसत दर 2.2 प्रतिशत की रही है। वर्ष 1961 से 1971 के मध्य 24.8 प्रतिशत की सर्वाधिक जनसंख्या वृद्धि देखी गई। 1961 से 1971 के मध्य औसत वार्षिक घातीय वृद्धि दर 2.22 प्रतिशत दर्ज की गयी जो वर्ष 1971–81 में घटकर 2.20 प्रतिशत रह गई। जनसंख्या में यह वृद्धि चिकित्सा क्षेत्र में सुधार तथा विकास कार्य में तेजी के कारण हुई। इस दौरान मृत्यु दर 27 प्रति हजार से 15 प्रति हजार हो गयी जिसका परिणाम उच्च जनसंख्या वृद्धि के रूप में देखा जा सकता है।

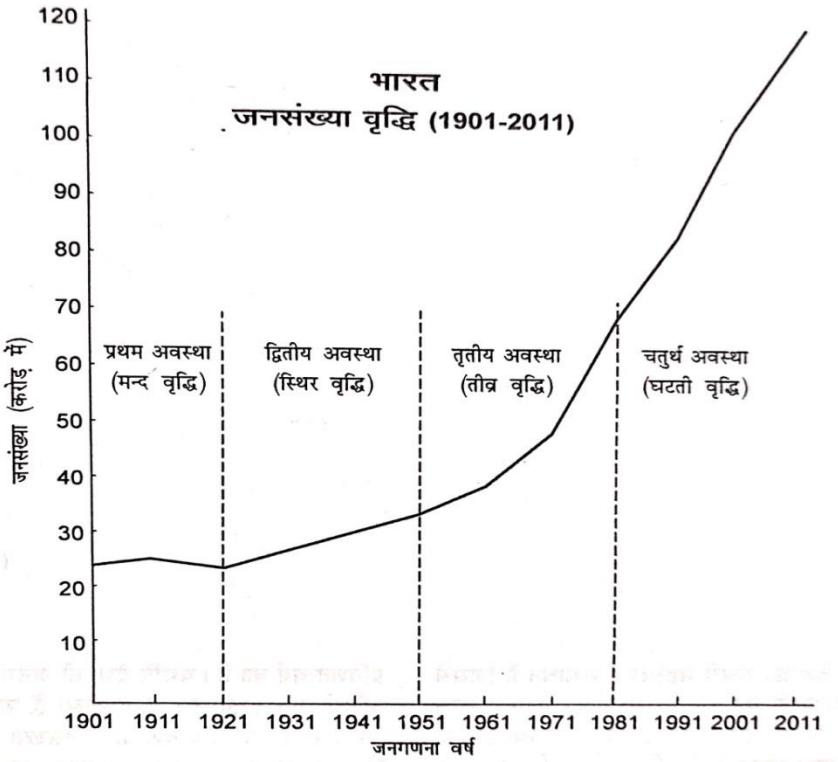

चित्र 1

d) घटती वृद्धि–

वर्ष 1981 से 2011 के मध्य जनसंख्या वृद्धि में क्रमिक ह्रास देखा गया है लेकिन जनसंख्या में उच्च वृद्धि की प्रवृत्ति अब भी जारी है। इस समय जनसंख्या की औसत वार्षिक घातीय वृद्धि घटकर 1.63 (2001–2011) हो गई। इस बीच जन्म दर भी 38 प्रति हजार (1981) से घटकर 23 प्रति हजार (2008) और मृत्यु दर 15 से घटकर 7 प्रति हजार हो गई। जनसंख्या घटने की यह प्रवृत्ति लोगों द्वारा परिवार नियोजन अभिमुख का परिणाम है।

भारत में 30 प्रतिशत जनसंख्या की उम्र 15 वर्ष से कम है। यह वर्तमान में उच्च निर्भरता अनुपात के अलावा तीव्र जनसंख्या वृद्धि का संकेत भी है। दूसरा प्रमुख वर्ग युवा जनसंख्या का है जिसका वर्तमान उच्च वृद्धि में उल्लेखनीय योगदान है। उच्च वृद्धि के ही कारण देश के आर्थिक तथा सामाजिक विकास के कार्यक्रम आशानुकूल प्रभाव नहीं डाल पा रहे हैं।

1. जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप–

देश के विभिन्ना क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि दर में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार दादर एवं नगर हवेली (55.88 प्रतिशत) सर्वाधिक जनसंख्या वृद्धि दर्ज किया तथा नागालैण्ड (–0.58 प्रतिशत) राज्य सबसे कम दर्ज किया है। देश में 14 राज्य तथा 4 केन्द्र शासित प्रदेश ऐसे हैं जिनकी जनसंख्या वृद्धि राष्ट्रीय औसत (17.69 प्रतिशत) से अधिक है। देश में उच्च जनसंख्या वृद्धि वाले राज्य देश के उत्तर मध्य भाग में स्थित है। जबकि असम घाटी, पूर्वी तटीय तथा महाराष्ट्र के भागों में जनसंख्या वृद्धि दर धीमी रही है। सामान्य स्थिति में उच्च साक्षरता, अधिक सामाजिक आर्थिक–विकास का जन्म दर नियन्त्रण में सकारात्मक रोल होता है। जिसका प्रभाव धीमी वृद्धि दर के रूप में देखा जाता है।

वर्ष 1991 से 2001 और वर्तमान 2001 से 2011 के दशकों के दौरान जनसंख्या वृद्धि के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है कि जनसंख्या वृद्धि में घटाव हुआ है। जनसंख्या वृद्धि का सर्वाधिक घटाव नागालैण्ड (65 प्रतिशत) और सबसे कम घटाव झारखण्ड (0.94 प्रतिशत) में देखा गया है। पिछले दो दशकों के बीच धनात्मक वृद्धि प्राप्त करने वाले राज्यों का परिसर (तमिलनाडु) 3.89 प्रतिशत से (पुडुचेरी) 7.46 प्रतिशत के बीच पाया गया है।

ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों के बीच जनसंख्या वृद्धि की दर में भी पर्याप्त विस्तार पाया जाता है। ग्रामीण क्षेत्र की अपेक्षा शहरी क्षेत्र में वृद्धि दर अधिक पाया जाता है। देश में अरुणाचल प्रदेश तथा दादरा और नगर हवेली नगरीय जनसंख्या अधिक बढ़ी तथा केरल में सबसे कम दर्ज की गई। इसी तरह सबसे अधिक ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि नागालैण्ड में (63.37 प्रतिशत) और सबसे कम केरल (10.05 प्रतिशत) एवं दिल्ली (1.5 प्रतिशत) दर्ज की गई है। गोवा तथा तमिलनाडु में ग्रामीण वृद्धि दर ऋणात्मक रही है।

2. भविष्य में भारत की जनसंख्या–

भविष्य में भारत की जनसंख्या का अनुमान विभिन्न विद्वानों एवं संस्थानों द्वारा लगाया गया है। वाशिंगटन डी0 सी0 की पापुलेशन संदर्भित ब्यूरो (1992) का अनुमान है कि भारत कि जनसंख्या 2030 तक 150 करोंड, World Development Report (1990) का अनुमान 2025 तक 135 करोंड तथा Human Development Report (2000) का अनुमान 2015 तक 121.17 करोंड हो जायेगी।

11.4 जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित करने वाले कारक

किसी देश में जन्मदर, मृत्युदर व स्थानान्तरण को नियन्त्रित करना जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करना हैं इन तीनों तत्वों को प्रभावित करके जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित किया जा सकता है। इनको प्रभावित करने वाले कारक अग्रलिखित हैं–

1. जन्मदर को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक–

इसको प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में जनांकिकीय, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा जैविक कारक है। इनमें विवाह की आयु, उर्वरता, विवाह की अवधि तथा यौन सम्पर्क का स्वभाव आदि कारक जन्मदर पर प्रभाव डालते हैं।

2. मृत्युदर को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक–

जन्मदर की भांति मृत्युदर को भी जनांकिकीय, सामाजिक, आर्थिक कारकों के साथ–साथ अनेक मानव जनित एवं प्राकृतिक जनित आपदायें प्रभावित करती हैं। आयु यौन संरचना, जीवन प्रत्याशा, गर्भधारण करने की क्षमता, गर्भधारण करने की आयु, शिशु भ्रूण हत्या, दहेज कुप्रथा, आवास, पोषण तथा स्वच्छता आदि की मृत्युदर को नियंत्रित करते है।

3. जनसंख्या का स्थानान्तरण–

जनसंख्या का स्थानान्तरण भी जनसंख्या वृद्धि दर प्रभाव डालता है। जिन क्षेत्रों में जनसंख्या का उत्प्रवास या बर्हिप्रवास होता है। वहां पर जनसंख्या वृद्धि दर पर ऋणात्मक प्रभाव पड़ता है। जबकि जिन क्षेत्रों में अन्य क्षेत्रों से अप्रवास होता है वहां जनसंख्या वृद्धि दर धनात्मक रूप से प्रभावित होती है।

बाल जनसंख्या–

0 से 6 आयु समूह की बाल जनसंख्या के आंकड़ों का प्राथमिक आशय साक्षरता दर की गणना करना है, जिसे 7 वर्ष या उससे अधिक आयु की जनसंख्या की गणना करके निकाला जाता है। हालांकि, आंकड़े जनसंख्या वृद्धि से सम्बद्ध संभव व्यापक विश्लेषण हेतु हमें क्षमतावान बनाते हैं। यह सुरक्षित ढंग से माना जा सकता है कि इस वर्ग की जनसंख्या अंतरराज्यीय प्रवासन से बेहद कम प्रभावित होती है। 0–6 आयु समूह की जनसंख्या 2001 के लगभग 163.8 मिलियन की तुलना में 2011 में 164.5 मिलियन थी। इसमें, 121.3 मिलियन ग्रामीण क्षेत्रों में और 43.2 मिलियन शहरी क्षेत्रों में थे। बाल जनसंख्या 2001–2011 के दौरान 0.7 मिलियन बढ़ी है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में 5.2 मिलियन की कमी और शहरी क्षेत्रों में 5.9 की बढ़ोतरी दर्ज की गई है। कुल जनसंख्या में बाल जनसंख्या का प्रतिशत 2001 में 15.9 प्रतिशत था, जो 2011 में घटकर 13.6 प्रतिशत हो गया है। जम्मू–कश्मीर, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम एवं मेघालय में कुल जनसंख्या में बाल जनसंख्या का प्रतिशत 15 प्रतिशत है जबकि हिमाचल प्रदेश एवं पश्चिम बंगाल में यह अनुपात 9.5 प्रतिशत है। सिक्किम एवं त्रिपुरा अन्य राज्य हैं जिनका कुल जनसंख्या में बाल जनसंख्या का अनुपात 10 प्रतिशत से कम है।

जम्मू–कश्मीर ऐसा राज्य है, जिसने अपवाद के तौर पर कुल जनसंख्या में बाल जनसंख्या में 1.5 प्रतिशत तक की वृद्धि दर्ज की है, और नागालैंड में 0.1 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। बाकी अन्य राज्यों और संघ प्रदेशों में बाल जनसंख्या अनुपात में गिरावट दर्ज की गई है।

11.5 जनसंख्या वितरण

भारत की जनसंख्या की विशेषताओं में एक प्रमुख विशेषता उसका असमान वितरण भी है। देश के पांच जनसंख्या बहुल राज्यों के 30 प्रतिशत क्षेत्र पर देश की लगभग 50 प्रतिशत जनंसख्या केन्द्रित है जबकि उत्तर एवं उत्तर पूर्व के राज्यों के 16 प्रतिशत भाग में देश की 4 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या निवास करती है। इसी भांति देश की एक प्रतिशत से अधिक जनसंख्या वाले 18 राज्यों में समूचे भारत की 97 प्रतिशत जनसंख्या पायी जाती है।

1. जनसंख्या घनत्व–

भूमि पर जनसंख्या के दबाव को जनसंख्या घनत्व कहते हैं। वर्ष 1901 में भारत का जनसंख्या घनत्व 77 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी था जो वर्ष 2011 में बढ़कर 382 हो गया। भारत के राज्यों में जनसंख्या घनत्व में काफी अन्तर पाया जाता है। बिहार में सबसे अधिक जनसंख्या घनत्व (1106 व्यक्ति/वर्ग किमी0) तथा सबसे कम अरूणाचंल प्रदेश जनसंख्या घनत्व (17 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0) पायी जाती है। भारत के 10 राज्यों तथा 6 केन्द्र शासित प्रदेशों में जनसंख्या घनत्व राष्ट्रीय औसत (382 व्यक्ति/वर्ग किमी0) से अधिक पाया जाता है। देश के सर्वाधिक घने बसे राज्यों में बिहार (1106 व्यक्ति/वर्ग किमी0) पश्चिम बंगाल (1028) तथा केरल (860) शामिल है इसके विपरीत अरुणाचल, मिजोरम, सिक्किम तथा मणिपुर में जनसंख्या घनत्व 125 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 से कम पाया जाता है। ये राज्य मुख्यतः अनुपजाऊ तथा पहाड़ी हैं। औसत घनत्व के आधार पर देश की जनसंख्या घनत्व को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है–

(क) निम्न घनत्व–

इस वर्ग में जनसंख्या घनत्व 200 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी0 से कम पायी जाती है जिससे देश की 10 राज्य

एवं एक केन्द्रशासित प्रदेश शामिल है जो रेगिस्तानी, बीहड़, पहाड़ी, वनाच्छादित, दलदली और कटाव ग्रस्त क्षेत्रों में स्थित हैं। इसमें पश्चिमी राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ का क्षेत्र, उड़ीसा का कुछ क्षेत्र, पूर्वी कर्नाटक, जम्मू कश्मीर, आन्ध्र प्रदेश का मध्यवर्ती भाग, हिमाचल प्रदेश, मणिपुर का पहाड़ी वाला भाग, मिजोरम, नागालैण्ड, मेघालय, उत्तराखण्ड, सिक्किम तथा अरुणाचल प्रदेश शामिल है।

(ख) मध्यम घनत्व–

इस वर्ग में 200–400 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 पाये जाते हैं जिसमें 10 राज्य शामिल है। इसका विस्तार गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु के कुछ भाग में, कर्नाटक के दक्षिणी भाग में, तेलंगाना, रायल सीमा तथा तटवर्ती आन्ध्र प्रदेश में है। इन क्षेत्रों में अनुपजाऊ भूमि, सिंचाई साधनों का अभाव तथा विषम धरातलीय क्षेत्र पाये जाते है। इन क्षेत्रों में औद्योगीकीय तथा नगरीकरण के कारण जनसंख्या घनत्व में सकारात्मक परिवर्तन हुआ है। इसके अलावा पंजाब, हरियाणा तथा राजस्थान के कुछ भागों में मध्यम घनत्व पाया जाता है। जहां सिंचाई का विकास जनसंख्या घनत्व में विशेष योगदान करता है।

(ग) उच्च घनत्व–

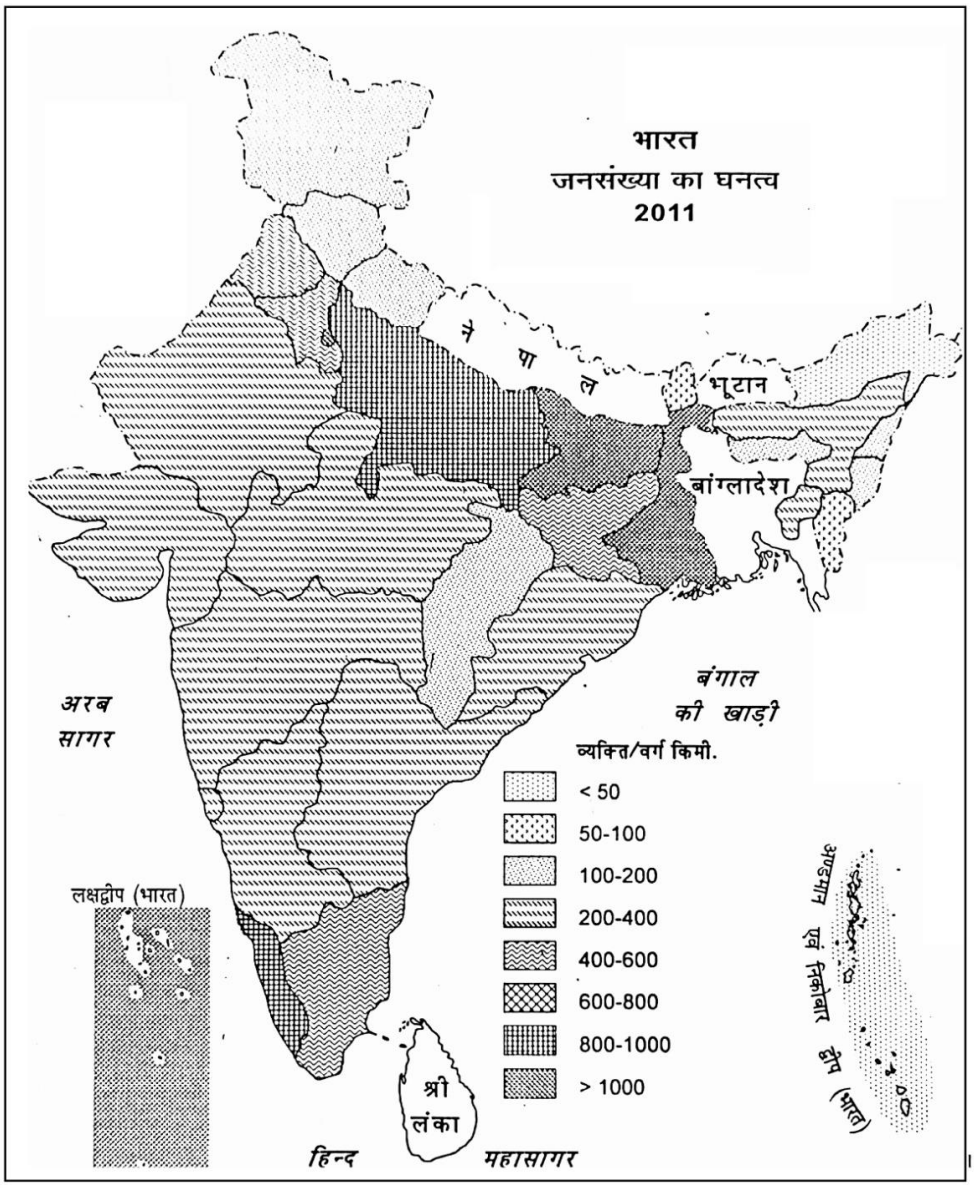

चित्र–1

इस वर्ग में 800 व्यक्ति/वर्ग किमी से अधिक पाये जाते हैं जिसमें 8 राज्य तथा 6 केन्द्रशासित प्रदेश शामिल हैं। पं0 बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा तथा पंजाब के कुछ क्षेत्रों में 500 व्यक्ति/वर्ग किमी0 से भी अधिक पाया जाता है। जहां उच्च उर्वरक मृदा, कृषि का विकास तथा नगरीकरण अधिक जनसंख्या घनत्व का प्रमुख कारण है। इसके अलावा केरल तथा तमिलनाडु के कुछ क्षेत्रों में तथा महानदी, गोदावरी और कृष्णा नदियों के डेल्टाओं, महाराष्ट्र एवं गुजरात के क्षेत्रों में भी जनसंख्या घनत्व अधिक पाया जाता है।

11.6 जनसंख्या के वितरण एवं घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक

धरातल– जनसंख्या वितरण एवं घनत्व को धरातल की विभिन्न आकृति मैदान, पठार तथा पर्वत आदि के कारण वितरण असमान पाया जाता है। इस प्रकार के धारातलीय उच्चावच, कृषि, यातायात एवं निवास के लिए अनुपयुक्त होता हैं इन क्षेत्रों में असमतल भूमि, अनुपजाऊ भूमि, यातायात मार्ग का अभाव तथा ऊबड़–खाबड़ भूमि आदि के कारण जनसंख्या वितरण एवं घनत्व असमान पाया जाता है।

जलवायु–जलवायु, जनंसख्या वितरण को सर्वाधिक प्रभावित एवं नियन्त्रित करता है। अति उष्ण, आर्द्र एवं अतिशीतल जलवायु मानव निवास पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। जैसे राजस्थान के थार मरुस्थल में शुष्क जलवायु के कारण जनसंख्या वितरण निम्न पाया जाता है। देश के वर्षा वाले (प्रायद्वीप के पूर्व एवं पश्चिम) क्षेत्रों में सघन जनसंख्या पायी जाती है तथा उच्च एवं निम्न तापमान वाले क्षेत्रों में निम्न जनसंख्या वितरण पाया जाता है। इस प्रकार जलवायु जनसंख्या वितरण को प्रभावित एवं नियन्त्रित करती है।

जल की उपलब्धता– जल जीवन के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व है जिसके अभाव में जीवन की कल्पना नहीं किया जा सकता है। अतः जहां जल पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है वहां जनसंख्या वितरण भी अधिक पायी जाती है तथा जहां जल की मात्रा कम होती है वहां जनसंख्या वितरण कम पाया जाता है। जल का प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होने के कारण सिंचाई, पेयजल संचालित होती है।

खनिज संसाधन– जहां संसाधन अधिक मात्रा में उपलब्ध होता है वहां पर जनसंख्या घनत्व भी अधिक पाया जाता है। खनिज क्षेत्रों में औद्योगिक एवं यातायात के विकास के कारण लोगों को रोजगार मिलेगा और इससे अन्य आवश्यक सुविधाओं का विकास होता है।

मृदा– यह खाद्यान्न उत्पादन का एक अनिवार्य कारक है। खाद्यान्नों का उत्पादन उपजाऊ मृदा में होता है। अतः जहां उपजाऊ मृदा पायी जाती है वहां जनसंख्या का वितरण अधिक तथा जहां मृदा अनुपजाऊ होती है वहां जनसंख्या वितरण निम्न पाया जाता है। भारत नदियों द्वारा निक्षेपित जलोढ़ मृदा में जनसंख्या वितरण अधिक पाया जाता है।

यातायात के साधन–परिवहन मार्ग के कारण ही लोगों को अपने गन्तव्य स्थल पर पहुंचने में सुविधा होती है। जिन क्षेत्रों में यातायात का तीव्र विकास हुआ है वहां पर सघन जनसंख्या निवास करती है तथा जहां पर इनका विकास कम हुआ है। वहां जनसंख्या वितरण निम्न पाया जाता है। यातायात पर ही उद्योग तथा अन्य क्रिया निर्भर होती है।

सामाजिक कारक– जनसंख्या वितरण, धार्मिक, सांस्कृतिक, भाषा, रहन–सहन आदि के द्वारा भी प्रभावित होता है। लोगों को अपने परिवार, भूमि, खान–पान, जलवायु तथा धर्म में विश्वास के कारण जनसंख्या वितरण असमान पाया जाता है।

राजनैतिक एवं आर्थिक कारक– असुरक्षा, असंतोष, आन्तरिक गृह युद्ध तथा राजनीतिक उथल–पुथल अत्यधिक प्रभावित होती है। जहां पर शान्त एवं सुरक्षित वातावरण है वहां पर जनसंख्या सघन है। जहां पर शान्त एवं सुरक्षित वातावरण है वहां पर जनसंख्या सघन तथा स्थिति विपरीत है वहां जनसंख्या कम पायी जाती है।

औद्योगीकरण एवं नगरीय क्रिया–कलाप जनसंख्या वितरण को अधिक प्रभावित करती है।

11.7 सारांश

आप इस इकाई में भारत भूगोल से सम्बन्धित जनसंख्या वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप, जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक, जनसंख्या वितरण, जनसंख्या घनत्व आदि का अध्ययन किये हैं। अब आप समझ गये होंगे कि जसंख्या वृद्धि में मन्द वृद्धि, स्थिर वृद्धि तथा घटती वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप में जनसंख्या वृद्धि का असमान वृद्धि, ग्रामीण एवं नगरीय स्तर पर असमान वितरण को, राज्य स्तर पर असमान वितरण, जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित करने वाले कारक में जन्मदर को प्रभावित करने वाले कारक, मृत्युदर को प्रभावित करने वाले तथा जनसंख्या स्थानान्तरण को प्रभावित करने वाले कारक, जनसंख्या घनत्व में निम्न घनत्व वाल प्रदेश, मध्यम घनत्व वाले प्रदेश तथा उच्च घनत्व वाले प्रदेश, जनसंख्या के वितरण एवं घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक में धरातल, जलवायु, जलवायु की उपलब्धता, खनिज सांसाधन, मृदा, यातायात के साधन, सामाजिक कारक, राजनैतिक कारक एवं स्थानिक कारक आदि कारक हैं।

11.8 शब्द सूची

जनांकिकीय विभाजक– Demographic divide, भू जोत– Landholding, वृहद नगर– Megapolis, जनसंख्या घनत्व– Population density, जनसंख्या वृद्धि– Population growth, जनसंख्या प्रवास– Population Migration, जनसंख्या नीति– Population Policy, गरीबी– Poverty, नगरीय आकारिकी– Urbgan Morphology , नगरीय नियोज– Urgban Planning.

11.9 परीक्षापयोगी प्रश्न

1. जनसंख्या घनत्व की गणना किस राज्य में सबसे अधिक पाया जाता है?

   (क) उत्तर प्रदेश (ख) राजस्थान

   (ग) तमिलनाडु (घ) बिहार

2. लिंगानुपात के लिए स्त्रियों की संख्या पुरुषों की कितनी संख्या निर्भर करती है?

   (क) 800 (ख) 1000

   (ग) 1100 (घ) 1200

3. वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार आयु वर्ग में किसका प्रतिशत अधिक है?

   (क) किशोर वर्ग (ख) प्रौढ़ वर्ग

   (ग) वृद्ध वर्ग (घ) कोई नहीं

4. लिंगानुपात किस राज्य में सबसे कम पाया जाता है?

   (क) केरल (ख) तमिलनाडु

   (ग) बिहार (घ) हरियाणा

5. भारत वर्ष में निर्भरता आयु वर्ग का क्या प्रतिशत है, वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार?

   (क) 35.2 (ख) 40.4

   (ग) 41.3 (घ) 20.4

11.10 महत्वपूर्ण पुस्तकें / संदर्भ

1. प्रो. आर. सी. तिवारी, भारत का भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन।
2. डॉ. अलका गौतम, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन प्रयागराज।
3. प्रोफेसर माजिद हुसैन भारत का भूगोल, मैग्रा हिल।
4. Jagdish Singh, IndiaA ComprehensiveAnd systematic Geography. Gyanodaya Publication Grokhpur.
5. Singh R.L. – IndiaA Regional Geography, N.G.S.I. Grokhpur
6. Nag, P.And Sengupta, S Geography , New Delhi.
7. Ford Foundation (1959) Report on Indian's Food crisisAnd step to meet It New Delhi : Ministry of foodAndAgricultureAnd Ministry of community Developement.

11.11 अभ्यास प्रश्न

1. जनसंख्या वृद्धि तथा जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक प्रतिरूप का स्पष्ट व्याख्या कीजिए।
2. जनसंख्या वितरण तथा जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।
3. आयु संरचना तथा आयु वर्ग का विशद् वर्णन कीजिए।
4. लिंगानुपात को स्पष्ट कीजिए।
5. जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

इकाई–12 भारत में जनसंख्या की आयु वर्ग संरचना, नगरीकरण

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 भारत में जनसंख्या की आयु वर्ग संरचना

12.4 नगरीकरण

12.5 सारांश

12.6 शब्द सूची

12.7 परीक्षोपयोगी प्रश्न

12.8 महत्वनपूर्ण पुस्तकें/संदर्भ

12.9 अभ्यास प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

भारत भूगोल के इस इकाई के अन्तर्गत आप भारत में जनसंख्या की आयु वर्ग संरचना तथा नगरीकरण आदि का अध्ययन करेंगे। देश में आयु संरचना, आयु वर्ग, आयु वर्ग का असमान वितरण को आप समझ पायेंगे। इसके अलावा नगरीकरण की अवस्थाएं, प्राथमिक अवस्था, त्वरण की अवस्था, अंतिम अवस्था, नगरीकरण की समस्याएं, नगरीकरण में स्लम बस्तियां, जलापूर्ति की समस्या, महानगरों में जल की मांग एवं पूर्ति, एवं समाधान, जनंसख्या वृद्धि का सामाजिक–आर्थिक उत्थान में बांधा, जनसंख्या के कारण खाद्यान्न संकट, सघन नगरीय क्षेत्र में पर्यावरण पर प्रभाव, तथा लोगों का रहन–सहन का स्तर आदि को भी समझ पायेंगे।

12.2 उद्देश्य

भारत भूगोल के इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप–

- भारत में जनसंख्या की आयु वर्ग संरचना समझ सकेंगे।
- आयु संरचना, आयु वर्ग तथा आयु वितरण को समझ सकेंगे।
- भारत में नगरीकरण को समझ सकेंगे।
- नगरीकरण की समस्या एवं समाधान को समझ सकेंगे।

12.3 आयु

जनसंख्या का अध्ययन में आयु की गणना भी महत्वपूर्ण तत्व है। जिससे कार्य शक्ति, निर्भर जनसंख्या, दीर्घ आयु के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। आयु के आधार पर जनसंख्या को तीन प्रमुख वर्गों में बांटा जा सकता है। किशोर–जिनकी आयु 15 वर्ष से कम, प्रौढ– जिनकी आयु 15–59 वर्ष तथा वृद्ध– जिनकी आयु 60 वर्ष से अधिक होती है। किशोर तथा वृद्ध को निर्भर कहा जाता है। प्रौढ़ को श्रमजीवी या कार्यरत वर्ग भी कहते हैं।

सारणी संख्या–1

भारत का आयु वर्ग (प्रतिशत)

वर्ष	0–14 वर्ष	15–59वर्ष	60 वर्ष से अधिक
1901	38.1	56.8	5.1
1911	37.8	56.9	5.2
1921	38.6	56.0	5.4
1931	38.5	56.4	5.1
1941	39.1	55.2	5.7
1951	37.5	56.9	5.6
1961	41.0	53.3	5.6
1971	42.0	52.0	6.0
1981	39.7	54.1	6.2
1991	36.5	57.1	6.4
2001	35.6	58.1	6.3
2011	29.7	64.1	5.5

वर्ष 1901 में देश की 38.1 प्रतिशत जनंसख्या किशोर वर्ग, 56.59 प्रतिशत जनसंख्या प्रौढ वर्ग तथा 5.1 प्रतिशत जनसंख्या वृद्ध वर्ग की है। वर्ष 1901 में किशोर वर्ग 38.1 प्रतिशत था जो 1961 में बढ़कर 41 प्रतिशत तथा 1971 में 42 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार 1901 से 1971 तक किशोर जनसंख्या उतार–चढ़ाव करते हुए बढ़ी है। वर्ष 2011 में यह घटकर 29.7 प्रतिशत हो गई।

वर्ष 1901 में प्रौढ़ वर्ग की जनसंख्या 56.8 प्रतिशत थी जो वर्ष 2011 में बढ़कर 64.8 हो गई। यह जनसंख्या वृद्धि वर्ष 1901 से 2011 के बीच घटती एवं बढ़ती हुई बढ़ी है।

वर्ष 1901 में वृद्ध वर्ग की जनसंख्या देश में 5.1 थी जो वर्ष 2011 में 5.5 हो गई। वर्ष 1901 में वृद्ध वर्ग 2011 के मध्य वृद्ध जनसंख्या प्रतिशत काफी उतार–चढ़ाव करते हुए बढ़ी है। वर्ष 1971 में किशोर 42 प्रतिशत, प्रौढ़ 52 प्रतिशत तथा वृद्ध 6 प्रतिशत थे। वर्ष 1971 के आंकड़ों से अधिक कार्यशील जनसंख्या एवं उच्च निर्भरता अनुपात का बोध होता है। साथ ही साथ किशोर वर्ग के ऊँचे प्रतिशत से निकट भविष्य में भी तीव्र जनंसख्या वृद्धि का संकेत मिलता है। किशोर वर्ग का अधिक अनुपात उच्च जन्मदर तथा तीव्र से घटता शिशु मृत्युदर के कारण है। यह वर्ग आर्थिक दृष्टि से एक आश्रित और अनुत्पादक वर्ग है। वर्ष 1971 से वर्ष 2011 के बीच किशोर वर्ग के प्रतिशत में कमी आयी है तथा प्रौढ़ एवं वृद्ध वर्ग के प्रतिशत में बढ़ोत्तरी हुई है। ऐसा जन्मदर में कमी तथा जीवन प्रत्याशा में सुधार के कारण सम्भव है। भारत के गांवों में किशोरों तथा वृद्धि वर्ग के लोग पाये जाते हैं। भारत जैसे देश में आयु एवं लिंग पिरामिड का आधार चौड़ा तथा शिखर सकरा व पतला होता है।

12.4 नगरीकरण

नगरीयकरण एक सामाजिक–आर्थिक प्रक्रिया है। जिसमें किसी देश कृषि से औद्योगिक समाज की ओर अग्रसर होता है। जिसके द्वारा किसी क्षेत्र की जनसंख्या का बड़ा हिस्सा कस्बों एवं नगरो में संकेन्द्रित हो जाता है। भारत जैसे विकासशील देशों में नगरीकरण वर्तमान शताब्दी की सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में गिनी जाती है। भारत की नगरी जनसंख्याओं के माध्यम से विश्व नगरीय जनसंख्या के भाग का निर्णय किया जाता है। इस तथ्यों से अनुमान लगाया जा सकता है कि विश्व का प्रत्येक बारहवां एवं विकासशील देशों का प्रत्येक सांतवें नगरीय क्षेत्रों में रहने वाला एक व्यक्ति भारतीय है। इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि भारत में उतने छोटे कस्बे 20,000–49.999 आबादी के हैं। जितने की संयुक्त राज्य अमेरिका में, उतने मध्यम आकार के (50000–99999) के नगरों का है, जितने पूर्व सोवियत संघ में और उतने महानगर +500,000 है, जितने कि अस्ट्रेलिया, फ्रांस एवं ब्राजील के देशों में मिलाकर कार्य किये जाते हैं। भारत में नगरीकरण का बहुत प्राचीन इतिहास रहा है। जिसके अन्तर्गत सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर आज वर्तमान समय के नगरों के विकास की एक परम्परा विगत वर्षों से चली आ रही है। यही कारण है कि देश में अनेक ऐसे सैकड़ों नगर पुराने हैं, जो एक अनुमान के आधार पर देश की कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत मिलता है।

भारत मे।नगरीय विकास

2011 की जनगणना के मुताबिक, कस्बों की संख्या 2001 के 5,161 से बढ़कर 2011 में 7,933 हो गई। शहरी जनसंख्या 2001 के 28.3 करोड़ की अपेक्षा 2011 में 37.7 करोड़ हो गई। शहरी जनसंख्या के प्रतिशत में भी बढ़ोतरी हुई है जो 2001 के 27.8 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 31.16 प्रतिशत तक पहुंच गई है। 2011 में ग्रामीण जनसंख्या 83.34 करोड़ या 68.84 प्रतिशत हो गई है। भारत के 63 शहर एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले हैं जिसके परिणामस्वरूप भारतीय शहर विश्व में सर्वाधिक बड़े शहरों में से हैं।

नगरीकरण की वृद्धि

वर्ष 1901 में, कुल जनसंख्या का (2.56 करोड़) मात्र 11 प्रतिशत जनसंख्या, शहरी थी। उस समय 1834 कस्बे तथा शहर थे। शहरी–ग्रामीण अनुपात 1 : 8.1 था। 1951 तक, शहरी जनसंख्या बढ़कर 6.16 करोड़ हो चुकी थी, जोकि कुल जनसंख्या का 17.6 प्रतिशत थी। इस प्रकार 1901–1951 के बीच शहरी जनसंख्या में वृद्धि 240 प्रतिशत थी, जबकि 1951–2001 के बीच यह प्रतिशत लगभग 450 थी। 2001–11 के दशक में, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से पहली बार, शहरी जनसंख्या में कुल वृद्धि ग्रामीण जनसंख्या में वृद्धि से अधिक थी। ग्रामीण क्षेत्र में जनसंख्या वृद्धि में 1991 से निरंतर कमी हुई है। पिछले कुछ दशकों में शहरी जनसंख्या में तीव्र वृद्धि, तेजी से औद्योगिकीकरण तथा शहरी क्षेत्र की ओर प्रवास के कारण रही है, जिसमें से 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र के लोग होते हैं।

17वीं शदी के अन्त में एवं 19वीं शदी के अन्तिम काल की उपेक्षा अधिक था। मध्य काल में वर्ष 1586 के आस–पास हस्तकारी उद्योग और तृतीयक क्रियाओं में विकसित होने के कारण 3200 कस्बें एवं 120 नगर अस्तित्व में थे। (रजा 1985, पृष्ठ–60) औपनिवेशिक समय में देश औद्योगिक ढांचे के विक्षत होने कारण नगरीकरण की इस प्रक्रिया को गम्भीर चोट पहुंच गयी। वर्तमान समय में नगरीकरण पद्धति पर कारखाने उद्योग के विकास से प्रभावित नगरीकरण है। जिसका प्रारम्भ बीसवीं शदी में माना जा सकता है। डेविस महोदय के अनुसार सामान्यता नगरीय जनसंख्या के प्रतिशत के 50 प्रतिशत से अधिक होने पर वक्र की प्रवणता घटने लगती है। 75 प्रतिशत से अधिक यह प्रवणता लगभग समाप्त हो जाती है, और वक्र पूर्वरूप से समाप्त हो जाता है। नीचे की ओर झुकने लगता है। नगरीकरण के वक्र क्षेत्र को निम्न तीन अवस्थाओं में प्रदर्शित किया जा सकता है–

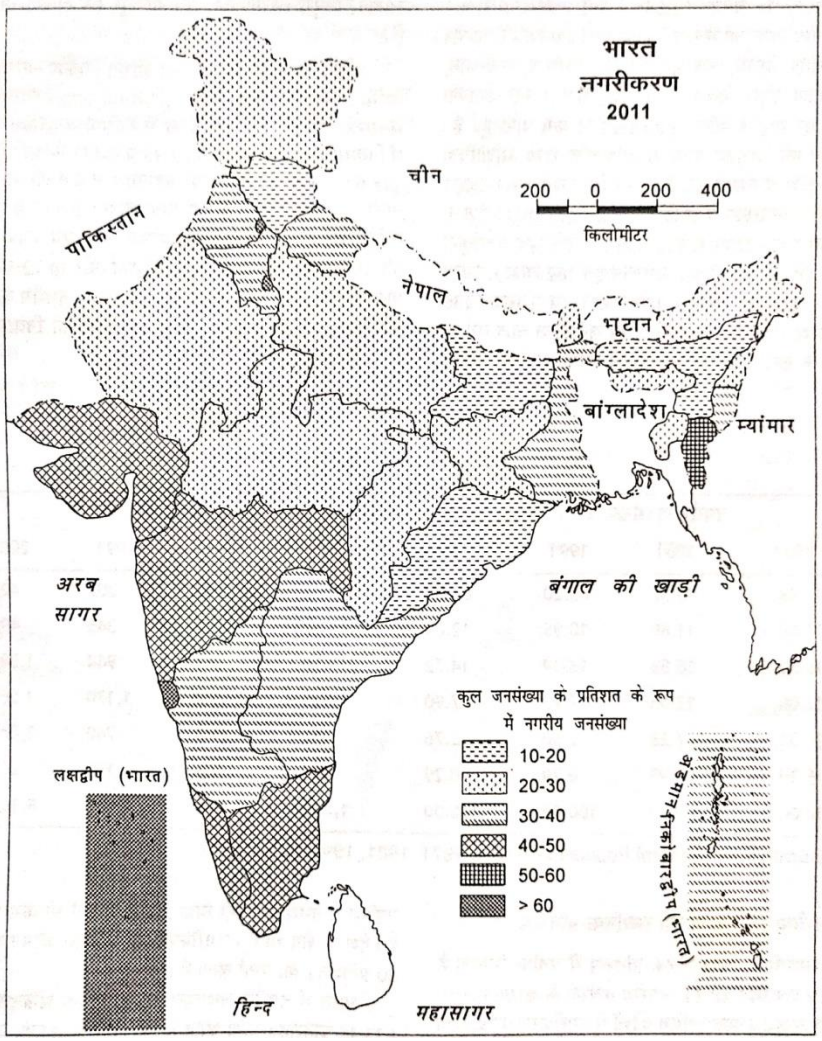

चित्र–1

1 प्रारम्भिक अवस्था

प्रारम्भिक अवस्था नगरीकरण के शुरूआत का द्योतक माना जाता है। जिसके समय कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत धीरे–धीरे बढ़ता है। इस अवस्था में वक्र की प्रवणता कम होती है। नगरीकरण की यह अवस्था प्राथमिक उत्पादन पर आधारित कृषि बहुल आर्थिक समाज का द्योतक होती है। प्रारम्भिक अवस्था के अन्तर्गत, यूगाण्डा, तंजानिया, सूडान, इथियोपिया, कीनियां, बंग्लादेश, नेपाल, भूटान आदि देशों को सम्मिलित किया जा सकता है।

2 त्वरण अवस्था

त्वरण की अवस्था नगरीकरण की सबसे मुख्य अवस्था है। इस अवस्था में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत तीव्रता से बढ़ने लगता है। इस समय नगरीकरण की वक्र की प्रवणता तीव्र हो जाती है। उद्योग, व्यापार, परिवहन, सेवा कार्यो में लगे लोगों की भारी संख्या में रोजगार उपलब्ध होने लगता है। इसके प्राथमिक क्रिया–कलाप में रोजगार की सम्भावना कम होने लगती है। विश्व के नार्वे, रूमानिया, आस्ट्रिया पोलैण्ड, डेनमार्क, इराक, रूस, टर्की, ईरान, कोलम्बिया, पेरू, ब्राजील आदि सभी देश त्वरण अवस्था से गुजर रहे है। भारत, श्रीलंका एवं पाकिस्तान इत्यादि सभी देश वर्तमान समय में इस अवस्था में प्रवेश किये हुए हैं।

3 अन्तिम अवस्था

नगरीकरण की अन्तिम अवस्था का प्रारम्भ नगरीय जनसंख्या के 70 प्रतिशत या अधिक हो जाने से होती है। नगरीय जनसंख्या में वृद्धि की गति मन्द हो जाने से नगरीकरण की वक्र की प्रवणता समाप्त हो जाती है। विश्व

के अधिकांश विकसित देश–इंग्लैण्ड, फ्रांस संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, जर्मनी, जापान, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, स्वीडेन, आदि सभी देश इसी अवस्था से गुजर रहे हैं। इसमें से कुछ देशों की संख्या में से नगरीय जनसंख्या के ह्रास की प्रवृत्ति भी प्रारम्भ हो गयी है, लोग नगरों से ग्रामीण क्षेत्रों की पलायन करते हुए दिख रहे हैं।

नगरीयकरण की समस्याएं

नगरीयकरण एवं जनसंख्या वृद्धि से समीपवर्ती पर्यावरण पर भारी दबाव पड़ता है। वर्तमान में आधुनिक नगरों का विकास वृहत पैमाने पर संसाधन का उपयोक्ता केन्द्र के रूप में रहा है। एक अनुमान के आधार पर बताया जाता है कि दस लाखी नगरों का प्रत्येक दिन 6,25000 टन जल, 2000 खाद्यान्न एवं 9500 टन ईंधन की जरूरत होती है। इस प्रकार प्रतिदिन 5,00000 टन प्रदूषित जल, 2000 टन अपशिष्ट पदार्थ, तथा 950 टन वायु प्रदूषक उत्पन्न होते है। इस प्रकार नगर का उसके प्रति नगरीय एवं समीपवर्ती क्षेत्र के पर्यावरण पर दो तरफा प्रभाव देखा जाता है। अनियोजित एवं अयनियंत्रित नगरीकरण न केवल नगरीय जीवन की गुणवत्ता में ह्रास होता है। बल्कि इससे निकटवर्ती क्षेत्रों में भौतिक–सामाजिक एवं आर्थिक पर्यावरण को भारी नुकसान पहुंचता है। इस प्रकार से नगरीय समस्याएं दो प्रकार की है– 1. आन्तरिक क्षेत्र जिनसे नगरीय क्षेत्र एवं वहां के निवासियों को प्रभावित करते है। 2. बाह्य क्षेत्र जिनसे उनका उपान्त और परिनगर क्षेत्र प्रभावित होता है–

1. प्लेस की समस्या

नगरों की वृद्धि के लिए अधिक से अधिक क्षेत्रों की आवश्यकता पड़ती है। इन क्षेत्रों की पूर्ति के लिए समीपवर्ती ग्रामीण एवं उपान्त क्षेत्रों के उपनिवेश द्वारा द्वारा की जाती है। कभी–कभी भौतिक बाधाओं के कारण नगर बांधित होने लगते हैं। मुम्बई की द्वीपीय स्थिति और कोलकाता के पूरब में खारा पानी की झीलों के कारण ऐसी ही कुछ समस्याएं उत्पन्न हो रही है। नगरों के निवासियों में कारखाना एवं कार्यस्थल के समीप होने से विशेषकर वहाँ, जहाँ नगरीय यातायात सस्ता और विकसित नहीं है की प्रवृत्ति पायी जाती है। नगरीय नियोजन में औद्योगिक, आवासीय और व्यापारिक कार्यो के लिए अलग सेक्टर निर्धारित होते है। स्थानों की कमी के कारण भीड़–भाड़ में और भूमि मूल्य में वृद्धि होने लगती है। इससे कम आय वर्ग के लोगों का रहन–सहन प्रभावित होता है, मलिन बस्तियों के निर्माण को प्रोत्साहन प्राप्त होता है।

2. आवास की समस्या

नगरीय जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के कारण इन क्षेत्रों में सदैव आवास की कमी देखी जाती है। एक अनुमान के आधार पर भारत में प्रतिवर्ष नगरों में लगभग 170000 आवास की कमी हो रही है। जिससे आवास के किराये में तेजी के साथ वृद्धि हो रही है। जिससे परिवार के मासिक आय 30 से 50 प्रतिशत भाग किराये पर खर्च किये जाते हैं। इस कारण कम आय वर्ग के लोग मजबूर होकर मलिन बस्तियों और सड़को की पटरियों पर रहने के लिए विवश हो रहे हैं। मुम्बई, कोलकाता, दिल्ली आदि बड़े–बड़े महानगरों में ऐसी मलिन बस्तियों में एवं फुटपाथों पर रहने वाले लोगों की संख्या में दिनो–दिन बढ़ोत्तरी हो रही है।

3. स्लम बस्ती

मलिन (स्लम बस्ती) गिरावट की एक चरमावस्था है। जिसमें आवास इतने अनुपयुक्त हो जाते हैं कि वे समाज के नैतिक मूल्यों एवं स्वास्थ्य लोगों के लिए समस्या उत्पन्न करने लगते हैं। (डिकिन्सन आर0ई0) स्लम एक ऐसा आवासीय क्षेत्र है जिनके आवास त्रुटिपूर्ण डिजाइन, वायु संचार, प्रकाश, अवहास, जनातिरेकता, स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण असुरक्षित और नैतिकता के अभाव में हानिकारक हो जाते हैं (संयुक्त राज्य अमेरिका अधिनियम 1949) ये एक या दो मकान झोपड़ीनुमा बनाकर जिनकी दीवाले मिट्टी, या ईंट की और छत टिन या छप्पर बांस की चटाई, टाटपट्टी, बोरा, प्लास्टिक आदि से ढ़की होती है। इनके बस्तियों का विकास पुरानी इमारतो, सरकारी भूमि (रेलमार्गों एवं सड़कों के किनारे) निजी आहातो आदि क्षेत्रों में होता है। यह स्लम बस्तियों के लोग बहुत कम किराये पर आवासीय सुविधाएं प्रदान करती है। ये लोग गांव से रोजगार की तलाश में शहर आने वाले छोटे–छोटे अस्वास्थ्यकर आवासों में रहते हैं भारतीय जनगणना 2001 के अनुसार देश कुल 26 राज्यों। केन्द्रशासित प्रदेशों के 607 नगरों और करके में 40 मिलियन लोग स्लम बस्तियों में निवास करते है। देश में मलिनबस्ती में निवास करने वाले लोगों की सबसे अधिक संख्या (76) पायी जाती है। इसके बाद उत्तर–प्रदेश में (65) तमिलनाडु में (63) महाराष्ट्र (62) पं बंगाल (51) मध्यप्रदेश (42) एवं कर्नाटक (35) का स्थान है। इस प्रकार मलिन बस्तियों की जनसंख्या की दृष्टि से महाराष्ट्र का प्रथम स्थान है। इसके बाद क्रमशः आन्ध्र प्रदेश (51.5 लाख), उत्तर–प्रदेश (41.6

लाख, पं बंगाल (38.2 लाख), तमिलनाडु (25.3 लाख) मध्य प्रदेश (23.9 लाख) एवं दिल्ली (20.3 लाख) आते है। कुछ बड़े–बड़े महानगरों में स्लम बस्तियाँ जैसे–मुम्बई महानगर कुल जनसंख्या का 48.88 प्रतिशत, नगर के विभिन्न भागों में निवास करती है। बुम्बई की ये स्लम बस्तियां नगरीय सभ्यता का भयावह दृश्य प्रस्तुत करती है। जिसमें रहने वाले लोग सामान्य सुविधाओं के अभाव में पशुवत जीवन व्यतीत करते है। दिल्ली, कोलकाता, चेन्नई, हैदराबाद एवं नागपुर में भारी संख्या में स्लम बस्तियां निवास करती है।

सारणी संख्या–2

भारत के प्रमुख नगरों में स्लम बस्तियां, वर्श 2001

क्र०सं०	नगरों के नाम	स्लम बस्ती जनसंख्या लाख में	प्रतिशत
1.	मुम्बई	58.24	48.9
2.	कोलकाता	14.91	32.6
3.	दिल्ली	18.55	18.9
4.	चेन्नई	7.48	17.7
5.	बंग्लौर	3.45	8.0
6.	हैदराबाद	6.01	17.4
7.	अहमदाबाद	4.40	12.5
8.	पुणे	5.31	20.9
9.	सूरत	4.06	16.7
10.	कानपुर	3.69	14.6
11.	जयपुर	3.50	15.1
12.	नगपुर	7.27	35.4
13.	पटना	0.04	0.25
14.	इन्दौर	2.60	16.3
15.	बड़ोदरा	1.07	8.2
16.	भोपाल	1.26	8.8
17.	लुधियाना	3.15	22.6
18.	आगरा	1.22	9.7

19.	वाराणसी	1.38	12.6
20.	मेरठ	4.71	43.9
21.	नसिक	1.42	13.2
22.	फरीदाबाद	4.91	46.6
योग	भारत	403.01	22.6

Source- Provisinal Population totals census of India, 2001

4. यातयात के साधनों की समस्या

देश के नगरों में मार्ग अवरोधक एवं भीड़–भाड़ की भारतीय नगरों की प्रमुख समस्या है। सड़क परिवहन की दृष्टि से दिल्ली महानगर में सबसे अच्छी स्थिति है। यहां पर प्रति 100 वर्ग किलोमीटर सड़कों की लम्बाई औसत 1284 किमी है। (मुम्बई 380 किमी), (अहमदाबाद 680 किमी), (चण्डीगढ़ 1280 किमी) 6000 PCU (Passenger corcnits) यातायात प्रवाहित होते हैं। वर्ष 1964–65 में निर्मित ITO की क्षमता 40000–50000 PCU निर्धारित थी। वर्तमान में आज 100,000 पी0सी0ओ0 यातायात दिखाई पड़ते है। कोलकाता में मेट्रो रेल विवेकानन्द पुल निर्माण के बाद कई पुराने मुहल्ले और हाबड़ा पुल के पास जाम होने की प्रतिदिन की समस्या है। इलाहाबाद (प्रयागराज) नगरों में सड़को के अतिक्रमण मन्द और तीव्र गति से वाहनों मिले–जुले प्रवाह, पशुओं के विचरण, यातायात के नियमों के उल्लंघन आदि के कारण सड़को पर जाम एवं दुर्घटना होती है।

5. जल के पूर्ति की समस्या –

मानव जीवन में जल का विशेष महत्व है। जल के बिना मानव को क्रियाएँ संचालित नहीं हो सकती है। आधुनिक नगरों में घरेलू और औद्योगिक आवश्यकताओं के लिए बड़ी मात्रा में जल की आवश्यकता होती है। औसत प्रतिदिन कोलकाता में 272 लीटर, मुम्बई में 190 लीटर, दिल्ली में 90 लीटर जल की खपत होती है। इस प्रकार प्रति टन एल्यूमिनियम, रेयान, सूतीवस्त्र, ऊनीवस्त्र, और इस्पात के उत्पादन में क्रमशः 1280,780,560,218 एवं 170 धन मीटर की आवश्यकता होती है। भारत के केन्द्रीय सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं पर्यावरण इंजीनियरिंग संगठन (CPHEEO) ने 50,000 से अधिक जनसंख्या वाले नगरों के लिए 125–200 लीटर/व्यक्ति/दिन, 10,000 से 50,000 के बीच जनसंख्या वाले नगरों के लिए 100–125 लीटर तथा 10,000 से कम जनसंख्या वाले नगरों के लिए 70–100 लीटर जल का मानक निर्धारित दिया गया है। जल का उपयोग पीने, रसोईघर, स्नान कपड़ा, धोने, फर्श, सफाई एवं बागवानी में होता है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रय बोर्ड दिल्ली के अनुसार चार बड़े महानगरों (दिल्ली, मुम्बई कोलकाता एवं चेन्नई) में जल के मांग एवं आपूर्ति के बीच निम्न सारिणी के माध्यम से जल संकट का आभास देखने को मिलता है।

सारणी संख्या–3

भारत के प्रमुख महानगरों में जल की मांग एवं आपूर्ति वर्श–1993

क्र०सं०	महानगर	माँग	आपूर्ति	अन्तराल
1.	मुम्बई	3,360	2,448	912
2.	दिल्ली	2,840	2,145	695
3.	अहमदाबाद	653	432	221

4.	बड़ोदरा	234	177	56

Source- Niva urban environmental Map-1994.

उपर्युक्त आंकड़े से स्पष्ट होता है कि दिल्ली, मुम्बई, अहमदाबाद, बड़ोदरा महानगरों में लगभग 10 प्रतिशत जल की कमी है। चेन्नई में जल संकट के समाधान के लिए Water express नामक विशेष रेलगाड़ी चलायी जाती है। दिल्ली जल संकट समाधन के लिए हरियाणा, टेहरी, रेगुला और किशाऊ बांधों से जल ग्रहण की योजना है।

6. नगरों के प्रदूषण की समस्या –

भारत में तेजी से बढ़ते नगरीकरण के साथ–साथ नगरों में उद्योग एवं वाहनों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। जिसके कारण नगरीय पर्यावरण की गुणवत्ता में कमी आयी है। उपभोक्तावाद, विलासितापूर्ण जीवन और पर्यावरण बोध के अभाव के कारण समस्या की गम्भीरता बढ़ गयी है। नगरों के पर्यावरण ह्रास में वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, जल प्रदूषण, ठोस अपशिष्ट प्रदूषण का प्रमुख योगदान है। भारत के कई महानगरों में वायु प्रदूषण स्थिति चिन्ताजनक है। विलम्बित कणकीय पदार्थो (SPM) की दृष्टि से दिल्ली, कोलकाता और चेन्नई का विश्व 41 सर्वाधिक प्रदूषित नगरों में क्रमशः चौथा तेरहवां एवं इकतालिसवाँ स्थान है। इस प्रकार कार्बन डाई आक्साइड (SO_2) के स्तर में मुम्बई, दिल्ली, कोलकाता क्रमशः 18,27 एवं 37 स्थान पर है। मुम्बई के कुल प्रदूषण भार में 52 प्रतिशत योगदान वाहनों के द्वारा, 48 प्रतिशत उद्योग एवं 33 प्रतिशत ताप सयंत्रों के द्वारा प्रदान की जाती है। दिल्ली में वायु प्रदूषण में परिवहन सेक्टर की भूमिका 60 प्रतिशत है। यहां पर 11 लाख से अधिक पंजीकृत वाहन प्रतिदिन 250 टन कार्बन मोनोआक्साइड, 400 टन हाइड्रोकार्बन, 6 टन सल्फर डाई आक्साइड और पर्याप्त मात्रा में निलम्बित कणकीय पदार्थ का उत्सर्जन होता है। NEERI की 1981 की एक रिपोर्ट के अनुसार कोलकाता महानगर में 1305 टन प्रदूषकों का उत्सर्जन वायुमण्डल में होता है। औद्योगिक प्रतिष्ठानों से 600 टन परिवहन क्षेत्रों से 360 टन, लाप गृहों से 195 टन रसोई घरो से 150 टन प्रदूषक सम्मिलित है।

महानगरों में जल प्रदूषण मल–जल के स्रोतों एवं पाइपलाइनों में प्रवेश के कारण होता है। भारत के नगरों में परिशोधन मल जल का पर्याप्त व्यवस्था नहीं है, जिसके कारण प्रदूषित जल–नदियों में मिलता रहता है। दिल्ली महानगर में मलजल शोधन हेतु सात संयंत्र कार्यरत है जिनकी कुल क्षमता 1272 mld है, जबकि नगर में 1716 mld मल जलों का निर्माण होता है। शेष 444 mld जल अशोधित रूप से यमुना नदी में पहुँचता रहता है। अवांक्षित रूप से तेज आवाज, जो मनुष्य के श्रवण शक्ति, स्वास्थ्य एवं शान्ति को कष्ट पहुंचाती है, जिसे ध्वनि प्रदूषण कहा जाता है। भारत में विकासशील देशों में बढ़ते नगरीकरण और औद्योगीकरण के कारण ध्वनि प्रदूषण की समस्या बढ़ रही है। देश के अधिकांश नगरों में ध्वनि प्रदूषण की समस्या बढ़ रही है। देश के अधिकांश नगरों में ध्वनि प्रदूषण का स्तर 70db से अधिक है– चेन्नई–89db मुम्बई–85db कोलकाता 87db, कोच्चि 80db, मदुरै एवं कानपुर 75db, इसके अलावा पूजा स्थलो, त्यौहारों, सामाजिक आयोजन एवं चुनाव–प्रचार लाउडस्पीकरों की आवाज से ध्वनि प्रदूषण का स्तर 110db तक पाया गया है। ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण के लिए कानून नहीं, जो कठिनाई से पालन नहीं कराया जाता है। ठोस अपशिष्ट उसे कहा जाता है, जिन्हें उपयोग के बाद बेकार मानकर फेक दिया जाता है। जैसे–घरेलू कूड़ा–करकट, प्लास्टिक और टिन के डिब्बे, पुराना कागज, टूटे कांच के सामान, जंग लगी टिन, आदि पदार्थो से नगरों में ठोस अपशिष्ट उत्तरोतर बढ़ रहे हैं।

7. नगरों में अपराध की समस्या

बढ़ते हुए अपराध अच्छे नगरीय जीवन एवं शान्ति के लिए गम्भीर समस्या उत्पन्न कर रहे है। नगरों में अपराधिक प्रवृत्ति के अनेक कारण जैसे–भौतिक वादी संस्कृति, आर्थिक असमानता, बेरोजगारी, सामुदायिक जीवन का अभाव, स्वार्थपरता, बढ़ता उपभोक्तावाद, तेजी से धन कमाने की प्रवृत्ति आदि प्रमुख है। दन्त एवं वेगुगोपाल (1983), हिंसात्मक अपराधों में बालात्कार, कत्ल, अपहरण, डकैती लूट अपराधों की प्रधानता पायी जाती है। एक सर्वेक्षण के

अनुसार दिल्ली की 30.5 प्रतिशत जनसंख्या, मुम्बई की 31.8 प्रतिशत जनसंख्या अपराध का शिकार रही है। जिसमें महिलाओं और वरिष्ट नागरिकों की संख्या अधिक है।

नगरीकरण से उत्पन्न समस्याओं का समाधान

नगरीकरण के उत्पन्न समस्याओं को दूर करने के लिए निम्न समाधान एवं उपाय है–

1. आवास की भूमियों का विकास

नगरीकरण से जनसंख्या की वृद्धि होने से आवासीय भवनों की कमी देखने को मिलती है। इसलिए नये आवासीय क्षेत्रों को विकसित करना चाहिए, जिससे नगर के केन्द्रीय भाग में आवासों का जमघट न बढ़े। नये आवास की बस्तियों के विकास से नगर के केन्द्रों पर जनसंख्या का भार घटता है। जिससे निवासियों को नियमित आवास भी प्राप्त होते हैं।

2. यातायात व्यवस्था में सुधार

नगरों की सबसे बड़ी समस्या सड़को पर अतिक्रमण है। जिसके कारण गैर आवासीय या बाजार क्षेत्रों में यह समस्या विकट परिस्थितियाँ उत्पन्न करती है। सड़को पर चलती–फिरती दुकाने, वाहन, ठेला, आदि जमघट सड़कों को तंग बना देते है। इसके लिए उपर्युक्त पार्किंग की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

3. स्वच्छ पेयजल के साथ मल–जल निकास एवं सफाई की व्यवस्था

नगरों में स्वच्छ पेयजल, बिजली एवं मल–जल निकास आदि की भारी समस्याओं का सामाना करना पड़ता है। इसके लिए उपयुक्त कदम उठाये जाने चाहिए। नाली–नालो की सफाई, कूड़ा–करकट तथा मल निकास की उपयुक्त व्यवस्था आवश्यक है।

4. स्लम बस्तियों की उचित व्यवस्था

निर्धन, बेरोजगार एवं मजदूर और गांवों से पलायन करने वाले लोग मकान खरीदने या किराये पर लेने के लिए असमर्थ होते हैं। अतः वे नगरों के बाहर और सड़कों के किनारे झुग्गी–झोपड़ी डालकर जीवन–यापन करते है। ऐसी स्लम बस्तियों में बिजली, पानी, सड़कों एवं नालियों की कोई व्यवस्था नहीं होती है। जिसके कारण इन क्षेत्रों में सामाजिक अपराध पनपते है। इन क्षेत्रों में सुधार के लिए उपयुक्त एवं समुचित व्यवस्था करनी चाहिए।

5. आवश्यक वस्तु की उपलब्धता

नगरीय क्षेत्र में जनसंख्या बढ़ रही है के लिए दैनिक उद्योगों को वस्तुओं जैसे–फल, सब्जी, अण्डे, दूध आदि की कमी हो जाती है, इन वस्तुओं की पर्याप्त उपलब्धता की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए।

6. प्रदूषण पर नियंत्रण

प्रदूषण पर नियंत्रण के लिए उद्योगों की नगर के क्षेत्रों से बाहर विशिष्ट क्षेत्रों में स्थानान्तरित करना चाहिए। जिससे नगरों के छोटे–बड़े अनेक कारखाने प्रदूषण पर नियत्रित निगरानी में रहने की व्यवस्था करनी चाहिए।

12.5 सारांश

आप इस इकाई में भारत भूगोल से सम्बन्धित आयु तथा नगरीकरण के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किये हैं। जनसंख्या नीति एवं नगरीकरण की समस्याएं, जिसमें आवास की समस्या, यातायात के साधनों की समस्या, जलपूर्ति की समस्या, प्रदूषण की समस्या, अपराधों की समस्या एवं हिसात्मक अपराध अपहरण, डकैती, लूट एवं अपराध की समस्याएं आदि। मानवीय विवेक के माध्यम से नगरीय क्षेत्रों में समुचित व्यवस्था करने से नगरों से सम्बन्धित

समस्याओं को सुलझाया जा सकता है। इन समस्याओं नगरीकरण के द्वारा समाधान के लिए आवासीय भूमियों के विकास, स्वच्छ पेयजल की व्यवस्थ के साथ–साथ सफाई की व्यवस्था एवं यातायात सुधार में पार्किंग की व्यवस्था, आवश्यक वस्तुएं की उपलब्धता एवं दैनिक उपभोग की वस्तु की व्यवस्था करने एवं नियंत्रित रूप से निगरानी करने से इन समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

अब आप समझ गये होगें ग्रामीण एवं नगरीय स्तर पर असमान वितरण को, राज्य स्तर पर असमान वितरण, नगरीकरण की समस्याएं, आयु में आयु वर्ग, आयु वर्ग का आर्थिक क्रिया पर प्रभाव तथा आयु वर्ग का असमान वितरण आदि को।

12.6 शब्द सूची

जनांकिकीय विभाजक– Demographic divide, भू जोत– Landholding, वृहद नगर– Megapolis, जनसंख्या घनत्व– Population density, जनसंख्या वृद्धि– Population growth, जनसंख्या प्रवास– Population Migration, जनसंख्या नीति– Population Policy, गरीबी– Poverty, नगरीय आकारिकी– Urbgan Morphology, नगरीय नियोजन– Urgban Planning, नगरीयकरण– Urbanization, प्राम्भिक अवस्था– Initail Stage, त्वरण अवस्था– lcceloration Stag, अन्तिम अवस्था– Terminal Stag, मलिन– Slum.

12.7 परीक्षोपयोगी प्रश्न

1. वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार आयु वर्ग में किसका प्रतिशत अधिक है?

   (क) किशोर वर्ग (ख) प्रौढ़ वर्ग

   (ग) वृद्ध वर्ग (घ) कोई नहीं

2. भारत वर्ष में निर्भरता आयु वर्ग का क्या प्रतिशत है, वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार?

   (क) 35.2 (ख) 40.4

   (ग) 41.3 (घ) 20.4

3. नगरीकरण की कितनी अवस्थाये हैं।

   (अ) एक (ब) दो

   (स) तीन (द) चार

4. भारत के किस नगरों में स्लम बस्तियां सर्वाधिक है।

   (अ) मुम्बई (ब) दिल्ली

   (स) कोलकाता (द) चेन्नई

5. भारत के किस नगर में सबसे कम स्लम बस्तियां पायी जाती है।

   (अ) पटना (ब) नागपुर

   (स) जयपुर (द) सूरत

12.8 महत्वनपूर्ण पुस्तकें / संदर्भ

1. प्रो0 जगदीश सिंह, भारत : भौगोलिक आधार एवं आयाम, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. प्रो0 आर0 सी तिवारी– भारत का भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन, प्रयागराज।
3. डॉ0 बी0सी0 जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
4. प्रो0 काशीनाथ व प्रो0 जगदीश सिंह, आर्थिक भूगोल, ज्ञानादेय प्रकाशन।
5. सिंह, आर0एल0– इण्डिया : रीजनल ज्योग्राफी एन0जी0एस0आई0 गोरखपुर।

12.9 अभ्यास प्रश्न

1. आयु संरचना तथा आयु वर्ग का विशद् वर्णन कीजिए।
2. नगरीकरण से क्या आशय है?
3. नगरीकरण अवस्थाओं का उल्लेख कीजिए?
4. नगरीकरण की समस्याओं का उल्लेख कीजिए?
5. नगरीकरण की समस्या एवं समाधान के उपायों के बारे में लिखो?

इकाई–13 प्रमुख उद्योग : लौह–इस्पात उद्योग, वस्त्र उद्योग, कागज उद्योग एवं चीनी उद्योग

इकाई की रूपरेखा

13. प्रस्तावना

13.A उद्देश्य

13.1 भारत में औद्योगिक विकास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

13.2 लौह एवं इस्पात उद्योग

13.3 वस्त्र उद्योग

13.4 कागज उद्योग

13.5 चीनी उद्योग

13.6 सारांश

13.7 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

13.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

13.9 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी)

13 प्रस्तावना

औद्योगिक विकास को किसी देश की उन्नति के मानदण्ड के रूप में देखा जाता है। इसी का परिणाम है कि वर्तमान समय में विश्व के सभी अमीर या गरीब, बड़े या छोटे, विकसित या विकासशील देश अपने उद्योगों के प्रोत्साहन हेतु स्थानीय संसाधनों के साथ आयातित संसाधनों का वृहद मात्रा में उपयोग कर रहें हैं। भारत में विभिन्न प्रकार के उद्योगों का विकास अनेकों चरणों में विदेशी सहायता एवं स्थानीय उद्योगपतियों के सहयोग से संभव हो सका। आज देश में औद्योगिक विविधता के अनेकों भूस्वरूप दिखाई देती है।

13.A. उद्देश्य

भारत में उद्योगों का वितरण बहुत असमान है। इस वितरण को कच्चे माल की उपलब्धता, परिवहन के साधनों की उपलब्धता एवं आर्थिक विकास का स्तर आदि प्रभावित करती है। इस अध्याय के उद्देश्य निम्नलिखित है -

1. लौह - इस्पात उद्योग का विकास, वितरण एवं प्रगति का अध्ययन करना।
2. वस्त्र उद्योग का विकास, वितरण एवं प्रगति का अध्ययन करना।
3. कागज उद्योग का विकास, वितरण एवं प्रगति का अध्ययन करना।
4. चीनी उद्योग का विकास, वितरण एवं प्रगति का अध्ययन करना।

13.1 भारत में औद्योगिक विकास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

यद्यपि भारत प्राचीन काल से ही औद्योगिक दृष्टिकोण से एक समृद्ध रहा है, परंतु आधुनिक स्वरूप में इसके उद्योग किस प्रकार विकसित हुए। इसका अध्ययन दो शीर्षकों में किया जाता है -

13.1.1 स्वतंत्रता पूर्व औद्योगिक विकास के परिदृश्य

औद्योगिक विकास के आधुनिक स्वरूप का इतिहास भारत में लगभग 160 से 170 वर्ष पुराना है जिसमें स्वतंत्रता पश्चात तीव्रता देखी

गई है। भारत में प्रथम लौह प्रगलन संयत्र की शुरुआत वर्ष 1853 ई. में की गई थी जो मुख्यत: चारकोल पर आधारित था। यह संयत्र पूरी तरह से असफल रहा। औद्योगिक विकास के क्षेत्र में भारत में प्रथम सफल प्रयास 1854 ई. में सम्पन्न हुआ जब मुंबई सूती वस्त्र बनाने का कारखाना लगाया गया। दूसरा सफल प्रयास पश्चिम बंगाल में कोलकाता के निकट रिसरा में जूट कारखाने के रूप में सम्पन्न हुआ। भारत में कोयला उत्खनन का कार्य भी उसी समय शुरू हुआ। वर्ष 1874 ई. कुल्टी में कच्चा लोहा बनाने का कारख़ाना स्थापित किया गया। वर्ष 1907 ई. में जमशेद जी टाटा द्वारा जमशेदपुर में टाटा लौह - इस्पात के कारखाने को स्थापित किया गया जिससे उद्योगों की स्थापना की दिशा में और प्रगति मिली। प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध की अवधि में भी औद्योगिक विकास को काफी प्रोत्साहन मिला। इस दौरान घरेलू एवं बाह्य मांग में तेजी से वृद्धि होने के कारण अधिकांश उद्योग स्थापित हुए तथा पहले से स्थापित उद्योगों में अधिक विस्तार हुआ। इन्हीं प्रोत्साहनों के फलस्वरूप वर्ष 1922 ई. से 1939 ई. के बीच इस्पात, चीनी, कागज एवं वस्त्र उद्योग आदि का उत्पादन कई गुना बढ़ गया।

13.1.2 स्वतंत्रता पश्चात औद्योगिक विकास के परिदृश्य

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत सरकार ने उद्योगों के विकास पर विशेष ध्यान दिया। इसी के फलस्वरूप 6 अप्रैल 1948 ई. को प्रथम औद्योगिक नीति की घोषणा की गई जिसमें देश में मिश्रित अर्थव्यवस्था के स्वरूप को स्वीकार किया गया। स्वतंत्रता आंदोलन के मूल्यों एवं समाजवादी सिद्धांतों को स्वीकार करते हुए भारत को कल्याणकारी राज्य बनाने का प्रयास शुरू हुआ। इसके लिए समाजवादी ढंग से समाजवाद की स्थापना हेतु 1948 ई. की नीति में परिवर्तन करते हुए 30 अप्रैल 1956 को द्वितीय औद्योगिक नीति की घोषणा की गई। इसी नीति में उद्योगों को सार्वजनिक, निजी एवं संयुक्त उपक्रम में विभाजित किया गया। कुछ उद्योगों को अवशिष्ट उद्योगों की श्रेणी में रखा गया एवं निजी उद्यम के लिए खुला छोड़ दिया गया। भारत में औद्योगिक विकास आधार 1956 की नीति को ही माना जाता है।

इसके पश्चात विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में भी उद्योगों के विकास एवं प्रोत्साहन हेतु पहल की गई। भारत में औद्योगिक क्षेत्र के विकास में तब क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ जब 1991 की औद्योगिक नीति को 24 जुलाई 1991 ई. में घोषित किया गया। इस नीति में पूर्व से चली आ रणनीति में व्यापक परिवर्तन किया गया तथा उदारीकरण, वैश्वीकरण एवं निजीकरण के स्वरूप को स्वीकार किया गया। औद्योगिक विकास की धीमी गति, बड़े पैमाने पर बेरोजगारी, महगाई की उच्च दर और विदेशी मुद्रा विनिमय के संकट से औद्योगिक क्षेत्र काफी प्रभावित था। इस नीति को अपनाने के फलस्वरूप औद्योगिक उत्पादन में काफी वृद्धि हुई देश आत्मनिर्भरता को प्राप्त किया तथा भारतीय अर्थव्यवस्था आयातक अर्थव्यवस्था से निर्यातक अर्थव्यवस्था में परिवर्तित हुई। औद्योगिक प्रगति के कारण ही भारत में आयात प्रतिस्थापन नीति को गैर परंपरागत वस्तुओं विशेषकर इंजीनियरिंग एवं प्रौद्योगिकी से जुड़ी वस्तुओं का निर्यात तेजी से बढ़ा है, जिसके फलस्वरूप देश के प्रतिकूल भुगतान संतुलन को पक्ष में करने में सहायता मिली है।

13.2 लौह एवं इस्पात उद्योग

लौह एवं इस्पात उद्योग को आधारभूत उद्योग की संज्ञा प्राप्त है। सभी उद्योग अपने विकास हेतु इसी पर निर्भर है। भारत के अधिकांश उद्योग इसके उत्पादों को परिमार्जित करके वस्तुओं एवं सामानों का निर्माण करते है। इसी कारण लौह इस्पात उद्योग को देश के औद्योगिक उत्थान की नीव कहा जाता है। प्रसिद्ध विद्वान बी. एम. जोन्स के अनुसार "यदि लौह इस्पात उद्योग को हमारे जीवन से अलग कर दिया जाए तो मानव जाति के सामने एक ऐसा संसार होगा जिसमें रेलें, जलयान, वायुयान, नाना प्रकार के उपकरण एवं यंत्र तथा परिवहन के साधन नहीं रहेंगे और इस प्रकार का समाज आधुनिक जीवन के लिए आवश्यक वस्तुएँ तैयार करने में पूर्णतया असमर्थ होगा।"

लौह एवं इस्पात बनाने के लिए उत्खनित लौह अयस्क से लोहांश, चारकोल, चूना पत्थर आदि मिलकर भट्टी में अधिकतम ताप पर पिघलाया जाता है। उसके पश्चात पिघले हुए लोहे को सांचे में ढाल दिया जाता है, जहाँ यह शीतल होकर ठोस बन जाता है। इस प्रकार से प्राप्त उत्पाद को कच्चा लोहा (Pig Iron) कहते है। कच्चे लोहे को पुन: पिघलकर जब सांचे में ढाला जाता है तब उसे ढलवा लोहा कहते है। यह लोहा अति भंगुर होता है तथा आसानी से टुट जाता है। इसमें कच्चे लोहे की अशुद्धियाँ जिसमें कार्बन, सल्फर, फास्फोरस एवं सिलिकन सम्मिलित हैं विद्यमान होती है। जब कच्चे लोहे को पिघला कर उसमें से अशुद्धियों को निकालकर उसकी भंगुरता को समाप्त किया जाता है तब उसे पिटवा लोहा कहते हैं। इस लोहे में जंग नहीं लगता है तथा यह मजबूत भी होता है। कच्चे लोहे को इस्पात बनाने के लिए उसे पिघलाया

जाता है, उसमें से अशुद्धियों को निकालकर निश्चित मात्रा में कार्बन मिलाया जाता है। इस्पात में किसी भी आकार में परिवर्तित होने की क्षमता होती है।

13.2.1 भारत में लौह एवं इस्पात उद्योग का विकास

भारत में लौह एवं इस्पात उद्योग की समृद्धता का प्रमाण प्राचीन काल से प्राप्त हो रहें हैं। दिल्ली में कुतुबमीनार के पास स्थित अशोक का लौह स्तम्भ इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। सदियों से वर्षा एवं धूप पड़ने के बाद भी इसमें जंग नहीं लगा है। आधुनिक भारत में लौह एवं इस्पात उद्योग का उदय वर्ष 1907 ई. में तब हुआ जब जमशेद जी टाटा ने सक्कची नामक स्थान पर टाटा आयरन एवं स्टील कम्पनी (TISCO - TATA IRONAND STEEL COMPANY) की स्थापना की। इसके पश्चात वर्ष 1919 ई. इंडियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी अस्तित्व में आयी आसनसोल के समीप बर्नपुर नामक स्थान पर लौह एवं इस्पात कारख़ाना स्थापित किया। बाद में इसी में कुल्टी में स्थित बंगाल आयरन कम्पनी को भी सम्मिलित कर लिया गया था।

दक्षिण भारत में लौह एवं इस्पात उद्योग का प्रारम्भ कुछ बाद में हुआ। यहाँ कर्नाटक राज्य में वर्ष 1923 ई. में भद्रावती नदी के किनारे भद्रावती नामक स्थान पर एक लौह एवं इस्पात उद्योग स्थापित हुआ। पहले यह कारख़ाना मैसूर आयरन एण्ड स्टील कम्पनी के नाम से निजी क्षेत्र में था। अब इसका संचालन केंद्र सरकार तथा कर्नाटक सरकार द्वारा संयुक्त रूप से किया जा रहा है। इसके पूर्व नाम को परिवर्तित करके प्रसिद्ध इंजीनियर डॉ विश्वेश्वरैया के नाम पर विश्वेश्वरैया आयरन एण्ड स्टील वर्क्स लिमिटेड कर दिया गया।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956 - 61) में लौह एवं इस्पात उद्योग को उन्नत करने के लिए केंद्र सरकार ने हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड की स्थापना की। स्थापना के पश्चात इस कम्पनी ने विदेशी सहायता से सार्वजनिक क्षेत्र में तीन कारखाने राऊरकेला, भिलाई एवं दुर्गापुर की स्थापना की। इसके पश्चात बोकारो नामक स्थान पर भी एक कारखाने की स्थापना की गई। सत्तर से अस्सी के दशक में सेलम (तमिलनाडु), बेल्लारी - हास्पेट (कर्नाटक), विशाखापत्तनम (आन्ध्र प्रदेश) एवं पराद्वीप (ओडिशा) में स्थापित किए गए। इन सभी कारखानों को पश्चिम बंगाल, झारखण्ड से कोयला, ओडिशा, छत्तीसगढ़ और झारखण्ड से लोहे एवं चूना पत्थर की आपूर्ति होती थी।

13.2.2 भारत में लौह - इस्पात उद्योग का स्थानीकरण

लौह एवं इस्पात कारखाने में प्रयुक्त होने वाले कच्चा माल, लौह अयस्क, चूने का पत्थर तथा मैगनीज आदि वजन में भारी एवं कम मूल्य के होते है। इन्हें दूर ले जाना आर्थिक दृष्टिकोण से सही नहीं होता है, इसी कारण अधिकांश लौह एवं इस्पात उद्योग कच्चे माल की प्राप्ति के स्थान पर ही स्थापित किए जाते हैं। लोहे को गलने के लिए अधिक मात्रा कोयले की आवश्यकता होती है। ये सभी कारक लौह एवं इस्पात उद्योग के स्थानीकरण को सर्वाधिक प्रभावित करते है। इनके इस उद्योग के स्थानीकरण में पर्याप्त जल, परिवहन के साधन, पूंजी तथा खपत क्षेत्र निकट होना भी महत्त्वपूर्ण कारक है। लौह एवं इस्पात उद्योग को "भार ह्रासमूलक उद्योग" के नाम से भी जाना जाता है।

वर्तमान समय में भारत में निम्नलिखित केन्द्रों पर लौह एवं अयस्क का उत्पादन किया जाता है -

13.2.1 टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, जमशेदपुर (TISCO - Tata IronAnd Steel Company, Jamashedpur)

यह भारत का सबसे बड़ा एवं पुराना लौह एवं इस्पात का कारख़ाना है, जिसकी स्थापना जमशेद जी टाटा द्वारा झारखण्ड राज्य के सिंहभूमि जिले में साक्ची नामक स्थान पर की गई थी। कुछ समय पश्चात इस स्थान का नाम परिवर्तित करके जमशेदपुर कर दिया गया। इस कारखाने से वर्ष 1911 ई. कच्चा लोहा एवं वर्ष 1912 ई. में इस्पात का उत्पादन शुरू हो गया। इस कारखाने में इस्पात के साथ ही रेल के समान, लोहे के गार्डर, काटेदार तार आदि का उत्पादन होता है। यह कारख़ाना अपने विकास की तृतीय अवस्था में पहुँच चुका है। तीसरे चरण के विस्तार के बाद इसकी उत्पादन क्षमता 30 लाख टन कच्चा इस्पात तथा 27 लाख टन बिक्री योग्य इस्पात तक पहुँच गई है।

यह कारख़ाना 75 से 100 किमी. की दूरी पर स्थित झारखण्ड के सिंहभूमि जिले की नोवामुंडी खान एवं ओडिशा के मयूरभंज जिले में स्थित गुरु महिसानी खान से उच्च कोटि का हेमेटाइट लौह अयस्क प्राप्त करता है। झरिया एवं रानीगंज की खानों से कोयला आयातित करता है, जो 160 से 316 किमी. दूरी पर स्थित है। भट्ठियों के भीतरी भाग की लिपाई के लिए क्वार्टजाईट बालू की आपूर्ति स्थानीय स्तर पर हो जाती है। मैगनीज नोआमुंडी की खदान से प्राप्त होता है जो कि 50 किमी. की दूरी पर स्थित है। चूना पत्थर और डोलोमाईट सुन्दरगढ़ के पानपोश तथा वीरमित्रपुर के साथ झारखण्ड के पलामू, हजारीबाग, राची एवं सिंहभूमि से आता है। श्रमिकों की आपूर्ति सघन गंगा घाटी के साथ छोटा नागपुर के जनजातीय क्षेत्रों से भी हो जाती है। इस कारखाने को स्वर्णरेखा तथा खरकोई नदियों के संगम स्थल से पर्याप्त जल मिल जाता है। कोलकाता नगर के समीप होने के कारण मशीनों के आयात एवं लौह - इस्पात के निर्यात की सुविधा उपलब्ध हो जाती है।

13.2.2 इंडियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी (IISCO - Indian IronAnd Steel Company)

इस कारखाने की नीव वर्ष 1874 ई. में बर्नपुर में लोहा ढालने वाले सन्यत्र के रूप मे पड़ी थी, परन्तु यह अपने वास्तविक स्वरूप में वर्ष 1919 ई. में आया था। वर्ष 1937 ई. में स्टील कार्पोरेशन ऑफ बंगाल की स्थापना हुई। वर्ष 1952 ई. में बर्नपुर, हीरापुर एवं कुल्टी के तीनों कारखानों को एकीकृत कर दिया गया एवं इन्हें संयुक्त रूप से इंडियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी के नाम से जाना जाने लगा। हीरापुर आसनसोल के दक्षिण 65 किमी., कुल्टी इसके पश्चिम 16 किमी. एवं बर्नपुर इसके दक्षिण - पश्चिम में 5 किमी. की दूरी पर स्थित है। यह संयुक्त उपक्रम कोलकाता से 224 किमी. उत्तर - पश्चिम में स्थित है।

हीरापुर कारखाने में ढलवा लोहा तैयार होता है तथा इसे इस्पात बनाने के लिए कुल्टी कारखाने में भेजा जाता है। हीरापुर कारखाने की उत्पादन क्षमता 13 लाख टन ढलवा लोहा जबकि कुल्टी कारखाने की उत्पादन क्षमता 10 लाख टन इस्पात की है। बर्नपुर कारखाने की उत्पादन 10 लाख टन इस्पात प्रतिवर्ष है। वर्ष 1970 ई. में इस संयंत्र की उत्पादन क्षमता में गिरावट आने लगी, जिससे केंद्र सरकार ने इसका राष्ट्रीयकरण कर दिया। इसके पश्चात उत्पादन क्षमता में वृद्धि की प्रवृत्ति देखी गई। वर्तमान समय में यह संयंत्र 92 हजार टन बिक्री योग्य ढलवा लोहा, 5 लाख टन से अधिक कच्चा इस्पात और लगभग 6 लाख टन बिक्री योग्य इस्पात तैयार करता है।

यह इस्पात संयंत्र लौह - अयस्क झारखण्ड के सिंहभूमि जिले की गुआ खान से और ओडिशा की मयूरभंज खान से प्राप्त करता है। कोयले की आपूर्ति झरिया एवं रानीगंज खानों से होती है। डोलोमाईट एवं चूना पत्थर ओडिशा की सुन्दरगढ़ जिले की विरमित्रपुर खान, गंगापुर खान एवं पाराघाट खान से प्राप्त होता है। दामोदर घाटी परियोजना से जल एवं सस्ती बिजली प्राप्त होती है। दिल्ली एवं कोलकाता के मुख्य रेलमार्ग पर स्थित होने के कारण सम्पूर्ण मैदानी भाग में इसके उत्पादों की पहुँच हो जाती है।

13.2.3 विश्वेश्वरैया लौह एवं इस्पात केंद्र

इस संयंत्र की स्थापना मैसूर राज्य द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका की पेरी एवं मार्शल कम्पनी के सहयोग से कर्नाटक राज्य के शिमोगा जिले में भद्रावती नामक स्थान पर भद्रावती नदी के किनारे की गई थी। वर्ष 1962 ई. से यह कारख़ाना कर्नाटक सरकार एवं केंद्र सरकार के अधीन है। इस संयंत्र की वार्षिक उत्पादन क्षमता 85,000 टन ढलवा लोहा एवं 1.80 लाख टन इस्पात तैयार करने की है। इससे तैयार इस्पात का प्रयोग विशेष संयंत्रो एवं औजारों के निर्माण के लिए किया जाता है। विभिन्न प्रकार आधुनिक तकनीक का प्रयोग करके इसके उत्पादन क्षमता का विस्तार दो लाख टन उच्च कोटि क इस्पात बनाने का है।

बाबाबुदन की पहाड़ी के केमनगुंडी एवं चित्रदुर्ग की खानों से इसे हेमेटाईट प्रकार का लौह अयस्क प्राप्त होता है। प्रारम्भिक अवस्था इसमें लौह प्रगलन हेतु लकड़ी का प्रयोग किया जाता था जो असफल रहा साथ ही यह औद्योगिक क्षेत्र कोयला उत्खनन प्रदेश से काफी दूरी पर स्थित है, इसलिए इसकी भट्ठियों को विशेष प्रकार से तैयार किया गया है कि उनसे लकड़ी से कोयला तैयार किया जा सके। लकड़ी के अतिरिक्त महात्मा गाँधी जल विद्युत परियोजना एवं शरावती परियोजना से भी विद्युत की आपूर्ति होती है। इसे चूने का पत्थर मुंडीगुडा तथा मैगनीज़ शिमोगा और चित्रदुर्ग की खानों से प्राप्त होता है।

13.2.4 हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड

आजादी के पश्चात देश को आधुनिक तरीके से विकसित करने हेतु जिस वस्तु की सर्वाधिक आवश्यकता पड़ी वह लौह इस्पात था। इस आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए भारत सरकार ने सार्वजनिक क्षेत्र में हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड की स्थापना की। इसी प्राधिकरण के क्षेत्र के अंतर्गत तीन प्रमुख सर्वजिनिक लौह - इस्पात संयंत्र स्थापित हुए जो विदेशी सहायता पर आधारित थे। ये संयंत्र राउरकेला, भिलाई एवं दुर्गापुर इस्पात केंद्र है। प्रारम्भिक अवस्था में प्रत्येक संयंत्र की उत्पादन क्षमता 10 लाख मीट्रिक टन निर्धारित की गई थी। बाद के वर्षों में इनकी उत्पादन क्षमता का विस्तार हुआ -

13.2.5 राउरकेला इस्पात संयंत्र

हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड संयंत्र का यह कारख़ाना कोइल एवं सांख नदियों के संगम पर ओडिशा के सुन्दरगढ़ जिले में स्थापित किया गया। इसकी नीव जर्मनी की क्रूप्स तथ दिमाग कंपनियों के सहयोग से रखी गई थी। इस कारखाने में उत्पादन वर्ष 1959 ई. में शुरू हुआ था। प्रारम्भिक अवस्था में इसकी उत्पादन क्षमता 10 लाख टन थी जिसे कुछ समय बाद बढ़ा कर 18 लाख टन कर दिया गया। इस्पात की बढ़ती माँग एवं आधुनूनिक तकनीक का प्रयोग करते हुए इसकी उत्पादन क्षमता को 40 लाख टन बढ़ाने की योजना है। इस कारखाने मेन अधिकतर चपटे आकार की वस्तुएँ, विभिन्न मोटाई की प्लेटें एवं टीन की चादरें बनाई जाती है।

इस संयंत्र हेतु बोनाई (सुन्दरगढ़) तथा क्योंझर खानों से प्राप्त होता है। इन खानों का लौह - अयस्क उच्च कोटि का हेमेटाईट प्रकार का होता है। लौह - अयस्क की बढ़ती माँग के कारण इसके समीप बरबुआ नामक स्थान पर नई खदान का विकास किया गया है। ईधन की आपूर्ति हेतु झरिया, बोकारो, कोरबा तथा तलचर क्षेत्रों से कोयले की आपूर्ति की जाती है जबकि दुग्धा एवं भोजुडीह कारखानों से धुला हुआ कोयला मंगाया जाता है। चूने का पत्थर वीरमित्रपुर, हाथीबड़ा तथा पानपाश, डोलोमाईट मध्य प्रदेश की हिर्री खान और मैंगनीज बोनाई से मंगाया जाता है। जल विद्युत की आपूर्ति हीराकुड बांध से होती है। कोईल एवं सांख नदियों के संगम और ब्राह्मणी एवं सांख नदियों पर बांध बनाकर जल की व्यवस्था की गई। हावड़ा एवं मुंबई मुख्य रेलमार्ग पर स्थित होने के कारण इसे समृद्ध परिवहन की सुविधा भी प्राप्त हो जाती है।

13.2.6 भिलाई इस्पात संयंत्र

हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड के सार्वजनिक क्षेत्र के इस्पात कारखानों की शृंखला में यह दूसरा कारख़ाना जिसकी स्थापना तत्कालीन सोवियत संघ की सहायता से वर्ष 1957 ई. में की गई थी। इस कारखाने में इस्पात का उत्पादन 4 फरवरी 1959 ई. से शुरू हुआ था। प्रारम्भिक समय में इसकी उत्पादन क्षमता 10 लाख टन थी, जिसे वर्तमान समय में बढ़ा कर 52 लाख टन कर दिया गया है। इसके द्वारा 27 लाख टन ढलवा लोहा जबकि 25 लाख टन इस्पात प्रतिवर्ष उत्पादित किया जाता है। इस प्रकार सकल उत्पादन की दृष्टि से यह देश का सबसे बड़ा कारख़ाना है।

रूसी तकनीक एवं सहयोग से संचालित भिलाई कारखाने को लौह - अयस्क की आपूर्ति डल्ली राजहरा क्षेत्र से होती है। हेमेटाईट प्रकार इस लौह अयस्क में शुद्ध धातु की मात्रा 65% प्राप्त होती है। झारखण्ड की बोकारो, कारगुर्ली एवं झरिया तथा छत्तीसगढ़ की कोरबा खान से ईधन हेतु कोयले की आपूर्ति होती है। दुग्धा एवं कारगली से धुला कोयला भी आता है। कोरबा ताप विद्युत गृह से विद्युत की आपूर्ति होती है। नंदिनी खान से चूना पत्थर, छत्तीसगढ़ की विलासपुर की हिर्री खान से डोलोमाईट और बालोच क्षेत्र से क्वार्टजाईट प्राप्त होता है। मुंबई एवं कोलकाता के मुख्य मार्ग पर स्थित होने के कारण इसके उत्पाद उपभोग क्षेत्रों तक आसानी से पहुँच जाते है।

13.2.7 दुर्गापुर इस्पात संयंत्र

हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड के तीसरे इस्पात संयंत्र की स्थापना पश्चिम बंगाल के वर्धमान जिले में वर्ष 1959 ई. हुई थी। इस कारखाने का निर्माण ब्रिटेन की तकनीक एवं आर्थिक सहयोग से हुआ था। इस कारखाने में इस्पात का उत्पादन वर्ष 1962 ई. में शुरू हो सका था। यह संयंत्र कोलकाता आसनसोल रेलमार्ग पर कोलकाता से 176 किमी. की दूरी पर स्थित है। प्रारम्भ में इसकी उत्पादन क्षमता 10 लाख टन इस्पात पिण्ड की थी परंतु बाद में विस्तार होने के कारण अब यह 40 लाख टन है। यहाँ के उत्पादित इस्पात से रेल का पहिया, पटरियाँ, धुरियाँ एवं छड़ों का उत्पादन होता है।

इस संयंत्र को लौह - अयस्क झारखण्ड के सिंहभूमि जिले की गुआ क्षेत्र की बोलनी खदानों तथा ओडिशा की मयूरभंज खान से प्राप्त होता है। कोयले की आपूर्ति झरिया एवं रानीगंज खानों से होती है। प्रारम्भिक समय में चूना पत्थर हाथीबाड़ी एवं वीरमित्रपुर की खानों से प्राप्त किया जाता था परंतु वर्तमान समय में यह सुन्दरगढ़ एवं क्योंझर से आता है। मैगनीज़ ओडिशा की बारविल खान से प्राप्त किया जाता है। जल की आपूर्ति दामोदर नदी पर बने दुर्गापुर बैराज से होती है। दिल्ली एवं कोलकाता से सड़क और रेलमार्ग द्वारा दुर्गापुर की सम्बद्धता अनुकूल है, इसलिए इसके उत्पाद बाज़ार क्षेत्र तक सुगमता से पहुँच जाते है।

13.2.8 बोकारो इस्पात संयंत्र

हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड के प्रावधानों के अंतर्गत स्थापित होने वाला यह चौथा कारख़ाना है। इस कारखाने को झारखण्ड के हज़ारीबाग जिले में बोकारो एवं दामोदर नदियों के संगम पर वर्ष 1964 ई. स्थापित किया गया था। इसके लिए तकनीक एवं आर्थिक सहायता सोवियत संघ से प्राप्त की गई थी। वर्ष 1972 ई. में इसमें इस्पात का उत्पादन शुरू हुआ तथा प्रारम्भिक समय में इसकी उत्पादन क्षमता 17 लाख टन थी जिसे उदारीकरण के पश्चात बढ़ाकर 40 लाख टन कर दिया गया था। आने वाले समय में इसके उत्पादन क्षमता को बढ़ाकर 100 लाख टन करने की योजना है जिससे यह भारत का सबसे बड़ा लौह एवं इस्पात उत्पादक केंद्र बन जाएगा।

इस कारखाने को ओडिशा की खानों से लौह - अयस्क तथा झरिया एवं बोकारो क्षेत्र से कोयला प्राप्त होता है। यहाँ चूना पत्थर की आपूर्ति झारखण्ड के पलामू, भावनापुर एवं डाल्टनगंज से होती है। दामोदर घाटी से सस्ती बिजली प्राप्त हो जाती है। यह कारख़ाना कोलकाता बन्दरगाह से लगभग 300 किमी. की दूरी पर स्थित है, इसलिए इससे जुड़े समस्त आयात - निर्यात कार्यों का सम्पादन कोलकाता से होता है।

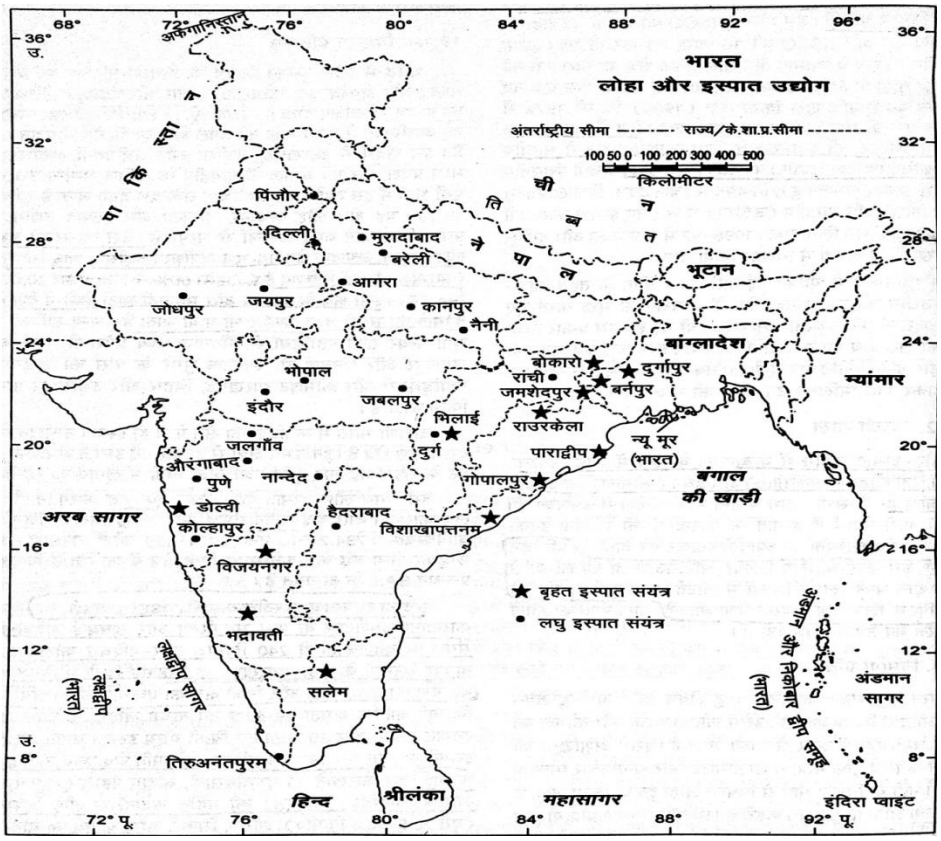

चित्र संख्या 13.1 भारत में लौह एवं इस्पात उद्योग का वितरण।

13.2.9 विशाखापट्टनम इस्पात संयंत्र

विशाखापट्टनम इस्पात संयंत्र भारत में किसी भी बन्दरगाह पर स्थापित होने वाला पहला कारख़ाना है। इसे आंध्र प्रदेश में विशाखापट्टनम बन्दरगाह पर स्थापित किया गया है। इसे विशाखापट्टनम स्टील प्लान्ट के नाम से जाना जाता है। इस संयंत्र हेतु लौह - आयक की आपूर्ति छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले की बैलाडिला खान से होता है। बन्दरगाह पर अवस्थित होने कारण इसे कोकर कोयला तथा अन्य को विदेशों से मंगाने में सुविधा होती है। प्रारम्भिक अवस्था में इसकी लौह - इस्पात उत्पादन क्षमता 15 लाख टन थी जबकि बाद में इसमें वृद्दि की गई थी।

13.2.10 विजयनगर इस्पात संयंत्र

इस इस्पात संयंत्र को कर्नाटक राज्य के विजय नगर नामक स्थान पर स्थापित किया गया है जो कि हास्पेट जिले में स्थित है। यह पूर्ण रूप से भारतीय तकनीक एवं प्रौद्योगिकी पर स्थापित संयंत्र है। इसकी उत्पादन क्षमता 32 लाख टन उच्च कोटि इस्पात तैयार करने की है। वर्तमान समय में इसकी उत्पादन क्षमता में विस्तार करके दुगुना करने की योजना है। धारवाड़ चट्टानों से पूरी तरह निर्मित इस क्षेत्र से संयंत्र हेतु उच्च कोटि का लौह - अयस्क, चूना पत्थर, मैगनीज़ एवं डोलोमाईट प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो जाते है। इस कारखाने की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इससे नर्म इस्पात का उत्पादन होता है।

13.2.11 सलेम इस्पात संयंत्र

यह संयंत्र तमिलनाडु राज्य में सलेम नामक स्थान पर स्थापित किया गया है। इसमें लौह अयस्क का उत्पादन मार्च 1982 ई. से शुरू हुआ था। प्राचीन धारवाड़ चट्टानों की मौजूदगी के कारण इस क्षेत्र में मैग्नेटाइट प्रकार का लौह - अयस्क, लिग्नानाईट कोयला, मैगनीज़ एवं डोलोमाईट प्रचुर मात्र में उपलब्ध है। इस कारखाने की कुल उत्पादन क्षमता 20 लाख टन है, जिसमें से 32,000 टन जंग रहित इस्पात होता है।

13.2.12 पाराद्वीप इस्पात संयंत्र

बन्दरगाह पर स्थापित होने वाला यह भारत का दूसरा इस्पात संयंत्र है जो कि ओडिशा राज्य के देतड़ी क्षेत्र में स्थित है। इस संयंत्र को

स्थानीय स्तर पर ओडिशा से ही उच्च कोटि का लौह - अयस्क, चूना पत्थर एवं मैगनीज़ की आपूर्ति हो जाती है। पाराद्वीप बन्दरगाह की उपस्थिती के कारण इसके आगतों की आपूर्ति एवं निर्गतों का निर्यात आसानी से सम्पन्न हो जाता है।

13.2.13 लौह - इस्पात उत्पादन में प्रगति

यद्यपि लौह - अयस्क उद्योग को सभी विकास का आधार माना जाता है। इसके विकास एवं प्रगति को किसी देश के विकास का मानक माना जाता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से आज तक देश में लौह - इस्पात के उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुई है। 1950 - 51 में देश में कुल 16.92 लाख टन ढलवाँ लोहा, 14.78 लाख टन कच्चा लोहा और 10.41 लाख टन शुद्ध परिष्कृत लोहा का उत्पादन होता था। औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित करने वाली नीतियों के फलस्वरूप राऊरकेला, भिलाई एवं दुर्गापुर कारखानों के शुरू हो जाने से वर्ष 1970 - 71 में यह उत्पादन बढ़ कर क्रमश: 39.93 लाख टन, 61.44 लाख टन और 46.40 लाख टन हो गया।

सारणी : 13.1 भारत में लौह इस्पात उद्योग उत्पादन में प्रगति (दस लाख मीट्रिक टन में)

क्र. सं.	उत्पादन वर्ष	ढलवाँ लोहा	कच्चा इस्पात	शुद्ध परिष्कृत लोहा
1.	1950 - 51	1.692	1.478	1.041
2.	1960 - 61	4.311	3.485	2.390
3.	1970 - 71	6.993	6.144	4.640
4.	1980 - 81	9.556	10.330	8.821
5.	1990 - 91	12.150	11.100	13.532
6.	2000 - 01	22.601	30.600	31.205
7.	2011 - 11	42.900	70.700	68.602
8.	2016 - 17	38.154	97.944	101.811

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा 2017 - 2018.

अगले 20 वर्षों के अवधि में बोकारो कारखाने के शुरू होने एवं पुराने कारखानों की क्षमता में वृद्धि के कारण उत्पादन में लगभग दो गुणी वृद्धि हो गई। नब्बे के दशक में इस्पात की मांग में स्थिरता तथा संयंत्रों के लम्बे निर्माण के कारण उत्पादन में बढ़ोत्तरी की गति धीमी प्राप्त हुई है। इसी प्रकार उपरोक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 1950 - 51 से 2016 - 17 के दौरान देश में इस्पात के उत्पादन में वृद्धि की प्रवृत्ति देखी गई है। इस अवधि में देश के ढलवाँ लोहा के उत्पादन में 22 गुना की, कच्चा इस्पात में 66 गुना एवं शुद्ध परिष्कृत लोहा में 98 गुना की बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है।

13.3 वस्त्र उद्योग

वस्त्र उद्योग अपने आप में एक विस्तृत शब्दावली है जिसमें सूती, ऊनी, रेशमी वस्त्र, पटसन से बने वस्त्र तथा कृत्रिम रेशों से बनाए गए वस्त्र सम्मिलित होते है। भारतीय अर्थव्यवस्था में इस उद्योग का विशिष्ट स्थान है क्योंकि ये कारखाने औद्योगिक उत्पादन, रोजगार के अवसर जुटाने और विदेशी मुद्रा अर्जित करने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वर्तमान समय में भारतीय अर्थव्यवस्था में इस उद्योग का योगदान औद्योगिक उत्पादन में 14%, सकल घरेलू उत्पाद में 4% तथा विदेशी आय अर्जन में 13.5% है। यह उद्योग लगभग चार से पाँच करोड़ व्यक्तियों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार के अवसर प्रदान करता है। इसमें रोजगार पाने वाले अधिकांश लोग आर्थिक रूप से पिछड़े हुए होते है तथा दूर - दराज ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं। रोजगार प्रदान करने के क्षेत्र में इस उद्योग का कृषि के पश्चात दूसरा स्थान है। भारतीय अर्थव्यवस्था की

प्रगति का पहिया इस उद्योग से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा है।

13.3.1 सूती वस्त्र उद्योग

सूती वस्त्र उद्योग को देशी वस्त्र उद्योग के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि इसकी स्थापना एवं विकास मुख्यत: भारतीय उद्यम एवं पूंजी से हुआ है। सूती वस्त्र के उत्पादन के दृष्टिकोण भारत को विश्व में तीसरा स्थान प्राप्त है। रोजगार एवं उत्पादन की दृष्टि से वस्त्र उद्योग की गणना भारत के महत्त्वपूर्ण उद्योगों में होती है। भारत की 16% पूंजी और 20% औद्योगिक श्रमशक्ति इसी में संलग्न है।

13.3.2 सूती वस्त्र उद्योग का विकास

ऐतिहासिक विकासक्रम पर यदि दृष्टिपात किया जाए तो सूती वस्त्र उद्योग का इतिहास लगभग 5,000 वर्ष पुराना है। भारत में सूती वस्त्र की पहली आधुनिक मिल वर्ष 1818 ई. में कोलकाता के पास फोर्ट ग्लास्टर नामक स्थान पर लगाई गई थी। कुछ समय पश्चात यह मिल बंद हो गई परंतु इसका वास्तविक शुभारंभ वर्ष 1854 ई. मुंबई में हुआ था। कवास जी डाबर द्वारा मुंबई में पहली कपड़ा मिल स्थापित की गई थी। मुंबई की भौगोलिक अवस्थिति यहाँ सूती वस्त्र उद्योग के विकास हेतु उत्साहवर्धक रही है। इसके पश्चात यहाँ अनेकों मिले स्थापित हुई और यह सूती वस्त्र उद्योग का संकुल बन गया। गुजरात राज्य के अहमदाबाद शहर में 1861 ई. में शाहपुर मिल और वर्ष 1863 ई. में कैलिको मिल की स्थापना की गई। वर्ष 1879 - 80 ई. तक देश में कुल सूती मिलों की संख्या 58 तक पहुँच गई थी। दोनों विश्व युद्धों के दौरान इस उद्योग को काफी प्रोत्साहन मिला तथा स्वतन्त्रता प्राप्ति तक देश में सूती मिल कारखानों की संख्या बढ़ कर 423 हो गई। देश के विभाजन के दौरान इस उद्योग को काफी नुकसान हुआ और देश के हिस्से में 423 में से 409 मिलें प्राप्त हुई जबकि सम्पूर्ण कपास उत्पादन क्षेत्रफल का मात्र 27% भाग ही देश के पास रहा। इससे सूती मिल कारखानों को कच्चे माल की समस्या का सामना करना पड़ा। इस समस्या के समाधान हेतु भारत सरकार त्वरित कदम उठाए गए तथा देश के अन्य भागों में कपास उत्पादन पर ज़ोर दिया गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात इस उद्योग के विकास में तीव्रता देखी गई तथा वर्ष 2005 - 06 तक इनकी संख्या बढ़कर 1779 हो गई।

13.3.3 सूती वस्त्र उद्योग की अवस्थिति

भारत में सूती वस्त्र उद्योगों की अवस्थिति को प्रभावित करने वाले कारकों रंगाई एवं धुलाई हेतु विभिन्न प्रकार के रसायन, सस्ता एवं प्रचुर श्रमिक, मशीनें, परिवहन और बाज़ार प्रमुख है। इनकी पर्याप्त उपलब्धता इसके स्थनीकरण को प्रभावित करती है। इसके साथ ही इस उद्योग हेतु नम जलवायु की भी आवश्यकता होती है क्योंकि शुष्क वातावरण में धागे जल्दी टुट जाते हैं। तीन प्रमुख कारक विशाल बाज़ार, प्रचुर मात्रा में कच्चा माल और विदेशों से कल पुर्जो तथा मशीनों के आयात की सुगमता भी गहरा प्रभाव डालती है। भारत में अधिक जनसंख्या के साथ उष्ण तथा उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु के कारण यहाँ सूती वस्त्रों का बाजार विस्तृत है। कपास की महत्ता का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि भारत के 80% से अधिक उद्योग कपास उत्पादक क्षेत्रों में स्थित है। कपास एक शुद्ध कच्चा माल है जिसका वजन एक स्थान से दूसरे स्थान तक परिवहन के दौरान घटता नहीं है। इसी कारण इसके विनिर्माण प्रक्रिया में भार कम नहीं होता है और इस पर परिवहन लागत का कोई विशेष प्रभाव नहीं देखा जाता है। अत: जिन क्षेत्रों में कच्चा माल 'कपास' आसानी से उपलब्ध हो जाता है वहीं यह उद्योग आसानी स्थापित हो सकता है। मुंबई शहर को विदेशों से मशीन और सूत के आयात का भी लाभ मिल जाता है साथ ही यहाँ पूँजी भी सहज उपलब्ध हो जाती है। 19वीं शताब्दी के अंतिम दशकों तक यहाँ कुल 82 मिलें स्थापित हो गई तथा सम्पूर्ण भारत के सूती वस्त्र उत्पादन की लगभग आधी क्षमता यहीं केन्द्रित है।

प्रारम्भिक समय में प्रायद्वीपीय भारत तथा उत्तरी मैदान के कपास क्षेत्रों, पूँजी एवं बन्दरगाह सुविधाओं के कारण इसका विकास मुम्बई, अहमदाबाद, कोयम्बटूर, शोलापुर, नागपुर एवं इंदौर आदि केन्द्रों मे हुआ है, परंतु आवागमन एवं नए साधनों के विकास से इसका स्थानांतरण बाज़ार, पूँजी एवं सस्ते कुशल श्रमिक वाले क्षेत्रों की ओर हुआ है। इसका परिणाम यह हुआ है कि अब यह उद्योग उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश के क्षेत्रों में हुआ है।

13.3.4 देश में सूती वस्त्र उद्योग का वितरण

भारत में सूती वस्त्र उद्योग किसी एक क्षेत्र में केन्द्रित नहीं है। यह लगभग भारत के सौ नगरों में वितरित है। इसके उद्योगों की सघनता के आधार पर प्रमुख उत्पादक केन्द्रों को पंचभुज प्रदेश के अंतर्गत रखते है। इस पंचभुज के पाँच बिन्दु अहमदाबाद, मुंबई, शोलापुर, नागपुर एवं इंदौर - उज्जैन है। महाराष्ट्र, गुजरात एवं तमिलनाडु सूती वस्त्र के प्रमुख उत्पादक राज्य है। इसके अन्य उत्पादक राज्यों में पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान और पंजाब है। मुंबई, अहमदाबाद, कोयंबटुर एवं कानपुर इस उद्योग के प्रमुख केंद्र है।

13.3.4.1 महाराष्ट्र

महाराष्ट्र भारत में सूती वस्त्र का सर्वोत्तम उत्पादक राज्य है। यह राज्य भारत के लिए 38% कपड़ा तथा 30% सूट तैयार करता है। इस राज्य का सूती वस्त्र उद्योग लगभग तीन लाख से अधिक लोगों को रोजगार का अवसर भी प्रदान करता है। राज्य में सूती वस्त्र की कुल 119 मिलें स्थित है जिसमें से 57 मिलें अकेले मुंबई में पाई जाती हैं। मुंबई का सूती वस्त्र उद्योग दो लाख व्यक्तियों को आजीविका प्रदान करता है। मुंबई भारत सूती वस्त्र उद्योग का सबसे बड़ा उत्पादक केंद्र है जिसके कारण उसे 'कपास का विराट नगर' भी कहा जाता है। मुंबई में सूती वस्त्र उद्योग के संकेन्द्रण के कारण निम्न है -

- मुंबई के सागर तट पर स्थित होने के कारण इसकी जलवायु आर्द्र है जो वस्त्र उद्योग के लिए अनुकूलतम होती है क्योंकि आर्द्र जलवायु के कारण धागा बार - बार टुटता नहीं है।
- मुंबई एक प्रमुख बन्दरगाह है जिससे भारी मशीनें तथा लम्बे रेशे वाले कपास के आयात में कोई कठिनाई नहीं होती है।
- पश्चिमी घाट पर स्थित होंने के कारण यहाँ जल विद्युत की आपूर्ति सुगमता से हो जाती है।
- यहाँ के धरातलीय पृष्ठभूमि में काली मिट्टी पाई जाती है जो कपास उत्पादन हेतु सर्वोत्तम है, अत: मुंबई को कच्चा माल सुगमता से मिल जाता है।
- यहाँ के आस - पास क्षेत्रों में सस्ते एवं कुशल श्रमिक आसानी से मिल जाते है।
- मुंबई देश के आंतरिक भाग के साथ ही विदेशों से भी अनुकूल परिवहन माध्यमों से जुड़ा हुआ है जिसके कारण इसके उत्पादों की आपूर्ति सभी जगह आसानी से हो जाती है।
- कपड़े की रंगाई एवं धुलाई की उचित सुविधा उपलब्ध है।

मुंबई के अतिरिक्त महाराष्ट्र के अन्य सूती वस्त्र उद्योग के महत्त्वपूर्ण केंद्र शोलापुर, पुणे, सतारा, वर्धा, नागपुर, अमरावती, औरंगाबाद एवं जलगाँव आदि है।

13.3.4.2 गुजरात

सूती वस्त्र के सकल उत्पादन की दृष्टिकोण से गुजरात का दूसरा स्थान है, यहाँ पर कुल मिलों की संख्या 118 है। अहमदाबाद सूती वस्त्र उद्योग की दृष्टि से राज्य का सबसे बड़ा उत्पादक केंद्र है जहाँ 67 मिलें स्थित है। मुंबई के पश्चात अहमदाबाद देश का दूसरा सबसे बड़ा सूती वस्त्र उत्पादक केंद्र है।

अहमदाबाद में सूती वस्त्र उद्योग के संकेन्द्रण के कारण निम्न है -

- मुंबई की भांति अहमदाबाद भी आर्द्र जलवायु क्षेत्र में स्थित है, जो सूती वस्त्र उद्योग के लिए सर्वोत्तम स्थान है,
- अहमदाबाद काली मिट्टी से समृद्ध कपास उत्पादक क्षेत्र में स्थित है जिसके कारण इस उद्योग हेतु कच्चे माल की आपूर्ति सुगमता से हो जाती है।
- यहाँ पर सस्ती बिजली की उपलब्धता भी आसानी से हो जाती है।
- स्थानीय जनसंख्या के साथ ही अहमदाबाद उत्तर प्रदेश एवं बिहार जैसे जनबाहुल्य क्षेत्र के ज्यादा समीप है जिसके कारण इस उद्योग के लिए अपेक्षाकृत प्रशिक्षित एवं सस्ते श्रमिक उपलब्ध हो जाते है।
- मुंबई की अपेक्षा यहाँ भूमि का मूल्य सस्ता है जिसके कारण मिल मालिकों को यहाँ मिलें स्थापित करने हेतु कम प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है।
- अहमदाबाद के कारखानों में अधिकतर सस्ते सूती वस्त्र जिसमें लट्ठा एवं धोतियाँ सम्मिलित होती है। इनकी भारत एवं अन्य गरीब देशों में अधिक मांग होती है।

गुजरात के अन्य प्रमुख सूती वस्त्र उत्पादक केंद्र सूरत, भरूच, बड़ोदरा, राजकोट, मोरबी, पोरबन्दर, बल्लीमोर एवं भावनगर आदि है।

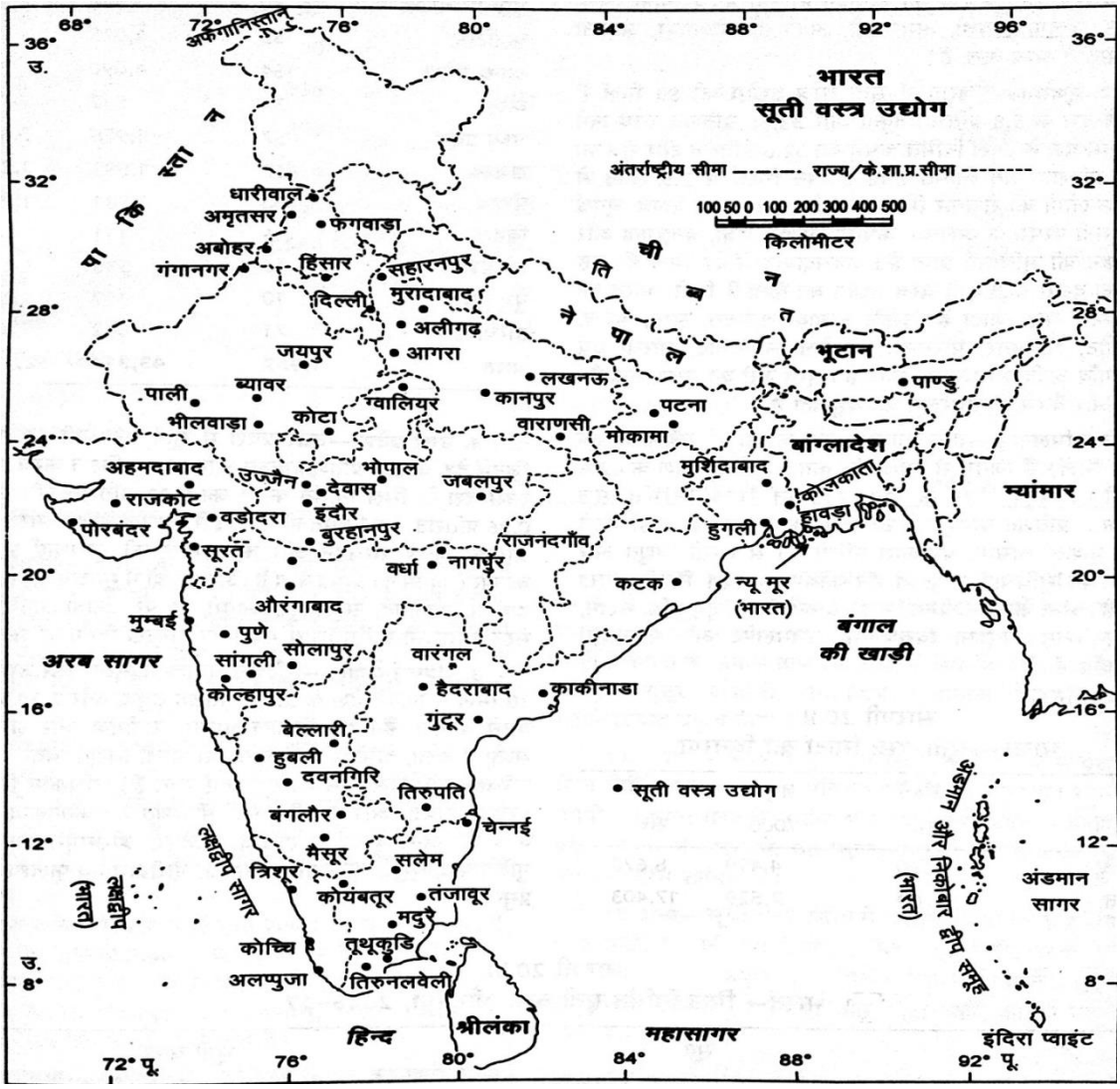

चित्र संख्या 13.2 भारत में सूती वस्त्र उद्योग का वितरण।

13.3.4.3 मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश का अधिकांश भाग भूगर्भीक दृष्टिकोण से दक्कन ट्रेप का भाग है। इस कारण यहाँ काली मिट्टी की प्रचुर मात्रा पायी जाती है जो कपास उत्पादन हेतु सर्वोत्तम है। मध्य प्रदेश को झारखण्ड, छत्तीसगढ़ एवं ओडिशा से कोयले की आपूर्ति भी हो जाती है जो यहाँ पर सूती वस्त्र उद्योग के स्थापन हेतु अनुकूल स्थिति प्रदान करती है। आर्थिक रूप से पिछड़ा प्रदेश होने के कारण यहाँ सस्ते श्रमिक मिल जाते है। मध्य प्रदेश के सूती वस्त्र उत्पादक केन्द्रों में ग्वालियर, इंदौर, उज्जैन, देवास, रतलाम, भोपाल एवं जबलपुर प्रमुख है।

13.3.4.4 पश्चिम बंगाल

इस राज्य का सूती वस्त्र का सबसे बड़ा उत्पादक केंद्र कोलकाता है। कोलकाता को आर्द्र जलवायु, रानीगंज से कोयला, घनी जनसंख्या से श्रमिक, रासायनिक उद्योगों से धोने एवं रंगने की सुविधा के साथ - साथ देश के आंतरिक भागों की तरह विदेशी व्यापार तक पहुँच आसानी से हो जाती है। कोलकाता एक प्रमुख बन्दरगाह भी है जिसके कारण यहाँ आयात - निर्यात की सर्वोत्तम सुविधा भी उपलब्ध हो जाती है। कोलकाता क्षेत्र में स्थित सूती वस्त्र उद्योग को जिस प्रमुख समस्या का सामना करना पड़ता है वह है कपास उत्पादक क्षेत्रों से अधिक दूरी। इसके कारण अन्य केन्द्रों की तुलना में यहाँ पहुँचने वाले कच्चे माल की कीमत में वृद्धि हो जाती है। इस राज्य के अन्य प्रमुख उत्पादक केन्द्रों हावड़ा, मुर्शिदाबाद, हुगली, शेरमपुर, श्यामपुर एवं पनिहार है।

13.3.4.5 उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश में सूती वस्त्र उद्योग का अधिकांश विकास राज्य के पश्चिमी भाग में हुआ है। पूर्वी भाग बाढ़ जैसी समस्या से प्रभावित रहता है। उत्तर प्रदेश जनसंख्या की दृष्टि से देश का सबसे बड़ा राज्य है जिसके कारण यहाँ श्रमिकों की पूर्ति आसानी से हो जाती है। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र से सम्बद्ध होने के कारण पश्चिमी उत्तर प्रदेश आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न है। इसके साथ ही कपास उत्पादक क्षेत्रों और मुंबई तथा काण्डला बन्दरगाहों के नजदीक होने के कारण परिवहन की सुविधा सस्ती एवं अनुकूलतम प्राप्त हो जाती है। इस राज्य का सबसे बड़ा सूती वस्त्र उत्पादक केंद्र कानपुर है। इसे उत्तर प्रदेश के 'मानचेस्टर' के नाम से भी जाना जाता है। राज्य में सूती वस्त्र उत्पादन की कुल 14 मिलें है। यहाँ पर सूती वस्त्र उत्पादन के अन्य प्रमुख केन्द्रों में मुरादाबाद, वाराणसी, बरेली, आगरा, अलीगढ़, मोदीनगर, सहारनपुर, इटावा एवं मिर्ज़ापुर आदि है।

13.3.4.6 तमिलनाडु

मिलों की संख्या की दृष्टि से तमिलनाडु दूसरा सबसे बड़ा राज्य है जहाँ सूती वस्त्र मिलों की संख्या 439 है। इनमें से 416 मिलें कताई वाली है। इसमें से अधिकांश के आकार छोटे हैं जिसके कारण कुल उत्पादन कम होता है। राज्य का कोयंबटूर शहर सूती वस्त्र का सबसे बड़ा उत्पादक है जिसे ' तमिलनाडु का मानचेस्टर' कहते हैं। यहाँ सूती वस्त्र की 200 मिलें केन्द्रित है। इसके पश्चात चेन्नई का स्थान है। यहाँ भी 110 मिलें स्थित है। तमिलनाडु में सूती वस्त्र उद्योग के अन्य प्रमुख केंद्र तिरुनेलवेली, तिरुचिराल्ली, मदुरै, सलेम, पेरांबूर, तूतीकोरिन, काकीनाड़ा एवं एलोरा आदि है।

उपरोक्त राज्यों के अतिरिक्त भी अन्य राज्यों में सूती वस्त्र का उत्पादन होता है जिनका विवरण निम्नवत प्रस्तुत किया गया है -

13.3.4.7 आन्ध्र प्रदेश - हैदराबाद, सिकंदराबाद, गुंटूर, देवगिरि, पूर्वी गोदावरी आदि।

13.3.4.8 केरल - तिरुवनंतपुरम, अलप्पी, अलगप्पा, किवलोन, अलवाए चोलापुरम आदि।

13.3.5 सूती वस्त्र उत्पादन में प्रगति

सूती वस्त्र उद्योग वस्त्र उद्योग का सबसे बड़ा भाग है। इसके उत्पादन एवं प्रगति को भारतीय अर्थव्यवस्था से जोड़ कर देखा जाता है। इस अध्याय में भारत में सूती वस्त्र उद्योग की प्रगति को जानने के लिए वर्ष 1950 - 51 से 2016 - 17 तक के आकड़ों को विश्लेषित किया गया है। इस अवधि में देश में सूत एवं सूती वस्त्र उद्योग के उत्पादन में क्रमश: 7.6 एवं 9.57 वृद्धि देखी है।

सारणी : 13.2 भारत में सूत एवं सूती वस्त्र उद्योग में प्रगति

क्र. सं.	उत्पादन वर्ष	सूत उत्पादन (करोड़ किग्रा.)	भारत में सूती वस्त्र का उत्पादन (करोड़ वर्ग मीटर में)		
			मिलों में उत्पादन	विकेंद्रित क्षेत्र में उत्पादन	सकल उत्पादन
1.	1950 - 51	53.30	340.14	81.46	421.60
2.	1960 - 61	78.85	464.99	208.91	673.90
3.	1970 - 71	92.91	405.58	354.74	760.32
4.	1980 - 81	106.72	343.44	493.41	836.85
5.	1990 - 91	151.06	185.94	1,357.25	1,543.19
6.	2000 - 01	226.75	110.62	1,861.28	1,971.90
7.	2010 - 11	349.01	160.43	3,011.47	3,171.90
8.	2016 - 17	405.55	150.00	3,883.75	4,033.75

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा 2017 - 2018.

उपरोक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि जहाँ वर्ष 1950 - 51 में लगभग 80% से अधिक सूती कपड़े का उत्पादन केवल मिलों द्वारा होता था वहीं वर्ष 1980 - 81 में उसका योगदान घट कर 41% रह गया तथा वर्ष 2016 - 17 में मात्र 3.71% सहभागिता दर्ज करा पाया है । वर्तमान समय में देश में सूती वस्त्र के उत्पादन पावरलूम एवं हथकरघा का प्रमुख योगदान है । पावरलूम एवं हथकरघा का सूती वस्त्र उद्योग में बढ़ता योगदान औद्योगिक विकेंद्रीकरण और आर्थिक विकास का परिणाम है ।

13.4 कागज उद्योग

वर्तमान समय में कागज का प्रयोग एवं महत्त्व दिन - प्रतिदिन की वस्तु के रूप में हो गया है । आर्थिक विकास एवं शिक्षा के प्रसार के कारण कागज की मांग में तीव्रता से वृद्धि हुई है । आजकल कागज के उपभोग के दर को किसी देश की उन्नति का सूचक माना जाता है, जिस देश में जितना ही कागज उत्पादन एवं उपभोग होता है उसे समृद्ध देश माना जाता है । हमारे देश में कागज की उपभोग की दर 7 किग्रा. प्रतिव्यक्ति है जो विश्व की औसत खपत 50 किग्रा. प्रतिव्यक्ति से बहुत कम है ।

13.4.1 भारत में कागज उद्योग का विकास

भारत प्राचीन संस्कृति एवं सभ्यता का जिसका इतिहास विभिन्न प्रकार की विविधताओं से युक्त है । जहाँ प्राचीन कल में लेखन कार्य हेतु बेलपत्र, ताम्र पत्र एवं शिलालेखों का उपयोग किया जाता था परंतु वर्तमान समय में सभी लेखन कार्यों हेतु कागज का ही प्रयोग किया जाता है । भारत में प्रथम कागज मिल की स्थापना वर्ष 1832 ई. पश्चिम बंगाल के श्रीरामपुर में हुई थी । वर्ष 1870 ई. में कोलकाता के समीप 'बाली मिल्स' स्थापित हुई । इसके पश्चात लखनऊ में वर्ष 1879 ई. में 'अपर इण्डिया कूपर पेपर मिल्स' एवं वर्ष 1882 ई. में टीटागढ़ में 'टीटागढ़ पेपर मिल्स' की स्थापना की गई । इस प्रकार वर्ष 1900 ई. तक भारत में कुल कागज मिलों की संख्या 7 हो गई थी । दोनों विश्वयुद्धों के दौरान कागज उद्योग की प्रगति में तीव्रता की प्रवृत्ति देखी गई । आजादी के बाद देश में कागज उद्योग के विकास की प्रगति में उल्लेखनीय वृद्धि हुई ।

वर्ष 1950 - 5 ई. में देश में कागज की 17 मिलें थी जिनकी उत्पादन क्षमता 1.3 लाख टन थी । वर्तमान समय में देश में लगभग 700 से अधिक लुग्दी एवं कागज की मिलें है । इनके द्वारा प्रतिवर्ष लगभग 58 लाख टन कागज एवं गत्ते तथा 7.7 लाख टन अखबारी कागज का निर्माण होता है । इस समय इस उद्योग की कागज एवं गत्ते निर्माण की क्षमता 75 लाख टन है जबकि अखबारी कागज बनाने की क्षमता 13 लाख टन है ।

13.4.2 भारत में कागज उद्योग का वितरण

देश में स्थित अधिकांश कागज की मिलें कच्चे माल के स्त्रोत और बाज़ार की निकटता से प्रभावित है । भारत में कागज एवं गत्तों के मुख्य उत्पादक राज्य पश्चिम बंगाल, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश है । भारत की कागज मिलों के भौगोलिक वितरण को निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत किया गया है -

13.4.2.1 पश्चिम बंगाल

यह राज्य भारत का सबसे बड़ा कागज उत्पादक राज्य है । यहाँ कागज निर्माण की कुल 13 मिलें स्थित हैं । इनमें से अधिकांश मिलें हुगली नदी के तट के सहारे कोलकाता के आस - पास वितरित है । पश्चिम बंगाल के प्रमुख उत्पादक केंद्र टीटागढ़, नेहारी, रानीगंज, काकीनगर, त्रिवेणी, कोलकाता, बड़ानगर, चन्द्रहारी एवं शिवराकुली आदि है । टीटागढ़ न केवल पश्चिम बंगाल का बल्कि देश की सबसे बड़ी कागज उत्पादक मिल है । पश्चिम बंगाल मेन स्थित ये कारखाने सुन्दरवन डेल्टाई क्षेत्र, बिहार, असम एवं ओडिशा से बांस तथा मध्य प्रदेश से सवाई घास को कच्चे माल के रूप में प्रयोग करते है । रानीगंज एवं झरिया खानों से ईंधन हेतु कोयले की आपूर्ति हो जाती है । गंगा एवं उसकी सहायक नदियां स्वच्छ जल का महत्त्वपूर्ण स्त्रोत होती है । आस - पास के क्षेत्रों में घनी आबादी होने के कारण सस्ते एवं कुशल श्रमिकों की पर्याप्त संख्या उपलब्ध हो जाती है । इस उद्योग को कोलकाता बन्दरगाह विदेशों से कच्चे माल एवं तकनीकी के आयात की सुविधा के साथ ही निर्यात के अवसर भी उपलब्ध हो जाते है ।

13.4.2.2 आन्ध्र प्रदेश

आन्ध्र प्रदेश देश का दूसरा सबसे बड़ा कागज उत्पादक राज्य है । यहाँ देश के सम्पूर्ण कागज उत्पादन का 13.4% भाग उत्पादित होता है । यहाँ कागज के चार प्रमुख कारखाने हैं जो पश्चिमी गोदावरी जिले के राजमुन्दरी, आदिलाबाद जिले के सिरपुर और निजामाबाद जिले के बोधन एवं कागजनगर स्थान पर स्थित है । यहाँ की अधिकांश मिलें कच्चे माल के रूप में स्थानीय स्तर पर उपलब्ध बाँस का प्रयोग करती है ।

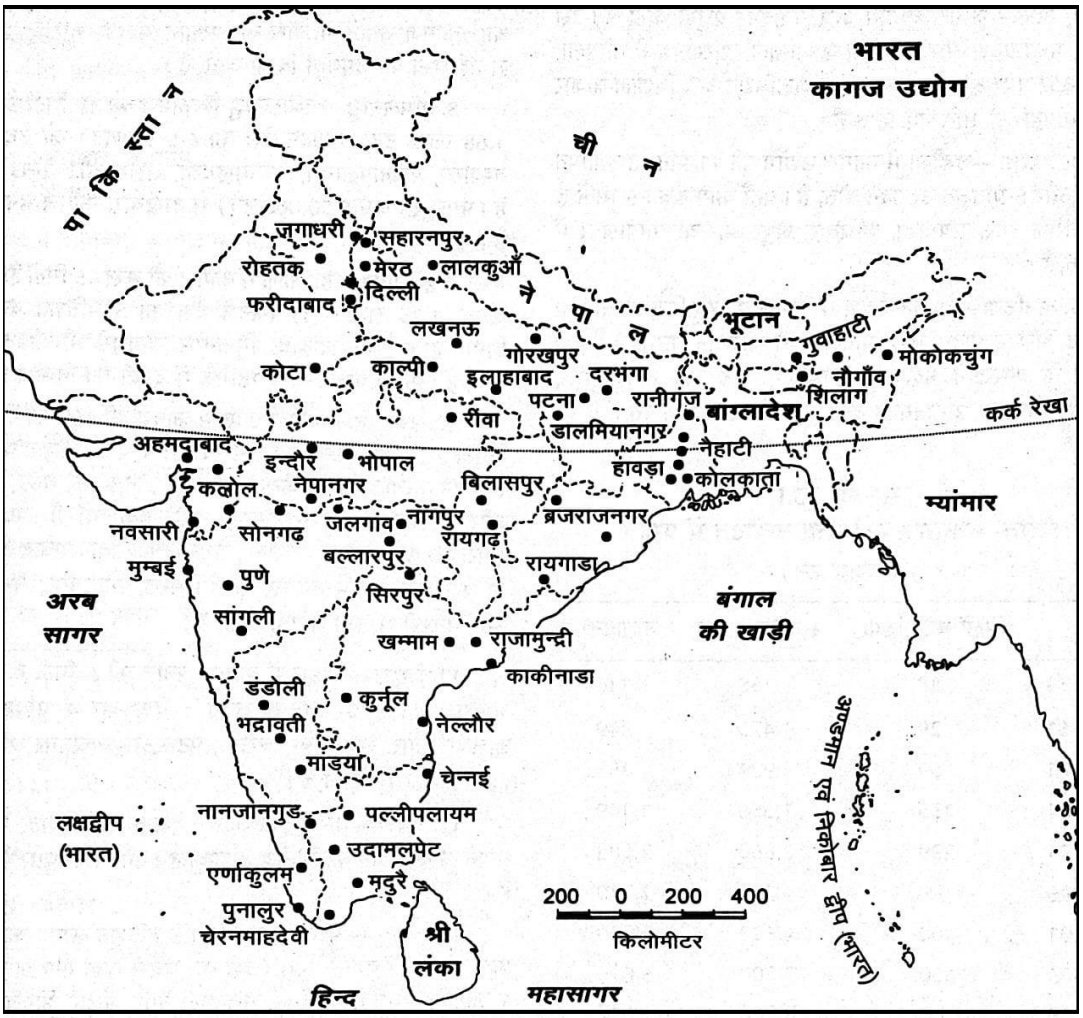

चित्र संख्या 13.3 भारत में कागज उद्योग का वितरण।

13.4.2.3 महाराष्ट्र

महाराष्ट्र देश में कागज के सम्पूर्ण उत्पादन की दृष्टिकोण से तीसरे स्थान पर है, जो सकाल उत्पादन का 10% भाग उत्पादित करता है। यहाँ कागज की कुल 14 मिलें स्थापित हैं। महाराष्ट्र में कागज उद्योग के प्रमुख केंद्र मुंबई, हदापसार (पुणे), श्रीरामपुर, चिंचवाड़, बल्लारपुर, कांपटी, रोहा (कोलाबा), कल्याण, वासरनगोप, बिखरौली, एवं गोरेगाँव में स्थित हैं। कागज निर्माण हेतु इस राज्य की मिले स्थानीय बाँस के साथ गन्ने की खोई, चिथड़े एवं आयातित लुग्दी का प्रयोग करती है। बोर्ड पेपर के निर्माण हेतु विशेषरूप से चावल का छिलका एवं गन्ने की खोई का उपयोग किया जाता है।

13.4.2.4 कर्नाटक

कर्नाटक भी कागज का महत्त्वपूर्ण उत्पादक राज्य है। यहाँ कागज की कुल 6 मिलें स्थापित है जो डांडेली, बेलागुला, मुनिराबाद, रामनगरम एवं वाटप्रभा नामक स्थानों पर स्थित है। यहाँ की अधिकांश मिलें कच्चे माल के रूप में बाँस का प्रयोग करती है जो स्थानीय स्तर पर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। बेलागुला एवं मुनिराबाद कागज मिलों की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि ये कच्चे माल के रूप में गन्ने की खोई के साथ रद्दी कागज का भी प्रयोग करते है।

13.4.2.5 मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश में कागज मिलों की कुल संख्या 7 है जो भोपाल, इंदौर, रतलाम, विदिशा, नेपानगर, होशंगाबाद एवं शहडोल में स्थित है। यहाँ की मिलें कच्चे माल के रूप में स्थानीय स्तर पर उपलब्ध बाँस, सलाई एवं यूकेलिप्टस के वृक्षों की लकड़ी आदि का प्रयोग करते है।

13.4.3 भारत में कागज के उत्पादन में प्रगति

देश में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात कागज निर्माण की स्थापित क्षमता एवं उत्पादन में तेजी से वृद्धि हुई है। आर्थिक विकास एवं नियोजन नीतियों के कारण यह प्रगति देखी गई।

सारणी : 13.3 भारत में कागज उद्योग के उत्पादन में वृद्धि (हजार टन)

क्र. सं.	उत्पादन वर्ष	मिलों की कुल संख्या	मिलों की स्थापित क्षमता	सकल उत्पादन
1.	1950 - 51	18	158	116.58
2.	1960 - 61	29	470	349.08
3.	1970 - 71	59	924	755.63
4.	1980 - 81	135	1,656	1,149.36
5.	1990 - 91	299	2,860	2,088.00
6.	2000 - 01	400	4,600	3,090.16
7.	2008 - 09	700	7,500	6,517.85
8.	2014 - 15	813	9758	16,630.12

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा 2017 - 2018.

उपरोक्त सारणी के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि इस अवधि के दौरान उत्पादन क्षमता में 80 गुना की वृद्धि हुई वहीं कागज के उत्पादन में 102 गुना की बढ़ोत्तरी देखी गई है। वर्ष 2010 में लगभग 8.3 मिलियन टन कागज का उपयोग किया जाता था, जिसके कारण अनेकों उद्योगों की स्थापना की गई। इसके साथ ही पुरानी मिलों की उत्पादन क्षमता में आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके बढ़ाया गया।

13.5 चीनी उद्योग

गन्ना भारतीय उपमहाद्वीप का मौलिक पौधा माना जाता है। इसका विवरण भारतीय लेखकों के साथ ही विदेशी यात्रियों एवं पर्यटकों के लेखों में मिलता है। अथर्ववेद, विष्णु गुप्त का अर्थशास्त्र एवं मेगस्थनीज की इण्डिका में इसके प्रमाण मिलते है। भारत के साथ ही विश्व के अनेक देशों में चीनी गन्ना एवं खाण्डसारी से बनाई जाती है। भारत विश्व का प्रमुख गन्ना उत्पादक देश है। इस उद्योग से लगभग पाँच लाख लोगों को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार मिला हुआ है, जबकि गन्ना उत्पादक किसानों को यदि सम्मिलित किया जाए तो लगभग 25 मिलियन किसानों को इससे आर्थिक लाभ प्राप्त होता है।

13.5.1 चीनी उद्योग का ऐतिहासिक विकास

भारत में चीनी बनाने के आधुनिक कारखाने लगाने का प्रथम प्रयास डच व्यापारियों द्वारा 1840 ई. में किया गया। यह कारख़ाना बिहार राज्य में स्थापित किया गया था परंतु असफल रहा। इसके पश्चात ब्रिटिश उद्योगपतियों द्वारा 20वीं सदी के प्रारम्भिक दशक में प्रतापपुर, पुर्सा, वाराचकिया और मढ़ोवरा क्षेत्र जो पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार के समीपवर्ती जिलों में स्थापित किए गए। इस प्रयास को काफी सफलता भी मिली। सरकार द्वारा वर्ष 1931 ई. में चीनी के आयात पर शुल्क लगा देने के कारण इस उद्योग को काफी प्रोत्साहन मिला। इसी का परिणाम था कि वर्ष 1931 ई. में जहाँ चीनी मिलों की संख्या 32 थी बढ़ कर 1951 ई. में 137 हो गई तथा उत्पादन बढ़ कर 1.6 लाख टन से 10 लाख टन हो गया। वर्ष 1950 - 51 ई. में देश में कुल 139 चीनी मिलें थी जिनसे 11.34 लाख टन उत्पादन होता था। नियोजन काल के दौरान चीनी उद्योग की प्रगति में काफी वृद्धि देखी गई है, इसी का परिणाम था कि वर्ष 2000 - 01 ई. तक इनकी संख्या बढ़ कर 450 हो गई तथा कुल उत्पादन 18.51

मिलियन लाख टन हो गया। इसी प्रकार वर्ष 2007 - 2008 में देश चीनी उद्योगों की संख्या 553 थी जिनमें से 70 सार्वजनिक क्षेत्र, 271 सहकारी क्षेत्र एवं 175 निजी क्षेत्र की मिलें सम्मिलित है।

सारणी : 13.4 भारत में चीनी उद्योग की प्रगति

क्र. सं.	वर्ष	देश में मिलों की संख्या	कुल उत्पादन (लाख टन)
1.	1931 - 40	32	1.605
2.	1940 - 50	137	9.190
3.	1950 - 51	139	11.304
4.	1960 - 61	174	30.029
5.	1970 - 71	215	51.480
6.	1980 - 81	315	120.470
7.	1990 - 91	380	147.810
8.	2000 - 01	450	185.100
9.	2010 - 11	-	274.305
10.	2014 - 15	-	278.500

स्त्रोत : आर्थिक सर्वेक्षण, 2018 - 2019.

13.5.2 भारत में चीनी उद्योगों का वितरण

यद्यपि चीनी उद्योग में प्रयुक्त कच्चा माल गन्ना एक भारी एवं वजन ह्रास वाला पदार्थ तथा दूर तक परिवहित करने से इसकी गुणवत्ता घटने लगती है। यही कारण है कि चीनी उद्योग के केंद्र गन्ना उत्पादक क्षेत्रों के निकट पाए जाते हैं। उत्तर प्रदेश एवं बिहार में सर्वाधिक गन्ना उत्पादन के कारण देश की चीनी का लगभग 93% उत्पादन यहीं होता है और देश की अधिकांश चीनी मिलें इन्हीं राज्यों में लगाई गई है। भारत में चीनी मिलों के वितरण की व्याख्या निम्न प्रकार से की गई है -

13.5.2.1 महाराष्ट्र

चीनी के सकल उत्पादन के दृष्टिकोण से महाराष्ट्र का प्रथम स्थान है। यह राज्य देश के सम्पूर्ण उत्पादन में 34.43% भाग का योगदान करता है जबकि 2002 - 03 में इसकी सहभागिता मात्र 29.20% ही थी। यहाँ चीनी की कुल 172 मिलें स्थित हैं जिनमें 87 सहकारी क्षेत्र में है। यहाँ गोदावरी, कृष्णा, प्रवरा एवं नीरा नदियों के सिंचित काली मिट्टी के क्षेत्रों में अत्यधिक गन्ना पैदा किया जाता है। इस क्षेत्र में उत्पादित गन्ने में शर्करा का अंश अधिक होता है जिस कारण इनसे अधिक मात्रा में चीनी का उत्पादन होता है। अहमद नगर यहाँ चीनी का प्रमुख उत्पादक केंद्र है। इसके अतिरिक्त शोलापुर, कोल्हापुर, सतारा, पुणे, सांगली, नासिक, डोलागाँव, माली नगर, सक्करवाणी एवं हरगाँव को भी प्रमुख चीनी उत्पादक स्थानों के रूप में जाना जाता है। महाराष्ट्र में अधिकांश आधुनिक तरीके से बड़ी मिलें लगाई गई हैं, जिनमें पेराई की अवधि 140 दिन से अधिक दर्ज की जाती है।

13.5.2.2 उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश का देश में चीनी उत्पादन में दूसरा स्थान है। यह देश के चीनी उत्पादन का 27.8% भाग उत्पादित करता है जबकि पूर्व में यह देश का सबसे बड़ा चीनी उत्पादक राज्य था। यहाँ चीनी की कुल 132 मिलें स्थित है जो राज्य के पश्चिमी भाग एवं पूर्वी तराई प्रदेश में केन्द्रित है। यह राज्य पहले सबसे बड़ा चीनी उत्पादक था परंतु अब इसके उत्पादन में गिरावट आयी है। इस गिरावट कारण यहाँ की चीनी मिलों का

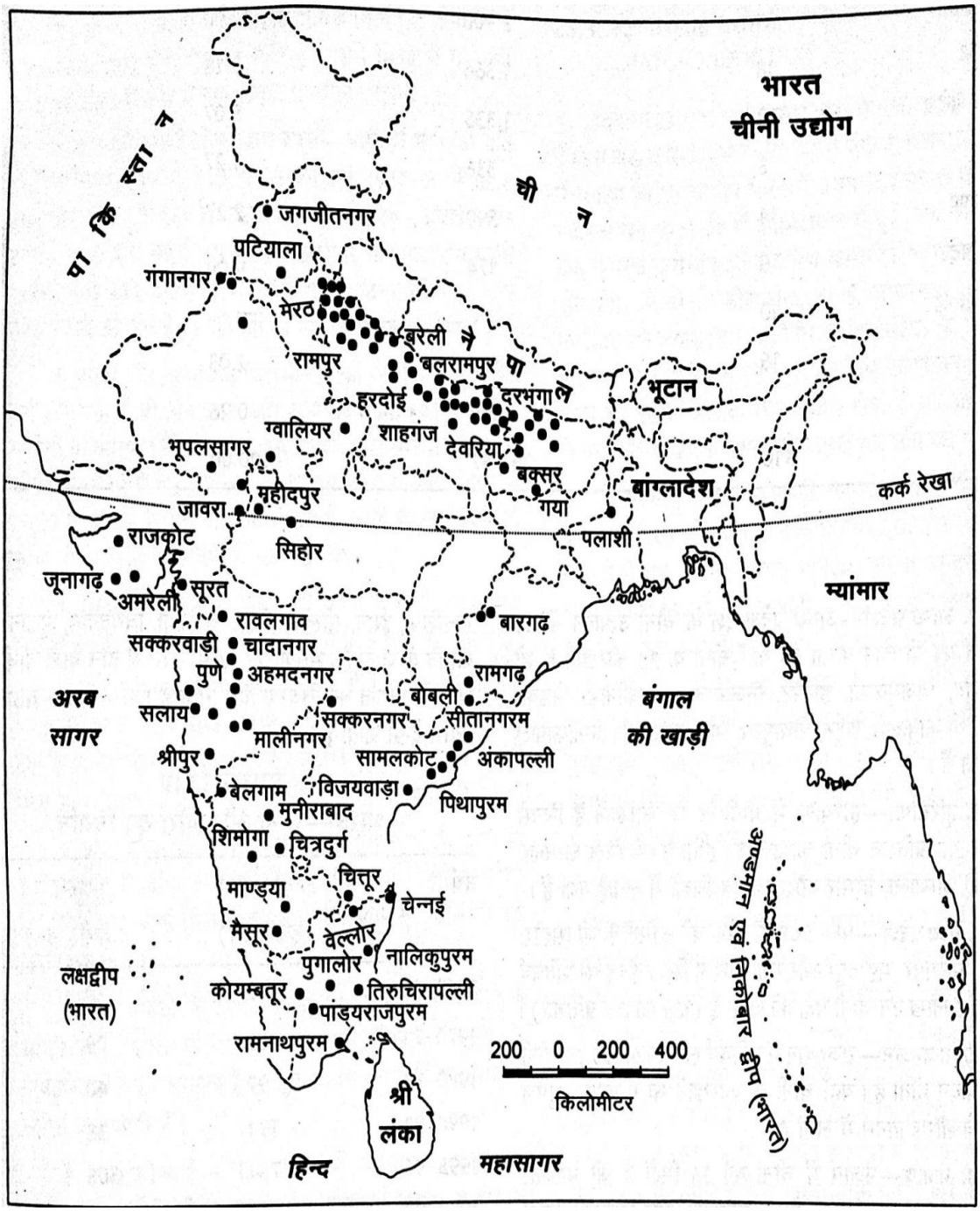

चित्र 13.4 भारत में चीनी उद्योग का वितरण।

पुराना होना, गन्ना कृषकों से जुड़ी समस्याएँ, प्रबंधन की कमी, श्रमिकों की समस्या एवं पेराई अवधि का छोटा होना है। उत्तर प्रदेश के प्रमुख चीनी उत्पादक जिले सहारनपुर, मेरठ, मुरादाबाद, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, गाजियाबाद, देवरिया, गोरखपुर, बस्ती, गोंडा, संतकबीर नगर, बाराबंकी,

सिद्धार्थनगर एवं अयोध्या हैं।

13.5.2.3 तमिलनाडु

तमिलनाडु देश का चौथा बड़ा चीनी उत्पादक राज्य है। यहाँ सकल उत्पादन की 8.32% चीनी उत्पादित होती है। यहाँ चीनी की कुल 39 मिलें स्थापित हैं जो मुख्यत: कोयंबटूर, तिरुचिरापल्ली, रामनाथपुरम, कुड्डालोर, पुगालोर, मदुरै, वेल्लोर एवं चिंगलपेट जिलों में संकेंद्रित है। यहाँ की अनुकूल भौगोलिक दशाओं के कारण गन्ना की प्रति हेक्टेयर उपज अधिक होता है तथा इनमें शर्करा की मात्रा भी अधिक पाई जाती है।

13.5.2.4 कर्नाटक

कर्नाटक देश के 11.3% चीनी का उत्पादन करता है। यहाँ चीनी के कुल 51 कारखाने स्थापित किए गए हैं। इनका संकेन्द्रण मुख्यत: मांडया, बेलगाम, बेल्लारी, शिमोगा, बीजापुर एवं चित्रदुर्ग जिलों में पाया जाता है। यहाँ भी चीनी की उत्पादकता अधिक है।

13.5.2.5 गुजरात

गुजरात में चीनी के कुल 18 कारखाने स्थापित जिनसे देश की 5.2% चीनी का उत्पादन होता है। सूरत गुजरात का सबसे बड़ा गन्ना उत्पादक जिला है। अन्य प्रमुख उत्पादक जिलों में राजकोट, जूनागढ़, अमरेली, भावनगर एवं वलसाड़ सम्मिलित है।

13.5.2.6 बिहार

बिहार गंगा के मैदान का एक प्रमुख चीनी उत्पादक राज्य है, जहाँ प्रतिवर्ष लगभग 4.5 लाख टन चीनी का उत्पादन होता है। यहाँ की चीनी मिलें चंपारण, सारन, दरभंगा, गया, मुजफ्फरपुर, छपरा, भागलपुर, पटना एवं भोजपुर जिलों में संकेन्द्रित है।

13.5.2.7 आन्ध्र प्रदेश

यह प्रदेश देश के सकल चीनी उत्पादन का 5.1% उत्पादन करता है। यहाँ चीनी के कुल 38 कारखाने स्थित है। इन कारखानों का संकेन्द्रण हैदराबाद, निजामाबाद, विजयवाड़ा, हास्पेट, काकीनाड़ा, चित्तूर, मेढक, श्रीकाकुलम, इलुरु, पीथापुरम, सामलकोट तथा अन्नाकापाल जिलों में अधिकांश पाया जाता है।

13.5.2.8 हरियाणा

हरियाणा देश के कुल चीनी उत्पादन का 2.3% भाग उत्पादित करता है। यहाँ चीनी उत्पादन के कुल 14 कारखाने स्थित है। ये कारखाने मुख्यत: करनाल, रोहतक, अम्बाला, हिसार एवं गुणगाँव में स्थित है।

13.5.2.8 पंजाब

पंजाब प्रतिवर्ष देश के सम्पूर्ण चीनी उत्पादन का 5,34,000 टन चीनी का उत्पादन करता है, जो सम्पूर्ण का 2.03% है। यहाँ कुल 16 चीनी मिलें स्थित है। ये मिलें जालंधर, संगरूर, गुरदासपुर, पटियाला, रोपड़ एवं अमृतसर में लगाई गई है।

13.5.3 चीनी उत्पादों का विदेशी व्यापार

भारत में चीनी का आंतरिक व्यापार सहकारी नीति के अधीन संचालित होता है जिसके अंतर्गत प्रत्येक मिल को उसके उत्पादन का 40% निर्धारित मूल्य पर सरकार को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिए देना होता है। इस प्रकार शेष बचे 60% भाग का विक्रय अधिक मूल्य पर खुले बाज़ार में किया जा सकता है। उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, तमिलनाडु एवं राजस्थान में उत्पादित चीनी विदेशी व्यापार में अधिक निर्यात की जाती है।

सारणी 13.5 भारत से चीनी उत्पादों का निर्यात

क्र. सं.	व्यापार वर्ष	निर्यात की मात्रा (हजार टन)	निर्यात मूल्य (करोड़ रु. में)
1.	1960 - 61	100.8	30.12
2.	1970 - 71	47.58	29.22

3.	1981 - 81	97.47	40.19
4.	1990 - 91	191	38.25
5.	2000 - 01	679	511.72
6.	2010 - 11	2,086	5,633.20
7.	2016 - 17	2,935	8974.36

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा, 2017 - 18 .

भारत विश्व के प्रमुख चीनी उत्पादक देशों में से एक है। यहाँ उत्पादित होने वाली चीनी का घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति के पश्चात निर्यात किया जाता है। सामान्य वर्षों में अधिकता के कारण भारत से कुछ चीनी का निर्यात ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, मलेशिया, इंडोनेशिया, ईरान, श्रीलंका, मिश्र, वियतनाम, कीनिया, सुडान आदि देशों को किया जाता है। इस प्रकार विदेशी मुद्रा के अर्जन एवं भुगतान संतुलन में चीनी की महत्त्वपूर्ण सहभागिता है।

13.6 सारांश

आपने इस इकाई में भारत में औद्योगीकरण, उद्योगों का विकास, लौह - इस्पात उद्योग, वस्त्र उद्योग, कागज उद्योग एवं चीनी उद्योग के वितरण, प्रभावित करने वाले कारक एवं उत्पादन प्रवृत्ति का अध्ययन किया है। आप समझ गए होगें कि देश के उद्योगों के विकास एवं वितरण को प्रभावित करने में किन घटकों को सम्मिलित किया जाता है। इससे देश की अर्थव्यवस्था को गतिशीलता मिलती है तथा विकास को प्रोत्साहन प्राप्त होता है। वास्तव में किसी देश का उद्योग उसकी भौगोलिक अवस्थिति, सरकारी नीतियों, सांस्कृतिक संगठन आदि से प्रभावित होता है।

इस इकाई में भारत के उद्योगों की उपयोगिता, क्षेत्रीय विभिन्नता के विविध आयाम तथा वर्तमान समय में उसकी उपयोगिता को प्रस्तुत किया गया है। आपने देखा है कि क्षेत्रीय आधार पर ये उद्योग विविध स्वरूप प्रकट करते है। किन्हीं उद्योगों की उत्पादन सहभागिता अधिक है तो किन्हीं उद्योगों की न्यून। समय में होने वाले परिवर्तन के साथ ही कुछ उद्योग जो उत्पादन एवं व्यापारिक दृष्टि से पहले महत्त्वपूर्ण थे अब उनकी प्रासंगिकता कुछ कम हुई है। इस प्रकार आपने देश के औद्योगीकरण, उद्योगों के विकास एवं वितरण का विस्तृत एवं सारगर्भित अध्ययन किया है।

13.7 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

1. जमशेद जी टाटा द्वारा जमशेदपुर में टाटा लौह - इस्पात की स्थापना कब की गई थी।

   (क) 1900 ई. (ख) 1905 ई.

   (ग) 1907 ई. (घ) 1912 ई.

2. राऊरकेला लौह - इस्पात की स्थापना किस देश के सहयोग से की गई थी।

   (क) ब्रिटेन (ख) संयुक्त अमेरिका

   (ग) जर्मनी (घ) रूस

3. सूती वस्त्र का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य कौन है।

   (क) उत्तर प्रदेश (ख) महाराष्ट्र

   (ग) पश्चिम बंगाल (घ) कर्नाटक

4. अखबारी कागज का प्रमुख उत्पादक केंद्र नेपानगर किस राज्य में स्थित है।

(क) मध्य प्रदेश (ख) उत्तर प्रदेश

(ग) पश्चिम बंगाल (घ) कर्नाटक

5. गन्ने का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य कौन है।

(क) बिहार (ख) उत्तर प्रदेश

(ग) महाराष्ट्र (घ) कर्नाटक

13.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

Basham,A. L., 1994, The Wonder that was India, Rupa & co., New Delhi.

Bhardwaj, R., 1970, Structural Basis of India's Foreign Trade,Allied Publishers, Bombay .

Joshi, H. L., 1990, InDdustrial Geography of India, Rawat Publications, Jaipur.

Khullar, D. R., 2006, India :A Comprehensive Geography, Kalyani Publishers, Ludhiyana.

बंसल, एस. सी., 2021, भारत का वृहत् भूगोल, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ.

मामोरिया, चतुर्भुज, 2018, भारत का वृहत् भूगोल, साहित्य भवन, सी. 17 साइट सी. औद्योगिक क्षेत्र, आगरा - 282007, उत्तर प्रदेश.

तिवारी, रामचंद्र. 2019, *भारत का भूगोल*, प्रवालिका पब्लिकेशन्स प्रयागराज, 211002.

भारत, 2021 - 2022, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली.

चौहान, वी. एस. और गौतम, अलका, 2000 - 2001, भारत वर्ष का विस्तृत भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ.

गौतम, अलका, 2007, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज.

हुसैन, माजिद और सिंह, रमेश, 2009, भारत का भूगोल, टाटा मैक्ग्राहिल पब्लिशिंग कं॰ लि॰ नई दिल्ली.

13.9 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी)

1. भारत में औद्योगिक विकास की पृष्ठभूमि की विस्तृत व्याख्या कीजिए ?
2. भारत में लौह - इस्पात उद्योग के विकास की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए ?
3. भारत में सूती वस्त्र उद्योग के वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए?
4. भारत में कागज उद्योग की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए तथा उसके वितरण का वर्णन कीजिए ?
5. चीनी उद्योग के वितरण की विस्तृत व्याख्या कीजिए ?

अध्याय-14 औद्योगिक प्रदेश, भारत में परिवहन - रेल परिवहन, सड़क परिवहन एवं जल परिवहन

इकाई की रूपरेखा

14.0 प्रस्तवाना

14.1 उद्देश्य

14.2 औद्योगिक प्रदेश

14.3 भारत के औद्योगिक प्रदेश

14.4 परिवहन

14.5 रेल परिवहन

14.6 रेलमार्गों को प्रभावित करने वाले कारक

14.7 भारत में रेलमार्ग का वितरण प्रतिरूप, लाभ एवं समस्याएँ

14.8 सड़क परिवहन

14.9 जल परिवहन

14.10 सारांश

14.11 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

14.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

14.13 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी)

14 प्रस्तवना

उद्योग एवं परिवहन तंत्र किसी देश की अर्थव्यवस्था के अभिन्न अंग होते है। इनके समुचित विकास से ही कोई देश विश्व के प्रमुख शक्तिशाली देशों की सूची में सम्मिलित हो पता है। इसके विकास एवं वितरण में स्थानीयता का लक्षण दिखाई देता है। इसी कारण कहीं पर इनका संकेन्द्रण सघन पाया जाता है तो कहीं अभाव। उद्योग एवं परिवहन तंत्र के विकास एवं वितरण को भौगोलिक कारक प्रभावित करते है जिनमें मुख्य रूप से कच्ची सामाग्री, उच्चावचीय स्वरूप, जलवायु दशाएँ, पर्याप्त जनसंख्या, विकास का स्तर एवं कुशल तथा प्रशिक्षित प्रशासनिक तंत्र सम्मिलित है।

14.1 उद्देश्य

भारत में उद्योग एवं परिवहन तंत्र का वितरण बहुत असमान है। इस वितरण को कच्चे माल की उपलब्धता, प्राकृतिक तथा मानवीय संसाधन का समुचित एवं आर्थिक विकास का स्तर आदि प्रभावित करती है। इस अध्याय के उद्देश्य निम्नलिखित है -

1. भारत में औद्योगिक प्रदेश तथा परिवहन तंत्र का अध्ययन करना।
2. भारत के प्रमुख औद्योगिक प्रदेशों के विकास, वितरण एवं प्रगति का अध्ययन करना।
3. रेल परिवहन के विकास, वितरण एवं प्रगति का अध्ययन करना।
4. सड़क परिवहन के विकास, वितरण एवं प्रगति का अध्ययन करना।
5. जल परिवहन के विकास, वितरण एवं प्रगति का अध्ययन करना।

14.2 औद्योगिक प्रदेश

अनेकों उद्योगों के विभिन्न कारखानों के संकेन्द्रण से एक विशाल क्षेत्र में जो औद्योगिक परिदृश्य विकसित होता है उसे औद्योगिक प्रदेश की संज्ञा दी जाती है। यह प्रदेश द्वितीयक उत्पादन का महत्त्वपूर्ण केंद्र होता है। उद्योगों की स्थापना को निर्धारित करने वाले प्रमुख कारक जैसे कच्चा माल, पर्याप्त जल की आपूर्ति, परिवहन, श्रम, बाज़ार, ऐतिहासिक - व्यापारिक एवं विनिर्माण महत्त्व आदि के संबंध में सम्पूर्ण देश में समरूपता होने के कारण उद्योगों की प्रकृति के अनुसार देश में भारी असमानता रही है अर्थात औद्योगिक वितरण बेहद असमान रहा है। उद्योग विशेष की प्रमुख मांग के अनुसार देश में विभिन्न औद्योगिक प्रदेशों का विकास हुआ है। भिन्न - भिन्न औद्योगिक प्रदेशों के विकास एक या अधिक कारकों की प्रमुखता रही है एवं अन्य कारक गौण रहे है। इन औद्योगिक प्रदेशों की प्रमुख भौगोलिक विशेषताएँ निम्नवत पाई जाती है -

- यहाँ की प्रधानता एवं कारखानों का संकेन्द्रण होता है।
- इसके समीप औद्योगिक श्रमिकों के निवास के लिए विभिन्न कालोनियाँ, औद्योगिक सामानों तथा कच्चे माल हेतु अनेकों छोटे - बड़े कस्बों का उदय होता है।
- यहाँ परिवहन एवं संचार के साधनों का सघन जाल पाया जाता है।
- इसके आनुषांगिक इकाइयों की स्थापना से औद्योगिक संकुलों का विकास होता है।
- ऐसे नगरों में केन्द्र में सर्वाधिक सघन तथा बाहर की ओर जनसंख्या घनत्व के ह्रासमान होने की प्रवृत्ति देखी जाती है।
- औद्योगिक विशिष्टाओं चिमनी, रेलयार्ड,बड़े वाहनों के साथ औद्योगिक आवासीय इमारतों की प्रधानता पाई जाती है।
- इसके उपांत क्षेत्र में फल, सब्जी, दूध जैसी जैसा उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन का परिद्रश्य दिखाई देता है।
- इस प्रदेश से दूर विरल ग्रामीण जनसंख्या का वितरण पाया जाता है।

14.2.1 औद्योगिक प्रदेशों का निर्धारण

औद्योगिक प्रदेशों के निर्धारण हेतु किसी भी प्रकार के विधिक एवं कानूनी नियमों का प्रावधान नहीं है। कोई निश्चित आधार नहीं है जिसके द्वारा इसके सीमाओं का परिसीमन किया जा सके। फिर भी कुछ शोधकर्ताओं एवं विद्वानों ने निम्नलिखित मानकों को आधार बनाया है -

- कारखानों की संख्या।
- औद्योगिक श्रमिकों की संख्या।
- उत्पादन प्रक्रिया में संलग्न जनसंख्या।
- कुल कार्यशील जनसंख्या के संदर्भ में औद्योगिक श्रमिकों का प्रतिशत।
- सकल औद्योगिक उत्पादन की मात्रा।
- मूल्य संबंधी आकड़ों की उपलब्धता।
- उपत्पादन प्रक्रिया जन्य मूल्य।

भारतीय अर्थव्यवस्था की प्रकृति मिश्रित अर्थव्यवस्था की है जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र के उद्योग एक साथ पाए जाते है। इनके विकास की प्रक्रिया औपनिवेशिक काल से आज तक जारी है। यहाँ उद्योगों के वितरण मे भी असमानता पायी जाती है। विभिन्न विद्वानों द्वारा औद्योगिक प्रदेशों के निर्धारण के लिए अलग - अलग मानकों एवं आधारों निर्धारित करने का प्रयास किया गया है जो निम्नवत है -

तालिका 14.1 भारत में औद्योगिक प्रदेशों का निर्धारण

निर्धारणकर्ता का नाम	निर्धारण के आधार	प्रदेशों की संख्या	भौगोलिक वितरण
ट्रिवार्था एवं बर्नर (1944)	रोजगार के आकड़े (उद्योगों में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों की संख्या)	तीन प्रदेश	1. उत्तरी प्रदेश 2. पश्चिमी प्रदेश 3. दक्षिणी प्रदेश
करण एवं जेंकिंस (1959)	उद्योगों के केन्द्रीकरण, उनके घनत्व और श्रम शक्ति	5 प्रमुख 8 लघु 13 औद्योगिक जिले	**प्रमुख औद्योगिक प्रदेश** 1. कोलकाता - हुगली 2. मुम्बई - पुणे 3. अहमदाबाद - बड़ोदरा 4. मदुरै - कोयंबटूर - बंगलौर 5. छोटा नागपुर **लघु औद्योगिक प्रदेश** 1. असम घाटी, 2. दार्जीलिंग तराई, 3. उत्तरी बिहार - पूर्वी उत्तर प्रदेश, 4. दिल्ली - मेरठ, 5. इन्दौर - उज्जैन, 6. नागपुर- वर्धा, 7. धारवाड़ - बेलगाम, 8. गोदावरी - कृष्णा डेल्टा **औद्योगिक जिले** 1. आगरा, 2. अमृतसर, 3. जम्मू 4. ग्वालियर, 5. हैदराबाद, 6. जबलपुर, 7. कानपुर, 8. चेन्नई, 9. क्वीलोन, 10. त्रिपुरा, 11. मलाबार, 12. शोलापुर, 13. विशाखापत्तनम

ए. दास गुप्ता	स्थानीकरण और औद्योगिक उत्पादन	4 बृहद प्रदेश 2 लघु प्रदेश	**बृहद औद्योगिक प्रदेश** 1. हुगली, 2. दामोदर, 3. दक्षिणी प्रदेश, 4. पश्चिमी कपास मेखला **लघु औद्योगिक प्रदेश** 1. गंगा - यमुना औद्योगिक 2. मध्यवर्ती प्रदेश
जे. ई. स्पेन्सर एवं डब्ल्यू. एल. थामस	औद्योगिक भूदृश्य की परिवर्ती विशेषताएँ	4 बृहद प्रदेश 2 गौण प्रदेश	**बृहद औद्योगिक प्रदेश** 1. कोलकाता - जमशेदपुर 2. मुम्बई - पुणे 3. अहमदाबाद - बड़ोदरा 4. बंगलौर - कोयंबटूर - मदुरै **गौण औद्योगिक प्रदेश** 1. दिल्ली - मेरठ 2. गुन्टूर - विजयवाड़ा
रामलोचन सिंह (1971)	आनुभविक प्रेक्षण	11 औद्योगिक प्रदेश	1. कोलकाता - हुगली 2. झारखण्ड - उत्तर उड़ीसा 3. मुम्बई - पुणे 4. बंगलौर - चेन्नई, 5. कोयंबटूर - मदुरै - शिवकाशी 6. अहमदाबाद - बड़ोदरा 7. केरल 8. लखनऊ - कानपुर 9. दिल्ली - गाजियाबाद - अमृतसर 10. डिगबोई 11. पूर्वी उत्तर प्रदेश - उत्तरी बिहार

बी. एन. सिन्हा (1972)	श्रमिकों की दैनिक संख्या के आधार पर	5 प्रमुख औद्योगिक प्रदेश (दैनिक श्रमिक संख्या 0.15 मिलियन) 14 लघु औद्योगिक प्रदेश (दैनिक श्रमिक संख्या 0.025 मिलियन) 12 औद्योगिक केंद्र (दैनिक श्रमिक संख्या 25,000 तक)	**प्रमुख औद्योगिक प्रदेश** 1. कोलकाता - हुगली 2. मुम्बई - पुणे 3. अहमदाबाद - बड़ोदरा 4. मदुरै - कोयंबटूर - बंगलौर 5. छोटा नागपुर **लघु औद्योगिक प्रदेश** 1. दिल्ली - मेरठ - सहारनपुर 2. गोदावरी - कृष्णा डेल्टा 3. कानपुर, 4. क्वीलोन, 5. इंदौर - उज्जैन, 6. नागपुर - वर्धा, 7. ब्रह्मपुत्र घाटी, 8. चेन्नई, 9. उत्तरी गंगा मैदान, 10. शोलापुर 11. मलाबार तट, 12. त्रिशूर, 13. दार्जीलिंग तराई, 14. हुबली - बेलगाम **औद्योगिक केंद्र** 1. तिरुनलवेली, 2. उत्तरी अर्काट 3. निजामाबाद, 4. रायपुर 5. आदिलाबाद 6. अमृतसर 7. आगरा 8. रामनाथपुरम 9. रामपुर 10. कच्छ 11. कटक एवं 12. बांद्रा

CMIE (Centre for Monitoring Indian Economy)(1982)	वर्ष 1971 ई. इसने 10,000 से अधिक औद्योगिक रोजगार की क्षमता के आधार पर 111 औद्योगिक केन्द्रों का चयन किया है।	6 प्रमुख औद्योगिक प्रदेश 12 गौण औद्योगिक मेखला	**प्रमुख औद्योगिक प्रदेश** 1. मुम्बई - पुणे 2. अहमदाबाद - बड़ोदरा 3. फ़रीदाबाद - दिल्ली - मेरठ 4. राउरकेला - जमशेदपुर - धनबाद - आसनसोल 5. चेन्नई - कोयंबटूर - बंगलौर 6. हुगली मेखला (कोलकाता) **गौण औद्योगिक मेखला** 1. अमृतसर - जालंधर - लुधियाना 2. बरेली - मुरादाबाद 3. कानपुर - लखनऊ 4. भोपाल - इंदौर 5. नासिक - धुले 6. अकोला - नागपुर 7. हैदराबाद 8.गूंटूर - विशाखापत्तनम 9. तंजावूर - मदुरै - डिंडीगुल 10. पुडुचेरी 11. तिरुअनन्तपुरम - कोच्चि और 12. रायपुर - दुर्ग

स्त्रोत - भारत का भूगोल (तिवारी एवं खुल्लर)

14.3 भारत के औद्योगिक प्रदेश

भारत में उद्योगों का वितरण असमान पाया जाता है। कहीं पर इनका संकेन्द्रण ज्यादा एवं प्रादेशिक समूहन पाया जाता है जिसे औद्योगिक प्रदेश के नाम से जाना जाता है। भारत में उद्योगों के वितरण की सुस्पष्ट मेखलाएँ एवं अत्यधिक संकेन्द्रण यूरोपीय देशों तथा अमेरिका के समान नहीं पाया जाता है। फिर भी भारत में आठ प्रमुख औद्योगिक प्रदेशों, 13 गौण औद्योगिक प्रदेशों एवं 15 औद्योगिक जिलों की पहचान की गई है जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नवत देने का प्रयास किया गया है -

14.3.1 मुम्बई - पुणे औद्योगिक प्रदेश

मुम्बई - पुणे औद्योगिक प्रदेश का विस्तार पश्चिमी तट के सहारे मुम्बई से शोलापुर के मध्य पाया जाता है। इसके प्रारम्भिक विकास का श्रेय ब्रिटिश शासन को जाता है जिसके दौरान ही यहाँ सर्वप्रथम सूती वस्त्र उद्योग की स्थापना हुई थी। इस प्रदेश के विकास का शुभारंभ उस समय

हुआ जब जब ब्रिटिश शासन ने वर्ष 1774 ई. में मुम्बई जल पोताश्रय के निर्माण हेतु इस द्वीप को अपने अधिकार क्षेत्र में ले लिया। इस प्रदेश का मुख्य उद्योग सूती वस्त्र उद्योग है। इसी उद्योग की स्थापना के पश्चात ही इस क्षेत्र में मुख्य रूप से औद्योगिक विकास शुरू हुआ। मुम्बई क्षेत्र में खनिज तेल के उत्पादन तथा विभिन्न परमाणु केन्द्रों की स्थापना के साथ ही इस प्रदेश में अन्य उद्योगों की स्थापना के मार्ग प्रसस्थ हुए। यहाँ पर सूती वस्त्र उद्योग के अतिरिक्त अनेकों उद्योग लगे जिनमें पेट्रोलियम परिष्करण, इंजीनियरी के समान, पेट्रो रसायन, चमड़ा उद्योग, कृत्रिम तथा प्लास्टिक वस्तुओं का निर्माण, रसायन, औषधियाँ, उर्वरक, बिजली के समान, जलयान का निर्माण, साफ्टवेयर, परिवहन के उपकरण एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योग आदि स्थापित है। फिल्म उद्योग के लिए भी मुम्बई को विश्व प्रसिद्धि प्राप्त है और इसे 'भारत का हालीवुड के नाम से भी पुकारा जाता है। इस प्रदेश के प्रमुख औद्योगिक संकुल मुम्बई, कोलबा, ठाणे, पुणे, कल्याण, ट्रांबे, पिपरी, नासिक, मनमांड, सांगली, सतारा एवं शोलापुर में स्थित है।

इस प्रदेश में औद्योगिक विकास के निम्न कारण हैं -

- इस प्रदेश का प्रमुख उद्योग सूती वस्त्र उद्योग है जिसके लिए कच्ची सामाग्री आस - पास के क्षेत्रों से प्राप्त हो जाती है क्योंकि महाराष्ट्र में काली मिट्टी की प्रचुरता के कारण पर्याप्त कपास का उत्पादन हो जाता है।
- परिवहन के विभिन्न माध्यमों से यह देश तथा विदेश के विभिन्न भागों से जुड़ा हुआ है। इस कारण कच्चे माल को लाने तथा निर्मित वस्तुओं को ले जाने की सुविधा वर्ष पर्यंत उपलब्ध रहती है।
- कोयला उत्पादक क्षेत्र से दूर स्थित होने के कारण यह औद्योगिक प्रदेश भारत के कोयले का लाभ नहीं उठा पाता है परंतु पश्चिमी घाट की भौगोलिक स्थलाकृति विद्युत उत्पादन हेतु अनुकूल है जिससे यहाँ प्रचुर जल विद्युत मिल जाती है।
- मुंबई एक प्रमुख बन्दरगाह है जिससे आयात - निर्यात में बड़ी सुविधा होती है।
- यह एक आधुनिक महानगर भी है जिसके कारण यहाँ देशी एवं विदेशी कम्पनियों के कार्यालय तथा बैंक स्थापित है जो इसे प्रशासनिक एवं आर्थिक सभी प्रकार की सहायता उपलब्ध कराता है।
- वर्ष 1869 ई. स्वेज़ नहर के बन जाने के कारण मुंबई का सीधा संपर्क उत्तरी अफ्रीका एवं यूरोपीय देशों के साथ हो गया है। इस प्रकार इस पत्तन के विकास मुम्बई के विकास को काफी प्रोत्साहित किया है।
- सस्ता एवं कुशल श्रमिक यहाँ स्थानीय तौर पर उपलब्ध हो जाते है।

14.3.2 हुगली औद्योगिक प्रदेश

हुगली औद्योगिक प्रदेश हुगली नदी के दोनों किनारों पर पश्चिम बंगाल में बंसबेरिया से लेकर दक्षिण बिरला नगर तक 100 किमी. की दूरी में विस्तृत है। इसके पश्चिम में स्थित समीपवर्ती क्षेत्र मिदनापुर में भी उद्योगों का विकास हुआ है। इस प्रदेश में स्थित कोई भी औद्योगिक केंद्र कोलकाता महानगर से 64 किमी. से अधिक दूरी पर नहीं है। इसका तात्पर्य यह है कि कोलकाता इस प्रदेश का केंद्र बिन्दु है, जिसके कारण कभी - कभी इसे कोलकाता औद्योगिक प्रदेश के नाम से भी जाना जाता है। यद्यपि कोलकाता नगर खुले सागर से 128 किमी. के अंदर हुगली नदी के किनारे पर बसा है फिर भी औद्योगिक दृष्टि महत्त्वपूर्ण है। इस प्रदेश के सभी औद्योगिक केंद्र हुगली नदी से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े है।

इस क्षेत्र का सबसे बड़ा एवं महत्त्वपूर्ण उद्योग जूट उद्योग है। इस प्रदेश में आधुनिक उद्योग की शुरुआत 1855 ई. में रिशरा में जूट उद्योग के रूप में हुई थी। भारत की 90% से अधिक जूट एवं पटसन की वस्तुओं का निर्माण यहीं से होता है। वर्ष 1947 ई. में देश के विभाजन के कारण अधिकांश पटसन उत्पादक क्षेत्र पाकिस्तान (वर्तमान बंग्लादेश) में चले जाने के कारण इस उद्योग क्षेत्र को कच्चे माल की समस्या का सामना करना पड़ा। इसके समाधान हेतु शेष बचे क्षेत्र में पटसन उत्पादन पर विशेष ज़ोर दिया गया। जूट उद्योग के साथ ही यहाँ पर सूती वस्त्र उद्योग का भी विकास हुआ है जिसके लिए अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियाँ यहाँ विद्यमान है। यहाँ स्थापित अन्य प्रमुख उद्योगों में कागज, इंजीनियरी, वस्त्र उद्योग की मशीनें, बिजली के सामान, रसायन, औषधियां, पेट्रो रसायन एवं उर्वरक प्रमुख है। चितरंजन स्थित रेल डीजल कारख़ाना एवं कोनानगर स्थित हिंदुस्तान मोटर लिमिटेड का कारख़ाना इस प्रदेश की प्रमुख पहचान है। आस - पास के समीपवर्ती क्षेत्रों से कच्चे तेल के उत्पादन के कारण हल्दिया में पेट्रोलियम परिष्करणशाला की स्थापना से विविध प्रकार के उद्योगों के विकास की यहाँ सुविधा मिली है। इस प्रदेश के प्रमुख औद्योगिक केन्द्र कोलकाता, हल्दिया, हावड़ा, रिशरा, श्रीरामपुर, नौहाटी, शिवपुर, टीटागढ़, श्यामनगर

काकीनाड़ा, बैलूर, हुगली, बेसघरिया, बंसबेरिया, त्रिवेणी, बिड़ला नगर, बजबज एवं सादपुर आदि है।

इस प्रदेश में औद्योगिक विकास के निम्न कारण हैं -

- यहाँ उद्योगों के विकास के लिए कच्चा माल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।
- छोटा नागपुर पठार क्षेत्र से पर्याप्त मात्रा में लौह - अयस्क एवं कोयले की आपूर्ति हो जाती है।
- दामोदर घाटी परियोजना से जल विद्युत की आपूर्ति हो जाती है।
- आर्थिक रूप से पिछड़े उत्तर प्रदेश, बिहार एवं ओडिसा से सस्ते एवं कुशल श्रमिकों की पर्याप्त संख्या भी उपलब्ध हो जाती है।
- सड़क एवं रेलमार्ग परिवहन से समबद्धता के साथ ही हुगली नदी एक विशाल जलमार्ग भी है। हवाई यातायात से भी कोलकाता देश एवं विदेश से अच्छी तरह से जुड़ा है।
- हुगली नदी से पर्याप्त जल की आपूर्ति हो जाती है
- कोलकाता देश के प्रमुख नगरों में से एक है जिसके कारण यहाँ कुशल प्रशासनिक एवं बैंकिंग की सभी सुविधाएँ उपलब्ध हो जाती है। इसी कारण कोलकाता को इस प्रदेश का 'हृदय स्थल' भी कहा जाता है।
- इसे कोलकाता बन्दरगाह की सुविधा भी प्राप्त है जो मुख्य रूप से ज्वार - भाटा द्वारा भी संचालित होता है।

14.3.3 बंगलुरू - तमिलनाडु औद्योगिक प्रदेश

इस औद्योगिक प्रदेश का विस्तार मुख्यत: कर्नाटक एवं तमिलनाडु राज्यों में है। आजादी के पश्चात इस औद्योगिक प्रदेश ने काफी उन्नति की है। वर्ष 1960 ई. तक जहाँ यह औद्योगिक प्रदेश बंगलुरु, सेलम एवं मदुरै जिलों तक सीमित था लेकिन वर्तमान समय में इसका विस्तार तमिलनाडु राज्य के सभी जिलों में हो गया है। यह औद्योगिक प्रदेश कोयला उत्पादक क्षेत्रों से काफी दूरी पर स्थित है जिसके कारण ऊर्जा हेतु इसे जल विद्युत संयंत्र पर निर्भर रहना पड़ता है। इस प्रदेश को जल विद्युत की आपूर्ति का मुख्य स्त्रोत 1932 ई. में निर्मित पाइकारा जल विद्युत संयंत्र है। कपास का प्रमुख उत्पादक क्षेत्र होने के कारण सबसे पहले यहाँ सूती वस्त्र उद्योग का विकास हुआ था। सूती वस्त्र उद्योग के साथ ही यहाँ करघा उद्योग का भी तेजी से प्रसार हुआ है।

बंगलुरु कर्नाटक राज्य का सबसे महत्त्वपूर्ण औद्योगिक केंद्र है। इसकी अवस्थिति पूर्वी एवं पश्चिमी तट से लगभग समान दूरी पर है जिसके कारण इसे दोनों तटवर्ती स्थलों एवं बन्दरगाहों का लाभ प्राप्त होता है। इसमें से अधिकांश उद्योगों का सरकारी प्रयासों के फलस्वरूप हुआ है। यहाँ स्थित प्रमुख उद्योग निम्न है -

अ) हिंदुस्तान वायुयान निर्माण

ब) हिंदुस्तान मशीन टूल्स

स) भारतीय दूरसंचार उद्योग

द) भारतीय विद्युत उपकरण

इन महत्त्वपूर्ण उद्योगों के अतिरिक्त बंगलुरु बसों के ढ़ाचे, रेल के डिब्बे, सूती, ऊनी और रेशमी वस्त्र का प्रमुख उत्पादक केंद्र है।

कोयम्बटूर तमिलनाडु का सबसे बड़ा औद्योगिक केंद्र है। इसके आस - पास के क्षेत्रों में गन्ना एवं कपास का पर्याप्त उत्पादन होता है जिसके इस क्षेत्र में चीनी एवं वस्त्र उद्योग का प्रचुर विकास हुआ है। इस कारण इसे तमिलनाडु का 'मानचेस्टर भी कहा जाता है। यहीं पर 'केंद्रीय गन्ना शोध संस्थान' भी स्थित है।

14.3.4 गुजरात औद्योगिक प्रदेश

यह औद्योगिक प्रदेश मुख्य रूप से गुजरात राज्य में स्थित है। इसका विस्तार दक्षिण में वलसाड और सूरत से लेकर जामनगर तक है। इसका मुख्य केंद्र अहमदाबाद एवं बड़ोदरा के मध्य है। इस प्रदेश में आधुनिक प्रणाली के उद्योग का विकास 1860 - 61 ई. में अहमदाबाद में

सूती वस्त्र उद्योग की स्थापना के साथ हुआ था। खंभात क्षेत्र में खनिज तेल के उत्पादन के साथ ही अंकलेश्वर, बड़ोदरा एवं जामनगर के आस - पास क्षेत्र में पेट्रो रसायन उद्योग का अत्यधिक विकास हुआ है। इस औद्योगिक प्रदेश के विकास में कच्छ की खाड़ी एवं उसके तट पर स्थित कांडला बन्दरगाह की अत्यधिक भूमिका रही है। यहाँ स्थित कोयली पेट्रोलियम परिष्करणशाला को कच्चे तेल की आपूर्ति में बन्दरगाह की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इस प्रदेश के औद्योगिक स्वरूप में अत्यधिक विविधता देखी जाती है। वस्त्र उद्योग एवं पेट्रो रसायन उद्योग के साथ ही इस प्रदेश के प्रमुख उद्योग भारी एवं आधारभूत रसायन, मोटर, ट्रैक्टर, डीजल इंजन, वस्त्र उत्पादन की मशीनें एवं यंत्र, इंजीनियरी समान, दवाई, चीनी, दुग्ध सामग्री और खाद्य परिष्करण से जुड़े अनेक उद्योग स्थापित है। इस प्रदेश के प्रमुख उत्पादक केंद्र अहमदाबाद, भरूच, बड़ोदरा, कोयली, आणन्द, खेड़ा, सुरेन्द्रनगर, सूरत, राजकोट, वलसाड और जामनगर है।

14.3.5 छोटा नागपुर औद्योगिक प्रदेश

छोटा नागपुर औद्योगिक प्रदेश झारखण्ड, उत्तरी ओडिसा एवं पश्चिम बंगाल में संयुक्त रूप से विस्तृत है। इस क्षेत्र में औद्योगिक विकास का मुख्य आधार यहाँ पायी जाने वाली खनिज सम्पदा है। दामोदर घाटी के कोयला के साथ ही झारखण्ड एवं ओडिसा में पाया जाने वाला उत्तम कोटी का लौह - अयस्क इसके प्रमुख उत्प्रेरक है। इनका वितरण एक साथ पाया जाना यहाँ औद्योगिक विकास के लिए वरदान है इसलिए इस प्रदेश को 'भारत का रूर' के नाम से भी संबोधित किया जाता है। कोयला लौह - अयस्क एवं अन्य प्रमुख खनिजों की प्रचुर मात्रा तथा पास - पास पाए जाने के कारण इस प्रदेश में भारी उद्योगों के विकास को प्रोत्साहन मिला है। जमशेदपुर, कुल्टी - बर्नपुर, दुर्गापुर, बोकारो एवं राउरकेला में लौह एवं इस्पात के पाँच एकीकृत कारखाने स्थित है। यहाँ मुख्य रूप से भारी इंजीनियरिंग समान, मशीनी उपकरण, कागज, सीमेंट, उर्वरक, रेल के इंजन और बिजली के भारी सामान बनाए जाते है। इस औद्योगिक प्रदेश के प्रमुख उत्पादन केंद्र जमशेदपुर, राची, धनवाद, हजारीबाग, सिंदरी, बोकारो, दुर्गापुर, राउरकेला, आसनसोल एवं डालमिया नगर है।

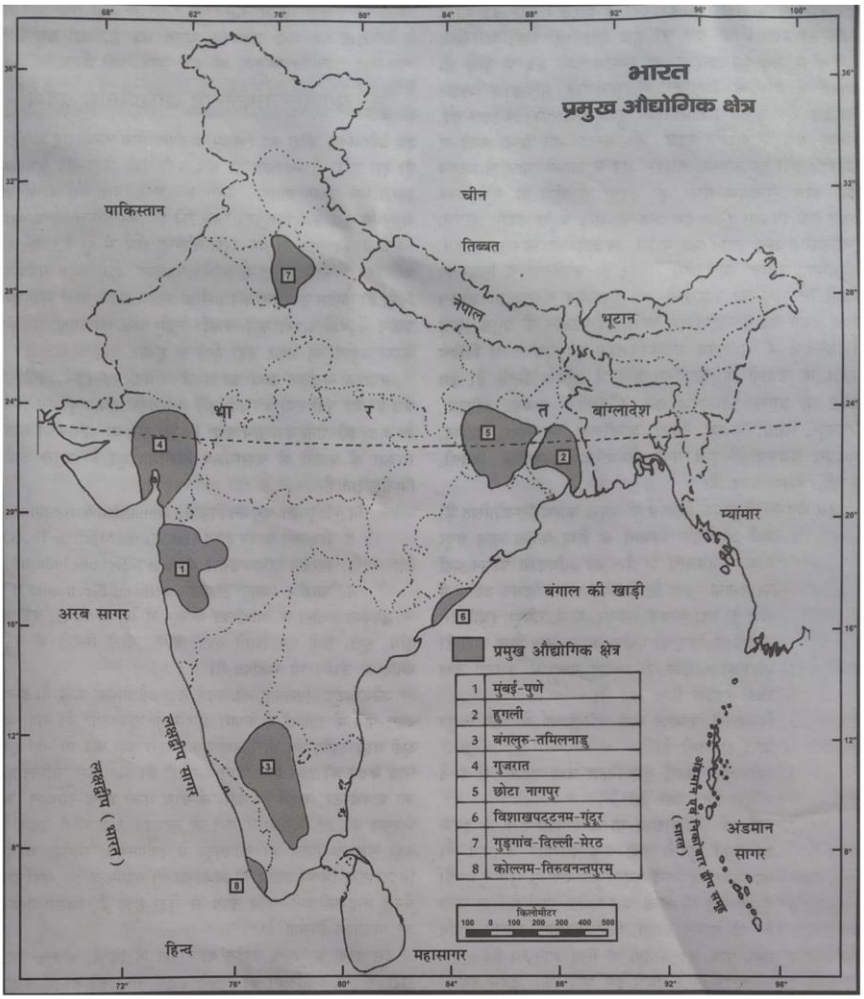

चित्र संख्या 14.1 भारत के प्रमुख औद्योगिक प्रदेश .

14.3.6 विशाखापट्टनम - गुंटूर औद्योगिक प्रदेश

यह औद्योगिक प्रदेश आन्ध्र प्रदेश के पूर्वी भाग में विशाखापट्टनम जिले से कुर्नुल एवं प्रकाशम तक आंध्रा तट के साथ - साथ विकसित हुआ है। यहाँ पर औद्योगीकरण का मुख्य श्रेय विशाखापट्टनम एवं मछलीपट्टनम के पत्तनों को जाता है। इन पत्तनों के माध्यम से विकसित कृषि उत्पाद एवं अपार खनिज संसाधन की आपूर्ति यहाँ सुगमता से हो जाती है। इस प्रदेश के लिए ऊर्जा का मुख्य स्त्रोत कृष्णा - गोदावरी द्रोणी में पाया जाने वाला उच्च कोटि का कोयला है। विशाखापट्टनम में वर्ष 1941 ई. में हिंदुस्तान शिपयार्ड लिमिडेट की स्थापना की गई। यहाँ स्थित पेट्रोलियम परिष्करणशाला ने अनेकों पेट्रो रसायन उद्योगों के उद्भव एवं विकास में सहायता प्रदान की है। विशाखापट्टनम में स्थित लौह - इस्पात संयंत्र अति उच्च आधुनिक प्रौद्योगिकी पर आधारित है। यह भारत का एकमात्र लौह - इस्पात कारख़ाना है जिसे तटीय अवस्थिति का लाभ प्राप्त है। इस कारखाने को उच्च कोटि लौह - अयस्क छत्तीसगढ़ की बैलाडीला खान से प्राप्त होता है। गुंटूर जिले में एक सीसा एवं जस्ता प्रगलन संयंत्र भी लगाया गया है। अन्य प्रमुख उद्योग चीनी, वस्त्र, उर्वरक, सीमेंट, कागज, एल्यूमिनियम एवं इंजीनियरी के हल्के सामान है। यहाँ के प्रमुख उत्पादक केंद्र विशाखापट्टनम, विजयनगर, विजयवाड़ा, राजमुन्द्री, गुंटूर, एलेरा एवं कुर्नुल आदि है।

14.3.7 गुड़गाँव - दिल्ली - मेरठ औद्योगिक प्रदेश

इस प्रदेश को प्रमुख औद्योगिक केंद्र के रूप में विकसित करने का श्रेय भारत सरकार की विकासोन्मुखी नीतियों को है। वर्तमान समय में यह औद्योगिक प्रदेश औद्योगिक विकास की दृष्टिकोण से सबसे विकासोन्मुख है। इस पट्टी में उद्योगों का विकास दो पेटियों में हुआ है। इसकी पहली पेटी उत्तर प्रदेश में आगरा, मथुरा, मेरठ एवं सहारनपुर के मध्य विकसित हुई है जबकि दूसरी पेटी का विकास हरियाणा के फ़रीदाबाद, गुड़गाँव एवं अम्बाला जिलों में हुआ है। ये दोनों पेटियाँ दिल्ली के निकट एक दूसरे से सम्बद्ध होकर उद्योगों की एक शृंखला का निर्माण करते है। इस प्रदेश को औद्योगिक रूप में विकसित करने का सर्वाधिक योगदान भाखड़ा - नंगल परियोजना से प्राप्त होने वाली जल विद्युत का है। हरदुआगंज, पानीपत एवं फ़रीदाबाद में स्थित तापीय विद्युत शक्ति केंद्र भी यहाँ ऊर्जा आपूर्ति के प्रमुख स्त्रोत है। यह प्रदेश कोयला एवं खनिज उत्पादक क्षेत्रों से काफी दूर है जिस कारण यहाँ भारी उद्योग न स्थापित होकर हल्के एवं बाजारोन्मुख उद्योग स्थापित किए गए है।

यहाँ के मुख्य उद्योग इलेक्ट्रानिक्स, इंजीनियरिंग के हल्के सामान एवं बिजली के सामान है। इनके अतिरिक्त बड़े पैमाने पर विकसित सूती वस्त्र उद्योग, ऊनी तथा कृत्रिम वस्त्र, हौजरी, चीनी, सीमेंट, मशीनों के उपकरण, ट्रैक्टर, साइकिल, कृषि उपकरण, रसायन एवं वनस्पति आदि है। इस क्षेत्र में साफ्टवेयर उद्योग की नई शुरुआत हुई है। इसके दक्षिण में मथुरा - आगरा औद्योगिक क्षेत्र है जो काँच एवं चमड़े के निर्माण में विशिष्टता प्राप्त है। मथुरा एवं पानीपत क्षेत्र में तेल परिष्करणशाला एवं पेट्रो रसायन उद्योगों का संकुल है। गुड़गाँव एवं फ़रीदाबाद में इंजीनियरी तथा इलेक्ट्रानिक्स उद्योगों की नई शृंखलाएँ स्थापित है। यहाँ पर गाजियाबाद में कृषि एवं उससे संबन्धित उद्योग स्थापित है वहीं सहारनपुर एवं यमुना नगर में कागज के कारखानों की सघनता है। इस प्रदेश के प्रमुख औद्योगिक केंद्र दिल्ली, गुड़गाँव, फ़रीदाबाद, मेरठ, शाहदरा, मोदी नगर, अम्बाला, गाजियाबाद, आगरा एवं मथुरा आदि है।

14.3.8 कोल्लम - तिरुवनंतपुरम औद्योगिक प्रदेश

यह औद्योगिक प्रदेश अन्य क्षेत्रों की तुलना छोटा है जिसका विस्तार मुख्यत: केरल राज्य के दक्षिणी भाग के कोल्लम, तिरुवनंतपुरम, अलप्पुजा, एर्णाकुलम एवं त्रिशूर जिलों में है। यह क्षेत्र भी देश के खनिज एवं कोयला उत्पादक क्षेत्रों से दूर स्थित है जिसके कारण यहाँ खनिज आधारित उद्योगों का विकास नहीं हो सका है। यहाँ की रोपड़ कृषि तथा प्रचुर जल विद्युत ने इस क्षेत्र में औद्योगिक विकास को आधार प्रदान किया है। इस प्रदेश के मुख्य उद्योग सूती वस्त्र, चीनी, रबड़, माचिस, काँच, रासायनिक उर्वरक तथा मछली आधारित है। इनके अतिरिक्त खाद्य प्रसंस्करण, कागज, नारियल के रेशे के उत्पाद, एल्युमिनियम एवं सीमेंट के उद्योग भी उल्लेखनीय है। कोच्चि में स्थापित नवीन तेल परिष्करण संयंत्र ने इस क्षेत्र के औद्योगीकरण उत्प्रेरण प्रदान किया है। इस प्रदेश के प्रमुख औद्योगिक केंद्र कोल्लम, तिरुवनंतपुरम, अलप्पुजा, अलवाए एवं कोच्चि है।

इन प्रमुख प्रदेशों के अतिरिक्त 13 गौण औद्योगिक प्रदेशों की भी पहचान भी की गई जिनके नाम निम्नवत है -

14.3.9 गौण औद्योगिक प्रदेश (13) - 1. अंबाला - अमृतसर, 2. सहारनपुर - मुजफ्फरनगर - बिजनौर, 3. इंदौर - देवास - उज्जैन, 4. जयपुर - अजमेर, 5. कोल्हापुर - दक्षिणी कन्नड़, 6. उत्तरी मालाबार, 7. मध्य मालाबार, 8. आदिलाबाद - निजामाबाद, 9. इलाहाबाद - वाराणसी - मिर्जापुर, 10. भोजपुर - मुंगेर, 11. दुर्ग - रायपुर, विलासपुर - कोरबा, 13. ब्रह्मपुत्र घाटी।

गौण औद्योगिक प्रदेशों के साथ - साथ कुछ विशिष्ट वस्तुओं के उत्पादन हेतु भी अनेकों केन्द्रों का विकास हुआ है जिनकी पहचान औद्योगिक जिलों के रूप मे की गई है। ये औद्योगिक जिले निम्नलिखित है -

14.3.10 औद्योगिक जिले (15) - 1. कानपुर, 2. हैदराबाद, 3. आगरा, 4. नागपुर, 5. ग्वालियर, 6. भोपाल, 7. लखनऊ, 8. जलपाईगुड़ी, 9. कटक, 10. गोरखपुर, 11. अलीगढ़, 12. कोटा, 13. पूर्णिया, 14. जबलपुर एवं 15. बरेली।

14.4 परिवहन

परिवहन वह माध्यम है जिससे लोगों के आगमन के साथ वस्तुओं एवं सेवाओं का एक स्थान से दूसरे स्थान तक स्थानांतरण संभव हो पाता है। इससे सुदूरवर्ती क्षेत्रों को जोड़ कर विकास लक्ष्यों तक की पहुँच से हो सकती है। परिवहन के साधन वस्तुओं के कीमत को भी समान रखने में सहायक होते है। इन्हीं के द्वारा ही आधिक्य उत्पादक क्षेत्रों से अभाव वाले क्षेत्रों में वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति आसानी से होती है। आपदा जनित समस्याओं का सामना करने में भी परिवहन के साधन मददगार बनते है। विभिन्न प्रकार के विकास कार्य जैसे औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के साथ - साथ ग्रामीण विकास की प्रक्रिया को तेज करने में भी ये साधन सहायक होते है। इससे देश के सभी भागों में वस्तुओं एवं सेवाओं की कुशलतापूर्वक आपूर्ति करके देश की शांति एवं अमन - चैन को भी बनाने में सहायता मिलती है। भारत जैसे विकासशील देश के आर्थिक विकास के लिए एक सुव्यवस्थित परिवहन प्रणाली की अनिवार्य आवश्यकता पड़ती है। इसी कारण परिवहन प्रणाली को किसी देश की अर्थव्यवस्था का नाड़ी तंत्र कहते है।

14.5 रेल परिवहन

रेल परिवहन भारत के आंतरिक परिवहन का स्नायु तंत्र है। यह यात्रियों एवं माल को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाकर राष्ट्रीय एकता को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। परिवहन के इस तंत्र ने देश के आर्थिक विकास एवं राष्ट्रीय एकीकरण के लिए विशेष योगदान दिया है। देश की कृषि, औद्योगिक एवं सामाजिक - आर्थिक विकास के लिए रेल परिवहन विशेष पहिया है। 31 मार्च 2017 तक देश में कुल 67,368 किमी. लम्बे रेल पथ विकसित हो चुके थे। इसके साथ ही भारतीय रेल तंत्र एशिया में प्रथम एवं विश्व में द्वितीय स्थान पर है। वर्ष 2016 - 17 तक भारतीय रेलवे में 275,135 करोड़ रुपये की पूंजी का निवेश हो चुका था। इसी दौरान इससे होने वाली वार्षिक आय भी 165, 292 करोड़ रुपए है। रोजगार प्रदान करने की दृष्टि से भी रेलवे देश का सबसे बड़ा उपक्रम है। वर्ष 2016 - 17 तक भारतीय रेलवे से 8,116 मिलियन यात्रियों एवं 1,112 मिलियन टन माल का परिवहन होता था।

14.5.1 भारत में रेल परिवहन का विकास

भारत में प्रथम रेलगाड़ी वर्ष 1853 ई. में मुम्बई से ठाणे के बीच चलाई गई थी, इस दौरान रेल द्वारा कुल 34 किमी. की दूरी तय की गई थी। इसके बाद दूसरी रेल 1854 ई. में कोलकाता से रानीगंज के मध्य 180 किमी. चलाई गई थी। वर्ष 1856 ई. में भी चेन्नई से आर्कोनम के बीच 70 किमी. की रेल यातायात शुरू हुई। औपनिवेशिक काल में लार्ड डलहौजी के प्रयास से देश के सभी बड़े नगरों को जोड़ने हेतु एक विस्तृत रेल विकास योजना तैयार की गई। इसी का परिणाम था कि वर्ष 1871 ई. तक कोलकाता, चेन्नई एवं मुम्बई प्रेसीडेंसी को रेल सेवा से जोड़ दिया गया। रेलवे के विकास की प्रारम्भिक अवस्था में विकास की गति तीव्र थी और वर्ष 1900 ई. तक देश में रेल जाल की कुल लम्बाई बढ़ कर 39,835 किमी. हो गई। इसके पश्चात स्वतन्त्रता आन्दोलन में तीव्रता तथा अँग्रेजी सरकार की शिथिलता के कारण रेलमार्ग विकास की गति मंद पड़ गई। वर्ष 1950 - 51 ई. तक देश में कुल लम्बाई 53,596 किमी. हो गई। प्रारम्भिक समय में रेलों के संचालन की ज़िम्मेदारी निजी कंपनियों के हाथ में थी, उसके पश्चात 1925 ई. औपनिवेशिक भारत सरकार ने इसका राष्ट्रीयकरण कर दिया तथा वर्ष 1950 ई. के पश्चात रेलों का पुरा प्रबंधन भारत सरकार के अधीन हो गया। देश के विभाजन के समय देश में लगभग 65,900 किमी. लम्बे रेलमार्ग जिनमें से मात्र 53,000 ही भारत के पास बचे शेष पाकिस्तान में चले गए।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात रेलों के विकास हेतु नई रणनीति को अपनाया गया। इनमें रेलमार्गों का विस्तार, मीटर गेजों में परिवर्तन,विद्युतीकरण, नवीनीकरण, वाष्प इंजनों को डीजल एवं विद्युत इंजनों में बदलाव, सिग्नल एवं संचार प्रणाली में सुधार, यात्रियों की सुविधाओं एवं सुरक्षा को बेहतर करना, यातायात मार्ग अवरोधों में कमी लाना, रेलों की गति को द्रुतगामी बनाना, आधुनिक प्रौद्योगिकी से युक्त करना तथा दूर - दराज एवं पिछड़े क्षेत्रों तक रेलमार्गों के जाल को सुनिश्चित करना। वर्ष 1950 - 51 में जहाँ रेलमार्गों की लम्बाई 53,596 किमी. थी वहीं वर्ष 2009 - 10 में यह बढ़ कर 63,974 किमी. हो गई। इस प्रकार इस अवधि में रेलजाल में 19.36% की वृद्धि देखी गई है। यात्रियों की बढ़ती भीड़ को देखते हुए इनके संचालन को सुगम बनाने का प्रयास किया गया तथा साथ ही कोलकाता एवं दिल्ली शहरों में मेट्रो की व्यवस्था की गई। इन दोनों जगहों पर मेट्रो की सतही एवं भूमिगत लाइनें बिछाई गई है।

भारतीय रेलवे की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें तीनों गेज विद्यमान है जो निम्न है -

14.5.1.1 ब्राड गेज (बड़ी लाईन)

इस लाईन के जाल में दो पटरियों के बीच की आपसी दूरी 1676 सेमी. अर्थात 1.676 मी. होती है। 31 मार्च 2008 तक भारत में बड़ी गेज वाली लाईनों की कुल लम्बाई 51,082 किमी. थी अर्थात देश के कुल रेल जाल की 80.73% लाईनें बड़ी गेज है। ये लाईनें देश के सभी महानगरों तथा बन्दरगाहों को आपस में जोड़ती है। भारत के सम्पूर्ण रेल यातायात में इन लाईनों की हिस्सेदारी 85% से अधिक है।

14.5.1.2 मीटर गेज (मध्यम लाईन)

इन लाईनों की दोनों पटरियों के बीच की दूरी 1000 सेमी. अर्थात एक मीटर होती है। 31 मार्च 2008 तक देश में मीटर गेज वाली लाईनों की कुल लम्बाई 9,942 किमी. थी अर्थात देश का 10.92% रेल जाल मीटर गेज है।

14.5.1.3 नैरो गेज (सकरी/छोटी लाईन)

इन लाईनों की दोनों पटरियों के बीच की दूरी 762 सेमी. से 610 सेमी. तक होती है। 31 मार्च 2008 तक इनकी कुल लम्बाई 2,749 किमी. थी।

14.6 रेलमार्गों को प्रभावित करने वाले कारक

भारत में रेलों का वितरण एवं गम्यता सभी जगह एक समान नहीं है। कहीं पर इनका वितरण सघन पाया जाता है तो कहीं विरल। देश के कुछ भाग ऐसे भी है जो रेलों की पहुँच से अछूते है, इसी कारण रेलों की वितरण की इस असमानता के कारकों निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत करते है -

14.6.1 भौगोलिक कारक

उत्तर भारत का मैदान भौगोलिक दृष्टि से रेलमार्गों के विकास हेतु सबसे उत्तम है क्योंकि यहाँ समतल उच्चावच, घनी आबादी, समृद्ध कृषि, औद्योगीकरण एवं नगरीकरण जैसे उत्प्रेरक कारक सुगमता से उपलब्ध हो जाते हैं। यहाँ पर रेल लाइनों को बिछाने, नदियों एवं नालों पर पुल एवं पुलिया बनाने में उतना खर्च नहीं होता है जितना विषम उच्चावच वाले क्षेत्रों में होता है। असम और बिहार के बढ़ग्रस्त जिलों में अभी रेलों का विकास नहीं हो सका है क्योंकि इसके अनुकूल परिस्थितियाँ नहीं है। भारत के मध्यवर्ती पठारी भाग के साथ ही उत्तर के पर्वतीय क्षेत्र भी रेलों के विकास हेतु उपयुक्त नहीं है। इसके पादस्थली क्षेत्रों एवं नगरों तक ही रेलमार्गों की पहुँच हो चुकी है, जैसे जम्मू, कोटद्वार, काठगोदाम एवं हरिद्वार आदि। पर्वतीय क्षेत्रों में अधिकांश नैरो गेज वाले रेलमार्ग मिलते है जैसे कालका से शिमला एवं सिलीगुड़ी से दार्जिलिंग आदि। राजस्थान के मरुस्थली क्षेत्रों में भी रेलमार्ग बनाना कठिन काम है। मध्य प्रदेश एवं ओडिशा के घने जंगलों के साथ पश्चिम बंगाल एवं कच्छ के रन क्षेत्र में भी रेलमार्ग निर्माण काम में बाधाएँ उत्पन्न होती है। थालघाट, भोरघाट एवं पालघाट जैसे दर्रों से रेलमार्ग को बनाया जा सका है।

14.6.2 राजनैतिक कारक

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व औपनिविशिक शासकों ने अपने शासन को सुदृढ़ बनाने तथा सैनिक शक्ति बढ़ाकर देश से संसाधनों के शोषण के लिए ही मुख्यत: रेलों के विकास पर विशेष ध्यान दिया है। इसी कारण उन लोगों द्वारा अधिकांश रेल लाइनें मुम्बई, कोलकाता एवं चेन्नई के आस - पास बिछाई गई है। संसाधनों के शोषण की व्यवस्था इस प्रकार बनाई गई कि छोटे - छोटे गाँवों से अधिशेष उत्पाद छोटे नगरों तथा उपक्षेत्रीय केन्द्रों तक लाया जाता था। वहाँ से उन्हें बड़े - बड़े नगरों तक पहुंचाया जाता है उसके पश्चात रेलों के सहयोग बन्दरगाहों तक पहुँचाकर ब्रिटेन तक आपूर्ति होती थी। आजादी के पश्चात भारत सरकार द्वारा विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों की भी पहुँच ग्रामीण एवं सुदूरवर्ती क्षेत्रों तक सुनिश्चित करने हेतु रेलों के विकास पर ज़ोर दिया गया है। रेलों को आधुनिक तरीके से विकसित करने हेतु अनेकों रणनीतिक प्रयास भी किए गए।

14.6.3 आर्थिक कारक

रेलमार्गों का विकास प्राय: उन्हीं क्षेत्रों में अधिक होता है जो आर्थिक दृष्टिकोण से अधिक विकसित होते है। यहाँ की आर्थिक परिस्थितियाँ रेल परिपथों के विकास हेतु अनुकूल होती है। यही कारण है कि रेलमार्ग बड़े नगरों तथा औद्योगिक केन्द्रों के सहारे विकसित हुए है।

14.7 भारत में रेलमार्ग का वितरण प्रतिरूप

भारत में रेलपथ के वितरण पर मुख्य रूप से स्थानीय स्थलाकृति, जनसंख्या घनत्व एवं आर्थिक संरचना का प्रभाव दिखाई देता है। समतल उच्चावच, मंद ढाल, उच्च कृषि उत्पादकता एवं सघन जनसंख्या घनत्व के कारण गंगा के मैदानी भाग में रेलों का सर्वाधिक संकेन्द्रण पाया जाता है। देश के सम्पूर्ण रेलजाल का लगभग आधा भाग यहीं केन्द्रित है। छोटा नागपुर पठार के खनिज सम्पन्न पठारी क्षेत्र के संसाधनों ने रेलों के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। दक्कन पठार में भौगोलिक विषमताओं के बावजूद सघन जनसंख्या, कपास उत्पादक क्षेत्र, प्रमुख औद्योगिक केंद्र एवं समुचित बन्दरगाहों के वितरण ने यहाँ रेल के विकास हेतु उपयुक्त परिस्थितियाँ प्रदान की है। इसके साथ ही रेलमार्गों के निर्माण को प्रोत्साहन सैनिक, प्रशासनिक एवं पर्यटन संबन्धित गतिविधियों ने भी दिया है। इन सभी उत्प्रेरक कारकों के बावजूद देश के उत्तरी, उत्तर - पूर्वी, पश्चिमी घाट के पहाड़ी क्षेत्रों, सघन वनीय क्षेत्र, दलदली क्षेत्र एवं राजस्थान के मरुस्थलीय क्षेत्रों में आज भी विरलता पाई जाती है।

देश में रेल परिपथ का प्रादेशिक विश्लेषण प्रति हजार वर्ग किमी. क्षेत्रफल एवं प्रति लाख जनसंख्या पर रेलमार्ग की लम्बाई के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार भारत में रेलमार्गों के घनत्व के चार क्षेत्र सामने आते है -

14.7.1 उच्च घनत्व के क्षेत्र (25 किमी. से अधिक क्षेत्रफल/1000 वर्ग किमी. क्षेत्र)

इसके अंतर्गत मुख्य रूप से गंगा का मैदानी भाग सम्मिलित है जहां समतल स्थलाकृति, उच्च जनसंख्या घनत्व एवं आर्थिक विकास का उच्च स्तर पाया जाता है। इस क्षेत्र में पंजाब, हरियाणा, चंडीगढ़, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, असम, पुडुचेरी, तमिलनाडु एवं गुजरात राज्य के भाग सम्मिलित है।

14.7.2 मध्यम घनत्व के क्षेत्र (15 - 25 किमी. के मध्य क्षेत्रफल/1000 वर्ग किमी. क्षेत्र)

इसके अंतर्गत पठारी स्थलाकृति वाले वे क्षेत्र सम्मिलित हैं जहाँ पर जनसंख्या घनत्व मध्यम श्रेणी का पाया जाता है एवं प्रमुख कृषि उत्पादक क्षेत्र भी है। औद्योगिक दृष्टिकोण से भी यह क्षेत्र समृद्ध परंतु धरातलीय विषमता के कारण यहाँ रेल परिपथ का मध्यम जाल पाया जाता है। इस क्षेत्र में महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, केरल एवं राजस्थान के भाग सम्मिलित है।

14.7.3 निम्न घनत्व के क्षेत्र (5 - 15 किमी. के मध्य क्षेत्रफल/1000 वर्ग किमी. क्षेत्र)

इसके अंतर्गत छोटा नागपुर पठार के ओडिशा, झारखण्ड, मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ राज्य सम्मिलित है। यहाँ विषम धरातल, कम जनसंख्या घनत्व तथा निम्न आर्थिक विकास का स्तर रेल विकास में बाधक है। इस क्षेत्र में जो भी रेलवे का विकास हुआ है वह उत्खनन क्षेत्रों तक ही सीमित है।

14.7.4 अति मध्यम घनत्व के क्षेत्र (5 किमी. से कम क्षेत्रफल/1000 वर्ग किमी. क्षेत्र)

रेल परिपथ के अति निम्न घनत्व वाले क्षेत्र के अंतर्गत जम्मू, लद्दाख, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, नागालैंड एवं त्रिपुरा जैसे राज्य आते है। यहाँ की पठारी स्थलाकृति, कम जनसंख्या घनत्व और आर्थिक पिछड़ापन रेल विकास में अवरोधक बने हुए है। इसके अतिरिक्त सिक्किम, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह, लक्ष्य द्वीप समूह एवं दमन और दीव आदि में रेल परिपथ का अभाव पाया जाता है।

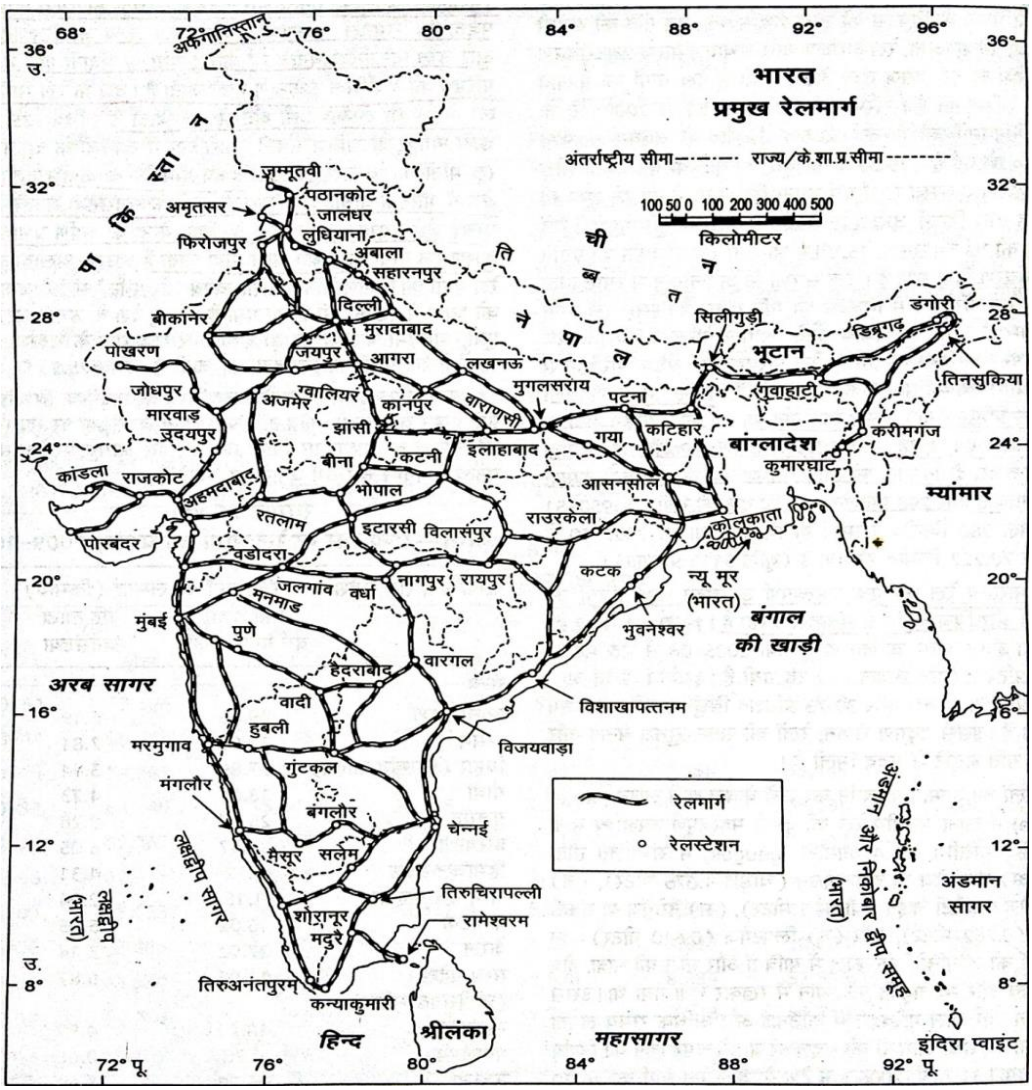

चित्र संख्या 14.2 भारत में रेलमार्गों का वितरण

14.7.2.1 रेलवे परिचालन में गुणात्मक परिवर्तन

भारत में रेलवे का एक वृहद जाल पाया जाता है जिसके वर्तमान स्वरूप का विकास एक लम्बी विकासात्मक प्रक्रिया का प्रतिफल है। इस प्रकार भारतीय रेल तंत्र में तीन मुख्य गुणात्मक परिवर्तन देखे गए हैं। पहला परिवर्तन गेज संबन्धित परिवर्तन था जिसके अंतर्गत रेलवे ने मीटर गेज तथा छोटी लाइनों को बड़ी लाइनों में परिवर्तित करने की एक महत्त्वाकांक्षी योजना शुरू की थी। इससे रेल परिचालन में सहायता मिली है क्योंकि एक गेज से दूसरे गेज जाने की परेशानी खत्म हो गई है। इससे यात्रियों एवं माल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाने ले जाने में सुगमता हुई है। दूसरा परिवर्तन वाष्पचालित इंजनों के स्थान पर डीजल एवं विद्युत इंजनों का प्रयोग है। इस कार्य से रेलों की गति बढ़ाने के साथ ही उनकी ढुलाई क्षमता में भी वृद्धि हुई है। पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भी यह कार्य सराहनीय है क्योंकि वायु प्रदूषण में कमी के साथ ही स्टेशनों पर स्वच्छता बढ़ी है। तीसरा एवं सबसे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन यह है कि महानगरों में मेट्रो रेलों का परिचालन शुरू हुआ। मेट्रो सेवा ने कोलकाता एवं दिल्ली की नगरीय परिवहन व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है।

14.7.2.2 रेल यातायात की विशेषता

देश की जनसंख्या वृद्धि, बढ़ते नगरीकरण, औद्योगीकरण एवं आर्थिक विकास के कारण विगत 70 वर्षों में रेल यातायात द्वारा माल एवं सवारी ढोने में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। वर्ष 1950 - 51 से 2005 - 06 तक की अवधि में माल की ढुलाई में 7 गुना एवं यात्रियों की संख्या में 4 गुना वृद्धि हुई है। इसी प्रकार इसी अवधि में माल एवं यात्रियों की ढुलाई से होने वाली आय में भी क्रमश: 255 गुना एवं 154 गुना की वृद्धि हुई है। इस प्रकार रेल यातायात की विशेषता को निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता है -

- रेल के ब्राड गेज मार्ग पर अन्य दोनों गेजो की तुलना में यातायात घनत्व अधिक है।

- कोलकाता, मुम्बई, दिल्ली एवं चेन्नई, बंगलुरु एवं हैदराबाद जैसे महानगरों के अंतर्वर्तन क्षेत्रों में यात्री यातायात का सर्वाधिक संकेन्द्रण पाया जाता है।

- कोलकाता, मुम्बई, दिल्ली एवं चेन्नई को जोड़ने वाले मुख्य मार्ग पर रेल यातायात का अधिक प्रवाह पाया जाता है। इसके पश्चात दसलाखी महानगरों एवं प्रांतीय राजधानियों को जोड़ने वाले रेलमार्गों का महत्त्व है।

- उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्र में यात्री यातायात का सर्वाधिक घनत्व देखा जाता है। इसके पश्चात तमिलनाडु मैदान का स्थान आता है।

- हावड़ा - गया - मुगलसराय (दिन दयाल नगर) मार्ग माल यातायात का घनत्व अधिक पाया जाता है। इसी प्रकार मुम्बई - कोलकाता - दिल्ली त्रिभुज को जोड़ने वाले मुख्य मार्ग पर भी सर्वाधिक माल परिवहन देखा जाता है।

- देश के कोयला एवं खनिज संसाधन से सम्पन्न क्षेत्रों से गुजरने वाले रेलमार्ग पर माल यातायात की सघनता है।

- कृषि प्रधान क्षेत्रों से गुजरने वाले रेलमार्ग पर कम माल परिवहन देखा जाता है।

- भारतीय रेल द्वारा माल परिवहन में सर्वाधिक मात्रा कोयले की होती है। वर्ष 2009 - 10 में कुल माल परिवहन का 44.62% कोयला ही था, इसके बाद क्रमश: लौह अयस्क (14.95%), सीमेंट (10.49%), उर्वरक (4.92%), खनिज तेल (4.37%) एवं अनाज (4.35%) का स्थान है।

- रेल परिवहन को सड़क परिवहन से तीव्र प्रतिस्पर्धा का भी सामना करना पड़ता है जिसके कारण इसके द्वारा परिवहित माल एवं यात्रियों की सहभागिता घट जाती है।

14.7.2.3 रेल परिवहन के लाभ

रेल परिवहन के लाभों को निम्नलिखित प्रकार से सूचीबद्ध किया जा सकता है -

- रेलवे का देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में विशेष योगदान है। इसनें मुम्बई में सूती वस्त्र उद्योग, कोलकाता में जूट उद्योग, झारखण्ड में कोयला एवं इस्पात उद्योग, असम तथा पश्चिम बंगाल में चाय के बगानों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

- स्वतन्त्रता पश्चात इसने देश में उद्योगों की दृष्टि से पिछड़े क्षेत्रों के विकास को प्रोत्साहन दिया है।

- कृषि विकास में भी रेलों का उल्लेखनीय योगदान है। इसनें किसानों एवं कृषि उत्पादों को दूरवर्ती भागों यहाँ तक कि विश्व बाज़ार में भी उनके उत्पादों को अच्छे दाम में बेचने हेतु सक्षम बनाया है।

- रेलों द्वारा ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के बीच संपर्क स्थापित होने से नवाचरों का विस्तार हुआ जिससे ग्रामीण क्षेत्र की सामाजिक बुराइयों की जड़े कमजोर हुई है।

- इनके माध्यम से नाशवान वस्तुओं को तीव्रता से देश के विभिन्न भागों में पहुंचाया जा सकता है ।

- देश के प्रशासन, कानून व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में भी इनका योगदान है।

- प्राकृतिक एवं मानवीय आपदाओं के दौरान भी इनके माध्यम से खाद्यान्नों एवं अन्य समग्रियों को अभाव वाले क्षेत्रों तक आसानी से पहुंचाया जा सकता है

14.7.2.4 रेलवे की समस्याएँ

भारत सरकार के सार्वजनिक उपक्रमों में रेलवे सबसे बड़ा है। इसका प्रशासनिक एवं कार्यात्मक क्षेत्र बहुत बड़ा है जिसके कारण इसके कार्यों के सम्पादन में जटिलताएँ एवं विविधताएँ देखी जाती है। इस प्रकार रेलवे के समक्ष अनेकों समस्याएँ उत्पन्न होती है जिनका विवरण निम्न है -

- रेलमार्ग की वर्तमान समय में सबसे महत्त्वपूर्ण चुनौती अत्यधिक भार है। सभी मालवाहक एवं सवारी गाड़ियाँ अपने निर्धारित क्षमता से अधिक भार का वहन कर रही हैं।
- देश के सभी क्षेत्रों में रेलतंत्र की अभी पहुँच नहीं हो सकी है जिसका मुख्य कारण आर्थिक विकास में प्रादेशिक असमानता है। विकसित एवं औद्योगिक क्षेत्रों में जहाँ इसकी सघनता है वहीं ग्रामीण एवं सुदुर्वर्ती क्षेत्र इसकी पहुँच से परे है।
- रेल परिवहन को सड़क परिवहन से तीव्र प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है। कई क्षेत्रों में सड़कें रेलों के समानान्तर संपूरक की भूमिका में हैं।
- रोजगार की दृष्टि से भी रेलवे भारत सरकार का सबसे बड़ा उपक्रम है। इस समय रेलवे में लगभग 18 लाख नियमित कर्मचारी है। इनमें से भी लगभग 42% अप्रशिक्षित है। रेलवे द्वारा होने वाले कुल व्यय में से 56% कर्मचारियों के वेतन पर खर्च होता है जिसके कारण रेलवे के अन्य सुधार एवं विस्तार हेतु बहुत कम धनराशि बच पाती है।
- राजनीतिक हस्तक्षेप एवं दबाव के कारण रेल विभाग द्वारा अनेकों परियोजनाएँ शुरू तो हो जाती है परंतु वे अपनी पूरी क्षमता का उपयोग नहीं कर पाती है।
- ताप विद्युत के उत्पादन लागत में लगातार वृद्धि होने से NTPC एवं राज्य विद्युत बोर्ड द्वारा लगातार बिजली के मूल्यों में वृद्धि से रेलवे पर करोड़ों रुपये का बकाया है।
- रेलवे सीधे केंद्र सरकार के अधीन है जिससे इसके प्रशासन एवं निर्णय पर रेलमंत्री की भूमिका ज्यादा होती है। राजनीतिक उद्देश्यों हेतु लिए जाने वाले गलत निर्णयों एवं लोकप्रियता के लिए माल एवं भाड़ों में समुचित वृद्धि न होने से रेल घाटा बढ़ता जा रहा है, जिससे रेल का विकास प्रभावित हुआ है।
- रेलवे के परिचालन के लिए रेल लाइनें, सिग्नल व्यवस्था, संचार तंत्र, यात्री सुविधा एवं सुरक्षा आदि की आवश्यकता होती है।
- रेलवे के अनेकों उपकरण पुरानें है जिस कारण उन्हें बदलने की आवश्यकता है।

14.8 सड़क परिवहन

भारत में सड़कों को जनसाधारण के परिवहन मार्ग के नाम से जाना जाता है। इन्हीं सड़कों के माध्यम से देश के प्रत्येक गाँव एवं पुरवा तक आसानी से पहुँचा जा सकता है। भारत में सड़क निर्माण के साक्ष्य सिंधु घाटी सभ्यता से ही प्राप्त होते है। भारतीय इतिहास के यदि कालक्रम का अध्ययन किया जाए तो चन्द्रगुप्त मौर्य, अशोक, शेरशाह सूरी और शासकों द्वारा विभिन्न प्रकार के सड़कों का निर्माण कराया गया है। औपनिवेशिक काल में सड़कों के निर्माण का मुख्य उद्देश्य कच्चे माल, औद्योगिक उत्पाद एवं सैन्य बल को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने और कानून व्यवस्था को बनाए रखना था। ग्राण्ड ट्रक रोड ढाका (बांग्लादेश) से लाहौर (पाकिस्तान) तक उत्तर भारत की प्रमुख सड़क है, जो यहाँ के प्रमुख नगरों को जोड़ती है। आजादी के पश्चात देश में सड़क निर्माण को काफी प्रोत्साहन मिला है। इस दौरान गाँव एवं दूर दराज क्षेत्रों को पक्की सड़कों से जोड़ने, कच्ची सड़क को पक्की सड़क में बदलने तथा व्यस्त एवं भीड़ - भाड़ वाली सड़कों को चौड़ा करने का कार्य किया गया है।

वर्तमान समय में भारत सड़कों का विशाल जाल पाया जाता है। जहाँ वर्ष 1950 - 51 सड़कों की कुल लम्बाई 4 लाख किमी. थी वहीं वर्ष 2010 - 11 ई. में इनकी लम्बाई बढ़ कर 46.9 लाख किमी.हो गई है। इस प्रकार इस अवधि में सड़कों की लंबाई में 11 गुना वृद्धि हुई है। 31 मार्च 2016 तक देश में सड़कों की कुल लम्बाई 5,603,293 किमी. जिनमें पक्की सड़कों की सहभागिता 62.50% थी। भारत में राज्य स्तरीय सड़कों के वितरण किया जाए तो कुल सड़कों की लम्बाई की दृष्टि से महाराष्ट्र प्रथम स्थान पर है। यहाँ देश की कुल 13% सड़कें पायी जाती है, इसके बाद अवरोही क्रम में क्रमश: उत्तर प्रदेश (8.98%), कर्नाटक (7.35%), असम (7.01%), पश्चिम बंगाल (6.73%), ओडिशा (6.12%), तमिलनाडु (5.25%), राजस्थान (5.41%), बिहार (4.39%), केरल (4.27%) और गुजरात (3.81%) का स्थान आता है। भारत की सम्पूर्ण सड़कों की लम्बाई का लगभग 73% भाग इन्हीं 11 राज्यों में वितरित है।

सारणी : 14.2 भारत में सड़क विकास की प्रगति (लंबाई प्रति हजार किमी. में)

क्र. सं.	मानक वर्ष	कुल सड़कें	पक्की सड़कें	राष्ट्रीय महामार्ग	राज्य महामार्ग
1.	1950 - 51	399.91	157.15	19.80	-
2.	1960 - 61	524.56	363.85	23.85	-
3.	1970 - 71	914.95	398.02	23.89	56.82
4.	1980 - 81	1,485.47	684.23	31.71	94.49
5.	1990 - 91	2,327.49	1,091.45	33.78	127.36
6.	2000 - 01	3,373.55	1,601.70	57.70	132.12
7.	2011 - 11	4,690.36	2,524.75	70.99	163.93
8.	2015 - 16	5,603.33	3,501.5	101.00	176.22

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा 2017 - 2018.

अगर पक्की सड़कों के वितरण का अध्ययन किया जाए तो उसके दृष्टिकोण से भी महाराष्ट्र प्रथम स्थान पर है। यहाँ कुल पक्की सड़कों का लगभग 14.40% भाग पाया जाता है। पक्की सड़कों के वितरण के दृष्टिकोण उत्तर प्रदेश (10.61%) का दूसरा स्थान है। इसके बाद क्रमश: अवरोही क्रम में ओडिशा (7.97%), मध्य प्रदेश (7.25%), कर्नाटक (6.72%), तमिलनाडु (6.44%), राजस्थान (6.20%), गुजरात (4.71%), केरल (4.28%) और आन्ध्र प्रदेश (3.51%) का स्थान आता है। इस प्रकार इन दस राज्यों देश की कुल पक्की सड़कों का लगभग 72% भाग वितरित पाया जाता है । इसके विपरीत सिक्किम, मिज़ोरम, नागालैंड, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, कश्मीर, लद्दाख, उत्तराखण्ड, त्रिपुरा, झारखण्ड एवं गोवा जैसे राज्यों में सम्पूर्ण पक्की सड़कों का मात्र 5.30% भाग पाया जाता है। सड़कों की लम्बाई एवं घनत्व की सबसे सटिक व्याख्या पृथक राज्यों के क्षेत्रफल एवं वहाँ वितरित जनसंख्या के अनुपात के आधार पर किया जाता है। देश के 13 राज्य केरल, गोवा, तमिलनाडु, त्रिपुरा, ओडिशा, नागालैंड, असम, उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, पंजाब, पश्चिम बंगाल एवं कर्नाटक ऐसे हैं जहाँ प्रति 100 वर्ग किमी. क्षेत्रफल पर सड़कों की औसत लम्बाई राष्ट्रीय औसत से अधिक है। सम्पूर्ण भारत में सड़कों की औसत लम्बाई प्रति 100 वर्ग किमी. क्षेत्रफल पर 143.08 किमी. है। इसी प्रकार अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मिज़ोरम, ओडिशा, गोवा, मणिपुर, हिमाचल प्रदेश, त्रिपुरा असम एवं सिक्किम में प्रति लाख जनसंख्या पर सड़कों की लम्बाई औसत से सर्वाधिक ज्यादा पाया जाता है जो कि औसतन 600 प्रति 100 वर्ग किमी. है। सघन बसे राज्यों उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड एवं ओडिशा में यह औसत से कम पाया जाता है जो कि 220 किमी. से भी कम है। देश के शेष राज्यों एवं केंद्र शासित प्रदेशों में सड़कों की लम्बाई का यह औसत 220 से 600 किमी. के बीच पाया जाता है।

14.8.1 भारत में सड़कों का वर्गीकरण

भारत में सड़कों के विविध स्वरूप पाए जाते हैं। इसकी उच्चावचीय विभिन्नता इस विविधता के कारक है। नागपुर योजना (1943) के अंतर्गत भारतवर्ष में वितरित सड़कों को चार वर्गों में बाटा गया था। बाद में उनकी उपयोगिता एवं महत्त्व को देखते हुए एक वर्ग को और इसमें सम्मिलित कर लिया गया है। इस प्रकार वर्तमान समय में भारत में सड़कों के पाँच वर्ग विद्यमान है, जो निम्नलिखित है -

1} राष्ट्रीय राजमार्ग

2} राज्य राजमार्ग

3} जिला सड़कें

4} ग्रामीण सड़कें

5} सीमावर्ती सड़कें

1} राष्ट्रीय राजमार्ग

राष्ट्रीय राजमार्ग वे सड़कें होती है जिनके निर्माण, मरम्मत एवं रख - रखाव की ज़िम्मेदारी केंद्र सरकार की होती है। इनके निर्माण एवं रख - रखाव का कार्य परिवहन मंत्रालय भारतीय राज्य निर्माण प्राधिकरण एवं राज्य के लोक निर्माण के माध्यम से करता है। ये महामार्ग राज्यों की राजधानियों, बड़े औद्योगिक नगरों एवं बन्दरगाहों को जोड़ते है। इन महामार्गों की कुल लम्बाई जहाँ कुल पक्की सड़कों की 3.28% है वहीं कुल सड़कों की लम्बाई का मात्र 1.64% है, लेकिन इससे देश के समस्त यातायात का 40% भाग सम्पन्न होता है। भारत में इन महामार्गों का वितरण अति असमान है। देश के नौ प्रमुख राज्यों में राष्ट्रीय राजमार्गों की 61% लम्बाई पाई जाती है जबकि प्रादेशिक स्तर पर यदि इनका आंतरिक राज्य स्तरीय अध्ययन किया जाए तो मध्य प्रदेश, आंध्रा प्रदेश, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान, कर्नाटक, गुजरात एवं बिहार में इनका वितरण 5 से 10% के बीच पाया जाता है।

राज्यों में निवास करने वाली जनसंख्या के संदर्भ में यदि महामार्गों के वितरण का अध्ययन किया जाए तो अलग स्वरूप प्रकट होते है। प्रति 100 वर्ग किमी. क्षेत्रफल एवं प्रति लाख जनसंख्या के अनुपात में यदि इनका अध्ययन किया जाए तो पहले वर्ग में चंडीगढ़, पुडुचेरी एवं दिल्ली जैसे केंद्र शासित प्रदेश के साथ गोवा राज्य आते है। जहाँ महामार्गों की उपलब्धता सर्वाधिक है। इसी प्रकार दूसरे वर्ग में मिज़ोरम, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय एवं मणिपुर राज्य आते है, जिन्हें महामार्गों के वितरण की दृष्टिकोण से मध्यम राज्य कहा जाता है। इन दोनों वर्गों से अलग उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, बिहार, महाराष्ट्र, राजस्थान, मध्य प्रदेश एवं गुजरात जैसे बड़े एवं सघन जनसंख्या वाले राज्य आते हैं। इसी कारण इन राज्यों में महामार्ग की लम्बाई एवं जनसंख्या का अनुपात न्यूनतम पाया जाता है।

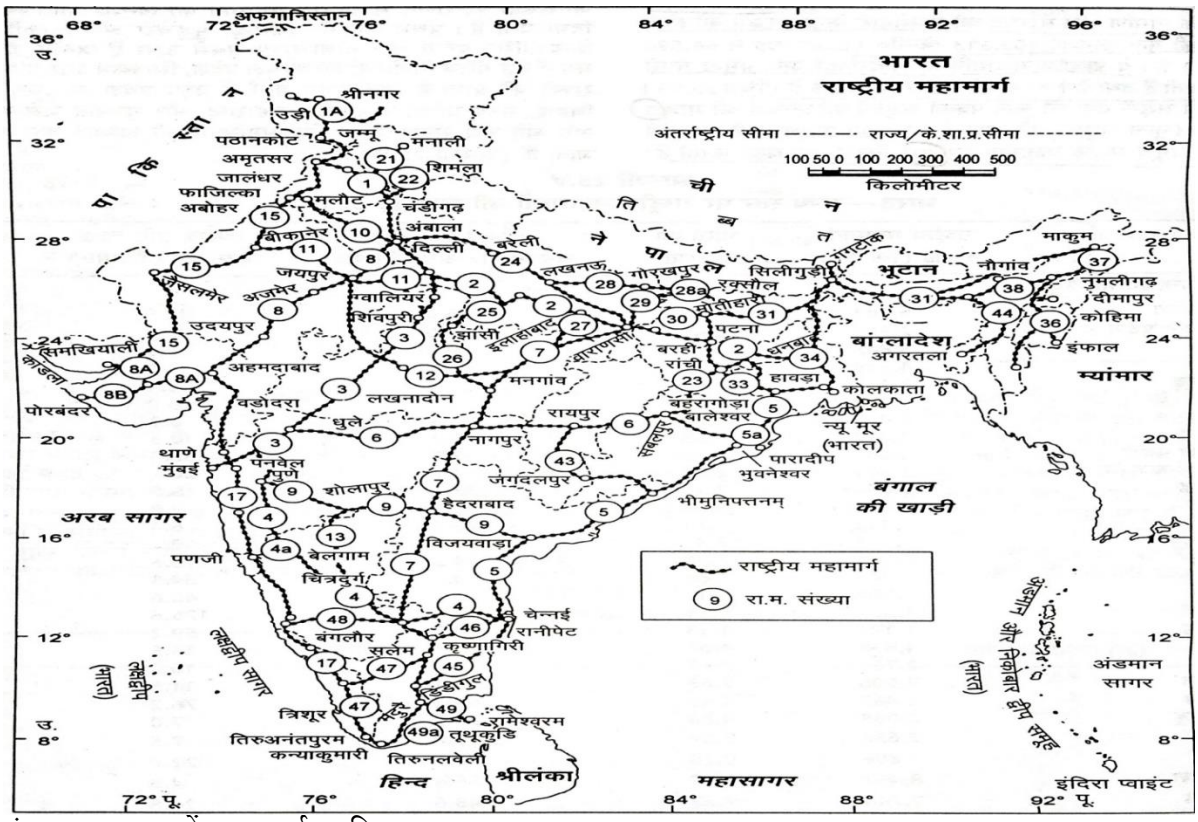

चित्र संख्या 14.3 भारत में सड़क मार्ग का वितरण.

स्वर्णिम चतुर्भुज

राष्ट्रीय महामार्ग परियोजना के प्रावधानों के अंतर्गत स्वर्णिम चतुर्भुज सड़क परियोजना एक महत्वाकांक्षी योजना है। इसके द्वारा तीन चरणों में राष्ट्रीय राजमार्गों की गुणवत्ता में सुधार करने, उन्हें 4 या 6 पथों में चौड़ा करने जैसे कार्यक्रमों को मूर्त स्वरूप देने का प्रयास किया गया।

इस परियोजना को 2 जनवरी 1999 ई. में शुरू किया गया था। इसके निर्माण का दायित्व भारत के राष्ट्रीय महामार्ग प्राधिकरण को है। इसके निर्माण कार्य को दो चरणों में सम्पन्न करने की रणनीति बनाई गई है -

- **प्रथम चरण**

इस चरण में भारत के चार प्रमुख महानगरों को जोड़ने वाली 6 पाठ वाली सड़कों का निर्माण किया गया है। दिल्ली - मुम्बई, मुम्बई - चेन्नई, चेन्नई - कोलकाता एवं कोलकाता - दिल्ली को जोड़ने वाले इस महामार्ग की कुल लम्बाई 5846 किमी. निर्धारित की गई है। इस प्रकार इसकी चार भुजाएँ अस्तित्व में आई जिनकी लम्बाई क्रमश: दिल्ली - मुम्बई भुजा 1419 किमी., मुम्बई - चेन्नई भुजा 1290 किमी., चेन्नई - कोलकाता भुजा 1684 किमी. और कोलकाता - दिल्ली भुजा 1453 किमी. पाई जाती है। इसके चेन्नई एवं कोलकाता भुजा की लम्बाई सर्वाधिक है।

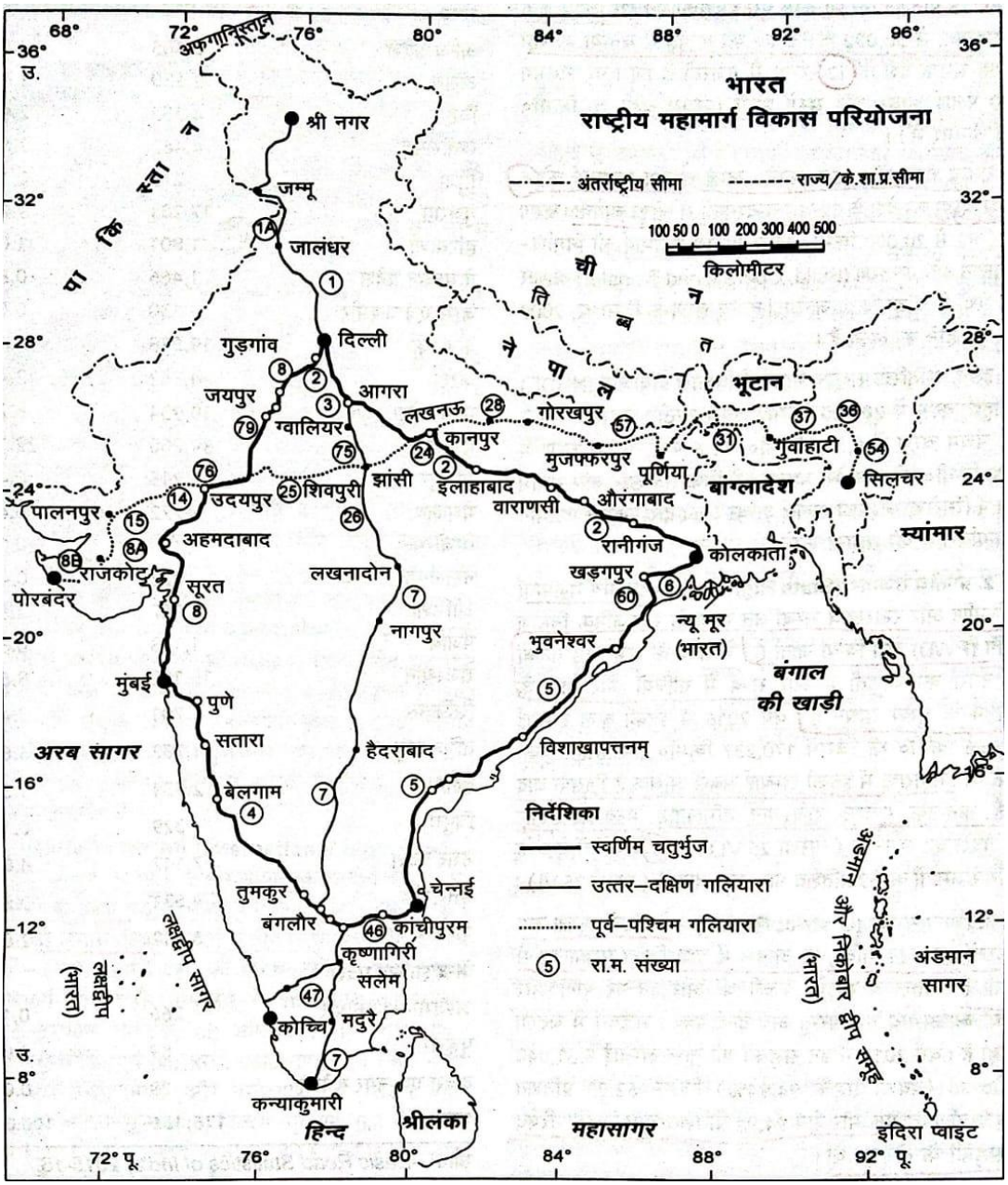

चित्र संख्या 14.4 भारत में स्वर्णिम चतुर्भुज एवं उत्तर - दक्षिण तथा पूर्व - पश्चिम गलियारा

- **द्वितीय चरण**

महामार्ग निर्माण की स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना के दूसरे चरण में श्रीनगर को कन्याकुमारी से जोड़ने वाले उत्तर - दक्षिण गलियारा तथा पोरबंदर को सिल्चर से जोड़ने वाले पूर्व - पश्चिम गलियारा के निर्माण को मूर्त रूप देने का प्रयास किया गया है। इस चरण में सड़कों की कुल लम्बाई 7300 किमी. निर्धारित की गई थी जिनमें उत्तर - दक्षिण गलियारा की लम्बाई 4000 किमी. तथा पूर्व - पश्चिम गलियारा की लम्बाई 3300 किमी. है। इन महामार्गों को आधुनिक तकनीकी से इस प्रकार निर्मित किया गया कि दुर्गामी वाहन एवं अधिक भार वाले वाहन बिना किसी अवरोध के न्यूनतम समय में अपने निर्धारित गंतव्य तक आसानी से पहुँच सके।

स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना के साथ ही अन्य राष्ट्रीय महामार्गों के निर्माण से देश के एकीकृत एवं समन्वित विकास में बड़ी सहायता मिली है। विश्व बैंक ने एक सर्वेक्षण में यह मत व्यक्त किया है कि स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना के निर्माण से भारत को लगभग प्रतिवर्ष 8000 करोड़ रुपये का लाभ होने की संभावना है। इसका सबसे अधिक प्रभाव मोटर वाहनों को चलाने की लागत और समय की बचत है। आधारभूत वस्तुओं को उनके उत्पादन स्थल से उपभोग स्थल तक पहुँचाने एवं रोजगार सृजन में इस परियोजना का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

2} राज्य महामार्ग

राज्य महामार्ग के अंतर्गत वे सभी सड़कें आती हैं जिनके निर्माण एवं रख - रखाव का कार्य संबन्धित राज्य के सार्वजनिक निर्माण विभाग (PWD) द्वारा किया जाता है। ये सड़कें राज्य के सभी बड़े कस्बों एवं नगरों को जोड़ती है। इनके द्वारा राज्य के आंतरिक भाग में वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति सुनिश्चित होती है। वर्ष 2016 ई. में राज्य महामार्गों की कुल लम्बाई 176,166 किमी. थी जिनमें 170,237 किमी. सड़कें पक्की हैं यानि राज्य महामार्गों की 96.6% सड़कें पक्की हो चुकी है। महाराष्ट्र में राज्य महामार्गों की कुल लम्बाई सबसे अधिक है, इसके पश्चात क्रमश: कर्नाटक, गुजरात, राजस्थान, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, एवं उत्तर प्रदेश का स्थान आता है। इस प्रकार इनके विश्लेषण से यह बात स्पष्ट होती है कि देश के सात राज्यों में लगभग 69% राज्य महामार्ग पाए जाते है।

3} जिला सड़कें

ये सड़कें मुख्यत: जिले के अंदर परिवहन का मुख्य माध्यम होती है। इनके माध्यम से जिला मुख्यालय से कस्बों एवं बड़े गाँवों को जोड़ा जाता है। पहले ये सड़कें अधिकांशत: कच्ची होती थी तथा अवसंरचनात्मक अभाव का सामना करती थी। इन पर पुलों एवं पुलियों का अभाव था। वर्ष 2016 ई. में इन सड़कों की कुल लम्बाई 561,940 किमी.थी जिनमें से लगभग 94.94% सड़कें पक्की हो चुकी है। इन सड़कों में से 62.93% सड़कों का निर्माण लोक निर्माण विभाग द्वारा जबकि 37.07% सड़कों का निर्माण जिला परिषद द्वारा कराया गया था।

4} ग्रामीण सड़कें

वे सड़कें जिनके निर्माण एवं रख - रखाव का दायित्व ग्राम पंचायतों पर होता है ग्रामीण सड़कें कहलाती है। इनमें पंचायत सड़कें, सामुदायिक विकासखण्ड/पंचायत समिति की सड़कें और जवाहर योजना के अंतर्गत आने वाली सड़कें सम्मिलित होती है। इनमें से अधिकांश सड़कें सकरी, टेढ़ी - मेढ़ी और कच्ची होने के साथ ही बड़े वाहनों हेतु अनुपयुक्त होती है। वर्षा ऋतु में इन पर यातायात कठिन हो जाता है। 31 मार्च 2016 तक इन सड़कों की कुल लम्बाई 3,035,337 किमी. जो देश की कुल सड़कों के 54.17% भाग का प्रतिनिधित्व करती है। इनमें से केवल 66.15% सड़कें ही पक्की बनाई जा सकी है। वर्तमान समय में प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अंतर्गत ग्रामीण परिवहन में सुधार करने के लिए इनका पुनरुद्धार किया जा रहा है। इस योजना के तहत समतल मैदानी क्षेत्रों में 500 की जनसंख्या वाले सभी गाँव तथा पर्वतीय, पठारी एवं जनजातीय क्षेत्रों में 250 की जनसंख्या वाले सभी गाँवों को हर मौसम में चालू एवं पक्की सड़कों से जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है।

5} सीमावर्ती सड़कें

वे सड़कें जिनके निर्माण एवं रख - रखाव का दायित्व सीमा सड़क संगठन को है सीमावर्ती सड़कें कहलाती है। सीमा सड़क संगठन की स्थापना 1960 ई. उत्तरी एवं उत्तर - पूर्वी सीमा क्षेत्र में सामरिक महत्त्व वाली सड़कों के निर्माण हेतु किया गया था। मार्च 2005 तक इस संगठन ने कुल 40,450 किमी। लम्बी सड़कों एवं 21,314 मीटर लम्बे पुलों का निर्माण किया था।

14.8.2 सड़कों का महत्त्व

- सड़कों की पहुँच दूर - दराज गाँवों तक होती है जबकि रेलें सीमित स्थानों तक पहुँचती है। भारत की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है।

- पर्वतीय क्षेत्रों में रेलों का जहाँ अभाव पाया जाता है वहाँ सड़कें ही एकमात्र यातायात के साधन है।
- ग्रामीण विकास और कृषि विकास हेतु सड़कें ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों तक वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति के साथ ही खेतों तक उर्वरक, बीज एवं कृषि यंत्रों को पहुँचाने की एकमात्र साधन है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादित होने वाले शीघ्र नष्ट होने वाली वस्तुएँ जैसे सब्जी, दूध, मछली आदि को उपभोग क्षेत्रों तक आसानी से सड़कों के माध्यम से ही पहुंचाया जा सकता है।
- देश की सामरिक सुरक्षा में इनका महत्त्वपूर्ण योगदान है। सीमावर्ती क्षेत्रों में सैनिक गतिविधियों हेतु आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति का माध्यम होती है।
- बाढ़, सूखा एवं अन्य प्राकृतिक तथा मानव जनित आपदाओं से निपटने में सड़कें रेलमार्ग एवं अन्य परिवहन साधनों की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली होती है क्योंकि इनके माध्यम से दूर - दराज क्षेत्रों तक आसानी से पहुँचा जा सकता है।
- सड़कें शिक्षा के साथ ही सभ्यता के प्रसार में भी सहायक होती है क्योंकि ये महानगरों, नगरों, कस्बों एवं गाँवों को आपस में आसानी से जोड़ने में सक्षम होती है।

14.8.3 सड़कों के दोष

- ये अधिक दूरी तय करने हेतु उपयुक्त नहीं होती है।
- भारी वस्तुओं जैसे लोहा, कोयला आदि के परिवहन हेतु रेलें ही उपयुक्त माध्यम हैं।
- सड़क परिवहन में दूर्घटनाएँ अधिक होने से जान एवं माल माल का अधिक नुकसान होता है।
- वाहनों की संख्या बढ़ने से पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्या अधिक बढ़ रही है।
- यह रेल एवं अन्य परिवहन माध्यमों की अपेक्षा अधिक महंगी होती है।

14.9 जल परिवहन

जल परिवहन मानव सभ्यता के सभी परिवहन माध्यमों में सबसे पुराना है। रेल एवं सड़क मार्गों के विकास से पूर्व माल एवं यात्रियों के यातायात का एकमात्र जरिया यह है। जल परिवहन के विकास एवं रख - रखाव में रेलों एवं सड़कों की तुलना कम खर्च होता है। वर्तमान समय में जल परिवहन के दो स्वरूप विद्यमान है -

1} आन्तरिक जल परिवहन

2} समुद्री जल परिवहन

14.9.1 आन्तरिक जल परिवहन

आन्तरिक जल परिवहन यात्रियों एवं सामानों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक लाने ले जाने हेतु नदियों, नहरों, सकरी खाइयों एवं आंतरिक जल आदि का उपयोग किया जाता है। भारत में आन्तरिक जल परिवहन के लिए गंगा, ब्रह्मपुत्र, सिंधु, यमुना, महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, नर्मदा एवं तापी आदि नदियों का प्रयोग किया जाता है। इनके तटों और किनारों पर कई नदी पत्तनों एवं घाटों को विकसित किया गया है। 19वीं शताब्दी के बाद रेलमार्गों के निर्माण एवं सड़क परिवहन के विकसित हो जाने के फलस्वरूप इसे नुकसान का सामना करना पड़ा है। सिचाई एवं अन्य कार्यों हेतु नदियों पर बाँध बनाकर उनके जल अपवर्तन के कारण अनेकों नदियों का प्रवाह प्रभावित हुआ है जिसके कारण उनकी परिवहन क्षमता कम हुई है। यही कारण है कि वर्तमान समय में देश के परिवहन तंत्र में जल परिवहन की भागीदारी घटकर मात्र 1% रह गई है। भारत में अनेकों नित्यवाही नदियां हैं फिर भी यहाँ नदी परिवहन का समुचित विकास नहीं हो सका है। भारत के नदियों में जल परिवहन के विकसित न होने का मुख्य कारण मौसमी वर्षा, नदी प्रवृत्ति में अस्थिरता, भयंकर बाढ़ों, नदी मार्ग में परिवर्तन, सिचाई नहरों में अधिक जल का अपवर्तन, अवसादन, पहाड़ी एवं पठारी भागों की असमतल स्थलाकृति, डेल्टा निर्माण और नदी मुख का सकरा होना आदि है। भारत में लगभग 14,500 किमी. नाव्य आन्तरिक जलमार्ग है। इसमें यात्रिक जलयानों के माध्यम से बड़ी नदियों में केवल 3,700 किमी और नाव्य नहरों में 900

किमी. लम्बा जलमार्ग का विकास हुआ है। भारत में आन्तरिक जल परिवहन द्वारा हर साल लगभग 5 करोड़ टन माल धोया जाता है। भारत के प्रमुख आन्तरिक जलमार्ग गंगा, भागीरथी, हुगली, ब्रह्मपुत्र, बराक, गोदावरी, महानदी, कृष्ण, कावेरी, नर्मदा एवं तापी के निचले भाग, गोवा की मांडवी एवं जुआरी नदी, कर्नाटक की काली नदी, श्रावती एवं नेत्रावती, केरल के अन्तरजल एवं लैगून, मुम्बई के आन्तरिक जल क्षेत्र, तमिलनाडु राज्य की बकिंघम नहर, कावेरी की जुआ नहर एवं आन्ध्र प्रदेश के तटीय क्षेत्र एवं नहरें।

भारत के आन्तरिक जल परिवहन का यदि प्रादेशिक अध्ययन किया जाए तो नव्य आन्तरिक जलमार्गों की दृष्टिकोण से उत्तर प्रदेश का प्रथम स्थान है। उसके बाद क्रमश: पश्चिम बंगाल, आन्ध्र प्रदेश, असम एवं केरल राज्य का स्थान आता है। भारत के आन्तरिक जल परिवहन का प्रबन्धन एवं परिचालन भारतीय आन्तरिक जलमार्ग प्राधिकरण (1986) के प्रावधानों के अधीन होता है।

14.9.2 आन्तरिक जलमार्ग का प्रादेशिक वितरण

भारत के परिवहन तंत्र में जल परिवहन एक महत्त्वपूर्ण घटक है परंतु इसका प्रादेशिक वितरण असमान पाया जाता है। गंगा नदी भारत का सबसे प्रमुख आन्तरिक जलमार्ग है क्योंकि यह एक नित्यवाही नदी है जिसमें वर्ष पर्यन्त जल की उपलब्धता वर्षा ऋतु में मानसूनी वर्षा एवं ग्रीष्म ऋतु में वर्फ पिघलने से होती है। उत्तर प्रदेश एवं बिहार के कृषि प्रधान क्षेत्र से प्रवाहित होने के कारण इससे सिचाई हेतु अनेकों नहरों को भी निकाला गया है जिससे इसका अधिकांश जल अपवर्तित भी हो जाता है। इसके बावजूद भी आन्तरिक परिवहन हेतु पर्याप्त जल उपलब्ध रहता है। इसके प्रवाह मार्ग के निचले भागों विशेष कर पटना तक पर्याप्त जल पाया जाता है, जिसकी गहराई 10 मीटर तक होती है। इसे राष्ट्रीय जलमार्ग का दर्जा प्राप्त है जिसके कारण हल्दिया से प्रयागराज (इलाहाबाद) तक स्टीमर चलाने योग्य भी बना दिया गया है। इसकी प्रमुख सहायक नदियों यमुना, घाघरा, गण्डक एवं गोमती आदि को भी नौ परिवहन हेतु विकसित किया जा रहा है।

हुगली नदी भी देश का एक प्रमुख आन्तरिक जलमार्ग है जो गंगा नदी के डेल्टाई भाग मे स्थित है। हुगली गंगा नदी की प्रमुख वितरिका है। हुगली नदी को कोलकाता से डायमण्ड हार्बर तक नदी परिवहन हेतु प्रयोग में लाया जाता है। गंगा नदी के प्रवाह क्षेत्र के निचले भाग में स्थित होने के कारण इसमें रेत जमाव की समस्या प्रमुख है। इसमें जमे रेत को साफ करने के लिए फरक्का बैराज से अतिरिक्त जल छोड़ा जाता है।

ब्रह्मपुत्र नदी भी अपने मुहाने से तेजपुर एवं डिब्रूगढ़ तक नौ परिवहन योग्य है। इसमें 1280 किमी. की दूरी तक स्टीमर चलाने के लिए आन्तरिक जलमार्ग को विकसित किया गया है। इसके तट पर कुछ नदी पत्तनों को भी विकसित किया गया है, जिसमें पाण्डु, जोगीगोपा एवं डिब्रूगढ़ प्रमुख है। बांग्लादेश द्वारा नदी संबंधी अंतर्राष्ट्रीय विवाद, नदी द्वीपों की अवस्थिति एवं वर्षा ऋतु में तेज बहाव इस पर यातायात संचालन में कठिनाई उत्पन्न करते है जिसके कारण इसकी वास्तविक निर्धारित क्षमता का उपयोग नहीं हो पाता है।

भारत के प्रायद्वीपीय भाग की नदियों की प्रवाह प्रवृत्ति हिमालयी नदियों से अलग है। इस क्षेत्र की अधिकांश नदियाँ मौसमी हैं। इन नदियों के वर्षावाही होने के कारण ही इनके निचले भागों में नौ परिवहन संभव हो पाता है। प्रायद्वीपीय भारत की नौ परिवहन योग्य प्रमुख नदियाँ गोदावरी, महानदी, कृष्णा, कावेरी, नर्मदा एवं तापी है, जिनमें आन्तरिक जलमार्ग का विकास हुआ है। इसके पूर्वी तट की छोटी नदियों पर नौ परिवहन का विकास नहीं हो पाया है क्योंकि यहाँ का ढाल मंद होने के कारण अवसादों का जमाव अधिक होने से तली उथली है। पश्चिमी घाट का निर्माण स्थलीय भाग के अवतलन के फलस्वरूप हुआ है जिसके कारण यहाँ तीव्र ढाल के साथ ही नौ परिवहन हेतु आवश्यक परिस्थितियाँ विद्यमान है। इसी कारण इसके पश्चिमी घाट पर स्थित गोवा की मांडवी, जुआरी, काली, श्रावती एवं नेत्रावती जैसी छोटी नदियों पर आन्तरिक जलमार्ग का विकास हुआ है।

आन्ध्र प्रदेश एवं तमिलनाडु राज्य में संयुक्त रूप से प्रवाहित होने वाली 413 किमी. लम्बी बकिंघम नहर एक प्रमुख आन्तरिक जलमार्ग है। यह नहर उत्तर में स्थित कोम्मामुर को दक्षिण के मरक्कानम से जोड़ती है। इसके नौ परिवहन का उपयोग चेन्नई को नमक एवं जलाऊ लकड़ी उपलब्ध कराने हेतु किया जाता है। इसी प्रकार यहाँ की अन्य प्रमुख नहरें कुर्नुल - कुडप्पा (117 किमी.), सोन (326 किमी।), मेदिनीपुर (459 किमी.) एवं दामोदर (165 किमी.) है। उत्तर भारत की प्रमुख नदियों के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश एवं बिहार के कुछ प्रमुख नदियों का भी परिवहन हेतु प्रयोग किया जाता है।

14.9.3 भारत में राष्ट्रीय जलमार्ग का विकास

यद्यपि जल परिवहन तो भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के साथ ही विकसित हुआ है। इसकी महत्ता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि भारत के सभी प्रमुख नगर किसी न किसी नदी के तट पर ही विकसित एवं प्रफुल्लित हुए है। रेलवे, सड़क एवं वायु परिवहन के विकास के साथ ही इसकी हिस्सेदारी एवं सहभागिता में कमी आयी है। इन्हीं तथ्यों के प्रावधान में सरकार ने देश के अन्दर 10 प्रमुख आन्तरिक जल परिवहन विकसित करने का निर्णय लिया है। हल्दिया - प्रयागराज के बीच 1620 किमी. दूरी को 27 अक्टूबर 1986 को प्रथम राष्ट्रीय जलमार्ग के रूप में

घोषित किया गया। इसके बाद क्रमश: सादिया - धुबरी के ब्रह्मपुत्र नदी पर 26 अक्टूबर 1988 को द्वितीय राष्ट्रीय जलमार्ग घोषित किया गया। चम्पकारा नहर (14 किमी।), उद्योग मण्डल नहर (22 किमी.) के साथ ही कोल्लम - कोट्टापुरम के बीच 168 किमी. एवं पश्चिमी तटीय नहर को 1 फरवरी 1993 ई. में घोषित किया गया है।

सारणी : 14.3 भारत में नाव्य योग्य जलमार्गों की लंबाई (किमी. में)

क्र. सं.	राज्य	नदियाँ	नहरें	योग	प्रतिशत
1.	उत्तर प्रदेश	2,268	173	2,441	17.01
2.	पश्चिम बंगाल	1,555	782	2,337	16.28
3.	आन्ध्र प्रदेश	309	1,690	1,993	13.89
4.	असम	1,983	-	1,983	13.82
5.	केरल	840	708	1,548	10.79
6.	बिहार	937	325	1,262	8.80
7.	ओडिसा	761	224	985	6.86
8.	कर्नाटक	284	160	444	3.09
9.	गोवा, दमन, दीव	317	25	342	2.38
10.	महाराष्ट्र	309	-	309	2.15
11.	गुजरात	286	-	286	1.99
12.	तमिलनाडु	-	216	216	1.50
13.	जम्मू एवं कश्मीर	200	-	200	1.39
14.	**भारत**	**10,303**	**4,303**	**14,352**	**100.00**

स्त्रोत : भारत का भूगोल आर. सी. तिवारी - 2021.

इनके विकास कि ज़िम्मेदारी भारत सरकार द्वारा वर्ष 1986 ई. में केन्द्रीय आन्तरिक जलमार्ग प्राधिकरण को सौंपा गया है। केन्द्रीय आन्तरिक जल परिवहन निगम कोलकाता (1967) गंगा, हुगली एवं ब्रह्मपुत्र जैसी नदियों में माल परिवहन के संचालन की व्यवस्था करता है। इसके द्वारा जहाजों के मरम्मत के कार्य राजा बागान डाक यार्ड में किया जाता है। इसके साथ ही भारतीय आन्तरिक जलमार्ग प्राधिकरण द्वारा आगामी 20 वर्षों में लगभग 8,000 करोड़ निवेश की योजना है।

14.9.4 आन्तरिक जल परिवहन की कठिनाइयाँ

भारत में आन्तरिक जल परिवहन के विकास में अनेकों कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है, जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित है -

- भारतीय नदियों की प्रवाह प्रवृत्ति हमेशा एक सी नहीं रहती है,इनमें वर्षा के दिनों में बाढ़ आती है तो शुष्क मौसम अधिकांश सुख जाती है।
- दक्षिण भारत का उच्चावच अत्यधिक विषम है जिससे नदियों सतह के ऊँचे नीचे होने के कारण जल परिवहन संभव नहीं हो पाता है।
- यहाँ की अधिकांश नदियाँ अपनी घाटियों में नदभार के निक्षेप से प्रभावित है जिससे पानी की गहराई जलयानों के लिए पर्याप्त नहीं हो पाती है।
- बहुत सी नदियों से सिचाई के लिए जल का अपवर्तन किया जाता है। इस कारण उसमें प्रवाहित जल की मात्रा कम हो जाती है और वे जल यातायात के लिए अनुपयुक्त हो जाती है।
- भारतीय जल परिवहन को अधिक क्षति रेलमार्ग एवं सड़क मार्ग से हुई है जिनकी वह प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाता है।

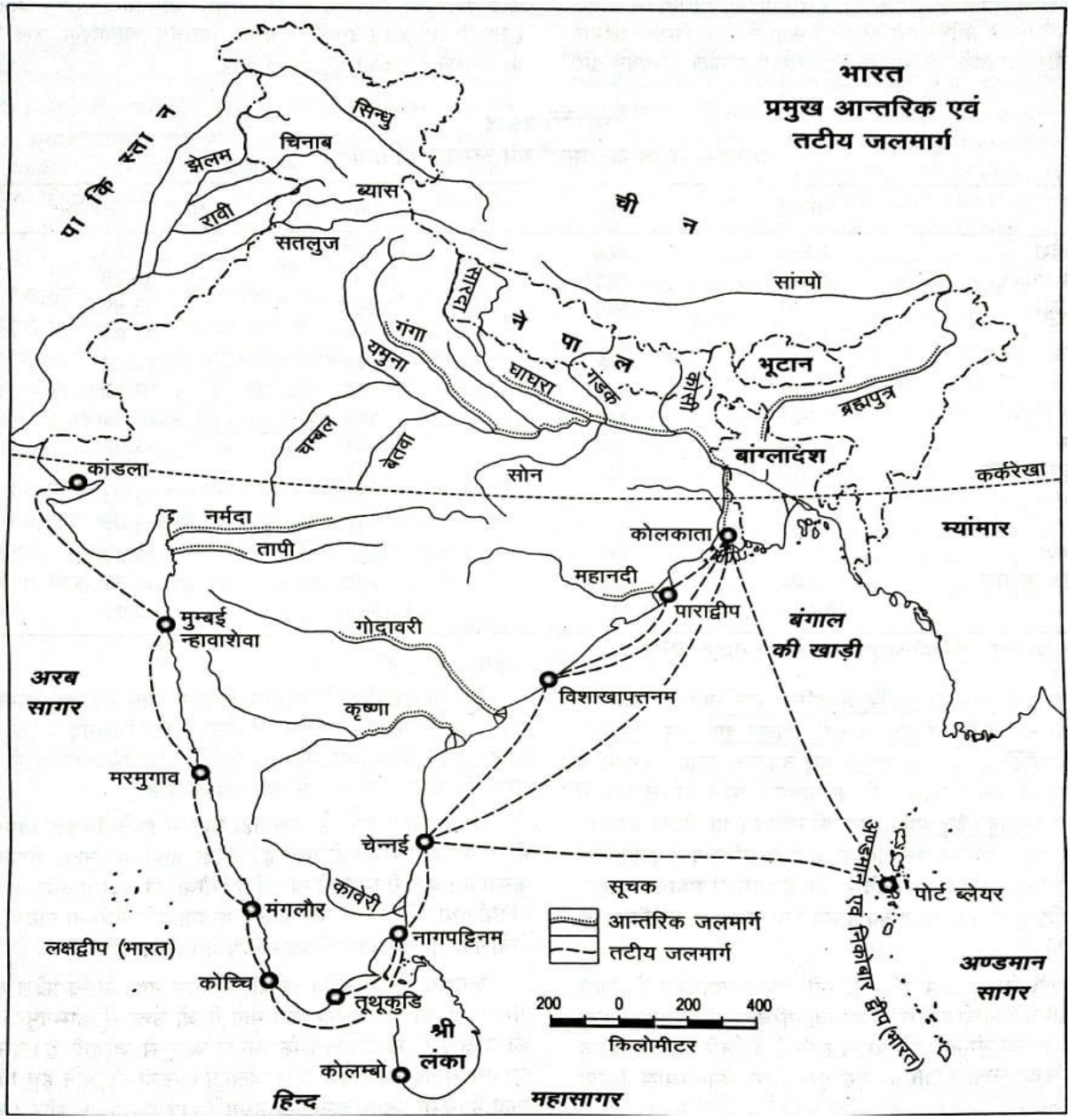

चित्र संख्या 14.5 भारत में प्रमुख आंतरिक परिवहन एवं तटीय जलमार्ग.

14.9.5 समुद्री जल परिवहन

भारत का समुद्री जल परिवहन प्राचीन काल से ही अत्यधिक विकसित है। इस समय की जहाजें पूर्वी द्वीप समूह एवं मध्य पूर्व तक जाती थी। चोल एवं पल्लव आदि साम्राज्य में इसके स्वर्णिम इतिहास का वर्णन मिलता है। आधुनिक काल में इसकी उपयोगिता एवं महत्त्व में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। औपनिवेशिक शक्तियों के भारत आगमन एवं विस्तार में इनकी अहम भूमिका रही है। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान इसके महत्त्व को समझते हुए वर्ष 1919 ई. में सिंधिया स्टीम नेविगशन कम्पनी लिमिटेड की स्थापना की गई है।

स्वतन्त्रता के समय भारतीय जहाज़ी बेड़ा के पास 59 जहाजें थी। वर्तमान समय में भारत का जहाज़ी बेड़ा विकासशील देशों में सबसे बड़ा है तथा विश्व में 12वें स्थान पर है। इसमें 114.3 लाख GT एवं 17.10 मिलियन DWT के कुल 1301 पोत शामिल है। देश के व्यापार में जहाजों द्वारा माल परिवहन का प्रतिशत हिस्सा जो कि 1955 - 56 में 6.5% था वह बढ़ कर 1999 - 2000 में 31.54% हो गया। भारतीय जहाज़ी बेड़ा विश्व के बेड़े का मात्र 1% है और विश्व के सम्पूर्ण परिवाहित भार का 0.52% है। वर्ष 2005 - 06 तक टन भार क्षमता को 537 मीट्रिक टन और 2020 तक 1273 मीट्रिक टन तक बढ़ाने की आवश्यकता है। भारत के जहाज़ी बेड़े में 898 तटीय जलयान है जिनकी क्षमता 1.00 मिलियन GT एवं 0.86 मिलियन DWT है। भारत के पास कुल 403 समुद्र पर जलयान है जिनकी क्षमता 9.04 मिलियन GT एवं 12.42 मिलियन DWT है। वर्ष 2005 - 06 के दौरान जलयानों द्वारा ढोए जाने वाले भार में 2.76 लाख GT की वृद्धि दर्ज की गई है। देश के सम्पूर्ण समुद्र पर व्यापार में 5.3 लाख GT सामान्य नौभार, 27.6 लाख GT शुष्क भारी नौभार एवं 27.4 लाख GT तेल नौभार सम्मिलित है जिनका सम्पूर्ण में योगदान क्रमश: 8.5%, 44.4% एवं 44.1% मिला है। भारत के सामान्य नौभार का 70% भाग जापान को लौह अयस्क के निर्यात्त के तौर पर पाया जाता है।

14.9.6 बन्दरगाह

बन्दरगाह सागरीय जल परिवहन का अभिन्न अंग होते है। बन्दरगाहों के माध्यम से देश का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का अधिकांश भाग सम्पन्न होता है। इन बन्दरगाहों का संचालन एवं प्रबंधन भारत सरकार के अधीन होता है। देश में इस समय कुल 13 बड़े बन्दरगाह है। इन बन्दरगाहों की 31 मार्च 2017 तक कुल निर्धारित 871.52 मिलियन टन है और यहाँ वर्ष 2017 - 18 में 679.35 मिलियन टन माल लादा एवं उतारा गया है साथ ही इसी अवधि में लगभग 16,500 जहाजों का भी यहाँ आना - जाना हुआ है।

14.10 सारांश

आपने इस इकाई में भारत के प्रमुख औद्योगिक प्रदेश एवं परिवहन तंत्र का विस्तृत अध्ययन किया है। आप समझ गए होगें कि देश के औद्योगिक प्रदेश एवं परिवहन तंत्र को प्रभावित करने में किन घटकों को सम्मिलित किया जाता है। इससे देश की अर्थव्यवस्था को गतिशीलता मिलती है तथा विकास को प्रोत्साहन प्राप्त होता है। वास्तव में किसी देश का औद्योगिक प्रदेश एवं परिवहन तंत्र उसकी भौगोलिक अवस्थिति, सरकारी नीतियों, सांस्कृतिक संगठन आदि से प्रभावित होता है।

इस इकाई में भारत के औद्योगिक प्रदेश एवं परिवहन तंत्र की उपयोगिता, क्षेत्रीय विभिन्नता के विविध आयाम तथा वर्तमान समय में उसकी उपयोगिता को प्रस्तुत किया गया है। आपने देखा है कि क्षेत्रीय आधार पर ये विविध स्वरूप प्रकट करते है। किन्हीं क्षेत्रों में इनका समुचित विकास हुआ है तो इनका पूर्ण अभाव पाया जाता है। समय में होने वाले परिवर्तन के साथ ही औद्योगिक प्रदेश एवं परिवहन तंत्र जो उत्पादन एवं व्यापारिक दृष्टि से पहले महत्त्वपूर्ण थे अब उनकी प्रासंगिकता कुछ कम हुई है। इस प्रकार आपने देश के औद्योगिक प्रदेश एवं परिवहन तंत्र के विकास एवं वितरण का विस्तृत एवं सारगर्भित अध्ययन किया है।

14.11 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

1. ट्रिवार्था तथा बर्नर ने कितने प्रकार के औद्योगिक प्रदेशों का निर्धारण किया है।

(क) दो (ख) तीन

(ग) चार (घ) पाँच

2. जूट उत्पादन का प्रमुख केंद्र रिशरा किस राज्य में स्थित है।

(क) उत्तर प्रदेश (ख) महाराष्ट्र

(ग) पश्चिम बंगाल (घ) कर्नाटक

3. भारत में प्रथम रेलगाड़ी किस वर्ष चली थी।

(क) 1935 ई. (ख) 1853 ई.

(ग) 1875 ई. (घ) 1885 ई.

4. भारत में राज्य स्तरीय सड़कों के वितरण के दृष्टिकोण से सड़कों की सर्वाधिक लम्बाई किस राज्य में है।

(क) महाराष्ट्र (ख) उत्तर प्रदेश

(ग) पश्चिम बंगाल (घ) कर्नाटक

5. भारत के प्रमुख राष्ट्रीय जलमार्ग संख्या 1 की घोषणा कब की गई थी।

(क) अक्टूबर 1975 ई. (ख) अक्टूबर 1986 ई.

(ग) अक्टूबर 1975 ई. (घ) अक्टूबर 1975 ई.

14.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

Basham,A. L., 1994, The Wonder that was India, Rupa & co., New Delhi.

Bhardwaj, R., 1970, Structural Basis of India's Foreign Trade,Allied Publishers, Bombay .

Joshi, H. L., 1990, InDdustrial Geography of India, Rawat Publications, Jaipur.

Khullar, D. R., 2006, India :A Comprehensive Geography, Kalyani Publishers, Ludhiyana.

बंसल, एस. सी., (2021), भारत का वृहत् भूगोल, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ.

मामोरिया, चतुर्भुज, (2018), भारत का वृहत् भूगोल, साहित्य भवन, सी. 17 साइट सी. औद्योगिक क्षेत्र, आगरा - 282007, उत्तर प्रदेश.

तिवारी, रामचंद्र. (2019), *भारत का भूगोल*, प्रवालिका पब्लिकेशन्स प्रयागराज, 211002.

भारत, 2021 - 2022, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली.

चौहान, वी. एस. और गौतम, अलका, 2000 - 2001, भारत वर्ष का विस्तृत भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ.

गौतम, अलका, 2007, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज.

हुसैन, माजिद और सिंह, रमेश, 2009, भारत का भूगोल, टाटा मैक्ग्राहिल पब्लिशिंग कं० लि० नई दिल्ली.

14.13 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी)

1. औद्योगिक प्रदेश क्या होते हैं ? भारत के प्रमुख औद्योगिक प्रदेशों की व्याख्या कीजिए ?

2. भारत में रेल परिवहन के विकास एवं उसके वितरण का वर्णन कीजिए ?

3. भारत में सड़क परिवहन के वितरण तथा उसके लाभ एवं हानियों की व्याख्या कीजिए ?

4. जल परिवहन क्या है ? भारत में प्रमुख जलमार्गों के वितरण एवं लाभ का वर्णन कीजिए ?

अध्याय : 15 अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की प्रवृत्तियाँ एवं प्रतिरूप

इकाई का रूपरेखा

15. प्रस्तावना

15.1 उद्देश्य

15.2 अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की प्रवृत्ति का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

15.3 अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की विशेषताएँ

15.4 भारत की व्यापार प्रोत्साहन नीति

15.5 देश के विदेशी व्यापार के परिणाम में प्रगति

15.6 देश के आयात संगठन के घटक

15.7 भारत के आयात प्रतिरूप में परिवर्तन

15.8 देश के निर्यात संगठन के घटक

15.9 देश से होने वाले निर्यात संघटन में परिवर्तन

15.10 देश से होने वाले विदेशी व्यापार की दिशा

15.11 सारांश

15.12 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

15.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

15.14 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी)

15. प्रस्तावना

व्यापार एक विशिष्ट आर्थिक क्रियाकलाप है जिसके द्वारा विकास एवं समृद्धि को बढ़ावा मिलता है। जहाँ व्यापार असंतुलन से विकासशील अर्थव्यवस्था का आभास होता है, वहीं किसी देश का व्यापार संतुलन उसकी विकसित अर्थव्यवस्था का परिचायक है। इसी प्रकार व्यापार के परिणाम एवं मूल्य से विकास की क्षमता और दिशा से आर्थिक सम्बन्धों एवं निर्भरता का पता चलता है। स्वतन्त्रता के पश्चात देश के आर्थिक विकास के साथ - साथ विदेशी व्यापार में भी परिवर्तन देखे गए हैं। पहले देश के निर्यात मद में कच्चे माल एवं आयात मद में औद्योगिक उत्पादों तथा मशीनों की प्रधानता थी। अब इसके स्वरूप में परिवर्तन हुआ साथ ही इसके निर्यात में औद्योगिक उत्पाद भी सम्मिलित हो गए है तथा आयात में कच्चे माल (विशेषकर कच्चा तेल) के साथ नवीन प्रौद्योगिकी का भाग बढ़ा है।

15.1 उद्देश्य

भारत की भौगोलिक अवस्थिति इसे विश्व मानचित्र पर महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करती है। यह यातायात के सभी माध्यमों से विश्व के लगभग सभी देशों से जुड़ा है। इसी कारण वैश्विक व्यापार में यह अहम भूमिका निभाता है। इसी परिपेक्ष्य में भारत के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अध्ययन के निम्नलिखित उदेश्य है -

1. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की प्रवृत्ति एवं विशेषताओं का अध्ययन करना।
2. देश के आयात के संगठन एवं आयात प्रतिरूप में परिवर्तन का अध्ययन करना।
3. देश के निर्यात के संगठन एवं निर्यात प्रतिरूप में परिवर्तन का अध्ययन करना।

15.2 अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की प्रवृत्ति का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

देश की आजादी से पहले विदेशी व्यापार का स्वरूप औपनिवेशिक प्रकृति का था। इस अवस्था में देश से कच्चा माल एवं खाद्य पदार्थों का निर्यात होता था। विदेशों से आयात पर नियंत्रण के कारण व्यापार संतुलन देश के अनुकूल एवं अर्थव्यवस्था में ठहराव था। देश का अधिकांश व्यापार ग्रेट ब्रिटेन एवं राष्ट्रमण्डल देशों के साथ ही होता था। आजादी के बाद व्यापार के स्वरूप में एक विकासशील अर्थव्यवस्था के अनुकूल परिवर्तन शुरू हुआ। इसके फलस्वरूप औद्योगीकरण को बढ़ावा देने हेतु मशीनों एवं औद्योगिक प्रौद्योगिकी में वृद्धि हुई। इस अवधि में घरेलू उद्योगों के कच्चा माल (विभाजन के फलस्वरूप जूट एवं कपास की कमी को पूर्ण करने के लिए) और खाद्यान्नों का भी आयात करना पड़ा। वर्ष 1947 - 48 में सर्वाधिक कुल 30 लाख टन खाद्यान्न आयात करना पड़ा था। आजादी के पश्चात स्वतंत्र अर्थव्यवस्था के प्रारम्भिक अवस्था में औद्योगीकरण के बढ़ने के कारण कच्चे माल की घरेलू खपत बढ़ने लगी जिसके कारण उनका निर्यात घटने लगा और व्यापार संतुलन में घाटा होने लगा। इस प्रकार देखा गया कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान औसत वार्षिक घाटा 108 करोड़ रुपए का था। इस अवधि में जहाँ 622 करोड़ रुपये का निर्यात हुआ था वहीं 730 करोड़ रुपये का आयात किया गया था। तब से लेकर अब तक कुछ विशिष्ट अपवादों को छोड़कर, खनिज तेल के बढ़ते आयात, उनके मूल्य में वृद्धि और नवीनतम प्रौद्योगिकी हेतु आयात में उदारीकरण के कारण आयात व्यापार घाटा लगातार बढ़ता जा रहा है और वर्ष 2013 - 14 में यह 810,423 करोड़ रुपये के उच्चतम स्तर तक पहुँच गया है। वर्ष 1991 ई. में आर्थिक उदारीकरण के कारण बढ़ते विदेशी पूँजी निवेश से देश कि अर्थव्यवस्था पर इसका प्रतिकूल प्रभाव नहीं दिखाई पड़ रहा है।

15.3 अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की विशेषताएँ

यद्यपि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार किसी भी अर्थव्यवस्था की प्रगति के सूचक होते है। इसी के आधार पर किसी की वर्तमान स्थित एवं उसके पूर्वानुमान को भी लगाया जाता है। भारत भी विविधताओं का देश है इसके व्यापारिक स्वरूप की अनेक विशेषताएँ देखी जाती हैं जो निम्नवत है -

15.3.1 व्यापार असंतुलन

आजादी से पूर्व देश का विदेशी संतुलित अवस्था में था क्योंकि इस समय निर्यात की मात्रा आयात से अधिक थी। औपनिवेशिक काल में कच्चे माल की अधिक से अधिक मात्रा का निर्यात किया जाता था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात खाद्यान्न, कच्चा माल, उद्योगों के लिए मशीन, पेट्रोलियम उत्पादों के मूल्यों में तीव्र वृद्धि एवं वर्ष 1991 ई. में अपनाई गई उदारीकरण की नीति के कारण व्यापार घाटा बढ़ कर वर्ष 2016 - 17 में -728237 हो गया।

15.3.2 व्यापार में नए साझेदार

आजादी से पूर्व भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझीदार यूनाइटेड किंगडम था जिसके साथ भारत से लगभग 34% निर्यात एवं 30% आयात किया जाता था। स्वतन्त्रता पश्चात देश के व्यापारिक स्वरूप में परिवर्तन हुआ। अब यूनाइटेड किंगडम के साथ ही संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, जर्मनी, जापान, ओपेक के देश, चीन एवं एशिया के विभिन्न देश नए साझेदार बन गए है। इससे देश के व्यापारिक स्वरूप में विविधिकरण की प्रवृत्ति देखी गई है।

15.3.3 नवीन प्रौद्योगिकी एवं पूंजीगत वस्तुओं के आयात में वृद्धि

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात देश को नए तरीके से विकसित करने हेतु नई रणनीति का अनुसरण किया गया। इसके लिए आधुनिक तरीकों से कृषि कार्य करने के साथ उद्योगों की स्थापना पर भी ज़ोर दिया गया है। इस समय देश के आयात में पूंजीगत वस्तुएँ जिसमें मशीनरी, यातायात उपकरण, रसायन आदि सम्मिलित है की मात्रा में वृद्धि हुई है। इसके साथ ही नवीनतम प्रौद्योगिकी का भी महत्त्व बढ़ गया है। गैट के अवसान के साथ ही देश के व्यापारिक स्वरूप में परिवर्तन हुआ है।

15.3.4 कच्चे माल के आयात में बढ़ोत्तरी

भारत में प्रौद्योगिकी विकास के साथ - साथ विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन भी शुरू हुआ। बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु विविध प्रकार के उत्पादों की जरूरत होती है। इन उत्पादों के निर्माण हेतु कच्चे माल की आवश्यकता होती है। घरेलू स्तर पर कच्चे माल की पूर्ति न होने की स्थिति में इनके आयात की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार रबड़, ऊन, कपास, जूट, नाप्था एवं विभिन्न प्रकार के खनिजों आदि का आयात बढ़ा है।

15.3.5 आयात का बढ़ते स्त्रोत

आजादी से पूर्व देश का अधिकांश आयात यूनाइटेड किंगडम से होता था। आजादी के तत्काल बाद योजना काल के प्रारम्भिक दौर में आयात का मुख्य स्त्रोत संयुक्त राज्य अमेरिका था। देश के आर्थिक विकास के साथ ही अर्थव्यवस्था के सशक्त होने पर इसकी स्थिति बदल गई और अब आयात बहुध्रुवीय केन्द्रों से होने लगा है।

15.3.6 बढ़ती बाज़ारों की संख्या

देश के आर्थिक विकास तथा अर्थव्यवस्था के सशक्त होने के कारण यहाँ के उत्पादों की गुणवत्ता में वृद्धि के साथ ही आधिक्य उत्पादन भी होने लगा है। ऐसी स्थिति में देश अपने निर्यात को आयात के अनुरूप बनाने के लिए नए बाज़ारों की खोज का प्रयास शुरू कर दिया है। इसी के फलस्वरूप आज देश का निर्यात संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ संयुक्त अरब अमीरात, ओपेक के देश, जापान, इटली, रूस, जर्मनी, बेल्जियम आदि देशों के साथ बढ़ गया है। हाल के दिनों में भारतीय उत्पादों की लोकप्रियता एशियाई एवं अफ्रीकी देशों में काफी बढ़ गई है।

15.3.7 निर्यात में विनिर्मित वस्तुओं का प्रभाव

देश में उद्योगों के तेजी से विकास के साथ - साथ निर्यात में कंप्यूटर साफ्टवेयर, दवाइयाँ, मशीनी कलपुर्जे, इंजीनियरिंग, रासायनिक, प्लास्टिक आदि विनिर्मित वस्तुओं का निर्यात बढ़ा है। ये सभी वस्तुएँ अपनी उच्च गुणवत्ता एवं निम्न कीमत के कारण एशियाई एवं अफ्रीकी देशों के अलावा यूरोपीय एवं अमेरिकी देशों, मध्य एशिया एवं ओशिनिया के बाज़ारों में प्रवेश पाने में सफल रही है।

15.3.8 सरकार की भूमिका के साथ मध्यस्थों की उपस्थिति

बदलती परिस्थितियों के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के कुशल संचालन हेतु राज्य व्यापार निगम के अलावा कई संस्थाएं हैं जो देश के निर्यात में वृद्धि तथा आयात को प्रबंधित करने का कार्य कर रही है।

15.3.9 व्यापार की दिशा में परिवर्तन

वर्तमान समय में भारत के अधिकांश व्यापारिक साझेदार OECD देश, एशिया एवं अफ्रीका के विभिन्न आर्थिक रूप से पिछड़े देश, अरब देश तथा ओपेक देशों के साथ हो रहा है। बदलती परिस्थितियों, उत्पादन में विविधता और आधिक्य उत्पादन के कारण भारत सरकार के लिए यह आवश्यक हो गया है कि अपने व्यापार की दिशा में परिवर्तन करे। सरकार को ऐसे कदम उठाना चाहिए जिससे दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका के सम्पूर्ण देश, मध्य एशिया एवं ओशिनिया के देशो के साथ द्विपक्षीय व्यापार बढ़ सके।

15.3.10 द्विपक्षीय व्यापार को बढ़ावा

भारत सरकार ने विदेशी व्यापार में विविधता लाने और उसके परिणाम को बढ़ाने के लिए कई व्यापारिक संगठनों एवं देशों के साथ द्विपक्षीय व्यापार समझौते किए है। GATT के माध्यम से भारत को विश्व बाज़ार में खुले तौर पर प्रवेश करने का नया अवसर प्राप्त हो गया था। विश्व व्यापार संगठन के अस्तित्व में आने के फलस्वरूप भी भारत को द्विपक्षीय व्यापार के विस्तार में सहायता मिली है।

15.3.11 व्यापार नीति

भारत सरकार की व्यापार नीति का मुख्य उद्देश्य निर्यात को प्रोत्साहित करना तथा प्रतिस्थापन द्वारा आयात को व्यवस्थित करना है। प्रारम्भिक समय में देश की व्यापार नीति कुछ कठोर थी परंतु वर्ष 1992 ई. के बाद वह अधिक उदार, बाजारोन्मुख एवं भूमण्डलीय व्यापार नीति के अनुरूप बनाने का प्रयास किया गया है

15.4 भारत की व्यापार प्रोत्साहन नीति

प्राचीन काल से ही भारत एक प्रमुख व्यापारिक देश के रूप में जाना जाता है। इसके प्रमाण हमें सिंधु घाटी एवं हड़प्पा सभ्यता और उसके बारे के बारे ऐतिहासिक विवरणों में मिलते है। अकबर के शासन काल में भारतीय व्यापार की सम्पूर्ण विश्व व्यापार में सहभागिता 33% थी। औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासकों ने अपने लाभ के लिए ही व्यापार को प्रोत्साहन दिया। उनका मुख्य उद्देश्य भारतीय संसाधनों का दोहन करके ब्रिटेन का विकास करना था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारत सरकार ने देश के समुचित विकास को ध्यान में रखते हुए आर्थिक पक्षों को मजबूत करते हुए नई व्यापार नीति का निर्माण किया गया। भारत सरकार द्वारा निर्मित व्यापार नीति के दो उद्देश्य थे-

अ} प्रतिरक्षा और विकास की जरूरतों के अनुसार आयात को निम्नतर स्तर पर बनाए रखना।

ब} देश के विभाजन एवं औपनिवेशिक शक्तियों के शोषण से उत्पन्न विदेशी मुद्रा संकट का सामना करने हेतु निर्यात को बढ़ावा देना।

इन दोनों उद्देश्यों के संदर्भ में निर्मित व्यापार नीति में निम्न घटकों को शामिल किया गया है -

1. आयात पर कड़ाई से नियंत्रण।
2. निर्यात को बढ़ावा देने हेतु प्रचार - प्रसार पर विशेष ध्यान देना।
3. द्विपक्षीय समझौतों को मूर्त रूप देकर व्यापार के व्यवधान को समाप्त करना।
4. विदेशी व्यापार में राज्यों की सहभागिता को बढ़ाना तथा विशिष्ट राज्यों के विशेष उत्पादन को विश्व बाज़ार में पहुँच हेतु आधार प्रदान करना।

इस प्रकार यदि भारत सरकार की विदेश व्यापार नीति का अध्ययन किया जाए तो स्पष्ट होता है कि वर्ष 1992 ई. तक सरकार ने संरक्षी व्यापार नीति को अपनाया जिसमें लाईसेंस, कोटा, कर, प्रतिस्थापन एवं प्रबंधन के माध्यम से आयात को संकुचित करने का प्रयास किया गया। निर्यात के प्रोत्साहन के लिए नए व्यापारिक संगठनों का गठन, करों में छूट एवं प्रोत्साहन के माध्यम से निर्यात को बढ़ाने का प्रयास किया गया। इसके पश्चात वर्ष 1992 ई. में सरकार द्वारा व्यापार प्रबंधन हेतु अधिक उदरवादी नीतियों को आत्मसात किया गया, जिससे विदेशी व्यापार के संरचनात्मक स्वरूप में आश्चर्यजनक परिवर्तन दिखाई दिया । भारत सरकार द्वारा अपनी आवश्यकतानुसार अपनाई गई विदेश नीतियाँ निम्नलिखित है -

15.4.1 निर्यात - आयात नीति - 1985

इस नीति को 1 अक्टूबर 1985 ई. को अपनाया गया था। इस नीति को तीन साल के लिए लागू किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य निर्यात को बढ़ाना तथा आयात को घटाना था। इसमें 53 वस्तुओं के आयात पर नियंत्रण समाप्त करने के साथ ही चमड़ा, स्वचालित वाहन, इलेक्ट्रानिक्स, पेट्रोलियम एवं जूट क्षेत्र के लाभ हेतु आयात नीति में 20 वस्तुओं OGL के अंतर्गत रखा गया।

15.4.2 निर्यात - आयात नीति - 1992

इस नीति को भारत सरकार द्वारा 30 मार्च 1992 ई. पाँच वर्ष (1992 - 97) की अवधि के लिए घोषित किया गया था। इस नीति द्वारा आयात प्रक्रिया को उदारवादी बनाते हुए निर्यात को बढ़ावा देने के लिए अनेकों साहसिक कदम उठाए गए। इसके द्वारा एक निषेध सूची में शामिल वस्तुओं के अलावा अन्य के आयातित सामान पर लागत - बीमा - भाड़ा आदि पर 15% की छूट प्रदान कर आयात को सरल बनाया गया। व्यापार घरानों एवं निर्यात घरानों को अग्रिम लाईसेंस योजना के अधीन स्वप्रमाणन की स्वीकृति प्रदान की गई जिससे उन्हें विशिष्ट वस्तुओं एवं सामानों हेतु शुल्क मुक्त आयात की अनुमति मिली।

15.4.3 निर्यात - आयात नीति - 1997

इस नीति को भारत सरकार द्वारा 31 मार्च 1997 को स्वीकृति प्रदान की गई। इसके क्रियान्वयन की अवधि 1997 से 2002 तक थी। इसके द्वारा उदारीकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने का प्रयास किया गया।

15.4.4 निर्यात - आयात नीति - 2002 - 07

इस नीति को भी 31 मार्च 2002 को अंगीकृत किया गया। पाँच वर्ष के लिए क्रियान्वित इस नीति में विश्व बाज़ार में भारत के व्यापार को 1% तक बढ़ाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। कुछ संवेदनशील वस्तुओं को छोड़ कर अन्य सभी वस्तुओं के निर्यात पर लगे मात्रात्मक प्रतिबंधों को हटा दिया गया। विशेष आर्थिक क्षेत्र का विकास, 32 कृषि निर्यात क्षेत्रों का सृजन, लघु उद्योग क्षेत्रों से 50 वस्तुओं को अनारक्षित करना, सिले सिलाए वस्त्र के निर्यात को प्रोत्साहन, रत्न एवं आभूषण के निर्यात को बढ़ावा, दक्षिणी दुनिया के देशों में नए बाज़ारों की खोज आदि इसकी मुख्य विशेषताएँ थी। इसमें कृषि को बजारोन्मुख बनाने के साथ कृषि उत्पाद का निर्यात तथा विशेष आर्थिक इकाइयों को प्रतिस्पर्धी बनाने का काम किया गया।

15.4.5 विदेश व्यापार नीति - 2004 - 05

इस नीति की घोषणा 30 अगस्त 2004 को आगामी 5 वर्षों की अवधि के लिए व्यापारिक गतिविधियों के सम्पादन के लिए किया गया

था। इस नीति का मुख्य उद्देश्य विश्व व्यापार में भारत की भागीदारी को 1.5% तक बढ़ाना तथा व्यापार नीति को आर्थिक विकास का माध्यम मानते हुए रोजगार के विविध अवसरों को सृजित करना। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु व्यापार नीति में प्रतिबन्ध को समाप्त करना, विश्वास एवं पारदर्शिता के वातावरण का सृजन करना, भारत को एक ऐसे केंद्र के रूप में विकसित करना जहाँ विनिर्माण, व्यापार एवं सेवाओं के केंद्र सृजित हो सके। इस नीति में कृषि, हथकरघा, हस्तशिल्प, रत्न - आभूषण एवं जूता निवेश की अनुमति दी गई है।

15.4.6 विशेष आर्थिक क्षेत्र

देश मे व्यापारिक गतिविधियों के सम्पादन तथा निर्यात को बढ़ाने के उदेश्य से भारत सरकार ने अप्रैल 2000 में विशेष आर्थिक क्षेत्र स्थापित करने की योजना प्रस्तुत की जिसे संसद ने 2005 मे स्वीकृति प्रदान की। इसे 10 फरवरी 2006 से लागू कर दिया गया। इस अधिनियम में सार्वजनिक, निजी, संयुक्त क्षेत्र या सरकारों द्वारा विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र स्थापित करने का प्रावधान किया गया। इन्हें शुल्क मुक्त विदेशी क्षेत्र की मान्यता, कस्टम द्वारा आयात - निर्यात के नियमित जाँच की छूट, तीन वर्ष तक विदेशी मुद्रा में शुद्ध लाभ, निर्धारित छीजन मानक पर प्रतिबन्ध में रियायत, शुल्क मुक्त समान को पाँच वर्ष प्रयोग, शत - प्रतिशत विदेशी निवेश आदि की सुविधाएँ प्रदान की गई है।

वर्ष 2000 की घोषणा के तहत देश के आठ निर्यात प्रसंस्करण क्षेत्रों कांडला, सूरत, सांताक्रूज, कोच्चि, चेन्नई, नोएडा, फाल्टा एवं विशाखापत्तनम को विशेष आर्थिक क्षेत्र में परिणत कर दिया गया। इसके अतिरिक्त सरकार ने 45 नए विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र स्थापित किए।

15.4.7 निर्यात संवर्धन औद्योगिक पार्क

यह एक केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित योजना है जिसे देश में व्यापारिक गतिविधियों के प्रोत्साहन हेतु अगस्त 1994 ई. में शुरू किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य निर्यातोन्मुख उत्पादन आधारभूत सुविधाएँ जुटाने में राज्य सरकारों की भागीदारी सुनिश्चित करना है। इस प्रकार के प्रत्येक पार्क की स्थापना जिस पर खर्च 10 करोड़ तक का हो में 75% सहायता केंद्रीय अनुदान से दिया जाता है। अभी तक राज्य सरकारों द्वारा 25 ऐसे प्रस्ताव प्रस्तुत किए गए जिन्हें केंद्र सरकार से अनुमति मिल चुकी है।

15.5 देश के विदेशी व्यापार के परिणाम में प्रगति

अर्थव्यवस्था में वृद्धि तथा विविधिकरण के कारण आजादी से लेकर आज तक लगातार भारत के विदेशी व्यापार के परिणाम में बढ़ोत्तरी की प्रवृत्ति देखी गई है। बढ़ते विकास के साथ देश में मुद्रास्फीति, रुपये का अवमूल्यन, आर्थिक उदारीकरण, आयात में रियायत एवं खनिज तेल का बढ़ता मूल्य आदि देश के विदेशी व्यापार को प्रभावित करते है। वर्ष 1950 - 51 में भारत का विदेशी व्यापार 1,251 करोड़ रुपये का था जो वर्ष 2016-17 में 4,427,095 करोड़ रुपया हो गया। इस प्रकार इस अवधि में विदेशी व्यापार में वृद्धि 3,539 गुना दर्ज की गई है और विगत सात दशकों औसतन 5,360 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से वृद्धि हुई है। इस दौरान देश के आयात में 3,935 गुना एवं 6007 प्रतिशत/वर्ष की और निर्यात में 3,077 गुना तथा 4,661 प्रतिशत/वर्ष की वृद्धि दर्ज की गई है। सर्वाधिक प्रतिशत वृद्धि 1970 - 80 दशक के दौरान एवं मात्रात्मक वृद्दि 1990 - 2000 दशक के अवधि में देखि गई है।

सारणी 15.1 भारत के विदेशी व्यापार में प्रगति (1945 - 46 से 2016 - 17)

वर्ष	आयात	निर्यात	कुल व्यापार	व्यापार संतुलन
1945 - 46	152	169	321	+17
1950 - 51	650	601	1,251	-49
1955 - 56	679	596	1,275	-83
1960 - 61	1,140	660	1,800	-480
1965 - 66	1,408	806	2,214	-602
1970 - 71	1,634	1,535	3,169	-99

1975 - 76	5,265	4,042	9,307	-1,232
1980 - 81	12,524	6,711	19,235	-5,813
1985 - 86	19,658	10,895	30,553	-8,703
1990 - 91	43,193	32,558	75,751	-10,635
1995 - 96	122,678	106,353	229,031	-16,325
2000 - 01	230,873	203,571	434,444	-27,302
2005 - 06	63,5013	45,4483	1,091,496	-178,530
2010 - 11	168,3467	1,142,922	2,826,389	-540,545
2015 - 16	2,490,298	1,716,378	4,206,646	-773,920
2016 - 17	2,577,666	1,849,429	4,427,095	-728,237

स्त्रोत - भारत, 2020 एवं आर्थिक समीक्षा, 2019 - 20.

विश्व व्यापार के सम्बन्ध में विदेशी व्यापार में यह वृद्धि ज्यादा उत्साहवर्धक नहीं है। विश्व स्तर पर व्यापार में जहाँ भारत की हिस्सेदारी एक प्रतिशत से भी कम है वहीं बेल्जियम, स्वीटजरलैण्ड, डेनमार्क एवं सिंगापुर जैसे छोटे देशों की सहभागिता भी हमारे देश से अधिक है। इस प्रकार भारत के लिए यह चिंता का भी विषय है। देश के कुल विदेशी व्यापार का यदि अवलोकन किया जाए तो इसके सम्पूर्ण परिणाम में आयात की हिस्सेदारी में उत्साहजनक वृद्धि हुई है। देश के सम्पूर्ण विदेशी व्यापार में जहाँ वर्ष 1950 - 51 में आयात की हिस्सेदारी 51.98% थी वहीं 2016 - 17 में यह बढ़ कर 58.22% हो गई है। विदेशी व्यापार में इस प्रकार के असंतुलन का मुख्य कारण नियोजन के प्रारम्भिक समय में सुदृढ़ औद्योगिक आधार का विकास एवं खनिज तेल का अधिक मात्र में आयात रहा है।

15.6 देश के आयात संगठन के घटक

देश के आयात घटक को तीन मुख्य वर्गों में बाटा जाता है -

- खाद्य एवं उससे जुड़े उत्पाद
- कच्चा माल एवं माध्यम विनिर्माण
- पूंजीगत वस्तुओं के समूह

देश का विदेशी व्यापार आयात विविधता से युक्त एवं परिवर्तनशीलता से पूर्ण है। देश द्वारा होने वाले आयात में ईंधन, कच्चा माल एवं खनिजों का विशेष महत्त्व है। देश में होने वाले आयात की मात्रा में यदि सहभागिता का अध्ययन किया जाए तो पेट्रोलियम एवं उसके उत्पादों की भागीदारी एक चौथाई के लगभग है। इसकी सहभागिता 2016 - 17 में 22.61% था वहीं यह 1980 - 81 में 41.95% था। विदेश से आयातित वस्तुओं के दूसरे समूह में अलौह धातुएँ तथा तीसरे स्थान पर मोती एवं बहुमूल्य जिनकी भागीदारी क्रमश; 10.21% एवं 6.19% (2016 - 17) है। इसके पश्चात उर्वरक एवं अच्छे गुणवत्ता इस्पात की सहभागिता 2.14% है।

विदेशों से आयातित समग्र वस्तुओं के समूह में पूंजीगत वस्तुएँ दूसरा प्रमुख वर्ग है जो सम्पूर्ण आयात के 14.71% भाग का प्रतिनिधित्व करती है। इसमें गैर विद्युत मशीनें, मशीनों के उपकरण एवं उनके कल पुर्जे सम्मिलित है जो सम्पूर्ण आयात का 3.89% है। परिवहन के उपकरण एवं विद्युत मशीनों की सहभागिता भी क्रमश: 5.91% एवं 3.26% है।

सारणी 15.2 भारत में होने वाले आयात की क्षेत्रीय सहभागिता (वर्ष : 2016 - 2017)

क्र. सं	आयात के क्षेत्र	आयात मूल्य (करोड़ रु. में)	सहभागिता (प्रतिशत में)
1.	यूरोप	412,073	15.99
2.	उत्तरी अमेरिका	197,158	7.65
3.	आस्ट्रेलिया	76,864	2.90
4.	एशिया	1,546,324	59.99
5.	अफ्रीका	193,456	7.50
6.	लैटिन अमेरिका एवं कैरिबियन द्वीप समूह	115,998	4.50
7.	अन्य	35,793	1.47
	योग	**2,577,666**	**100.00**

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा, 2017 - 2018.

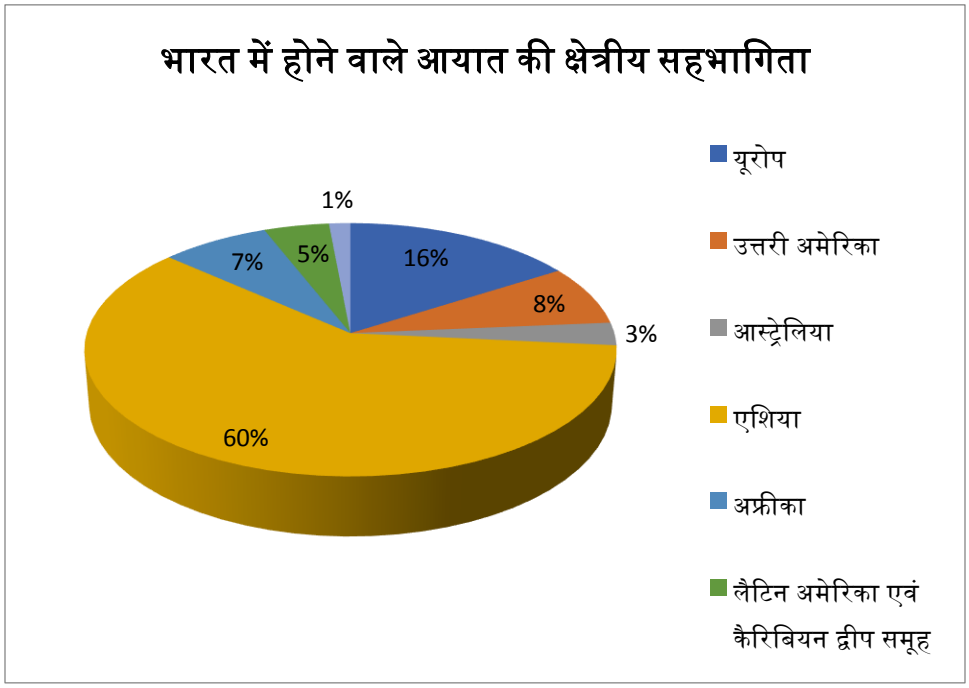

देश द्वारा आयातित सामाग्री में खाद्य वस्तुओं की भागीदारी लगभग 2% है। इसमें से भी खाद्य तेल सबसे महत्त्वपूर्ण है, जिनकी भागीदारी 2.83% है। इसके बाद काजू, दालों के साथ अन्य आयातित वस्तुएँ आती है। अन्य आयातित विनिर्मित उत्पादों में लुग्दी एवं रद्दी कागज, कागज एवं गत्ता, चमड़ा शोधन के समान, रंगाई हेतु रंग एवं रसायन तथा औषधि से जुड़ी दवाइयों का प्रमुख स्थान है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से आज तक आर्थिक विकास के बावजूद भी व्यपार का स्वरूप औपनिवेशिक विरासत के जाल से पूर्णत: मुक्त नहीं हो पाया है। इसी का परिणाम है

कि प्रमुख लौह अयस्क उत्पादक देश होने पर भी भारत लौह इस्पात का आयात करता है। भारत से अभी भी बड़ी मात्रा लौह अयस्क का निर्यात किया जाता है।

15.7 भारत के आयात प्रतिरूप में परिवर्तन

स्वतन्त्रता प्राप्ति से लेकर अब तक के यदि आयात प्रतिरूप का अध्ययन किया जाए तो उसमें व्यापक परिवर्तन दिखाई देता है। इस दौरान सर्वाधिक उतार - चढ़ाव पेट्रोलियम एवं इसके उत्पादों की प्रवृत्ति में देखी गई है। वर्ष 1960 - 61 ई. में जहाँ कुल आयात मूल्य में इन वस्तुओं की भागीदारी 6.15% थी, वहीं 1980 - 81 में यह 41.95% के उच्चतम स्तर पर अंकित की गई थी। विभिन्न प्रकार की प्रौद्योगिकी का विकास जिससे ईंधनों का कम से कम खपत हो तथा घरेलू उत्पादन में वृद्धि के कारण इसकी घटोत्तरी की प्रवृत्ति देखी गई है, जो वर्ष 2016 - 17 में 22.61% प्राप्त हुआ है। इसी अवधि में इसके मूल्य में निरंतर वृद्धि की प्रवृत्ति देखी गई है। इसका मुख्य कारण यह है कि पेट्रोलियम उत्पादक देशों द्वारा इसके मूल्य में बेतहासा वृद्धि की गई है। इसी प्रकार की प्रवृत्ति रसायनों एवं रसायनों के योगिकों, मोती एवं बहूमूल्य रत्नों के साथ अलौह धातुओं के आयात में भी देखी गई है। वर्ष 1960 - 61 से 2016 - 17 ई. के अवधि के दौरान लुग्दी एवं कागज, लोहा एवं इस्पात, उर्वरक, औषधियों एवं दवाइयों तथा पूंजीगत वस्तुओं के आयात मूल्य में तो वृद्धि दर्ज की गई लेकिन देश के कुल आयात मूल्य में इनकी प्रतिशत भागीदारी की प्रवृत्ति में घटाव देखा गया है। इसी दौरान घरेलू उत्पादन में भारी वृद्धि होने के कारण रबड़, कपास, ऊन, जूट, खाद्य वस्तुओं एवं अनाज के आयात में कमी की प्रवृत्ति दृष्टिगत हुई है।

15.8 देश के निर्यात संगठन के घटक

देश से होने वाले निर्यात की वस्तुओं को सामान्य तौर पर चार वर्गों में बाटकर अध्ययन किया जाता है -

1. कृषि एवं उससे जुड़े उत्पाद
2. अयस्क एवं खनिज
3. स्नेहक, खनिज एवं ईंधन
4. औद्योगिक उत्पाद

भारत से होने वाले निर्यात की प्रवृत्ति का अध्ययन करने हेतु वर्ष 1960 - 61 से 2016 - 17 ई. तक के अकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि भारत से होने वाले निर्यात में कृषि उत्पादों कि प्रधानता देखी गई है। वर्ष 2016 - 17 से प्राप्त अकड़ों से ज्ञात होता है कि भारत से होने वाले निर्यात में औद्योगिक वस्तुओं कि भागीदारी 73.57% है जबकि इसी साल कृषि उत्पादों की सहभागिता 12.26% दर्ज की गई है। इस प्रकार ये दोनों वर्ग संयुक्त रूप होने वाले सम्पूर्ण निर्यात में 85.83% भाग का प्रतिनिधित्व करते हैं जबकि वर्ष 1960 - 61 ई. में इन दोनों वर्गों की सहभागिता 89.57% थी।

सारणी 15.3 भारत से होने वाले निर्यात की क्षेत्रीय सहभागिता (वर्ष : 2016 - 2017)

क्र. सं	आयात के क्षेत्र	आयात मूल्य (करोड़ रु. में)	सहभागिता (प्रतिशत में)
1.	यूरोप	356,940	19.30
2.	उत्तरी अमेरिका	319,678	17.28
3.	आस्ट्रेलिया	19,828	1.07
4.	एशिया	923;513	49.94
5.	अफ्रीका	155,085	8.38

6.	लैटिन अमेरिका एवं कैरिबियन द्वीप समूह	48,487	2.62
7.	अन्य	25,538	1.41
	योग	**1,849,429**	**100.00**

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा, 2017 - 2018.

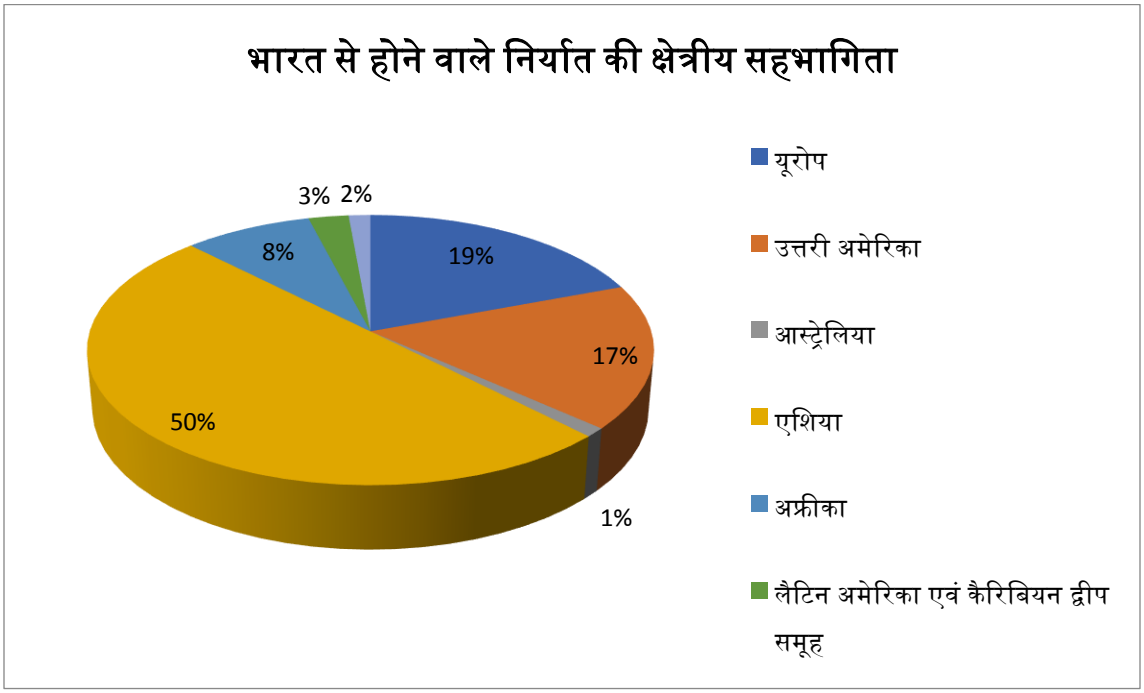

देश से होने वाले निर्यात के घटक विनिर्मित वस्तुओं में मशीनरी, परिवहन, धातुओं के उपकरण एवं लौह इस्पात 23.66%, रत्न एवं आभूषण 13.95%, रसायन एवं रासायनिक सामाग्री जिनमें दवाइयाँ, प्रसाधन सामाग्री, प्लास्टिक, रंग रोगन पदार्थ तथा सिले - सिलाए वस्त्र की सहभागिता 6.30% और सूती कपड़ों की हिस्सेदारी 2.22% प्रमुख है।

देश से होने वाले कृषि उत्पादों के निर्यात घटक में सामुद्रिक उत्पाद एवं मछलियों की सहभागिता बढ़ी है जोकि वर्ष 2016 - 17 में 2.14% प्राप्त हुई है। चावल की भागीदारी 2.08%, खली 0.29%, दाल, फल एवं सब्जी 0.65% की सहभागिता के साथ गिरावट की प्रवृत्ति को प्रदर्शित किए हैं। देश में होने वाले आर्थिक विकास के फलस्वरूप पेट्रोलियम शोधन क्षमता में वृद्धि हुई है। विदेशों से कच्चा तेल आयात करके देश द्वारा पड़ोसी एवं अन्य देशों को निर्यात होने वाले तेल की मात्रा इस अवधि में 11.75% प्राप्त हुई है। इसके साथ ही अयस्क एवं खनिज निर्यात की मात्रा में भी गिरावट की प्रवृत्ति देखी गई है जो इस साल 1.96% प्राप्त हुई है।

15.9 देश से होने वाले निर्यात संघटन में परिवर्तन

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात आर्थिक विकास के फलस्वरूप देश से होने वाले निर्यात के घटक में भारी परिवर्तन एवं विविधता आयी है। वर्ष 1960 - 61 में देश से होने वाले निर्यात में आधे से अधिक (52.34%) निर्यात कृषि उत्पाद, अयस्क एवं खनिज, पेय तथा तम्बाकू थे जबकि 2016 - 17 में इनका हिस्सा घटकर मात्र 14.22% रह गया है। देश से होने वाले निर्यात घटकों का यदि अध्ययन किया जाए तो सर्वाधिक गिरावट कृषि उत्पादों में आयी है। जहाँ 1960 - 61 में चाय के मूल्य की सहभागिता 19.31% थी वहीं अब कुल निर्यात में इसकी हिस्सेदारी घटकर 1% से भी कम हो गई है। देश से होने वाले निर्यात घटक की प्रवृत्ति में सामुद्रिक उत्पादों को छोड़ कर कपास, तम्बाकू, काजू, एवं चीनी के निर्यात में कमी आयी है। इसी अवधि में लौह अयस्क को छोड़कर अन्य खनिज भी विश्व स्तर पर अपने बाज़ार होते जा रहें है।

देश से होने वाले निर्यात में औद्योगिक वस्तुओं एवं उत्पादों की सहभागिता बढ़ी है। जहाँ वर्ष 1960 - 61 ई. में सम्पूर्ण निर्यात में इनकी

भागीदारी 45.33% थी वहीं 2016 - 17 में यह बढ़कर 73.57% हो गई है। औद्योगिक उत्पादों का एक वर्ग जिसमें जूट के उत्पाद, सूत एवं सूती वस्त्र और चमड़ा एवं चमड़ा की वस्तुओं की निर्यात सहभागिता तेजी से घटी है। इस घटोत्तरी का मुख्य कारण निर्यातक देशों द्वारा जूट के विकल्प की खोज तथा सूती वस्त्र एवं चर्म उत्पादों की विश्व बाज़ार में बढ़ती प्रतिस्पर्धा है।

औद्योगिक उत्पादों के प्रमुख घटक जिनमें मशीनें, उनके उपकरण, परिवहन के साधन एवं उपकरण, इंजीनियरी के समान, रसायन, औषधियाँ एवं दवाइयाँ सम्मिलित हैं, का निर्यात पहले नगण्य था लेकिन अब ये मुख्य निर्यातक वस्तुएँ बन गई है। इस प्रकार निर्यात में होने वाला यह परिवर्तन विगत कुछ वर्षों के विकास का परिणाम है। पहले जहाँ देश से कच्ची सामाग्री का निर्यात होता था, अब निर्यातक वस्तुओं की श्रेणी में विनिर्मित वस्तुओं के साथ रत्न, आभूषण, रसायन एवं मशीनें प्रमुख है। देश में बढ़ते प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी विकास के कारण इलेक्ट्रानिक्स सामानों एवं कम्प्युटर साफ्टवेयर के निर्यात के बढ़ने की संभावनाएँ अब बढ़ गयी हैं।

15.10 देश से होने वाले विदेशी व्यापार की दिशा

किसी देश से अन्य देश को होने वाले व्यापार के संबंध का बोध व्यापार की दिशा से होता है। स्वतन्त्रता से पूर्व भारत का व्यापार मुख्य रूप से यूरोपीय देशों खास कर ग्रेट ब्रिटेन के साथ होता था। वर्ष 1950 - 51 ई. के पश्चात देश के व्यापारिक सम्बंध देशों के साथ बढ़ें हैं। वर्तमान समय में भारत का विश्व के लगभग सभी बड़े व्यापारिक संगठनों एवं सभी भौगोलिक प्रदेशों से व्यापारिक सम्बंध मजबूत है। पारंपरिक व्यापार सहयोगियों के अलावा भी भारत ने विश्व के अधिकतर विकासशील देशों के साथ द्विपक्षीय व्यापार का विस्तार किया है। इतने विस्तार के बावजूद भी पश्चिमी यूरोप, उत्तरी अमेरिका और पेट्रोलियम निर्यातक देशों का संगठन अब भी भारत के प्रमुख व्यापारिक भागीदार है। वर्तमान समय की व्यापार प्रवृत्ति का यदि अध्ययन किया जाए तो उपरोक्त देशों की हिस्सेदारी घट रही है जबकि एशिया एवं अफ्रीका के विकासशील देश तथा ओशिनिया की भागीदारी बढ़ रही है।

15.10.1 देश से आयात की दिशा

किसी भी देश के व्यापार तंत्र के दो आयाम आयात एवं निर्यात होते है। इन्हीं के आधार पर किसी देश के भुगतान संतुलन की गणना की जाती है। भारत द्वारा होने वाले आयात में सर्वाधिक भागीदारी एशिया के देशों की है, जिनसे देश के सम्पूर्ण आयात का लगभग 60.96% प्राप्त होता है। इसके उपरांत ओपेक देश, यूरोप, उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका, जापान एवं ओशिनिया के देशों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। समय के साथ इन देशों से होने वाले व्यापार की प्रवृत्ति में भी परिवर्तन देखा गया है। कुछ की सहभागिता बढ़ी है तो कुछ की घटी है। औपनिवेशिक काल में भारत के आयात का मुख्य स्त्रोत ग्रेट ब्रिटेन था लेकिन आजादी के बाद इसकी भागीदारी घटी है। जहाँ वर्ष 1960 - 61 में ग्रेट ब्रिटेन से होने वाले आयात की मात्रा 19.4% थी वहीं यह घटकर 2016 - 17 में 0.95% हो गयी। देश के आर्थिक पुनर्निर्माण एवं खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति के कारण वर्ष 1960 - 61 में संयुक्त राज्य अमेरिका से देश को सबसे अधिक आयात हुआ जो सम्पूर्ण आयात मूल्य के 29.2% था, जो घटकर वर्ष 2016 - 17 में 5.8% रह गया है। इसके बावजूद भी अमेरिका भारत का एक अहम व्यापारिक सहयोगी है।

ग्रेट ब्रिटेन के अतिरिक्त यूरोप के अन्य देशों में जहाँ जर्मनी, फ्रांस और नीदरलैण्ड के साथ आयात मूल्य में कमी आयी है, वहीं बेल्जियम, इटली एवं स्वीटजरलैण्ड के साथ होने वाले व्यापार में वृद्धि की प्रवृत्ति देखी गई है। बेल्जियम से व्यापार उछाल में हीरा के आयात का प्रमुख कारण है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात देश के आयात व्यापार में रूस एवं पूर्वी यूरोप के देशों की प्रमुख भूमिका रही है। वर्ष 1980 - 81 में अमेरिका एवं ईरान के बाद सोवियत संघ देश के आयात का तीसरा बड़ा स्त्रोत था जिसकी सम्पूर्ण में भागीदारी 8.1% थी। वर्ष 1991 ई. में सोवियत संघ के विघटन तथा देश में आर्थिक संकट के कारण आयात मूल्य में इसकी हिस्सेदारी घटकर 1.44% ही रह गई है।

1970 - 1980 एवं 1990 के दशकों में ओपेक देशों इराक, ईरान, सऊदी अरब, कुवैत एवं संयुक्त अरब अमीरात से कच्चे तेल के अधिक मात्रा में आयात के कारण व्यापार में इनकी भागीदारी बढ़ी है जो 1980 - 81 में 27.8% दर्ज की गई थी। देश के उत्पादन में वृद्धि तथा इराक युद्ध के कारण इन देशों से आयात प्रवृत्ति में गिरावट देखी गई है। अफ्रीका महाद्वीप विश्व बाज़ार की दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। अफ्रीका के देशों के साथ आयात मूल्य की प्रतिशत भागीदारी में उतार एवं चढ़ाव की प्रवृत्ति देखी गई है। एशिया के देशों के साथ इसमें निरंतर वृद्धि देखी जा रही है, वर्ष 2016 - 17 में देश के आयात मूल्य में एशियाई देशों का हिस्सा सर्वाधिक 59.99% दर्ज किया गया है। एशिया के प्रमुख आयात साझेदार जापान, सिंगापुर, कोरिया, मलेशिया, इंडोनेशिया एवं हांगकांग है।

आस्ट्रेलिया के साथ भी देश के आयात की प्रवृत्ति परिवर्तनीय रही है तथा उसमें उतार - चढ़ाव देखा गया है। स्वतन्त्रता पश्चात यहाँ से आयात घटा है, जहाँ वर्ष 1960 - 61 में आस्ट्रेलिया की कुल आयात भागीदारी 1.6% थी वहीं 1980 - 81 ई. घटकर 1.4% रह गयी थी। पुन:

इसमें वृद्धि की प्रवृत्ति देखी गई है तथा यह 2016 - 17 में बढ़कर 2.9% हो गया है। वर्ष 1962 एवं 1965 के युद्धों तथा विभिन्न सीमा विवादों के कारण पाकिस्तान एवं चीन के साथ आयात व्यापार में भारी गिरावट की प्रवृत्ति देखी गई है परंतु हाल के वर्षों में इसमें वृद्धि के संकेत मिल रहें। वर्ष 2016 - 17 में देश के आयात मूल्य में चीन एवं पाकिस्तान की भागीदारी क्रमश: 15.95% एवं 0.12% दर्ज की गई है। इसी अवधि में दक्षिण एशियाई देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्धों सकारात्मक प्रवृत्ति के रुझान देखे जा सकते है। लैटिन अमेरिका के देशों के साथ पश्चिमी द्वीप समूह के देशों का भारत के आयात व्यापार में पहले कोई भूमिका नहीं थी परंतु अब वहाँ से भी बढ़ोत्तरी हुई है। अर्जेन्टीना, ब्राज़ील, चिली एवं वेनेजुएला नए आयातक भागीदार के रूप में उभरें हैं।

15.10.2 देश से निर्यात की दिशा

देश से होने वाले निर्यात का यदि कालक्रमानुसार वर्ष 1960 - 61 ई. से 2016 - 17 ई. तक का अध्ययन किया जाए तो व्यापक परिवर्तन दृष्टिगत होते है। औपनिवेशिक काल में ग्रेट ब्रिटेन भारत के निर्यात का सबसे बड़ा ग्राहक था लेकिन स्वतन्त्रता के पश्चात इसके महत्त्व में काफी कमी आयी है। वर्ष 1960 - 61 में जहाँ इसके साथ व्यापारिक भागीदारी 26.9% थी वहीं यह घट कर 2016 - 17 में 3.10% रह गया है। वर्ष 1960 - 61 ई. में भारत से होने वाले निर्यात का दूसरा सबसे बड़ा बाजार था एवं देश के निर्यात व्यापार के मूल्य में इसका योगदान 16% था। वर्ष 1980 - 81 ई. के पश्चात इसकी सहभागिता में उतार चढ़ाव की प्रवृत्ति देखी गई, जिसके फलस्वरूप 2016 - 17 ई. में 15.3% हिस्सेदारी के साथ यह भारत से वस्तुओं का सबसे बड़ा आयातक देश बन गया है। इसके विपरीत कनाडा की हिस्सेदारी में कमी आयी है जो 1960 - 61 में 2.7% था घट कर अब 0.73% रह गया है।

औपनिवेशिक प्रभुता के कारण द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान एवं उसके पश्चात जर्मनी एवं जापान को होने वाला निर्यात स्थगित कर दिया गया था जो स्वतन्त्रता के बाद पुन: 1950 - 51 में प्रारम्भ हो सका। उन दिनों देश के निर्यात में इन दोनों देशों की भागीदारी क्रमश: 1.7% एवं 1.6% थी। 1980 - 81 में यह भागीदारी बढ़कर क्रमश: 5.7% एवं 8.9% हो गयी परंतु बाद की अवधि में इसमें गिरावट की प्रवृत्ति देखी गई और यह वर्ष 2016 - 17 में क्रमश: 2.60% एवं 1.99% प्राप्त होती है। वर्तमान समय में खाड़ी देश भी निर्यात के महत्त्वपूर्ण केंद्र है। पहले ईरान के अलावा खाड़ी देशों का निर्यात व्यापार में कोई महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं थी परंतु इन देशों से होने वाली कच्चे तेल की खरीददारी ने यहाँ व्यापार एवं निर्यात के नए द्वार खोल दिए है। खाड़ी युद्ध के पश्चात कुवैत एवं इराक पर इसका बुरा असर पड़ा। इन सभी अवरोधों के बावजूद भी 11.29% निर्यात भागीदारी के साथ संयुक्त अरब अमीरात आज भी देश के निर्यात वस्तुओं का दूसरा प्रमुख ग्राहक बना हुआ है।

ओशिनिया भारत का प्रमुख निर्यात साझीदार है स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय से वर्ष 1950 - 51 तक भारत के सम्पूर्ण निर्यात मूल्य का 4.8% भाग आस्ट्रेलिया को होता था। इसके पश्चात इसकी भागीदारी में कुछ कमी आयी फिर भी वर्ष 1960 - 61 में 3.5% निर्यात के साथ भारत का प्रमुख निर्यात साझेदार बना रहा लेकिन वर्तमान समय 2016 - 17 में इसकी सहभागिता घटकर मात्र 1.07% रह गई है। औपनिवेशिक गुटवादिता एवं द्वितीय विश्व युद्ध के कारण पूर्व सोवियत संघ (वर्तमान रूस) वर्ष 1950 - 51 में देश का प्रमुख निर्यात भागीदार नहीं था और उस समय मात्र 0.2% निर्यात होता था, इसके पश्चात उसमें वृद्धि हुई तथा वर्ष 1960 - 61 में 4.5% के स्तर पर दर्ज किया गया। विश्व स्तर पर बढ़ती द्विध्रुव गुटवादिता एवं भारत से चीन एवं पाकिस्तान युद्ध के कारण भारत एवं पूर्व सोवियत संघ के सम्बन्धों में मधुरता आयी जिसका परिणाम यह था कि वर्ष 1980 - 81 में भारत से इसको होने वाला निर्यात बढ़कर 18.3% हो गया। पूर्व सोवियत संघ के विघटन के कारण इससे होने वाले व्यापार को काफी धक्का लगा और वह वर्ष 2016 - 17 घट कर मात्र 0.70% दर्ज किया गया है। इसी दौरान पूर्वी यूरोप के देशों के बाज़ार में भारतीय उत्पादों के प्रवेश से देश के निर्यात को नया आयाम मिला।

देश का विभाजन एवं उसके पश्चात चीन और पाकिस्तान के साथ युद्धों के कारण व्यापारिक सम्बन्धों पर बुरा प्रभाव पड़ा है। हाल के दिनों में होने वाले सुधारों के फलस्वरूप राजनीतिक सम्बन्धों में कुछ मधुरता आयी है जिसके कारण निर्यात सहभागिता में कुछ वृद्धि हुई है। वर्ष 2003 - 04 में भारत के निर्यात मूल्य में पाकिस्तान की हिस्सेदारी 0.45% थी जो बढ़ कर 2016 - 17 में 0.66% हो गयी है। इसी दौरान चीन को होने वाले निर्यात में नकारात्मक वृद्धि दर्ज की गई है। जहाँ वर्ष 2003 - 04 में देश से होने वाले निर्यात मूल्य में चीन की हिस्सेदारी 4.63% थी घटकर 2016 - 17 में मात्र 3.09% रह गया है। इन प्रमुख देशों के अतिरिक्त सिंगापुर, हांगकांग, बांग्लादेश, श्रीलंका, इंडोनेशिया, मलेशिया एवं कोरिया गणराज्य भी आज भारत के प्रमुख ग्राहक है। अफ्रीका महाद्वीप एवं लैटिन अमेरिका के देशों के साथ निर्यात व्यापार की अधिक

संभावनाएँ है तथा धीरे - धीरे इनके साथ निर्यात व्यापार में वृद्धि हो रही है।

15.11 सारांश

आपने इस इकाई में भारत के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की विशेषताओं, व्यापार नीति, विदेशी व्यापार के परिणाम में प्रगति, आयात एवं निर्यात के संगठन तथा उनके प्रतिरूप में परिवर्तन और देश के विदेशी व्यापार की दिशा का अध्ययन किया है। आप समझ गए होगें कि देश के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में किन घटकों को सम्मिलित किया जाता है। इससे देश की अर्थव्यवस्था को गतिशीलता मिलती है तथा विकास को प्रोत्साहन प्राप्त होता है। वास्तव में किसी देश का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार उसकी भौगोलिक अवस्थिति, सरकारी नीतियों, सांस्कृतिक संगठन आदि से प्रभावित होता है।

इस इकाई में भारत के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की उपयोगिता, क्षेत्रीय विभिन्नता के विविध आयाम तथा वर्तमान समय में उसकी उपयोगिता को प्रस्तुत किया गया है। आपने देखा है कि क्षेत्रीय आधार पर यह विविध स्वरूप प्रकट करता है। किन्हीं क्षेत्रों से व्यापार सहभागिता अधिक है तो किन्हीं क्षेत्रों से न्यून। समय में होने वाले परिवर्तन के साथ ही जो क्षेत्र व्यापारिक दृष्टि से पहले महत्त्वपूर्ण थे अब उनकी प्रासंगिकता कम हुई है। इस प्रकार आपने देश के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का विस्तृत एवं सारगर्भित अध्ययन किया है।

15.12 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

1. भारत की निर्यात - आयात नीति 1985 को कब अपनाया गया था।

(क) 1 जनवरी 1985 (ख) 1 अप्रैल 1985

(ग) 1 जुलाई 1985 (घ) 1 अक्टूबर 1985

2. क्षेत्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन करने पर निम्नलिखित क्षेत्रों में से भारत सर्वाधिक आयात कहाँ से करता है।

(क) यूरोप (ख) उत्तरी अमेरिका

(ग) एशिया (घ) दक्षिणी अमेरिका

3. निम्नलिखित भौगोलिक क्षेत्रों में से कौन भारत का न्यूनतम निर्यात भागीदार है।

(क) यूरोप (ख) उत्तरी अमेरिका

(ग) आस्ट्रेलिया (घ) दक्षिणी अमेरिका

15.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

Basham,A. L., 1994, The Wonder that was India, Rupa & co., New Delhi.

Bhardwaj, R., 1970, Structural Basis of India's Foreign Trade,Allied Publishers, Bombay.

Joshi, H. L., 1990, InDdustrial Geography of India, Rawat Publications, Jaipur.

Khullar, D. R., 2006, India :A Comprehensive Geography, Kalyani Publishers, Ludhiyana.

बंसल, एस. सी., 2021, भारत का वृहत् भूगोल, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ.

मामोरिया, चतुर्भुज, 2018, भारत का वृहत् भूगोल, साहित्य भवन, सी. 17 साइट सी. औद्योगिक क्षेत्र, आगरा - 282007, उत्तर प्रदेश.

तिवारी, रामचंद्र. 2019, *भारत का भूगोल*, प्रवालिका पब्लिकेशन्स प्रयागराज, 211002.

भारत, 2021 - 2022, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली.

चौहान, वी. एस. और गौतम, अलका, 2000 - 2001, भारत वर्ष का विस्तृत भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ.

गौतम, अलका, 2007, भारत का वृहद् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज.

हुसैन, माजिद और सिंह, रमेश, 2009, भारत का भूगोल, टाटा मैक्ग्राहिल पब्लिशिंग कं॰ लि॰ नई दिल्ली.

15.14 अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी)

1. भारत के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की विशेषताओं का वर्णन कीजिए ?

2. भारत के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के संगठन का वर्णन कीजिए तथा उसके भौगोलिक स्वरूप की व्याख्या कीजिए ?

3. देश से होने वाले विदेशी व्यापार की दिशा का विश्लेषण कीजिए ?

शान्तिपुरम् (सेक्टर–एफ), फाफामऊ, प्रयागराज – 211013

"अपने भाइयों को मै सचेत करना चाहता हूँ कि मोम न बनें और आसानी से पिघल न जायें। छोटी-छोटी सी बातों के लिए ही हम अपनी भाषा को या संस्कृति को न बदलें।"

राजर्षि पुरूषोत्तमदास टंडन

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

प्रयागराज

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013

www.uprtou.ac.in

टोल फ्री नम्बर- 1800-120-111-333